

THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC

FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.

-The TFIC Team.

वीर सेवा मन्दिर
दिल्ली



क्रम संख्या ३६७४
काल नं० २३३.२/३५५
खण्ड

जैन-शिलालेखसंग्रह

(तृतीय भाग)

संग्रहकर्ता

पं० विजयमूर्ति एम० ए० शास्त्राचार्य

प्रस्तावना (द्वितीय-तृतीय भाग की) लेखक

डा० गुलाबचन्द्र चौधरी एम० ए०, पी-एच० डी०, आचार्य

पुस्तकाध्यक्ष एवं प्राध्यापक

नवनालन्दा महाविहार, नालन्दा (पटना)

प्रकाशिका

श्रीमाणिकचन्द्र-दिगम्बर-जैनग्रन्थमाला समिति

मुम्बई

विक्रम संवत् २०१३

वीर नि० सं० २४८३

मूल्य.....

प्रकाशक—

मंत्री, माणिकचन्द्र जैनग्रन्थमाला

हीराबाग, बम्बई ४

मार्च १९५७

मुद्रक—

शारदा मुद्रण

टठेरी बाजार, वाराणसी

विषय-सूची

प्राक्कथन	पृष्ठ
प्रकाशकीय निवेदन	
प्रस्तावना	
१. जैनों का अभिलेख साहित्य : परिचय	१-६
२. मथुरा के लेख : एक अध्ययन	६-२२
३. जैन संघ का परिचय	२२-६६
४. राजवंश और जैनधर्म	६६-१२२
अ. उत्तर भारत के राजवंश	६६-७५
आ. दक्षिण भारत के राजवंश	७५-११२
इ. दक्षिण भारत के छोटे राजवंश एवं सामन्त गण	११२-१२२
५. जैन सेनापति एवं मन्त्रिगण	१२२-१३२
६. जनवर्ग एवं जैनधर्म	१३४-१३८
७. जैनधर्म प्रतिपालक महिलाएँ	१३८-१४५
८. धार्मिक उदारता एवं सहिष्णुता	१४५-१४६
९. जैन धर्म पर संकट	१४६-१५०
१०. जैन धर्म के केन्द्र	१५०-१७३
सहायक ग्रन्थनिर्देश	१७५
लेख (तिथिक्रम से) नं० ३०३-८४६	१-५६२
अनुक्रमणिका १ (लेखों के प्राप्तिस्थान)	१-७
अनुक्रमणिका २ (विशेष नाम सूची)	८-४१

प्राक्-कथन

जैन-शिलालेखसंग्रह, भाग १, का जब मैंने आज से कोई बत्तीस वर्ष पूर्व सम्पादन किया था, तब मुझे यह आशा थी कि शेष प्राप्य जैन शिलालेखों के संग्रह भी शीघ्र ही क्रमशः प्रस्तुत किये जा सकेंगे। किन्तु वह कार्य शीघ्र सम्पन्न न हो सका। तथापि इस योजना की चिन्ता माणिकचन्द्र ग्रंथमाला के कर्णधार श्रद्धा पं० नाथूराम जी प्रेमी को बनी ही रही। उसी के फलस्वरूप गेरीनो की शिलालेख सूची के अनुसार अब यह संग्रह कार्य भाग दूसरे और तीसरे में पूरा हो गया है। गेरीनो की सूची बनने के पश्चात् जो जैन लेख प्रकाश में आये हैं, तथा जो महत्वपूर्ण लेख उम सूची में उल्लिखित होने से छूट गये हैं उनका संकलन करना अब भी शेष रहा है।

यह तो मानी हुई बात है कि देश, धर्म और समाज के इतिहास में पाषाण, ताम्रपट आदि लेख सर्वोपरि प्रामाणिक होते हैं। भारत का प्राचीन इतिहास तभी से विधिवत् प्रस्तुत किया जा सका है जब से कि इन शिला आदि लेखों के अध्ययन अनुशीलन की ओर ध्यान दिया गया है। जितने शिलालेख प्रस्तुत संग्रह में समाविष्ट हैं वे सभी गत सौ वर्षों में समय समय पर यथास्थान ग्रन्थिकाओं आदि में प्रकाशित हो चुके हैं और उनसे प्राप्य राजनीतिक वृत्तान्त का उपयोग भी प्रायः किया जा चुका है। किन्तु जैन इतिहास के निमीर्ण में उनका पूर्णतः उपयोग करना अभी भी शेष है। इस संग्रह में जो मौर्य सम्राट् अशोक से लेकर कुषाण, गुप्त, चालुक्य, गंग, कदम्ब, राष्ट्रकूट आदि राजवंशों के काल के जैन लेख संकलित हैं उनमें भारतीय इतिहास और विशेषतः जैन धर्म के प्राचीन इतिहास की बड़ी बहुमूल्य सामग्री बिखरी हुई पड़ी है जिसका अध्ययन कर जैन इतिहास को परिष्कृत करना आवश्यक है।

शिलालेखसंग्रह के प्रथम भाग की भूमिका में मैंने वहाँ संकलित लेखों का विभिन्न दृष्टियों से एक अध्ययन प्रस्तुत किया था। अब इस भाग के साथ

तब से आगे प्रकाशित दोनों भागों का सुविस्तृत और सूक्ष्म अध्ययन डॉ० गुलाब चन्द्र चौधरी द्वारा प्रस्तुत किया गया है जो बहुत महत्त्वपूर्ण है। मुझे भरोसा है कि डॉ० चौधरी के इस परिश्रम से जैन इतिहास का बड़ा उपकार होगा। इनकी प्रस्तावना से प्रकाश में आने वाली कुछ विशेष बातें निम्न प्रकार हैं:—

(१) मथुरा की खुदाई से प्रकाश में आई मूर्तियों में प्रमाणित हुआ कि आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व जैन प्रतिमायें नग्न ही बनाई जाती थीं। मूर्तियों में वस्त्रों का प्रदर्शन लगभग पाँचवीं शती से पूर्व नहीं पाया जाता।

(२) प्राचीन काल की प्रतिमाओं में तीर्थंकरों के बाल आदि विशेष चिह्न बनाने की प्रथा नहीं थी। केवल आदिनाथ के केश (जटा) तथा पार्श्व और सुपार्श्व के सर्पकण्ठ मूर्तियों में दिखलाये जाते थे।

(३) तीर्थंकरों के साथ साथ यत् यक्षिणियों की पूजा का भी प्राचीन काल से ही प्रचार था और उनका भी मूर्तियाँ स्थापित का जाता था।

(४) मथुरा से जो जैन मूर्तियों की प्रतिष्ठा संबंधी लेख मिले हैं उनमें गणिकायें, गणिकापुत्रियाँ, नर्तकियाँ और लुहार, सुनार, गंधोगिर आदि जातियों के लोग भी पूजा प्रतिष्ठादि धार्मिक कार्यों में भाग लेते हुए पाये जाते हैं।

(५) मथुरा के लेखों से सिद्ध होता है कि उत्तर भारत में भी मानवपरम्परा के उल्लेख की प्रथा थी। चातमीपुत्र, गोतिमीपुत्र, मोगलिपुत्र, कौशिकीपुत्र आदि जैसे नाम पाये जाते हैं।

(६) मथुरा के लेखों में जो जैन मुनियों के गणों, कुलों और शाखाओं के उल्लेख मिलते हैं उनसे कल्पसूत्र की स्थविरावला की प्रामाणिकता सिद्ध होता है।

(७) कदंब वंश लेखों के अनुसार ४-५ वीं शताब्दी के लगभग दक्षिण भारत में निर्ग्रन्थ महाश्रमण, श्वेतपट महाश्रमण तथा यापनाय और कूर्चक संघों का अस्तित्व पाया जाता है। ये सब सम्प्रदाय प्रायः मिल जुल कर रहते थे।

(८) मूलसंघ का सर्व प्रथम उल्लेख गग वंश के माधव वर्मा द्वितीय और उसके पुत्र अविनीत (सन् ४००-४२५ के लगभग) के लेखों में पाया जाता है। किन्तु इन लेखों से किसी गण, गच्छ, अन्वय आदि का कोई उल्लेख

नहीं है। गण गच्छादि के उल्लेख सन् ६८७ और उसके पश्चात्कालीन लेखों में उत्तरोत्तर बढ़ते हुए पाये जाते हैं।

(६) पाँचवीं छठी शती के लेखों में नन्दिसंघ और नन्दिगच्छ तथा श्री मूलमूलगण और पुद्गागवृक्षमूलगण के उल्लेख यापनीय संघ के अन्तर्गत मिलते हैं। ग्यारहवीं शती से नन्दि संघ का उल्लेख द्रविड संघ के साथ तथा बारहवीं शती से मूलसंघ के साथ दिखाई पड़ता है।

(१०) यापनीय संघ के अन्तर्गत बलहारि या बलगार गण के उल्लेख दशवीं शती तक पाये जाते हैं। ग्यारहवीं शती से बलात्कार गण मूलसंघ से संबद्ध प्रकट होता है।

(११) मर्करा के जिस ताम्रपत्र लेख के आधार पर कोण्डकुन्दान्वय का अस्तित्व पाँचवीं शती में माना जाता है वह लेख परीक्षण करने पर बनावटी मिद्ध होता है, तथा देशीय गण का जो परम्परा उस लेख में दी गई है वही लेख नं० १५० (सन् ६३१) के बाद की मालूम होता है।

(१२) कोण्डकुन्दान्वय का स्वतंत्र प्रयोग आठवीं नौवीं शती के लेख में देखा गया है तथा मूलसंघ कोण्डकुन्दान्वय का एक साथ सर्व प्रथम प्रयोग लेख नं० १८० (लगभग १०४४ ई०) में हुआ पाया जाता है।

डॉ० चौधरी की प्रस्तावना में प्रकट होने वाले ये तथ्य हमारी अनेक सांस्कृतिक और ऐतिहासिक मान्यताओं को चुनौती देने वाले हैं। अतएव उनपर गंभीर विचार करने तथा उनसे फलित होने वाली बातों को अपने इतिहास में यथोचित रूप से समाविष्ट करने का आवश्यकता है। इस दृष्टि से इन शिलालेखों तथा डॉ० चौधरी की प्रस्तावना का यह प्रकाशन बड़ा महत्वपूर्ण है।

मुजफ्फरपुर,
१४-३-१९५७

हीरालाल जैन
डायरेक्टर, प्राकृत जैन विद्यापीठ,
मुजफ्फरपुर (बिहार)

प्रकाशकीय निवेदन

जैन-शिलालेख संग्रह का पहला भाग सन् १९२८ में निकला था । दूसरा भाग उसके चौबीस वर्ष बाद सन् १९५२ में और यह तीसरा भाग उसके लगभग पाँच वर्ष बाद प्रकाशित हो रहा है । अर्थात् सब मिलाकर इन तीन भागों के प्रकाशन में कोई तीस वर्ष लग गये ।

पहले भाग के साथ में सुहृद्वर डा० हरिलाल जी ने उसके लेखों का १६२ पृष्ठों का एक सुविस्तृत अध्ययन लिखा था । दूसरे भाग के साथ उसके लेखों का परिचय देने का कोई प्रबन्ध न हो सका, इसलिए अब इस तीसरे भाग में दोनों भागों के लेखों का अध्ययन करके डा० गुलाबचन्द्र जी चौधरी, एम० ए०, पी-एच० डी०, आचार्य ने १७५ पृष्ठों की भूमिका लिख दी है जिसमें जैन सम्प्रदाय के संघों, गणों, गच्छों, राजवंशों, सामन्तों, श्रेष्ठियों, जैन-तीर्थों आदि पर विस्तृत प्रकाश डाला है ।

डा० चौधरी स्याद्वाद विद्यालय काशी के स्नातक हैं और इस समय नालन्दा के पाली बौद्ध विद्यापीठ में पुस्तकाध्यक्ष एवं प्राध्यापक हैं । दो वर्ष पहले इन्हें हिन्दू विश्वविद्यालय से “पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ नादर्न इण्डिया फ्राम जैन सोर्सेज” से (जैन स्रोतों से प्राप्त किया गया उत्तर भारत का राजनैतिक इतिहास) महानिबन्ध पर ‘डाक्टरेट’ की उपाधि मिली थी । चूँकि जैन साधनों से उक्त महानिबन्ध तैयार किया गया था, और इसके लिए इन्हें अनेक शिलालेखों की भी छान-बीन करनी पड़ी थी, इस लिए इस ग्रंथ की यह भूमिका लिखने के लिए वही उपयुक्त समझे गये और उन्होंने भी मेरे आग्रह को स्वीकार कर लिया । मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि उन्होंने यह काम एक इतिहास-संशोधक की दृष्टि से बड़ी लगन के साथ परिश्रमपूर्वक किया है । इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं ।

इसमें ऐसी अनेक बातों पर प्रकाश डाला गया है जो अभी तक अन्धकार में थीं और जिनकी ओर ध्यान देना इतिहासज्ञों के लिए परम आवश्यक है। इनमें से कुछ बातों की तरफ डा० हीरालाल जी ने 'प्राक्कथन' में हमारा ध्यान आकर्षित किया है।

इन तीन भागों में वे सब लेख आ गए हैं जिनकी सूची डा० गेरिनो ने संकलित की थी और जिसका नाम Repertoire de Epigraphie Jaina है।

उक्त सूची के प्रकाशित होने के बाद और भी सैकड़ों लेख प्रकाश में आये हैं और उनका प्रकाशित होना भी आवश्यक है। परन्तु माणिक्यचन्द्र ग्रन्थमाला का फण्ड समाप्त हो गया है और इधर दीर्घकालव्यापिनी अस्वस्थता के कारण मेरी शक्तियों ने भी जबाब दे दिया है, इसलिए अब यह आशा तो नहीं है कि उक्त लेख-संग्रह भी चौथे भाग के रूप में प्रकाशित कर सकूँगा। फिर भी विश्वास तो रखना ही चाहिए कि किसी न किसी इतिहास प्रेमी के द्वारा यह आवश्यक कार्य अविलम्ब पूरा होगा। मुझे सन्तोष है कि मेरी एक बहुत बड़ी आशा इन तीस वर्षों में किसी तरह पूरी हो गयी।

दूसरे भाग के समान इस भाग का संकलन भी श्री विजयमूर्ति जी एम० ए०, शास्त्राचार्य ने किया है। इसमें उन्हें भी बहुत परिश्रम करना पड़ा है। विभिन्न लाइब्रेरियों में जाकर 'इण्डियन एण्टीक्वेरी', 'एप्सोम्राफिया इंडिका' आदि की पुरानी फाइलों में से प्रत्येक लेख को ढूँढ़ना, उन्हें रोमन लिपि से नागरी में उतारना और फिर उनका सारांश लिखना समयसाध्य और श्रमसाध्य तो है ही। इसके लिए वे भी धन्यवाद के पात्र हैं।

बम्बई }
२४-३-५७

नाथूराम प्रेमी
मंत्री

प्रस्तावना

१. जैनों का अभिलेख साहित्य: एक परिचय

भारतीय इतिहास के विविध अंगों के ज्ञान के लिए अभिलेख साहित्य बड़ा ही प्रामाणिक साधन है। यह साधन भारतवर्ष में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध भी है और विशेष कर दक्षिण भारत में। जैनों का अभिलेख साहित्य बड़ा ही विशाल है। वैसे तो जैनों के ये लेख भारतवर्ष के प्रत्येक कोने से प्राप्त हुए हैं। पर इनका प्राचुर्य दक्षिण और पश्चिम भारत में विशेषतः देखा जाता है।

ये लेख जल्दी न नष्ट होने वाले पाषाण एवं धातु द्रव्यों पर उत्कीर्ण पाये जाते हैं। इसलिए इनमें कालान्तर में सम्भावित संशोधन और परिवर्तन की वैसी कम गुंजाइश होती है, जैसी कि अन्य साहित्यिक कृतियों में देखी जाती है। इसलिए इनसे प्राप्त होने वाले तथ्यों को प्रथम श्रेणी का महत्व दिया जाता है।

पाषाणनिर्मित द्रव्यों पर पाये जाने वाले जैनों के लेख कई प्रकार के हैं, जैसे चट्टानों एवं गुफाओं में मिलने वाले लेख, उदाहरण के रूप में लेख नं० २,७,६१ एवं एलोरा, पञ्चपाण्डवमल्लै, वल्लीमल्लै और तिरुमल्लै से प्राप्त लेख; मंदिरों से प्राप्त लेख, जैसे श्रवण वेल्गोल, हुम्मच एवं अन्य तीर्थ स्थानों के कई लेख; मूर्तियों के पादुका पट्ट पर उत्कीर्ण लेख जैसे श्रवण वेल्गोल, आबू, गिरनार, शंजुंजय, महोवा, खजुराहो, ग्वालियर से प्राप्त होने वाले कतिपय प्रतिमा-लेख; स्तम्भों पर उत्कीर्ण लेख, जैसे मथुरा से प्राप्त लेख नं० ४३,४४ एवं कहायू का लेख तथा दक्षिण भारत से प्राप्त मानस्तम्भों एवं सल्लेखना मरण के स्मारक स्वरूप निर्मित निषिधिकलसों पर के लेख; मथुरा से प्राप्त कतिपय लेख स्तूपों पर तथा शिलापट्टों पर, मथुरा के आयागपट्टों के लेख और शासन पत्र के रूप में लेख नं० २२८, ३३२, ३७४ आदि प्राप्त हुए हैं।

ताम्रादि धातुओं पर भी उत्कीर्ण अनेकों जैन लेख पाये जाते हैं, उदाहरण के रूप में मर्करा का ताम्रपत्र एवं कदम्ब वंश के कतिपय लेख समझने चाहिये।

इन लेखों में अधिकांश पर काल निर्देश देखा गया है, चाहे वह शासन करने वाले राजा का संवत् हो, चाहे वह शक संवत्, विक्रम संवत् या ज्योतिष शास्त्रप्रणीत प्लङ्ग, खर आदि संवत् हो। ये संवत् राजनीतिक, धार्मिक, एवं सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्व के हैं।

जैन लेखों की प्रकृति समझने के लिये, हम उन्हें अनेक दृष्टियों से विभक्त कर सकते हैं, जैसे उत्तर भारत के लेख, दक्षिण भारत के लेख, दिगम्बर सम्प्रदाय के, श्वेताम्बर सम्प्रदाय के, राजनीतिक, धार्मिक तथा भाषावार संस्कृत, प्राकृत, कर्नाड, तमिल आदि, हमी तरह लिपि के अनुसार भी। पर वास्तव में इनके दो ही भेद करना ठीक है, एक तो राजनीतिक शासन पत्रों के रूप में या अधिकारिवर्ग द्वारा उत्कीर्ण और दूसरे सांस्कृतिक, जनवर्ग से सम्बन्धित। राजनीतिक एवं अधिकारिवर्ग से सम्बन्धित लेख प्रायः प्रशस्तियों के रूप में होते हैं। इनमें राजाओं को अनेक विरुदावलो, सामरिक विजय, वंश परिचय आदि के साथ मंदिर, मूर्ति या पुरोहित आदि के लिए भूमिदान, ग्रामदानादि का वर्णन होता है। सांस्कृतिक एवं जनवर्ग से सम्बन्धित लेखों का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। ये लेख अपनी धार्मिक मान्यता के लिए भक्त एवं श्रद्धालु पुरुष या स्त्रीवर्ग द्वारा लिखाये जाते थे। ऐसे लेख १-२ पंक्ति के रूप में मूर्ति के पादुकापट्टों पर तथा कुटुम्ब एवं व्यक्ति की प्रशंसा में उच्च कोटि के काव्य रूप में भी पाये जाते हैं। इनसे अनेक जातियों के सामाजिक इतिहास और जैनाचार्यों के संघ, गण, गच्छ, पट्टावली के रूप में धार्मिक इतिहास के अतिरिक्त सांस्कृतिक एवं राजनीतिक इतिहास का परिचय मिलता है। इन लेखों में प्रायः मूर्तियों, धर्मस्थानों, और मंदिरों के निर्माण का काल अङ्कित रहता है। जिससे कला और धर्म के विकास-क्रम को समझने में बड़ी सहायता मिलती है, और सामाजिक स्थिति का परिज्ञान—एक देश से दूसरे देश में जैन कब फैले और वहाँ जैन धर्म का प्रसार अधिकाधिक कब हुआ—भी हो जाता है। अनेक जैन भक्त पुरुषों और महिलाओं के नाम भी इन लेखों से

ज्ञात होते हैं जो कि भाषाशास्त्र की दृष्टि से बड़े महत्व के हैं। अधिकांश नाम अपभ्रंश और तत्कालीन लोक भाषा के रूप को प्रकट करते हैं।

प्रस्तुत लेख संग्रह से ज्ञात सांस्कृतिक इतिहास का एक छोटा चित्र यहाँ दिया जाता है। लोग अपने कल्याण के लिए, माता, पिता, भाई, बहिन आदि के कल्याण के लिए, गुरु के स्मृत्यर्थ, राजा, महामण्डलेश्वर आदि के सम्मानार्थ मंदिर या मूर्ति का निर्माण कराते थे और उनकी मरम्मत, पूजा, ऋषियों के आहार, पुजारी की आजीविका, नये कार्यों के लिये तथा शास्त्र लिखने वालों के भोजन के लिए दान देते थे। दातव्य वस्तुओं में ग्राम, भूमि, खेत, तालाब, कुआँ, दुकान, भवन, कोल्हू, हाथ के तेल की चक्की, चावल, सुपारी का बगीचा, माधारण बगीचे, चुंगी से प्राप्त आमदनी, तथा निष्क, पण, गद्याण, होन्नु (ये सब एक प्रकार के सिक्के हैं) धी एवं मुक्त श्रम आदि हैं। एक लेख (१६८) में ब्राह्मण को कुमारिकाओं की भेंट का उल्लेख है जो देवदासी प्रथा की याद दिलाता है। ग्राम या भूमि के दान में प्रायः यह ध्यान रखा जाता था कि वे दान सर्व करों से मुक्त कराकर दिये जाय (२२६, ४०४ आदि)। उत्सवों पर ही दान देने की प्रथा थी। बहुत से लेखों से ज्ञात होता है कि दानादि द्रव्य, चंद्र ग्रहण, सूर्य ग्रहण, उत्तरायण-संक्रांति या पूर्णिमा आदि के दिन दान दिये जाते थे (१०२ १२७, ३०१, ६४६ आदि)। मूर्तियों के निर्माण में हम देखते हैं कि लोग प्रायः तीर्थकरों की मूर्तियाँ बनवाते थे—उनमें विशेषतः आदिनाथ, शान्तिनाथ, चंद्रप्रभ, कुंथुनाथ, पार्श्वनाथ एवं वर्धमान की मूर्तियाँ होती थीं। तीर्थकरों के आतिरिक्त हम दक्षिण भारत में बाहुबली की मूर्ति भी देखते हैं। भक्त या शिष्यगण अपने आचार्यों की मूर्तियाँ या पादुका (चरण) भी बनवाते थे। यक्ष-र्याक्षिणियों का पूजा भी प्रचलित थी। हुम्मच पद्मावती का पूजा का प्रमुख केन्द्र था। लेखों में अम्बिका देवी (३४६) और ज्वालामालिनी (७५८) की मूर्तियों का भी उल्लेख मिलता है। प्रतिमाएँ प्रायः पाषाण और धातु की बनती थीं, पर एक लेख (१६७) में पंच धातु की प्रतिमा का उल्लेख है। मंदिर प्रायः पाषाण या ईंट के बनते थे, पर कुछ लेखों (२७७, २०४) में लकड़ी

के मंदिर का भी उल्लेख है। पूजा के अनेक प्रकार होते थे (३३८)।

धर्मप्राण महिलावर्ग एवं पुरुषवर्ग सारे जीवन को धर्म की आराधना में व्यतीत कर अन्तिम क्षणों में समाधिमरण पूर्वक देहोत्सर्ग करता था। चौदहवीं शताब्दी के लगभग दक्षिण प्रांत में जैन महिलावर्ग के बीच सतीप्रथा का भी प्रवेश हो गया था (५५६, ५७४, ६०५)। राजघराने की महिलाएँ अपने पति के शासन में हाथ बटाती थीं।

जमीन प्रायः नापकर दान में दी जाती थी। लेखों में विविध प्रकार की नापों का उल्लेख है जैसे निर्वर्तन (लेख नं० १०१, १६०२) भेरुण्ड दण्ड (१८१) मत्तर (२१०) कम्म (२४१) कुण्डिवेश दण्ड (३३४) हाथ (३२०) तथा स्तम्भ (३३४) आदि। चावल आदि की नाप के लिए मत्त (१८१) तथा तेल की नाप के लिए करघटिका (२२८) का भी उल्लेख मिलता है।

विविध प्रकार के आय करों के नाम भी लेखों से ज्ञात होते हैं। जैसे अग्नि-याय वावदण्ड विरै (१६७, तामिल देश में) सिद्धाय कर (३१२) नमस्य (२१०) हालदारे (६७३)। तत्कालीन अनेकों सिक्कों के नाम भी लेखों में मिलते हैं, जैसे गुप्त कालीन कार्षापण (६४) निष्क (४६४) सुवर्ण गद्याण (१६७) लोभिक गद्याण (२५३) गद्याण (१६७, ६७३) होन्नु (४११, ६७३) विशो-पक (२२८) आदि।

गाँव के अधिकारी के रूप में सेनवोव (पटवारी, २१०, २२६, २५१) महा-महत्तु, (७१०) एवं हेर्गाडे या पेर्गाडे (२०८) के नाम पाते हैं। पटवारी लोग अच्छे पढ़े लिखे होते थे। एक लेख (२५१) में एक पटवारी को लेख रचने वाला लिखा है।

यह एक छोटा सा चित्र है। विस्तृत के लिए भूमिका के विविध प्रकरणों को देखना चाहिये।

लेख पद्धतिः—प्रत्येक पाषाण लेख या ताम्र लेख, यदि वह बहुत ही छोटा केवल नम्र मात्र का या छोटा-सा दहनपत्र नहीं हुआ तो, प्रायः देखा गया

है कि उसमें एक निश्चय शैली का अनुसरण किया जाता है। प्रारम्भ में बहुधा मंगला-चरण होता है। वह छोटे वाक्य के रूप में 'सर्वज्ञाय नमः, ॐ नमः सिद्धे' आदि या पद्य के रूप में जिनशासन को नमस्कार या किसी देवता या अनेक देवताओं को नमस्कार आदि। इसके बाद प्रशस्ति प्रारम्भ होती है जिसमें राजा के नाम सुद्ध में विजय आदि तथा वंशपरम्परा का वर्णन होता है। यह वर्णन कभी कभी ऐसे साँचे में दले हुए के समान होता है कि एक राजा के शासनकाल के सभी लेखों में एकसा विवरण मिलता है। लेख का यही हिस्सा राजनीतिक इतिहास के विद्यार्थी के लिए बड़े महत्त्व का होता है। इस अंश के बाद राजा से भिन्न अगर कोई दाता है तो उसका, उसके वंश एवं वैभव आदि का वर्णन आता है। साथ में देय पात्र का वर्णन आता है। यदि वह मुनि व आचार्य हुआ तो उसकी गुरुपरम्परा संघ, कुल, गण, गच्छ, अन्वय आदि का वर्णन होता है। यदि वह मंदिर आदि धर्मस्थान हुआ तो उसका भी वर्णन होता है। इसके बाद देय वस्तु—धन, जमान, कर, शुल्क, तेल आदि जो होता है उसका भी खुलासा वर्णन मिलता है। जमीन के दान में उसको सभी परिधियों का वर्णन होता है। इसके बाद दान की रक्षा के लिए विशेष अनुरोध किया जाता है। इसमें दान को जो क्षति पहुँचाते हैं उनकी भर्त्सना और जो रक्षा करते हैं उनके प्रशंसावाक्य दिये जाते हैं। अंत में लेख को उत्कीर्ण करने वाले का या निर्माता का नाम होता है।

जैन लेख संग्रह:—जैन शिला लेखों की संख्या इतनी अधिक है कि उनका संग्रह एक जगह करना कठिन है। इधर माणिकचंद्र दिगम्बर जैन ग्रन्थमाला से दिगम्बर सम्प्रदाय से सम्बंधित लेखों का संग्रह तीन भागों में निकला है। बाबू कामताप्रसाद ने एक छोटा प्रतिमालेख संग्रह निकाला है। वैसे ही श्वेताम्बर जैन शिलालेखों के संग्रह स्वर्गीय बाबू पूरणचंद्र नाहर ने जैन लेख संग्रह नाम से तीन भाग में, मुनि जयंतविजय जी ने अर्जुन प्राचीन लेख संग्रह पांच भाग में, विजयधर्म सरि के प्राचीन लेख संग्रह और जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह एवं मुनि कांति-सागर जी का जैन प्रतिमा लेख दो भाग तथा उपाध्याय विनयसागर जी का प्रतिष्ठा लेख संग्रह आदि प्रकाशित हो चुके हैं।

जैन धर्म और जैन समाज के इतिहास निर्माण में इन लेखों का जितना सहूल है वैसा ही भारतीय इतिहास के लिखने में भी है। भारतीय इतिहास के अनेक परिच्छेदों के निर्माण करने में, उन्हें संशोधित एवं प्राप्त तथ्यों को ढूँढ़ करने में इन लेखों का बड़ा उपयोग है। भारतीय इतिहास के निर्माण में जैन साहित्यिक उपादानों की भले ही अब तक उपेक्षा हुई हो पर वर्षों, सदों एवं गर्मियों के आघातों से सुरक्षित इन लेखों से प्राप्त अटल तथ्यों को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

प्रस्तुत लेख संग्रहः—प्रस्तुत लेखों का संग्रह अद्वेय पं० नाथूराम जी प्रेमी की सत्कृपा एवं प्रेरणा का फल है। इसके प्रथम भाग का संकलन एवं सम्पादन डा० हीरालाल जी जैन ने २८-२९ वर्ष पहले किया था। उक्त भाग में ५०० लेख श्रवण वेल्गोल और उसके आस पास के कुछ स्थानों के हैं। इसके बहुत वर्षों बाद अद्वेय प्रेमी जी ने पं० विजयमूर्ति जी एम० ए० शास्त्राचार्य से द्वितीय एवं तृतीय भाग का संकलन कराया। इन दो भागों में ८६६ लेख संगृहीत हैं। इसके संकलन में प्रसिद्ध फ्रेन्च विद्वान् स्व० ए० गेरार्डो द्वारा प्रकाशित जैन शिलालेखों को एक विस्तृत तालिका Repertoire Epigraphie Jaina की सहायता ली गई है। वह तालिका सन् १९०८ में प्रकाशित हुई थी, इसलिए इस संग्रह में उक्त सन् या उससे पहले तक के प्रकाशित लेख ही आ सके हैं, बाद का एक भी लेख नहीं। सभी लेखों का संग्रह तिथिक्रम से किया गया है। उनमें प्रथम भाग में प्रकाशित लेखों का एवं श्वेताम्बर लेखों का यथास्थान निर्देश मात्र कर दिया गया है इससे ग्रन्थ का कलेवर बढ़ नहीं सका।

सन् १९०८ से अब तक अनेक जैन लेख प्रकाश में आ चुके हैं। उनका भी तिथिक्रम से संकलन आवश्यक है। ग्रन्थमाला को चाहिये कि उन लेखों को भी संग्रह कराकर प्रकाशित करे।

२ मथुरा के लेखः एक अध्ययन

प्रस्तुत संग्रह में मथुरा से प्राप्त ८५ लेख संगृहीत हैं। इनमें नं० ४ से लेकर १६ तक के लेखों को अक्षरों की बनावट की दृष्टि से डा० बल्हर ने ईसा

पूर्व १५० से लेकर ईसा की प्रथम शताब्दी के बीच का सिद्ध किया है। नं० १७ से ८६ तक के लेख कुषाणकालीन हैं जिनमें कुछेक पर सम्राट् कनिष्क, हुविष्क एवं वासुदेव के राज्यसंवत्सर दिये गये हैं और कुछेक बिना संवत्सर के हैं। शेष लेख गुप्तकाल से लेकर ११वीं शताब्दी तक के हैं।

इनमें से ८ लेख तो आयागपटों^१ पर, २ लेख ध्वज^२ स्तम्भों पर, ३ लेख तोरणों^३ पर, १ लेख नैगमेय^४ (यक्षप्रतिमा) पर, १ लेख सरस्वती^५ की मूर्ति पर, ५ लेख सर्वतोभद्र^६ प्रतिमाओं पर, और शेष लेख प्रतिमापट्ट या मूर्तियों की चौकियों पर उत्कीर्ण मिले हैं।

उक्त तथा अन्य मथुरा के कंकालों टीले से प्राप्त हुई थी। इस टीले पर कंकाली देवी का एक मन्दिर है। मन्दिर भी एक छोटी-सी भोपड़ी के रूप में है, जिसमें नक्काशीदार एक स्तम्भ का टुकड़ा रखा गया है, जिसे लोग कंकाली देवी मानकर पूजते हैं। इस तरह देवी के नाम से इस टीले का नाम कंकाली पड़ गया।

इसकी सर्व प्रथम खुदाई सन् १८७१ में जनरल कनिंघम ने की थी जिसमें उन्हें तीर्थंकरों की अनेक मूर्तियाँ मिलीं जिनमें कुछ पर कुषाण वंशी प्रतापी सम्राट् कनिष्क के ५ वें वर्ष से लेकर वासुदेव के राज्य के कुषाण संवत् ६८ तक के लेख खुदे। दूसरी खुदाई सन् १८८८-६१ में डा० फ्यूरर ने विस्तृत रूप से की जिससे ७३७ मूर्तियाँ तथा अन्य शिल्पसामग्री प्राप्त हुई। उसके पश्चात् पं० राधाकृष्ण ने भी यहाँ की खुदाई की और अनेक महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त की। इस तरह कंकाली टीला जैन सामग्री के लिए एक निधान सिद्ध हुआ। यहाँ से अनेक

१—नं० ५, ८, ६, १५, १७, ७१, ७३, ८१

२—नं० ४३, ४४

३—नं० ४, १४, ६८

४—नं० १३

५—नं० ५५

६—नं० २२, २६, २७, ४१, १७३

प्रकार की हिन्दू और बौद्ध सामग्रियों में प्राप्त हुई है जिससे ज्ञात होता है कि जैन धर्म की बढ़ती देखकर, हिन्दुओं और बौद्धों ने भी मथुरा को अपना केन्द्र बना लिया था। यह स्थान प्राचीन काल में जैनियों का अतिशय क्षेत्र था।

डा० फ्यूजर को इसी टीले से एक जैन स्तूप भी मिला था। स्तूप की एक ओर विशाल मन्दिर दिगम्बर सम्प्रदाय का और दूसरा श्वेताम्बर सम्प्रदाय का लिखा, पर वे खनन कार्य की असावधानी से छिन्न भिन्न हो गये। खोदने के समय के फोटुओं में ये तथ्य अब भी मौजूद हैं। लेख नं० ५६ से ज्ञात होता है कि इस स्तूप का नाम 'देवनिर्मित वोद्ध स्तूप' था। लेख एक प्रतिमा की चोकी पर पाया गया है जो उक्त स्तूप पर प्रतिष्ठित की गई थी। लेख में कुषाण संवत् ७६ दिया गया है। इस संवत् में कुषाण नरेश वासुदेव का राज्य था। ईस्वी सन् ३री गणना में इस मूर्ति की प्रतिष्ठा ७६ + ७८ = १५४ ईस्वी में हुई थी। उस समय भी यह स्तूप इतना पुराना हो गया था कि लोग इसके वास्तविक बनाने वाले को एकदम भूल गये थे और उसे देवों का बनाया (देवनिर्मित) हुआ मानते थे। इससे प्रतीत होता है कि 'वोद्ध स्तूप' बहुत ही प्राचीन स्तूप था जिसका कि निर्माण कम से कम ईसा पूर्व ५-६ वीं शताब्दी में हुआ होगा। इस अनुमान की पुष्टि का दूसरा प्रमाण यह भी है कि तिब्बतीय विद्वान् तारनाथ ने लिखा है कि मौर्य-काल की कला यक्ष-कला कहलाती थी और उससे पूर्व की कला देवनिर्मित-कला। अतः सिद्ध है कि कंकाली टीले का स्तूप कम से कम मौर्य-काल से पहले अवश्य बना था। जिनप्रम सूरि (१३ वीं १४ वीं १ नं०) ने विविधतीर्थरूप में लिखा है कि पहले यह स्तूप स्वर्ण का बना था, इसमें रत्न बड़े थे, इसे मुनि धर्मरुचि और धर्मगोष की इच्छा से कुबेरा देवों ने सातवें तीर्थ-कर सुपार्श्वनाथ की पुरणस्मृति में बनवाया था। तत्पश्चात् २३ वें तीर्थकर श्री पार्श्वनाथ के समय में इसका निर्माण ईंटों से हुआ था और पाषाण का एक मन्दिर इसके बाहर बनाया गया था। पुनः वीर भगवान् के केवलज्ञान प्राप्त करने के १३०० वर्ष बाद वप्पमट्टि सूरि ने इस स्तूप को भग० पार्श्वनाथ के नाम पर अर्पण करने के लिए इसकी मरम्मत कराई थी। भग० महावीर को केवलज्ञान की

प्राप्ति ईसा से लगभग ५५० वर्ष पहले हुई थी, अतः इस स्तूप की मरम्मत १३०० वर्ष बाद अर्थात् सन् ७५० के लगभग में हुई होगी। और पार्श्वनाथ के समय में इसके ईंटों से बनाये जाने का काल ईसा से ६०० वर्ष से भी पूर्व निश्चित होता है। संभव है देवनिर्मित शब्द यही द्योतित करता है। यदि यह संभावना ठीक है तो भारत वर्ष के जितने स्तूप एवं इमारतें हैं उनमें यह स्तूप सबसे प्राचीन समझना चाहिये।

स्तूप का मूल अभी तक विद्वानों के विवाद का विषय है। किन्हीं का मत है कि यह प्राचीन यज्ञशालाओं का अनुकरण है जब कि दूसरे इसे भग० बुद्ध के उलटकर रखे गये भिक्षुपात्र के आधार पर निर्मित मानते हैं। कभी कभी विशिष्ट पुरुषों के स्मारक रूप में भी स्तूप बनते थे और उसमें उनके अस्थिपूत रखे जाते थे। पर यह आवश्यक नहीं कि सभी स्तूप ऐसे हों। सारनाथ के घमेख स्तूप और चौखण्डी स्तूप में कनिष्ठम को कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ।

स्तूप का तलभाग गोल होता है। नीचे एक गोल चबूतरा, उसके ऊपर ढोल या कुण्ड के आकार की इमारत और उसके भी ऊपर एक अर्ध गोलाकार गुंबज (छतरी) होती है। चबूतरे पर स्तूप के चारों ओर एक प्रदक्षिणा पथ छोड़कर पत्थर का लम्बा खड़ी और आड़ी पटरियों का एक घेरा (Railing) बना रहता है। इस घेरे में अधिकतर चारों दिशाओं में तोरण (gate way) बने होते हैं। ये तोरण बड़े ही सुन्दर बनाये जाते हैं। पत्थर के दो स्तम्भ खड़े करके उनके ऊपर के शिरों पर तान आड़ी पटरियाँ लगा देते हैं। उन्हीं के नीचे से आने जाने का रास्ता रहता है। तोरण तक जाने के लिए सीढ़ियाँ रहती हैं। ये स्तूप पीले और टोस दोनों तरह के मिले हैं।

मथुरा के जैन स्तूप का वर्णन इस प्रकार है:—इस स्तूप के तले का व्यास ४७ फीट था। यह ईंटों का बना था, ईंटें आपस में बराबर न थीं किन्तु छोटी बड़ी थीं। इसकी भूमि का ढाँचा इसके गाड़ी के आकार का था। केन्द्र से बाहर की दीवार तक आठ व्यासार्ध, जिनपर आठ दीवारें स्तूप के भीतर-भीतर ऊपर तक बनी थीं। इन दीवारों के बीच में मिट्टी भरी हुई मिली है। कदाचित् यह स्तूप

ऐसे आ और यह निर्माण की मितव्ययिता के कारण भीतर की ओर केवल ये दीवारें ही बना दी गई थीं। इस कारण भीतर के कुछ हिस्से में ईंट चिनने की ज़रूरत न रही। स्तूप के बाहर की ओर तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ बनी थीं।

यहाँ एक और जैन स्तूप था, उस पर का बहुत छोटा सा लेख मिला है। वह ईसा की तीसरी या चौथी शताब्दी का मालूम होता है।

इन स्तूपों के अतिरिक्त यहाँ कई आयागपट्ट मिले हैं। जिनसे ८ लेख प्रसृत संग्रह में संकलित हुए हैं। ये आयागपट्ट पत्थर के वे चौकोर पट्टिये होते हैं जो अनेकों प्रकार के माङ्गलिक चिन्हों से अंकित करके किसी तीर्थंकर को चढ़ाये जाते थे। मथुरा के इन आयाग पट्टों का जैन कला में विशेष स्थान है। एक आयाग-पट्ट (जिस पर लेख नं० ७१ उत्कीर्ण है) पर १ मोन मिथुन, २ देव विमान यह, ३ श्रीवत्स, ४ वर्धमानक, ५ विरत्न, ६ पुष्पमाला, ७ वैजयन्ती और ८ पूर्णपट ये अष्ट माङ्गलिक चिह्न मिले हैं। दूसरे अन्य आयागपट्टों पर नव्यावर्त स्वस्तिक, कमल आदि चिह्न अङ्कित हैं।

इन पर उत्कीर्ण लेखों से ज्ञात होता है कि ये मन्दिरों में अर्हन्तों की पूजा के लिए रखे जाते थे। अधिकांश ३ अर्हन्तों की प्रतिमाएँ हैं, कुछ में चरणचिह्न हैं। तीन आयागपट्टों पर स्तूपों के चित्र अङ्कित मिले हैं। लेख नं० ८ और १५ वाले आयागपट्ट इनमें से ही हैं। लेख नं० ८ वाला आयागपट्ट (मथुरा संग्रहालय २) अधिक महत्व का है। अनुमान किया जाता है कि उक्त आयाग-पट्ट पर उत्कीर्ण तोरण और वेदिका मण्डित स्तूप मथुरा के विशाल जैन स्तूप की प्रतिकृति है। लेख के अनुसार श्रमणों की आश्रिका गणिका लोणशोभिका की पुत्री गणिका वासु ने अपनी माता, पुत्री, पुत्र और अपने समस्त कुटुम्ब के साथ अर्हत् का एक मन्दिर एक आयागसभा, पानोयह और एक पाषाणसन बनवाये।

इसके अतिरिक्त कंकाली टीले से स्तूप की प्रतिकृति और पूजन आदि के महोत्सव को चित्रित करनेवाले कुछ हमारतों के अंश भी मिले हैं। लेख नं०

६८ ऐसे ही एक तोरण के अंशपर से लिया गया है। इस तोरण पर एक नयन साधु चित्रित है जिसकी कलाई पर एक खरब वस्त्र लटका हुआ है।

यहाँ से सैकड़ों जैन तीर्थंकरों एवं यक्ष-यक्षिणियों की मूर्तियाँ मिली हैं। ये मूर्तियाँ बड़े सादे ढंग से बनाई गई हैं। तीर्थंकरों की मूर्तियाँ खड्गामन एवं पद्मामन दोनों प्रकार की मिली हैं। प्रारम्भिक शताब्दियों की मूर्तियाँ नग्न हैं। इनमें अधिकांश मूर्तियाँ आदिनाथ, अजितनाथ, सुपार्श्वनाथ, शान्तिनाथ, अरिष्टनेमि और वर्धमान की मिली हैं। उस काल में तीर्थंकर के चिन्हों-लाञ्छनों-का आविष्कार न होने के कारण मूर्तियों में प्रायः एक दूसरे से भेद नहीं है। हाँ, आदिनाथ के केश (जटाएँ) तथा पार्श्व और सुपार्श्व के सर्पफण इनको पहचानने में सहायता देते हैं। जैन तीर्थंकरों की मूर्तियाँ नग्न होने के कारण, वक्षस्थल पर श्रीवत्स चिन्ह होने से और शिर पर उष्णीष न होने कारण इस काल की बौद्ध मूर्तियों से अलग आसानी से पहचानी जा सकती है।

मथुरा से इसी समय की चौमुखी मूर्तियाँ मिली हैं जो सर्वतोभद्रिका प्रतिमा अर्थात् वह शुभ मूर्ति जो चारों ओर से देखी जा सके, कहलाती थीं। इन प्रतिमाओं में चारों ओर एक तीर्थंकर की मूर्ति बनी होती है। चौमुखी मूर्तियों में आदिनाथ, महावीर और सुपार्श्वनाथ अवश्य होते हैं। ऐसी मूर्तियाँ कुशाण और गुप्त काल में बहुतायत से बनती थीं। ईस्वी सन् ४७५ के लगभग उत्तर भारत पर हूणों के भयानक आक्रमणों से मथुरा के स्थापत्य को बड़ा धक्का लगा। अतः ईस्वी ६वीं के पश्चात् मथुरा से जो नमूने हमें मिले हैं वे भोड़े और भद्दे हैं। उनमें पहले की सी सजीवता नहीं है। इसी काल के लगभग विना कपड़ेवाली मूर्तियों में कपड़े दिखाये जाने लगे, और सर्वप्रथम राजसिंहासन यक्ष यक्षिणी, त्रिलोचन एवं गजेन्द्र आदि प्रदर्शित होने लगे जो उत्तर गुप्तकाल और उसके बाद की जैन मूर्तियों के विशेष लक्षण हैं। इन्हीं के साथ मध्यकाल में मथुरा के शिल्पियों ने यक्ष यक्षिणियों और जैन मातृकाओं की भी पृथक्

१—बाबू कामताप्रसाद जैन इसे जैनो के अर्धकालकसम्प्रदाय से संबंधित बताते हैं, देखो जैन सि० भास्कर भाग ८ अंक २ पृष्ठ ६३-६६

मूर्तियाँ बनाना प्रारम्भ कीं। जैन मातृकाओं में आदिनाथ की यक्षिणी चक्रेश्वरी, तथा नेमिनाथ की अश्विका देवी की मूर्तियाँ यहाँ मिली हैं। यत्न धरसेन्द्र की मूर्ति भी मिली है।

इन मूर्तियों के सिवाय यहाँ नैगमेष नामक एक यत्न की भी मूर्ति मिली है। नैगमेष या हरि नैगमेष जैन मान्यता के अनुसार सन्तानोत्पत्ति के प्रमुख देवता थे। इनकी पुरुष और स्त्री दोनों विग्रहों में मूर्तियाँ मिली हैं। संभवतः पुरुषशरीर की मूर्तिषाँ पुरुषों के पूजने के लिए और स्त्रीशरीर की मूर्तियाँ स्त्रियों के लिए थीं। इनका मुख बकरी के आकार का होता है। इनके हाथों या कन्धों पर खेलते हुए बच्चे चिन्हित किये गये हैं। गले में लम्बी मोती की माला भी है जो कि इनका विशेष चिह्न है। कुषाणकाल में इन मूर्तियों की विशेष पूजा होती थी। लेख नं० १३ ऐसी ही एक मूर्ति पर से लिया गया है।

मथुरा से प्राप्त ये लेख ऐतिहासिक, धार्मिक एवं सामाजिक दृष्टि से बड़े महत्त्व के हैं। इनमें उल्लिखित शक एवं कुषाण राजाओं के नाम तथा तिथियों से हमें उनके क्रमिक इतिहास तथा राज्य काल की अवधि का पता चलता है।

लेख नं० ५ वै में स्वामी महाक्षत्रप शोडास का संवत्सर ४२ तथा मास दिन दिये हुए हैं। शोडास, महाक्षत्रप रंजुबुल का पुत्र एवं उत्तराधिकारी था। रंजुबुल शक नरेश मोअ के अधीन मथुरा का महाशासक था। यह मोअ ईसा पूर्व ६० के लगभग अफगानिस्तान एवं पंजाब का शासक था। उसके अधीन मथुरा का शासक रंजुबुल पोछे स्वतंत्र हो गया था जैसा कि उसकी शाही उपाधियों से मालूम होता है। लेख में शोडास की स्वामी एवं महाक्षत्रप उपाधियाँ दी गई हैं जो कि उसके स्वतन्त्र शासक होने की परिचायक हैं। यदि उक्त लेख का संवत्सर ४२ विक्रम-संवत् माना जाय जैसा कि स्टीन कोनो सा० का मत है, तो शोडास ईसा पूर्व १७-१६ में राज्य करता था।

शकों के राज्य पर अधिकार करनेवाले ये कुषाणवंशी राजा। इनका राज्य भारत वर्ष पर ईसा की प्रथम शताब्दी के मध्य से स्थापित हुआ था। इस वंश का सबसे बड़ा प्रतापी राजा कनिष्क हुआ, जिसने अपने साम्राज्य के समय

से एक संवत् चलाया या जो कि विद्वानों के मत से सन् ७८ ई० से प्रारम्भ होता है। इतिहासज्ञों के अनुसार कनिष्क ने सन् १०० ई० तक अर्थात् २२ वर्ष राज्य किया। इसके बाद उसके उत्तराधिकारी वासिष्क ने सन् १०८ तक, तत्पश्चात् उसके उत्तराधिकारी हुविष्क ने सन् १३८ तक तथा उसके उत्तराधिकारी वासुदेव ने सन् १७६ तक राज्य किया।

प्रस्तुत संग्रह में लेख नं० १६ में देवपुत्र कनिष्क लिखा है और राज्य सं० ५ दिया है। इसी तरह लेख नं० २४ में महाराज राजातिराज देवपुत्र षाहि कनिष्क तथा राज्य सं० ७ दिया है और लेख नं० २५ में महाराज कनिष्क तथा सं० ६ दिया गया है। इन लेखों के सिवाय लेख नं० १७, १८, १९, २०, २१, २६, २८, २९, ३०, ३३ और ३४ में राजा का नाम तो अंकित नहीं है पर राज्य संवत्सर से मालूम होता है कि ये कनिष्क के ४४ वर्षों से लेकर २२वें तक के लेख हैं। लेख नं० ३५-३८ तक कुषाण सं० २५ से २९ तक के हैं जो कि वासिष्क के के राज्य काल के होते हैं। यद्यपि इनमें राजा का नाम या तो दिया ही नहीं गया या स्पष्ट उत्कीर्ण नहीं हो पाया है। लेख नं० ४० से ५६ तक के लेख कुषाण सं० ३१ से ६० के भीतर के हैं जो कि हुविष्क के शासनकाल के हैं। इनमें लेख नं० ४३, ४५, ४८, ५० और ५६ में तो हुविष्क का नाम दिया हुआ है। लेख नं० ५८ से ७० तक कुषाण सं० ६२ से ९८ के अन्तर्गत हैं जो कि वासुदेव के राज्यकाल में पड़ते हैं उनमें से ६२, ६५ और ६९ में तो वासुदेव का नाम भी दिया हुआ है। इतिहासज्ञों के मत से लेख नं० ६९ वासुदेव के राज्य का अन्तिम अवधि का शीतक है।

यहाँ लेखों के सम्बन्ध में यह सब विस्तार पूर्वक इस लिए लिखना पड़ा कि इस संग्रह में भूल से कतिपय लेखों पर दूसरे राजाओं का नाम दिया गया है जो कि इतिहासज्ञों के लिये भ्रम उत्पन्न कर सकता है। इन राजाओं में कनिष्क, वासिष्क एवं हुविष्क तो बौद्ध धर्म प्रतिपालक थे और वासुदेव शैव मत का, पर अपने शासन में वे लोग अन्य धर्मों के प्रति बड़े उदार थे। इनके राज्यकाल में जैन धर्म का हित सुरक्षित था और वह खूब समृद्ध स्थिति में था।

सामयिक इतिहास की दृष्टि से भी ये लेख बड़े महत्व के हैं। इन लेखों में गणिका (८) नर्तकी (१५) लुहार (३१, ५४) गन्धिक (४१, ४२, ६२, ६६) सुनार (६७), ग्रामिक (४४) तथा श्रद्धी (१६, २६, ४३) आदि जातियों या वर्ग के लोगों के नाम मिलते हैं जिन्होंने मूर्ति आदि का निर्माण, प्रतिष्ठा एवं दान कार्य किये थे। इनसे विदित होता है कि २ हजार वर्ष पहले जैन संघ में सभी व्यवसाय के लोग बराबरी से धर्मारोपण करते थे। अधिकांश लेखों में दातावर्ग के रूप में स्त्रियों की प्रधानता है जो बड़े गर्व के साथ अपने पुण्य का भागधेय अपने माता-पिता सास-ससुर पुत्र-पुत्री, भाई आदि आत्माओं को बनाती थीं (१४)। इन स्त्रियों में बहुतसी विधवाएं थीं जो वैधव्य के शोक से घर रहस्यी छोड़कर विरक्त हो जैन संघ में आर्यिका हो गयीं थीं। लेख नं० ४२ में ऐसी ही स्त्री कुमारमित्रा थी जिसे लेख में आर्या कुमारमित्रा लिखा है तथा उसे संशित, मखित एवं बोधित कहा गया है।

इन लेखों से एक और महत्व की बात सूचित होती है कि उस समय लोग अपने व्यक्तिवाचक नाम के साथ माता का नाम जोड़ते थे जैसे दात्सीपुत्र, तेवणी-पुत्र, वैहिदरीपुत्र, गोतिपुत्र, मोगलिपुत्र एवं कौशिकिपुत्र आदि। ऐसे नाम सांस्कृतिक-इतिहास निर्माण की दृष्टि से मूल्यवान् हैं।

जैन धर्म के प्राचीन इतिहास की दृष्टि से मथुरा के ये लेख और भी बड़े महत्व के हैं। इन लेखों में मूर्ति के संस्थापक ने न केवल अपना ही नाम उत्कीर्ण कराया है बल्कि अपने धर्मगुरुओं का नाम भी, जिनके कि सम्प्रदाय का वह था। इनमें आचार्यों की उपाधियाँ—आर्य, गणी, वाचक, महावाचक, आतपिक आदि जो कि उस समय प्रचलित थीं, दी गई हैं। लेखों में अनेक गणों, कुलों और शाखाओं के नाम भी दिये गये हैं। ठीक इस प्रकार के गण, कुल एवं शाखा, श्वेताम्बर आगम 'कल्पसूत्र' की रथावरावली में तथा कुछ वाचक आचार्यों के नाम नन्दिसूत्र की पट्टावली में मिलते हैं। महत्व की बात तो यह है कि लेखों का कुछ हिस्सा घिस जाने या पत्थर के कारीगर द्वारा गलत ढंग से उत्कीर्ण

किये जाने या लेखों का गलत छापा लेने तथा नकल को गलत पढ़े जाने पर भी उक्त दोनों पट्टालियों के कई नामों के साथ साम्य स्थापित किया जा सकता है।

संभव है सम्प्रदाय का नाम गण, उसके विभाग का नाम कुल तथा उसके उपविभाग का नाम शाखा था। ये नाम जैन श्रमणों के उन विभिन्न संघों की ओर संकेत करते हैं जो कि ईसा पूर्व की कुछ शताब्दियों में जैन श्रमणों में अपनी अपनी आचार्य परम्परा और पर्यटन भूमि की विभिन्नता के कारण पैदा होना शुरू हुए थे।

कल्पसूत्र स्थविरावली के अनुसार वर्धमान स्वामी की परम्परा में ६ वीं पीढ़ी में आर्य सुहस्ति हुए जो कि आर्य स्थूलभद्र के अन्तेवासी थे। इन आर्य सुहस्ति के १२ अन्तेवासी थे। इनमें से आर्य रोहण, आर्य कामर्धि, आर्य सुस्थित तथा सुप्रतिबुद्ध एवं आर्य श्रोतुम से निकलने वाले गण, कुल एवं शाखाओं के कई एक नाम लेखों में पहिचाने जा सके हैं।

तदनुसार आर्य रोहण गणी से 'उद्देह' गण निकला जो कि हमारे लेख २४ एवं ६६ का 'उद्देहिय' गण समझना चाहिये। उक्त गणके ६ कुल थे जिनमें से केवल दो की पहिचान हो सकी है। 'नागभूय' कुल हमारे लेख नं० २४ का 'नागभूतिय' होना चाहिये। 'परिहासक' गलत रूप से लिखा या पढ़ा जाकर लेख नं० ६६ में पुरिध के रूप में प्रतीत होता है। उक्त गण की चार शाखाएँ थीं जिनमें एक शाखा 'पुण्य पत्तिका' लेख नं० ६६ की पेतपुत्रिका होना चाहिये।

आर्य कामर्धि गणी से वेसवाडिय गण निकला। यद्यपि यह नाम लेखों में स्पष्ट रूपसे उत्कीर्ण नहीं मिला लेकिन उक्त गणके चारकुलों में से एक 'मेहियकुल' मेहिक के रूप में २६ और ६३ वें लेख में प्राप्त हुआ है।

आर्य सुस्थित एवं सुप्रतिबुद्ध गणी से 'कोडिय' गण निकला जो कि अनेकों लेखों में कोट्टिय के रूप में मिलता है। इस गण के चार कुलों में पहले कुल 'बेमलिज' को तो अनेकों लेखों का ब्रह्मदासिक कुल हो समझना चाहिये। दूसरा 'वत्थलिज' भी लेख नं० २७ कावच्छलिय प्रतीत होता है। तृतीय 'वाथिज' कुल

अनेक लेखों से प्राप्त ठामिय कुल के रूप में प्राप्त हुआ है। इसी तरह चतुर्थ 'परहवाहण' तो परहवणय कुल (६६) मालूम होता है। उक्त गण की चार शाखायें थीं। प्रथम 'उच्चानगरि' तो अनेक लेखों की उच्छेनगरी ही है। द्वितीय 'विज्जाहरी' शाखा लेख नं० ६२ की विद्याधरी शाखा मालूम होती है। तृतीय 'बहरी' शाखा को हम अनेक लेखों में बेरिय, बेर, बैर, बहर के रूप में देख सकते हैं। चतुर्थ 'मज्झिमिल्ला' शाखा लेख नं० ६६ की मज्झम शाखा ही समझना चाहिये

आर्य श्रीगुप्त गणी से 'चारण' गण निकला था जो कि मथुरा के अनेक लेखों में वारण गण के रूप में पढ़ा गया है। उससे सम्बन्धित ७ कुलों में से 'पीड-धम्मिअ' लेख नं० ३४ एवं ४७ का पेतवमिक मालूम होता है। 'हालिज्ज' कुल लेख नं० १७, ४४ एवं ८० का आर्य हाटिकिय प्रतीत होता है। 'पूसमित्तिज्ज' लेख नं० ३७ का पुश्यमित्रीय तथा 'अज्जवेडय' कुल लेख नं० ४५ का आर्यचेटिय एवं नं० ५२ का अय्यमिस्त (?) और 'कण्हसय' लेख नं० ७६ का कनियसिक विदित होते हैं। इसी तरह उक्त गण की चार शाखाओं में 'हारियमालागारी' लेख नं० ४५ की 'हरीतमालकाधी', 'वज्जनागरी' लेख नं० ११, ४४ एवं ८० की वाज-नगरी, 'संकासीआ' लेख नं० ५२ की सं (कासिया) तथा 'गवेधुका' लेख नं० ७६ में ओद (संभव गोदुक) के रूप में पढ़ी गयी है।

इस तरह ३ गण, १२ कुल एवं १० शाखाओं के नाम लेखों और कल्पसूत्र स्थविरावली में बराबर मिल जाते हैं। केवल लेख नं० ८२ के वारण गण के नाडिक कुल का मिलान नहीं हो सका है। संभव है यह नाम अन्य नामों के समान लिखने की अशुद्धियों के कारण अज्ञात सा प्रतीत होता है।

कल्पसूत्र स्थविरावली के अनुसार काल की दृष्टि से इन गणों, कुलों और शाखाओं का आविर्भाव वीर सं० २४५-२६१ अर्थात् ई० पूर्वं २८२-२३६ के बीच हुआ था और मथुरा के लेखों से मालूम होता है कि ये गुप्त संवत् ११३ अर्थात् सन् ४३४ तक बराबर चलते रहे।

मथुरा के इन लेखों में उक्त गणों, कुलों एवं शाखाओं के सिवाय अनेकों आचार्यों के नाम आते हैं जो कि वाचक आदि पद से विभूषित थे। श्वेताम्बर आगम नन्दिनसूत्र में एक वाचक वंश की पट्टावली दी हुई है, जिसके अनेकों नामों का मिलान शिलालेखों के नामों से किया जा सकता है। उक्त पट्टावली में सुधर्म गणधर की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए ७वें आर्य स्थूलभद्र के शिष्य सुहस्ति से चलने वाले वाचक वंश का वर्णन है जो कि वीर निर्वाण सं० २४५ से लेकर ६६४ तक अर्थात् ई० पूर्व २८२ से लेकर सन् ४६७ तक चलता रहा। उक्त वंश में ही आर्य देवर्षि क्षमाश्रमण हुए थे जिन्होंने वर्तमान श्वेताम्बर आगमों को अन्तिम रूप दिया था। उक्त पट्टावली में गण, कुल एवं शाखाओं का नाम बिल्कुल नहीं दिया। संभव है वहाँ गण, कुल शाखादि को महत्त्व न दे वाचक पदधारी आचार्यों का नाम ही गिनाया गया है। जो भी हो, यहाँ उक्त पट्टावली और लेखों के कुछ नामों में काल दृष्टि से साम्य प्रकट किया जाता है।

१३—आर्य समुद्र, वीर नि० सं०...महावाचक, गणि समदि (ले० नं० ५२)

१४—आर्य मंगु^१, ,, ४६७^२ गणि मंगुहस्ति (,, ५४)

१५—आर्य नन्दिल क्षमण आर्य नन्दिक (,, ४१)

गणी नन्दी (,, ६७)

१६—आर्य नागहस्ति (,, ६२०^३-६८६) वाचक आर्य पस्तुहस्ति (,, ५४)

१—मुनि दर्शनविजय, पट्टावली समुच्चय, भा० १ पृष्ठ १३ पर आर्य मंगुकी गाथा के अनन्तर दो प्रक्षिप्त गाथाएं आती हैं, जिनमें अज्जवम्म, भद्रगुप्त, अज्जवर, अज्जरविल्ल के नाम आते हैं।

२—वही, पृष्ठ ४७, तपागच्छपट्टावली। इस पट्टावली का रचना काल क्रि.म सं० १६४६ है।

३—वही, पृष्ठ १६, 'सिरि बुधमाकाल समयसंवर्य' नामक पट्टावली का

एवं हस्तहस्ति* (ले० नं० ५५)
 २२—भूतदिन (वी० नि० ६०४-६८३*) दन्तिल (,, ६२)

लेख नं० ५२ पर जिसमें कि महावाचक गणेश समदि का नाम आता है, कुषाण संवत् ५० अंकित है जो कि गणना में वीर निर्वाण सं० ६५५ आता है* । नन्दिपुर पट्टावली में आर्य समुद्र का नाम आर्य मंगु से पहले आता है । आर्य मंगु का समय पट्टावली के अनुसार वीर नि० सं० ४६७ है । यदि यह ठीक है तब तो आर्य समुद्र का समय भी आर्य मंगु से पहले होना चाहिये । लेख में दिया गया कुषाण सं० ५० (वी० नि० सं० ६५५) यदि आर्य समदि का समय है तो इस हिसाब से पट्टावली के समय और लेख के समय में लगभग १८८ वर्ष का अन्तर आता है । पर वास्तव में लेख नं० ५२ में आर्य समदि का समय नहीं दिया गया बल्कि वह आर्य दिनर (?) आदि की एक शिष्या द्वारा मूर्ति स्थापना का समय है । उक्त लेख में समदि शब्द के बाद कई अक्षर छिप गये हैं । यदि

रचना काल वि० सं० १३२७ है ।

१. शुद्ध नाम हस्ति-हस्ति प्रतीत होता है । हस्ति का पर्यायवाची नाग होता है । यह संभव है कि नागहस्ति को लेख में हस्ति-हस्ति लिखा गया है । संभव है लेख को उत्कीर्ण करने वाले की भूल से हस्ति शब्द धस्तु हो गया हो, और दूसरे लेख में हस्ति का हस्त हो गया हो ।
२. वही, पृष्ठ १८, दिन और दन्तिल दोनों शब्द दत्त शब्द के प्राकृत रूप होते हैं ।
३. जैन परम्परा के अनुसार वीर निर्वाण का समय विक्रम सं० से ४७० वर्ष पूर्व है, अतः ई० सन् पूर्व ५२७ होगा । कुषाण संवत् ईस्वी सन् ७८ से प्रारंभ होता है अतः कुषाण संवत् के प्रारंभ में ५२७ + ७८ = ६०५ वीर निर्वाण सं० समझना चाहिये । डा० याकोबी के मतानुसार वीर निर्वाण ई० सन् पूर्व ४६७ में होता है ।

अक्षरों की पूर्ति आद्यचर या आद्यचरी^१ शब्द से की जाय तो यह कहा जा सकता है कि वह शिष्या या उसके गुरु, महावाचक समदि के आद्यचरी या आद्यचर थे। आद्यचर शब्द का यदि यह अर्थ मान लिया जाय कि उक्त आचार्य की परम्परा में विश्वास करने वाला तो यह संभावना करनी पड़ेगी कि महावाचक समदि की परम्परा १८८ वर्ष या उसके कुछ अधिक वर्षों तक चलती रही^२। इसी हालत में लेख और पट्टावली के आर्य समदि और आर्य समुद्र का समीकरण संभव है।

इसी तरह गण्धि आर्य मंगुहस्ति का उल्लेख करने वाले लेख नं० ५४ का समय कुषाण सं० ५२ दिया गया है जो कि वी० नि० सं० ६५७ होता है। इस लेख में जो समय दिया गया है वह है वाचक आर्य धस्तुहस्ति के शिष्य एवं गण्धि आर्य मंगुहस्ति के आद्यचर वाचक आर्य दिवित का। पट्टावली में आर्य मंगु का समय वी० नि० सं० ४६७ दिया गया है। लेखगत समय वी० नि० सं० ६५७ (कुषाण सं० ५२) से संगति बैटाने के लिए यहाँ यह समझना चाहिए कि आर्य मंगु की परम्परा कम से कम १६० वर्ष तक चलती रही।

१. मथुरा के लेख नं० १७ में सटचरी, ४३ में सटचरिय, ५४ में षटचरो तथा ५५ में श्रद्धचरों शब्द आते हैं।

२. यह संभावना इसलिए करना पड़ी कि उस काल में एक समय में ही आचार्यों की कई परम्परायें चलती थीं। श्वेताम्बर जैन पट्टावलियों के देखने से यह बात भली भाँति विदित होती है कि आर्य सुहस्ति के बाद ऐसी अनेक परम्पराओं का उद्गम हुआ था। कोई वाचक परम्परा थी, कोई युगप्रधान परम्परा थी तथा कोई गुरु परम्परा थी आदि, तथा उन आचार्यों से कई गण, कुल और शाखा निकले थे। जिन परम्पराओं की स्मृति रही उनका अंकन तो हो गया, शेष कालदोष से झुत हो गई।

शताब्दी या उसके कुछ बाद तक अच्छा संगठित था इसमें कई प्रभावशाली गण थे जिन में से पुत्रागच्छ मूलगण, बलहरि गण और कण्डूर गण मूलसंघ में शामिल कर लिए गये और नन्दिसंघ को द्रविड संघ और पीछे मूलसंघ ने अपना लिया ।

कूर्चकसंघ

कर्नाटक प्रान्त में ईस्वी पांचवी शताब्दी या उसके पहले जैनो का एक सम्प्रदाय कूर्चक नाम से था और कदम्बवंशी राजाओं के लेखों (६८, ६९) से ज्ञात होता है कि वह निर्ग्रन्थ संघ, श्वेतपट (श्वेताम्बर) संघ एवं यापनीय संघ से पृथक् था । शब्देय प्रेमी जो का अनुमान है कि यह कूर्चक जैन साधुओं का ऐसा सम्प्रदाय होना चाहिये जो दाढ़ी-मूँछ रखता हो । प्राचीनकाल में जटाधारी, शिखाधारी, मुड़िया, कूर्चक, वस्त्रधारी और नग्न आदि अनेक प्रकार के अजैन साधु थे । जान पड़ता है कि इसी तरह जैनो में भी साधुओं का ऐसा सम्प्रदाय था जो दाढ़ी-मूँछ (कूर्चक) रखने के कारण कूर्चक कहलाता होगा । वरागचरित्र के कर्ता जटाचार्य सिंहनन्दि सम्भव है ऐसे ही साधुओं में थे जिनकी जटाओं का वर्णन (जटः प्रचलवृत्तयः) आचार्य जिनसेन ने अपने आदिपुराण में किया है ।

कदम्बवंशी राजाओं के एक लेख (६९) में इस सम्प्रदाय का यापनीय और निर्ग्रन्थों के साथ उल्लेख है । लेख में 'यापनीयनिर्ग्रन्थकूर्चकानां' बहुवचनान्त पद सूचित करता है कि यापनीय, निर्ग्रन्थ और कूर्चक तीन पृथक् सम्प्रदाय थे ॥ कूर्चक सम्प्रदाय के भी कई संघ थे इससे उक्त सम्प्रदाय का लेख नं० १०३ में बहुवचन (कूर्चकानाम्) प्रयोग किया है । यदि लेख नं० ६९ के कूर्चक पद को बहुवचनान्त मान निर्ग्रन्थ पद को उसका विशेषण मान लें, तो कहना होगा कि वह संघ निर्ग्रन्थ अर्थात् दिगम्बर सम्प्रदाय का ही एक भेद था । कदम्ब मृगेशकर्मा ने अन्य दो जैन सम्प्रदायों के समय इसे भी भूमिदान देकर संस्कृत किया था । दूसरे एक लेख (१०३) में इस संघ के अवान्तर वारिषेयाचार्य संघ का उल्लेख

है। साथ में लिखा है कि उक्तसंघ के प्रधान मुनि चन्द्रज्ञान्त को कदम्ब नरेश हरिवर्मा ने अपने पितृव्य शिवरथ के उपदेशसे सिंह सेनापति के पुत्र मृगेश द्वारा निर्मापित जैन मन्दिर की अष्टाद्विका पूजा के लिए तथा सर्व संघ के भोजन के लिए वसुन्तवाटक नामक ग्राम दान में दिया था। लेख नं० १०४ में अहरिष्टि नामक एक और श्रमण संघ का उल्लेख है जिसे सेन्द्रक सामन्त भानुशक्ति की प्रार्थना पर कदम्ब नरेश हरिवर्मा ने मरदे नामक ग्राम दान में दिया था। उक्त संघ के आचार्य धर्मनन्दि को यह दान में भेंट किया गया था ताकि वे अपने अधीन चैत्यालय की पूजा आदि का प्रबन्ध कर सकें और उस दान का उपयोग साधुओं के लिए भी कर सकें। यद्यपि इस लेख में कूर्वक सम्प्रदाय का उल्लेख नहीं है तथापि जान पड़ता है कि वारिषेणाचार्य संघ के समान ही अहरिष्टि श्रमण संघ भी कूर्वकों का एक भेद था।

द्राविड़ संघ

द्रविड़ देश में रहने वाले जैन साधु समुदाय का नाम द्राविड़ संघ है। इस संघ के अनेकों लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं। इन लेखों में इसे द्रमिड़, द्रविड़, द्रविण, द्रविड, द्राविड, दविल, दरविल या तिवुल नाम से उल्लिखित किया गया है। नामगत ये सब भेद लेखक या उत्कीर्णक के कारण हुए, प्रतीत होते हैं। द्रविड़ देश वास्तव में वर्तमान आन्ध्र और मद्रास प्रान्त का कुछ हिस्सा है जिसे सुविधा की दृष्टि से तामिल देश भी कह सकते हैं। इस देश में जैनधर्म पहुँचने का समय बहुत प्राचीन है। उस देश के प्राचीन साधु समुदाय का कोई संघ रहा होगा। उसका क्या नाम था यह हमें मालुम नहीं पर देवसेनाचार्य ने अपने दर्शनसार में अन्य संघों के उत्पत्ति के वर्णन में द्राविड़ संघ के सम्बन्ध में लिखा है कि पूज्यपाद के शिष्य वज्रनन्दि ने वि० सं० ५२६ में दक्षिण मथुरा (मदुरा) में द्राविड़संघ की स्थापना की। इस संघ को वहाँ जैनाभासों में गिनाया गया है और वज्रनन्दि के

विषय में लिखा है कि उस दुष्ट ने कछार, खेत, बसदि और वाणिज्य से जीविका निर्वाह करते हुए शीतल जल से स्नान करते हुए प्रचुर पाप अर्जित किया ।^१ इस कथन में सच्चाई कहां तक है यह तो हम नहीं कह सकते पर इन लेखों में इस संघ के अनेक प्रतिष्ठित और विद्वान् आचार्यों को देखते हुए ऐसा लगता है कि शायद संघीय विद्वेष के कारण मूलसंघ के उक्त आचार्यों ने एक प्राचीन आचार्य के सम्बन्ध में ऐसी कट्टाकृति कह दी हो ।

इस संघ से सम्बन्धित इस संग्रह के सभी लेख ईस्वी १०-११वीं शताब्दी या उसके ही बाद के हैं । इससे पहले इसकी प्राचीनता का द्योतक शायद ही कोई लेख मिला हो, तथा दसवीं शताब्दी से पहले का ऐसा कोई ग्रन्थ भी नहीं जो इस संघ के इतिहास पर प्रकाश डालें ।

इस संघ के प्रायः सभी लेख कोङ्गात्ववंशी, शान्तरवंशी तथा होयसल-वंशी राजाओं के राज्यकाल के हैं जिससे ज्ञात होता है कि उन वंशों के नरेशों का इस संघ को संरक्षण प्राप्त था । अधिकांश लेख होयसल नरेशों के हैं । इन लेखों से यह भी ज्ञात होता है कि इस संघ के आचार्यों ने पद्मावती देवी की पूजा एवं प्रतिष्ठा के प्रसार में बड़ा योग दिया था । इस संघ के कई लेखों में शान्तर और होयसलवंश के आदि राजाओं द्वारा राज्य सत्ता पाने में पद्मावती के चमत्कार या प्रभाव की सहायता दिखायी गई है । लेखों से यह भी ज्ञात होता है कि इस संघ के साधु बसदि या जैन मन्दिरों में रहते थे । उनका जीर्णोद्धार और श्रुतियों को आहार दान, तथा भूमि, जागीर आदि का प्रबन्ध करते थे ।

१. सिरिपुज्जपादसोसो दाविडसंघस्स कारगो दुट्ठो ।

यामेण वज्जणंदी पाहुडवेदी महासत्थो ॥ २५ ॥

पञ्चसए छुब्बीसे विक्कमरायस्स मरणपत्तस्स ।

दक्खिणमहुरा जादो दाविडसंघो महामोहो ॥ २६ ॥

कच्छं खेतं वसहिं वाणिज्जं कारिउण जीवन्तो ।

रहंतो सीयलनीरे पावं पउरं च संवेदि ॥ २७ ॥

इस संघ के आदि एवं प्राचीन कुछ लेख होयसलों के उत्पत्ति स्थान अङ्गदि (सोसेदूर) से ही प्राप्त हुए हैं। इस स्थान के एक लेख नं० १६६ (सन् ९६० के लगभग) में इस संघ को द्रविड संघ कोण्डकुन्दान्वय, तथा दूसरे लेख नं० १७२ (सन् १०४० ई० ?) में मूलसंघ द्रविडान्वय लिखा है। पर ई० ११ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध के लेख नं० १८२, १८६, १९०, १९२, २०२, २१४, २१५, २१६ और २२६ में इसका द्रविड़ गण के रूप में नन्दिसंघ इरुङ्गलान्वय या अरुङ्गलान्वय के साथ उल्लेख किया गया है। इन निर्देशों से यह अनुमान होता है कि प्रारम्भ में नव संगठित द्रविड़ संघ ने अपना आधार या तो मूलसंघ को या कुन्दकुन्दान्वय को बनाया होगा पर पीछे यापनीय सम्प्रदाय के विशेष प्रभावशाली नन्दिसंघ में इस सम्प्रदाय ने अपना व्यावहारिक रूप पाने के लिए उससे विशेष सम्बन्ध रखा या द्रविड़ गण के रूप में उक्त संघ के अन्तर्गत हो गया। पीछे यह द्रविड़ गण इतना प्रभावशाली हुआ कि उसे ही संघ का रूप दे दिया गया और साथ में कुछ लेखों (२१३-२१५) में नन्दिसंघ को नन्दिगण के रूप में निर्दिष्ट किया गया पर पीछे उसको उसी रूप (नन्दिसंघ) में उल्लेख किया गया है। दर्शनसार (१० वीं शता०) में द्रविड़ संघ को यापनीयों के साथ जो जैनाभास कहा गया है, वह संभव है, इस ओर ही संकेत कर रहा है।

होयसलों के उत्पत्तिस्थान अङ्गदि (सोसेदूर) से इस संघ के आदि एवं प्राचीन लेखों की प्राप्ति से हम अनुमान करते हैं कि इस संघ के प्रारम्भिक आचार्यों ने जैन धर्म संरक्षक होयसल नरेशों को ऊपर उठाने में अवश्य सहायता की होगी, अथवा प्रगतिशील दोनों—राज्य एवं संघ—ने एक दूसरे को बढ़ाने की कोशिश की होगी^१। होयसल वंश के अनेकों नरेश और सेनापति इस संघ के

१. बहुत संभव है कि होयसल वंश के समुद्रारक मुदत्तमुनि (४५७) या वर्धमान मुनि (६६७) लेख नं० १६६ में आये त्रिकाल मौनि देव हो या विमलचन्द्राचार्य के सधर्मा कोई और मुनि हों।

भक्त थे हालां कि उन्होंने अपनी भक्ति एवं आदर दूसरे जैन संघों के प्रति भी प्रदर्शित किया है। धार्मिक उदारता सचमुच में उस युग की देन थी।

इसके बाद इस नवीन संघ के एक प्रमुख आचार्य के रूप में वज्रपाणि पण्डित का नाम आता है। लेख नं० १७८ में इन्हें द्रविड़ान्वय मूलसंघ का तथा नं० १८५ में सूरस्थ गण का लिखा है। पिछले लेख में उनकी एक गृहस्थ शिष्या के दान का उल्लेख है। लेख नं० १७८ की शुरु की पक्तियां भन हैं पर 'तर्काच्चालित' आदि विशेषणों से प्रतीत होता है कि ये बड़े तार्किक थे। ये होयसल नरेश राचमल्ल भूपाल (नृपकाम) के गुरु थे और इन्होंने होयसलों के उत्पत्तिस्थान सोसेवर में अपना जीवन बिता कर संन्यास मरण किया था। लेख में यद्यपि काल निर्देश नहीं है फिर भी उनका समय द्रविड़ संघ का प्रथम साहित्यिक उल्लेख करने वाले ग्रन्थ दर्शनसार और होयसल नृपकाल के समय के आसपास होना चाहिये। देवसेनाचार्य के दर्शनसार में जिस वज्रनान्द का वर्णन किया गया है और उनके द्वारा प्रवृत्त जिस शिथिलाचार की ओर संकेत किया गया है, उससे प्रतीत होता है कि इस संघ की स्थापना देवसेन के समय (१० वीं शता०) या उससे कुछ पूर्व हुई है। वि० सं० ५२६* के जिस वज्रनान्द को ग्रन्थकर्ता ने शिथिलाचार फैलाने का दोषी ठहराया है, उसका उल्लेख किसी लेख या उनसे पूर्व किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता। फिर जिन कटुशब्दों द्वारा एक संघ के अनुयायी द्वारा दूसरे संघ के प्रतिष्ठापक आचार्य की भर्त्सना की गई इससे प्रतीत होता है कि वे समकालीन या कुछ ही समय पूर्ववर्ती रहे होंगे। संभव है इस लेख के वज्रपाणि ही वज्रनान्द हों, पर इस अनुमान की पुष्टि के लिए अभी और प्रमाणों की आवश्यकता है।

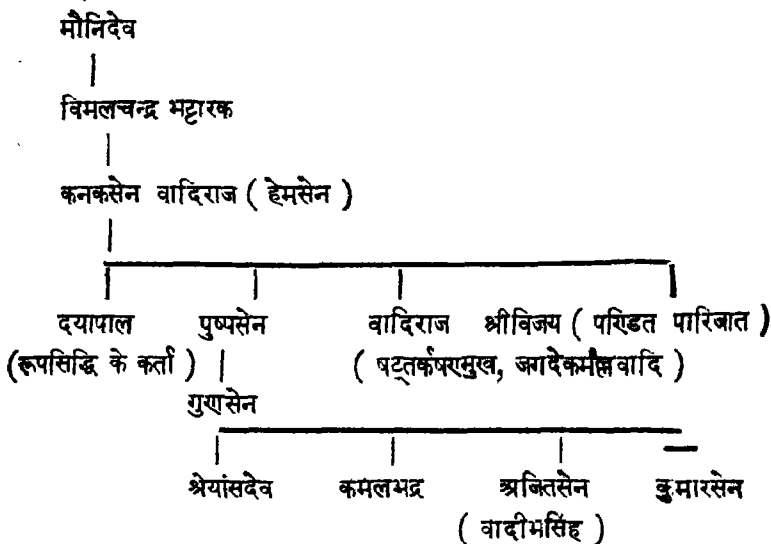
वज्रपाणि पण्डित की आगे पीछे की गुरुपरम्परा का वर्णन हमें किसी लेख से प्राप्त नहीं हुआ। इसके बाद इस संघ के लेखों में नान्दिसंघ के आचार्यों की परम्परा चलने लगती है। इस संघ के अनेकों ऐसे लेख हैं जो कि पढ़ावलां कहे जा सकते हैं पर उनमें गुरुपरम्परा का क्रम व्यवस्थित न होने से कम से कम प्राचीन आचार्यों के क्रम पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अनेकों लेखों

(२१३-२१४ आदि) में वर्धमान, एवं गौतमस्वामी के उल्लेख पूर्वक कृतिय प्रसिद्ध जैनाचार्यों का निर्देश किया गया है—जैसे कोण्डकुन्दाचार्य, भद्रबाहु, समन्तभद्र-स्वामी, सिंहनन्दि, अकलंक देव, वज्रनन्दि, पूज्यपाद स्वामी आदि । इन लेखों में यह दिखाने का प्रयत्न किया गया है कि प्रायः सभी प्रतिष्ठित प्राचीन आचार्य द्रविड़ संघ के नन्दिसंघ के अन्तर्गत थे । हम पहले संभावना कर चुके हैं कि नन्दि संघ द्रविड़ संघ में यापनीय संघ से आया है । नन्दिसंघ की एक प्राचीन प्राकृत पट्टावली भी है^१ जिसमें भगवान् महावीर के बाद ६८३ वर्षों तक की परम्परा दी गई है । उसके बाद के क्रम का उल्लेख करने वाली कोई प्रामाणिक पट्टावली उपलब्ध नहीं होती । संभव है द्रविड़ संघ में आकर नन्दिसंघ के परचात्कालीन आचार्यों ने अपनी स्मृति से कुछ परम्परा को सुरक्षित रखने के लिए लेखों में उक्त आचार्यों का निर्देश किया हो । यह निर्देश सूचित करता है कि उक्त आचार्य उस नन्दिसंघ के अन्तर्गत थे जो कि प्रारम्भिक शताब्दियों में यापनीय था ।

इस संघ के अन्तर्गत नन्दिसंघ के साथ प्रत्येक लेख में अरुङ्गलान्वय का उल्लेख मिलता है । अरुङ्गलान्वय किसी स्थानविशेष की अपेक्षा सूचित करता है । अरुङ्गल नाम का स्थान भी तामिल प्रान्त के गुडियपत्तन तालुका में है जो कि एक प्राचीन जैन स्थान था । हम यापनीय संघ के वर्णन में देख चुके हैं कि तामिल प्रान्त में यापनीय नन्दिसंघ का अस्तित्व पूर्विय चालुक्यों के राज्य में था । द्रविड़ संघ, नन्दिसंघ, अरुङ्गलान्वय इन तीनों शब्दों का एकत्र प्रयोग हमें निःसन्देह सूचित करता है कि वह तामिल प्रान्त का नन्दिसंघ था जो कि अरुङ्गल स्थान से उद्भूत हुआ था । इससे अब हमें यह कहने में संकोच न होना चाहिये कि तामिल प्रान्त के यापनीयों के नन्दिसंघ से ही द्रविड़ संघ के नन्दिसंघ को उत्तराधिकार मिला था ।

१. षड्खंडागम, पुस्तक १, पृ० २४-२७ । संभव है यह पट्टावली प्राचीन यापनीय नन्दिसंघ की हो ।

११-१२ वीं शताब्दी में इस संघ के मुनियों की गहियाँ कोज्जात्व राज्य के मुखूर तथा शान्तर राजाओं की राजधानी हुम्मच में थीं। हुम्मच से प्राप्त लेख नं० २१३-२१६ में इस संघ के अनेकों आचार्यों का परिचय मिलता है। इनमें श्रेयांस पण्डित, उनके सधर्मा कमलभद्र और वादीभसिंह अजितसेन पण्डित के पूर्ववर्ती और समकालीन आचार्यों की परम्परा दी गई है। जो इस प्रकार है:—



इनमें मौनिदेव और विमलचन्द्र भट्टारक वे ही मालुम होते हैं जिनका उल्लेख अंगदि से प्राप्त लेख नं० १६६ (लगभग ६६० ई०) में द्रविड़ संघ कुन्दकुन्दान्वय के आचार्य के रूप में किया गया है। शायद ये ही द्रविड़ संघ के आदि प्रवर्तक आचार्य रहे हों। कनकसेन वादिराज का दूसरा नाम लेख नं० २१३ और २१५ में हेमसेन दिया गया है। संस्कृत में कनक और हेम का अर्थ भी एक होता है। इन्हें श्रीविजय, वादिराज, दयापाल आदि के शुभ के रूप में कहा गया है। वादिराज की उपाधियाँ षट्कर्षणमुख और

जगदेकमल्लवादी थीं। वादिराज भी हमें एक उपाधि मालुम होती है, क्योंकि लेख नं० ३४७ में इनका असली नाम श्री वर्धमान जगदेकमल्ल वादिराज दिया गया है। इनके सधर्मा रूपसिद्धि नामक व्याकरण ग्रन्थ के कर्ता दयापाल थे। मल्लिखेय प्रशस्ति (२६०, प्रथम भाग ५४) में उपयुक्त पट्टावली के अनेकों आचार्यों का उल्लेख तथा प्रशंसावाक्य दिये गये हैं। उसमें वादिराज के गुरु का नाम मतिसागर दिया गया है और दयापाल को उनका सधर्मा माना गया है। उसी प्रशस्ति के ३५ वें पद्य में मतिसागर की प्रशंसा के बाद ३६-३७वें पद्य में हेमसेन मुनि की प्रशंसा की गई है, पर दोनों आचार्यों का कोई सम्बन्ध नहीं बतलाया गया। हेमसेन तो निःसन्देह हुम्मच के उक्त दोनों लेखों के कनकसेन वादिराज (हेमसेन) ही हैं। पर वादिराज के गुरु मतिसागर भी थे, यह बात हमें उनकी षट्कर्षणमुख प्रतिभा के परिचायक उनके न्यायशास्त्र के ग्रन्थ न्यायविनिश्चयविवरण की प्रशस्ति से मालुम होती है। लेखों से यह सिद्ध होता है कि मतिसागर और हेमसेन (कनकसेन) दो व्यक्ति थे। संभव है एक तो वादिराज के दीक्षागुरु और दूसरे विद्यागुरु रहे हों। हमारे इस आशय का समर्थन न्यायविनिश्चयविवरण की प्रशस्ति के दूसरे पद्य से भी होता है जहाँ श्लेषात्मक ढंग से जिनेन्द्र की स्तुति करते हुए वादिराज ने 'सन्मतिसागरकनकसेनाराध्यम्' लिखा है। वादिराज बड़े ही विद्वान्, लेखक एवं वादी आचार्य्य थे। इन्हें चालुक्य नरेश जयसिंह तृतीय जगदेकमल्ल (सन् १०१६-१०४४) ने जगदेकमल्लवादि नामक उपाधि दी थी (२६० पद्य ४२, प्रथम भाग ५४)। लेख नं० २१५ में इन्हें अकलंक, धर्मकीर्ति और अज्ञापद के प्रतिनिधिरूप माना गया है।

वादिराज के अन्य सधर्माओं में पुष्पसेन और श्रीविजय पण्डित थे। पुष्पसेन हमें वे ही प्रतीत होते हैं जिनको पादुकाओं की स्थापना का स्मारक लेख नं० १७७ (सन् १०३० के लगभग) में है। इनके शिष्य का नाम गुणसेन था जिनके कई लेख मुल्लूर से प्राप्त हुए हैं। ये कोङ्काल्व नरेश राजेन्द्र चोल के कुलगुरु थे (१८८-१९२)। लेख नं० २०१ में इन्हें पोय्यलान्चारि लिखा

है जिससे ज्ञात होता है कि इनका प्रभाव होयसल राजाओं पर भी था। लेख नं० २०२ (सन् १०६४ ई०) इनके समाधिमरण का स्मारक है और उन्हें ब्रह्म-गण, नन्दिसंघ, अरुङ्गलान्वय का नाथ तथा अनेक शास्त्रों का वेत्ता लिखा है। लेख नं० १७७ और लेख नं० २०२ में अंकित वर्षों से ज्ञात होता है कि वे ३४ वर्षों (१०३० ई०-१०६४ ई०) तक बराबर जिनशासन की प्रभावना करते रहे। हुम्मच के लेख नं० २१३ में इनका नाम वादिराज के बाद की पीढ़ी के आचार्यों में दिया गया है और मल्लिषेण प्रशस्ति के पद्य ५३ में इनकी प्रशंसा की गयी है।

श्रीविजय पण्डित के सम्बन्ध में लेख नं० २१३ से विदित होता है कि वे अनेक प्रतिष्ठित आचार्यों के गुरु थे। उनका दूसरा नाम वोडेयदेव या ओडेयदेव था जो कि तिरुंगुडि के निडुम्बरे तीर्थ, अरुङ्गलान्वय, नन्दिगण के अधीश्वर थे। इन्हें तामिल प्रान्त (तामेन्नर) से सम्बन्धित बताया गया है (२१४) पर इनका अधिक समय हुम्मच में बीता था ऐसा उक्त स्थान से प्राप्त लेखों से मालुम होता है। इनके ग्रहस्थ शिष्यों में नञ्जि शान्तर एवं प्रसिद्ध जैन महिला चट्टलदेवी प्रमुख थे।

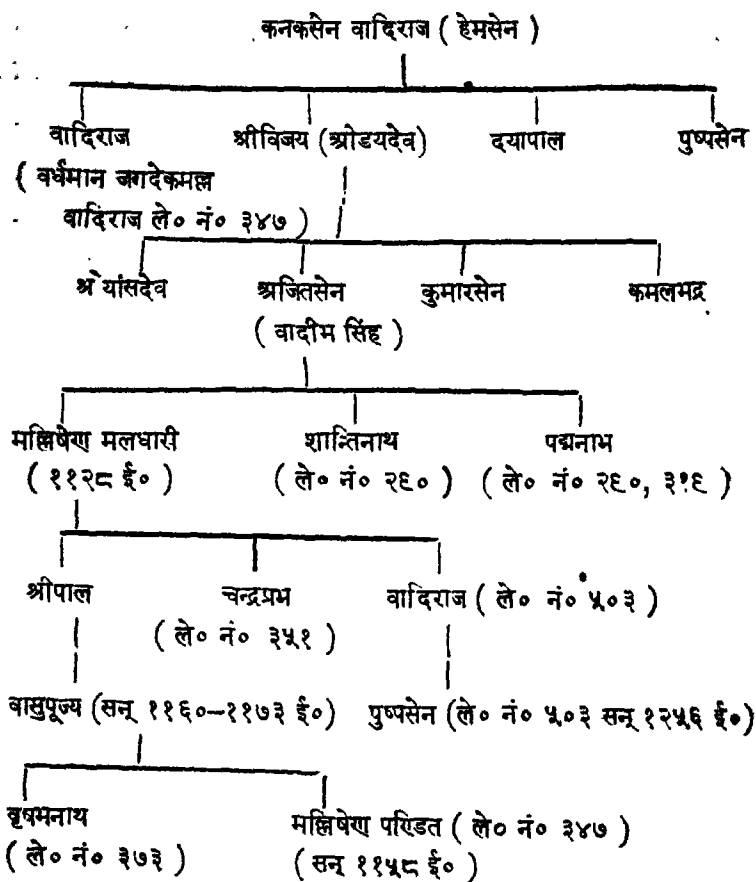
श्रीविजय के शिष्यों में श्रेयांसदेव को लेख नं० २१३ में उर्वीतिलक जिनालय का प्रतिष्ठापक लिखा है। दूसरे शिष्य कमलभद्र लेख नं० २१४ और २१६ के अनुसार भुजबल शान्तर आदि तथा चट्टल देवी द्वारा सम्मानित थे। तीसरे शिष्य अजितसेन* बड़े ही विद्वान् थे। उनकी कई उपाधियाँ थीं—जैसे शब्द-

- कुछ विद्वान् इन अजितसेन वादीभसिंह का गणचिन्तामणि और क्षत्रचूडामणि के कर्ता वादीभसिंह अजितसेन से साम्य स्थापित करते हैं, पर यह ठीक नहीं क्योंकि ग्रन्थकर्ता अजितसेन के गुरु का नाम पुष्पसेन था। इस लेख के अजितसेन के गुरु सधर्मा एक पुष्पसेन अवश्य थे पर वे ग्रन्थकर्ता अजितसेन के गुरु थे यह लेखों से नहीं ज्ञात होता।

चतुर्मुख, तार्किकचक्रवर्ती एवं वादीमसिंह (२१४)। लेख नं० २४८ में इन्हें वादिपरद्व, तार्किक चक्रवर्ती, एवं वादीभपञ्चानन कहा गया है। ये विक्रम शान्तर द्वारा पूजित थे। उसने पञ्चवसदि बिनालय के लिए इन्हें ग्रामादि भेंट में दिये थे (२२६)। पीछे विक्रम शान्तर के पुत्र त्रिभुवनमल्ल शान्तर ने अपनी दादी की स्मृति में इन्हीं गुरु का स्मरण कर एक मन्दिर का शिलान्यास किया था (२४८)। इन मुनि के अन्तिम समय का स्मारक लेख नं० १३२ है जिसका समय लगभग १०६० ई० दिया गया है। लेख नं० २१४ में इनके सधर्मा मुनि कुमारसेन का नाम दिया गया है जो कि वैद्यराजकेशरी थे। लेख नं० २१३ में इनके समकालीन शान्तिदेव और दयापाल नामक दो मुनियों का उल्लेख है। शान्तिदेव के सम्बन्ध में मल्लिषेण प्रशस्ति में लिखा है कि इनके पवित्र पादकमलों की पूजा होय्सल विनयादित्य द्वितीय (सन् १०४७ से, ११०० ई०) करता था। लेख नं० २०० से भी यह बात समर्थित होती है। इस लेख के अनुसार सन् १०६२ में इनकी मृत्यु के उपलक्ष्य में एक स्मारक खड़ा किया गया था। दयापाल के सम्बन्ध में मल्लिषेण प्रशस्ति में केवल प्रशंसा पद दिये गये हैं।

हुम्मच के लेखों से प्राप्त इतिवृत्त के बाद इस संग्रह के अनेकों लेखों से जो संघ की आचार्यपरम्परा ज्ञात होती है वह इस प्रकार है—

१—इस संग्रह के अन्य लेख हैं—२६४, २६५, २७४, २८७, २८८, २९०, ३०५, ३१६, ३२६, ३२७, ३४७, ३५१, ३७३, ३७५, ३७६, ३८०, ४१०, ४२५ और ४६६. .



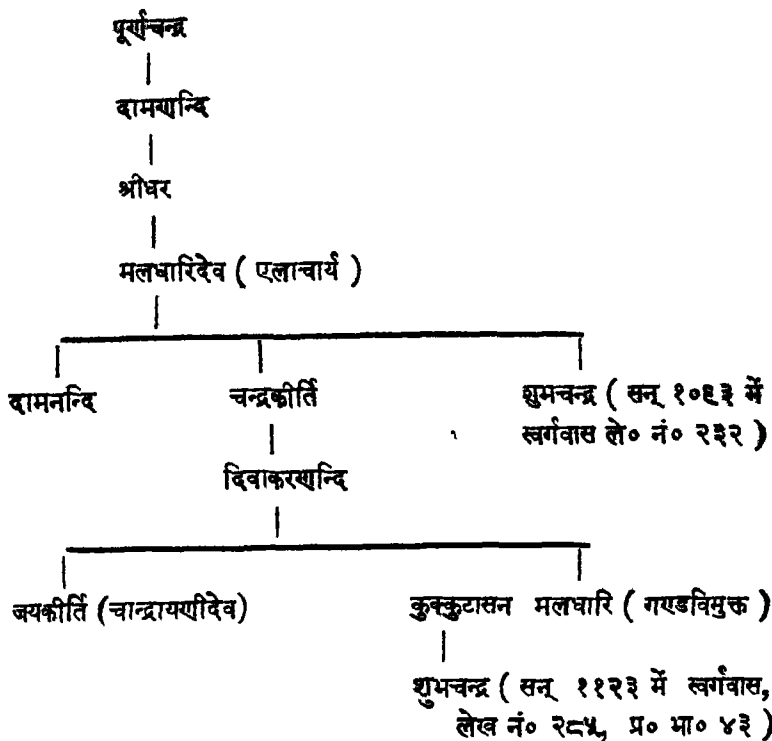
मूलसंघ के गण, गच्छ एवं अन्वय

हम पहले लिख चुके हैं कि यापनीय और द्रविड संघ के वर्णन के बाद मूलसंघ के गण गच्छादि का लेखों से प्राप्त होने वाले वाला परिचय देंगे। इसके सम्बन्ध में ११ वीं शताब्दी के आचार्य इन्द्रनन्दि के श्रुत्वावतार में और उसके

प्रस्तुत संग्रह में देशियगण्य से संबन्धित ६५-७० लेख हैं पर कुछ ऐसे लेख हैं जिनसे ७-८ आचार्यों का एक गुरुवंश बन सकता है और कुछ से गण की विभिन्न पट्टावलिबां। लेखों के पर्यालोडन से विदित होता है कि कर्नाटक प्रान्त के कई स्थानों में इस गण के केन्द्र थे। उन स्थानों में हनसोगे (चिक हनसोगे) प्रमुख था। यहाँ के आचार्यों से ही पीछे इस गण की हनसोगे बलि या गच्छ निकले हैं। गच्छ का साधारण अर्थ होता है शाखा और बलि (कण्ड शब्द बल्य या बलग) का अर्थ होता है परिवार = आध्यात्मिक परिवार या समुदाय।

चिक हनसोगे से प्राप्त लेख नं० १७५, १६५, १६६ और २२३ से विदित होता है कि यहाँ इस गण की अनेक बसदियाँ (मन्दिर) थीं, जिन्हें चङ्गात्व नरेशों द्वारा संरक्षण प्राप्त था। हनसोगे (पनसोगे) बलि या गच्छ के आचार्यों की लेख नं० २२३, २३२, २३६, २४१, २५३, २६६, २८४ एवं २८५ कीसहायता से प्राप्त एक परम्परा अगले पृष्ठ पर दी गई है। इसका बहुत कुछ समर्थन धवला के अन्त में दी गई आचार्य शुभचन्द्र सिद्धान्तदेव की ग्रन्थप्रशस्ति से भी होता है^१।

लेखों से प्राप्त इस गुरुपरम्परा में और प्रशस्ति में दी गई परम्परा में कुछ अन्तर है। प्रशस्ति में गुरुवंश कुन्दकुन्द, गृद्धपिच्छ और बलाकपिच्छ से चला है और इस परम्परा के पूर्णचन्द्र को देशिय गण के प्रतिष्ठापक देवेन्द्र सिद्धान्त से जोड़ने का प्रयत्न हुआ है। उनके बीच में वसुनन्दि और रविचन्द्र सिद्धान्तदेव नामक दो आचार्यों का नाम दिया गया है। देवेन्द्र सिद्धान्त के पहले गुणनन्दि पण्डित का नाम भी रखा गया है। मालुम होता है कि प्रशस्ति के आधार १२वीं शताब्दी के द्वितीय, तृतीय दशकों के लेख (२५५, २८५ आदि) रहे होंगे। प्रशस्ति के तथा अन्य लेखों के द्वितीय शुभचन्द्र सिद्धान्त देव प्रसिद्ध सेनापति गंगराज के गुरु थे।



इस गण की एक और शाखा का नाम हंगुलेश्वर बलि है जिसके आचार्य गण प्रायः कोल्हापुर के आस पास रहते थे (४११ एवं ५७१ आदि)। इस से सम्बन्धित अनेकों लेख (४११, ४६५, ५१४, ५२१, ५२४, ५२८, ५७१, ५८४, ५८६, ६००, ६२५ और ६७३) हैं पर इन लेखों से इस गण की ठीक गुरुपरम्परा नहीं दी जा सकती। १२-१३ वीं शताब्दी के लेखों में माधनन्दि आचार्य का नाम प्रथम दिया गया है (४११, ४६५, ५१४ आदि)। १४ वीं-१५ वीं शताब्दी लेखों में अभयचन्द्र और उसके शिष्य भूतमुनि का नाम आगे आता है तथा १६ वीं शताब्दी के लेखों में चावकीर्ति का नाम।

लेख ४७८ में इस गण की एक बाणद बलिय का नाम दिया गया है ।

इस गण का प्रसिद्ध एवं प्रमुख गच्छ पुस्तक गच्छ है । जिसका कि उल्लेख अधिकांश लेखों में है । इसी गच्छ का दूसरा नाम वक्रगच्छ है (२५६, प्रथम भा० ५५ और ४२६) ।

नन्दिगणः—मूलसंघ, कोण्डकुन्दावय, देशियगण, पुस्तक गच्छ से सम्बन्धित तथा सन् १११५ से ११७६ ई० के बीच के अवशेषलोले से प्राप्त लेख नं० २५५ (४७) २८५ (४३) ३३२ (५०) ३६२ (४०) और ३८८ (४२) में आचार्यों की कई पट्टावलियां दी गई हैं । इनमें बीच या अन्त में आचार्यों के साथ मूलसंघ देशियगण आदि लिखा है पर आदि में दो चार अंगलाचरण के श्लोकों के बाद केवल नन्दिगण का उल्लेख कर एक सामान्य परम्परा दी गई है जो इस प्रकार हैः—

पद्मनन्दि (कोण्डकुन्द)

उनके श्रव्य में

उमास्वाति (यद्धपिच्छ)

बलाकपिच्छ

गुणनन्दि

देवेन्द्र सैद्धान्तिक

कलचौतनन्दि

लेख नं० ३६२ की बीड़ी विशेषता यह है कि बलाकपिच्छ के बाद समन्तभद्र, देवनन्दि (पूज्यपाद) और अकलंक का नाम दिया गया है । इनमें गुणनन्दि,

देवेन्द्र सिद्धान्त आदि देशियगण की परम्परा से सम्बन्धित है यह हम पहले देख चुके हैं पर-उनके पहले के कोण्डकुन्दाचार्य, उमास्वाति, समन्तभद्र आदि आचार्यों के नाम द्रविड संघ से सम्बन्धित नन्दिगण के ११ वीं शताब्दी के लेखों (२१३, २१४, २८७ आदि) में भी दिखाई देते हैं। इस तरह मूलसंघ और द्रविडसंघ के लेखों में नन्दिगण के प्राचीन आचार्यों के प्रायः एक से नामों को देखकर ऐसा लगता है कि इन दोनों संघों में कोई प्राचीन नन्दिगण (संघ) बाहर से शामिल किया गया होगा, तथा ये सब आचार्य उसी गण के रहे होंगे और इस विषय में हम संकेत भी कर आये हैं कि यापनीय संघ के नन्दिसंघ को ही द्रविड संघ और मूलसंघ ने अपनाया था। यापनीय संघ के साथ नन्दिसंघ के प्रगट या अप्रगट रूप से किये गये कतिपय उल्लेखों से यह ज्ञात होता है कि यापनीयों में नन्दिसंघ महत्वपूर्ण था (१०६, १२१, १२४, १४३)। प्राकृत भाषा में नन्दिसंघ की जो प्राचीन पट्टावली उपलब्ध है वह संभव है इसी संघ की थी^१। उसमें वीर निर्वाण सं० ६८३ तक की वंशपरम्परा दी गई है। संस्कृत में नन्दिसंघ की एक और पट्टावली उपलब्ध है^२ पर वह मूलसंघ के पश्चात्कालीन आचार्यों की है उसका प्राकृत पट्टावली से कोई सम्बन्ध नहीं।

इस सम्भावना के बाद उपर्युक्त मूलसंघ के लेखों में जो पट्टावलियाँ दी गई हैं उन पर हम संक्षिप्त में कह देना चाहते हैं कि लेख नं० २५५ (४७) और ३२२ (५०) में प्रायः एकही गुरुपरम्परा दी गई है पर वह कलाधौतनन्दि के बाद देशिय गण के उपर्युक्त निर्दिष्ट अन्य लेखों से नहीं मिलती। लेख नं० ३६२ (४०) में देशिय गण को नन्दि गण का प्रमेद कहा गया है और उसमें जो पट्टावली दी गई है वह जैन शिलालेखसंग्रह के प्रथम भाग की भूमिका के पृष्ठ सं० १३२ में अंकित है। लेख नं० २८५ (४३) में कलाधौतनन्दि एवं रविचन्द्र के बाद जो गुरुपरम्परा मिलती है वह देशिय गण हनसोगे बलि की पट्टा-

१. षट्खण्डाग्राम, पुस्तक १, पृष्ठ २४-२७

२. जैन सिद्धान्त भास्कर, भाग १, किरण ४ पृष्ठ ७१, ८१.

कली में हमने जो दी है वही है। लेख नं० ३८८ (४२) में इनसोमै कलि के मलचारि देव के बाद एक दूसरी गुरुपरम्परा दी गई है जो उक्त लेख से जान लेना चाहिये।

इसके बाद लेख नं० ५६६ (१०५, १४वीं शताब्दी) और ६२५ (१०८, १५ वीं शताब्दी) में नन्दिगण को नन्दिसंघ कहा गया है और उसे मूलसंघ के अर्थ में प्रयुक्त किया है। इन दोनों लेखों में सेन, नन्दि, देव और सिंह संघों का एक कारुणिक इतिहास दिया गया है। लेख नं० १०५ के ऐतिहासिक महत्व के लिए प्रथम भाग की भूमिका के पृष्ठ १२४-१२७ देखें। ये दोनों लेख एक सुन्दर काव्य कहे जा सकते हैं।

सुरस्थगणः—मूलसंघ का एक गण सुरस्थ गण नाम से प्रसिद्ध था यह लेख नं० १८५ २३४, २६६, ३१८, ४६० और ५४१ से शात होता है। लेखों में इसका सुरस्त, सुराष्ट्र एवं सुरस्थ नाम से उल्लेख है। इन लेखों में इसके अन्वय गच्छ आदि का निर्देश नहीं है पर इस संग्रह के बाहर के कुछ लेखों से शात होता है कि इसमें चित्रकूट अन्वय या गच्छ था^१। सुरस्थ एवं सुरस्त नाम कैसे पड़े यह कहना कठिन है। सुराष्ट्र नाम से प्रतीत होता है कि इस गण के साधु शुरु में सुराष्ट्र देश में रहते रहे होंगे, पर सुराष्ट्र का प्राकृत या अपभ्रंश रूप तो सुरट्ट होता है सुरस्थ नहीं। संभव है उत्कीर्णक ने सुरट्ट का पुनः संस्कृत रूप देने के प्रयत्न में सुरस्थ कर दिया हो पर यह भी एक दो लेख में सम्भव था सब में नहीं। इस तरह सुरस्थ गण की व्युत्पत्ति अब भी भ्रान्त है। हो सकता है कि कोई सुरस्त नाम का दक्षिण भारत में क्षेत्र हो जहाँ से इस गण के मुनियों ने अपना नाम ग्रहण किया हो।

सुरस्थ गण का सर्वप्रथम उल्लेख सन् ६६४ के एक जैन लेख में मिलता है। कहा जाता है कि सुरस्थ गण प्रारम्भ में मूल संघ के सेनगण से सम्बन्धित था^२।

१. जैन एन्सिक्लेपी, भाग ११, अंक २, पृष्ठ ६३, ६५

२. जैनिज्म इन साउथ इण्डिया, लेख नं० ४६ पृष्ठ ३६७-३७४ (जीवराज ग्रन्थमाला सोलापुर)

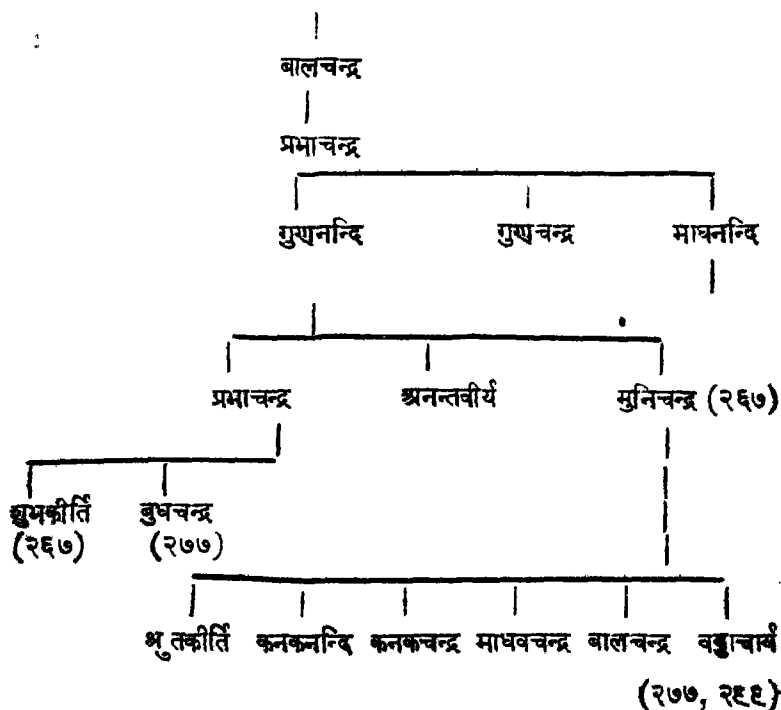
इसके बाद प्रस्तुत संग्रह के ११ वीं शताब्दी के पूर्वार्ध के लेख नं० १८५ में इसका उल्लेख है जहाँ यह मूलसंघ के साथ द्रविड़ान्वय से युक्त है। इस पर हम अनुमान करते हैं कि द्रविड़ संघ के आदि गठन काल में, संभव है, इस गण के साधुओं ने भाग लिया हो या उस संघ के साधुगण मूलसंघ सुरस्थ गण में सम्मिलित रहे हों। इस गण के लेख, ११ वीं के पूर्वार्ध से लेकर १३ वीं शता० के अन्त तक के मिलते हैं। सभी लेख छोटे हैं केवल लेख नं० २६६ को छोड़कर। इसमें सौमाम्य से इस गण की एक छोटी पट्टावली दी गई है जो इस प्रकार है:—अनन्तवीर्य, बालचन्द्र, प्रभाचन्द्र, कल्लेलेय देव (रामचन्द्र), अष्टोपवासि, हेमनन्दि, विनयनन्दि, एकवीर और उनके सधर्मा पल्लपरिणत (अभिमानदानिक)। लेख में पल्ल परिणत की बड़ी प्रशंसा है। इनका समय सन् १११८ ई० (२६६) दिया गया है। इस गण के किसी भी लेख में कुन्दकुन्दान्वय का उल्लेख नहीं है। संभव है यह गण मूलसंघ की प्रभावशालिनी कुन्दकुन्दान्वय धारा में स्थान न पाने के कारण पिछली शताब्दियों में अपनी स्थिति को न सम्हाल सका हो।

क्राणूर गणः—क्राणूर गण के सम्बन्ध में यापनीय संघ के विवेचन में हम संभावना प्रकट कर आये हैं कि क्राणूर गण यापनीयों के कण्डूर गण के नाम का शब्दानुकरण है। कण्डूर या क्राणूर दोनों किसी स्थान विशेष को सूचित करते हैं जहाँ से कि उक्त गण के साधु समुदाय ने नाम ग्रहण किया है। इस गण के ११ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध (२०७, सन् १०७४ ई०) से लेकर १४ वीं शताब्दी के अन्त तक लेख मिलते हैं। इस संग्रह में १७-१८ लेख इस गण से सम्बन्धित हैं जिनसे मालुम होता है कि इसमें प्रसिद्ध दो गच्छ थे—मेवपाषाण गच्छ (२१६, २६७, २७७, २६६, ३५३) तथा तिन्निन्नोक्त गच्छ (२०६, २६३, ३१३, ३७७, ३५६, ४०८, ४३१, ४५६, ५८२)। मेवपाषाण का अर्थ है मेघों के बैठने का पाषाण। यह कोई स्थल विशेष होना चाहिए जहाँ से इस गण के साधुओं का शुरू शुरू में सम्बन्ध रहा होगा। तिन्निन्नोक्त एक वृक्ष का नाम है। ये पाषाणान्त और वृक्ष परक नाम इस गण के यापनीय संघ के साथ पूर्व सम्बन्ध

की स्मृति दिलाते हैं।

लेख नं० २६७, २७७ और २६६ से मेष्पावाणगच्छ की इस प्रकार गुरु-परम्परा प्राप्त होती है (तिथिक्रम के अनुसार लेख नं० २६६ (पुरले) को सबसे पहले होना चाहिए)।

सिंहनन्दि आदि अनेकों आचार्यों के नाम बिना किसी सम्बन्ध को दिखाये

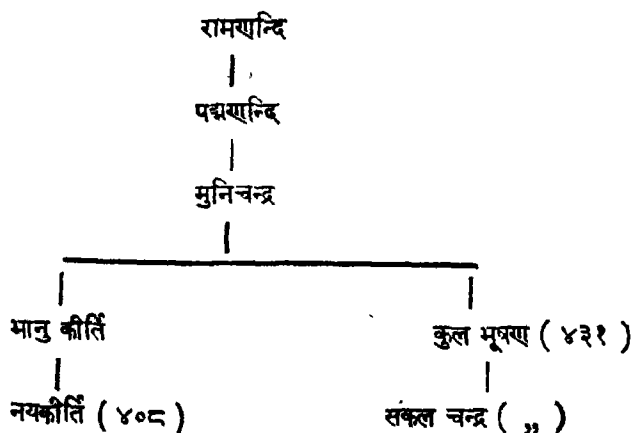


१. सप्तमीयों में श्रीमूलमूलगण पुजानवृत्तमूलगण तथा कनकोपल (कनकपाषाण) आदि गण थे। गण एवं गच्छ पीछे एकार्य में भी प्रयुक्त हुए हैं।

इन लेखों में मूलसंव कुन्दकुन्दान्वय के नाथ स्वस्व सिंहनन्दि आचार्य का उल्लेख है जिन्हें गंग महीमयदलिककुलसंघरथ या समुद्धरथ कहा गया है। लेख नं० २७७ में अर्हदबलि, बेटव-दामनन्दि भट्टारक, बालचन्द्र भट्टारक, मेघचन्द्र त्रैविद्य आदि आचार्यों के नाम बिना किसी सम्बन्ध बताये दिए गये हैं।

इन लेखों से ज्ञात होता है कि ११-१२ वीं शताब्दी के गंगनरेश भुजबल गंग बर्मदेव उसकी रानी गंग महादेवी तथा चार पुत्र भारसिंग, नन्निय गंग, रक्कस गंग और भुजबल गंग चौथी और पांचवी पीढ़ी के आचार्यों के भक्त थे और उन्हें दानादि से सम्मानित किया था।

क्राणूर गण के तिन्त्रिणीक गच्छ की आचार्य परम्परा लेख नं० ३१३, ३७७ ३८६, ४०८ और ४३१ से इस प्रकार मालुम होती है।



इनमें मुनिचन्द्र और उनके शिष्य की लेखों में बड़ी प्रशंसा है। वे कल्याणी के चालुक्यों के अधीन सामन्तों के गुरु थे। भानुकीर्ति यंत्र, तंत्र, मंत्र में प्रवीण थे। वे बन्दरिकापुर के अधिपति के (३७७) तथा मन्त्रालयाचार्य कहलाते थे और इस पद पर करीब ४० वर्ष तक रहे (३१३, ४०८)।

मूलसूत्र के देशिय गण और काणूर गण की अपनी बसदियाँ होती थीं और उन दोनों में वास्तविक भेद था यह बात हमें दडिग से प्राप्त एक लेख से माझूम होती है जिसमें लिखा है कि होयसल सेनापति मरियाने और भरत ने दडिगण-केरे स्थान में पाँच बसदियाँ बनवायी थीं उनमें चार तो देशिय गण के लिए और एक काणूर गण के लिए* ।

१४ वीं शताब्दी के बाद काणूर गण का प्रभाव बलात्कार गण के प्रभाव-खाली भट्टारकों के आगे खीण हो गया । इसके बाद इसके विरले ही उल्लेख मिलते हैं ।

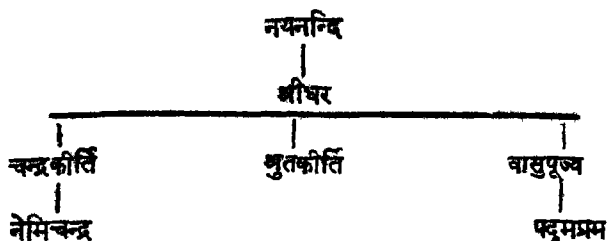
बलात्कार गणः—इस गण के सम्बन्ध में हम कह चुके हैं कि नामसाम्य को देखते हुए यह यापनीयों के बलिहारि या बलगार गण से निकला है । बलिहारि और बलगार, सम्भव है, स्थान विशेष के सूचक हैं* पर उससे निकले बलात्कार शब्द से ऐसा सूचित नहीं होता । बलात्कार शब्द का अर्थ पीछे १६ वीं शताब्दी के विद्वानों ने बतलाया है कि : चूंकि इस गण के श्रीदि नायक पद्म-नन्दि आचार्य ने सरस्वती को बलात्कार से बुलाया था इसलिए बलात्कार गण और सरस्वती गच्छ नाम प्रसिद्ध हुआ* । जो हो, लेखों से बलात्कार के इस अर्थ की कोई सूचना नहीं मिलती ।

बलात्कार गण का सर्व प्रथम नाम ले० नं० २०८ (सन् १०७५ ई० के लगभग) में मिलता है जिसमें इस गण के चित्रकूटात्माय के मुनि मुनिचन्द्र और उनके शिष्य अनन्तकीर्ति का उल्लेख है । लेख २२७ (सन् १०८७ ई०) में इस गण के कुछ मुनियों की परम्परा दी गई है जो निम्न प्रकार हैः—

१. जैन एश्वमेधेरी माग ६, अंक २, पृष्ठ ६६, नं० ५८

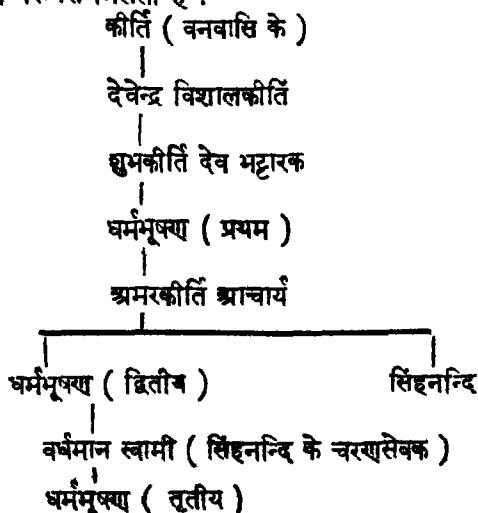
२. दक्षिण भारत में बलगार नामक एक गांव था (मेडीवल जैनियम, पृष्ठ ३२७)

३. जैन साहित्य और इतिहास (प्र० सं०) पृष्ठ ३४३ ।



खेल के अन्त में गण का नाम बालकृष्ण गण दिया गया है। इसके बाद खेल नं० २४६ और ४४४ में इस गण के मुनि कुमुदचन्द्र भट्टारक व कुमुदेन्दु का नाम तथा उन्हें कुछ सेट्टियों द्वारा दान का उल्लेख है। खेलों में कोई समय नहीं दिया गया। इसके बाद चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक इस गण के कोई लेख नहीं है। चौदहवीं शता० के उत्तरार्ध के लेखों से इस गण का विशेष प्रभाव व्योक्त होता है। विजयनगर साम्राज्य के नरेश इनका सम्मान करते थे। खेल नं० ५६६ में वीर बुक्कराय के राज्यकाल में इस गण के एक अग्रणी आचार्य सिंहनन्दि का उल्लेख है। उनकी उपाधियाँ—राय, राजगुरु तथा मण्डलाचार्य थीं। उक्त लेख उनकी गृहस्थ शिष्या का समाधिमरण स्मारक है।

लेख नं० ५७२ (प्रथम भाग १११) और ५८५ में इस गण की निम्न प्रकार की परम्परा मिलती है :—



लेख नं० ५८५ बड़े महत्त्व का है। इसमें मूलसंघ के साथ नन्दिसंघ का तथा बलात्कार गण के सारस्वत गच्छ का उल्लेख है। साथ ही इस गण के आदि आचार्य के रूप में पद्मनन्दि को लिखा है और उनके कुन्दकुन्द, वक्र-श्रीव, एलाचार्य, यत्रपिच्छ नाम दिए हैं। हमें लेखों से इस परम्परा के आचार्य अमरकीर्ति तक केवल प्रशंसा के अतिरिक्त विशेष कुछ नहीं मालूम होता है। लेख नं० ५७२ (सन् १३७२) से धर्मभूषण द्वितीय की। उनके शिष्य वर्धमान मुनि द्वारा निषदा निर्माण का उल्लेख है। लेख नं० ५८५ में सिंहनन्दि आचार्य को सेनापति हरगण का गुरु लिखा है। ये सिंहनन्दि वे ही प्रतीत होते हैं जिनका उल्लेख हमें लेख नं० ५६६ में मिला है। धर्मभूषण तृतीय का कुछ विद्वान् वर्तमान न्यायदीपिका ग्रंथ के कर्ता से साम्य स्थापित करते हैं^१। ये विजयनगर सम्राट् देवराय के गुरु थे, यह बात हमें लेख नं० ६६७ के एक श्लोक से विदित होती है। देवराय प्रथम का समय सन् १४०६ ई० से १४२२ तक है। लेख में धर्मभूषण तृतीय का समय सन् १३८६ दिया गया है जो संभव है उनके पट्टारोहण के आस पास का समय हो।

लेख नं० ६६७ (सन् १५५४ के लगभग) और ६६९ (सन् १६०८ ई०) में इस गण की एक गुरुपरम्परा इस प्रकार दी गई :—

सिंहकीर्ति

मेरुनन्दि, वर्धमान आदि अ

विशालकीर्ति (सन् १४६७-१५५४ ई०)

विद्यानन्द (सन् १५०२-१५३० ई०)

देवेन्द्रकीर्ति (सन् १५३०-१५५० ई०)

विशालकीर्ति द्वितीय (सन् १५५०-१६०८ ई०)

१. पं० दरबारीलाल न्यायाचार्य, न्यायदीपिका, प्रस्तावना, पृष्ठ ६२-६६।

लेख नं० ६६७ में जैनधर्म की प्रभावना करने वाले अनेकों आचार्यों का नाम शुरू में दिया गया है जो कि विभिन्न संघों एवं गणों से सम्बन्धित हैं। सिंहकीर्ति से पहले धर्मभूषण तृतीय का भी उल्लेख है पर उन दोनों के बीच कोई सम्बन्ध का निर्देश नहीं है। हो सकता है कि ये सिंहकीर्ति, धर्मभूषण तृतीय से जुड़ी किसी और गुरुपरम्परा के हों। उन्होंने दिल्ली के बादशाह मुहम्मद सुरित्राण की सभा में बौद्धादि वादियों को जीता था। इस बादशाह का समय सन् १३२६ से १३३७ तक था। मेरुनन्दि आदि के विषय में हमें कुछ नहीं मालूम। विशाल कीर्ति ने विजयनगर नरेश विरुपाक्ष के दरबार में विजय पत्र प्राप्त किया था तथा सिकन्दर सुरित्राण (मुल्तान सिकन्दर सूर सन् १५५४ ई०) के दरबार में विरोधियों को जीता था। इससे विशालकीर्ति का ८०-९० वर्ष का दीर्घ जीवन मालूम होता है। विद्यानन्द की उपाधि वादी थी इन्होंने अनेकों दरबारों में विरोधियों को वाद में परास्त किया था। इनकी अनेक यशस्वी विजयों का वर्णन लेख में दिया गया है। इसी तरह उनके शिष्य देवेन्द्रकीर्ति थे। लेख में तिथिका निर्देश नहीं है तथा वर्णन व्यतिक्रम से आचार्यपरम्परा ठीक नहीं मालूम हो पाती।

लेख नं० ६१७ में उत्तर भारत में बलात्कार गण के मदसारद गच्छ की गुरुपरम्परा दी गई है वह निम्न प्रकार है—

धर्म चन्द्र
|
रत्न कीर्ति
|
प्रभा चन्द्र
|
पद्मनन्दि
|
शुभचन्द्र

१. जैन एन्टीक्वेरी भाग ४ पृ० १-२१ तथा मेडोबल जैनिज्म, पृष्ठ ३७१-३७५।

इसी तरह लेख नं० ७०२ में पश्चिम भारत के बलात्कार गण सरस्वती गच्छ कुन्दकुन्दान्वय की भट्टारक परम्परा दी गई है जो इस प्रकार है—सकलकीर्ति, सुवनकीर्ति, तानभूषण, विजयकीर्ति, शुभचंद्र, सुमतिकीर्ति, गुणकीर्ति, वादिभूषण, रामकीर्ति तथा पद्मनन्दि ।

काष्ठासंघ

काष्ठासंघ की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक विवाद हैं । दसवीं शताब्दी में देवसेनाचार्यकृत दर्शनसार ग्रन्थ में लिखा है कि दक्षिण प्रांत में आचार्य जिनसेन के सतीर्थ्य विनयसेन के शिष्य कुमारसेन ने उत्तर पुराण के रचयिता गुणभद्र के दिवंगत (संवत् ६५३) होने के पश्चात् काष्ठासंघ की स्थापना की थी, पर यह उल्लेख कालक्रम आदि अनेक दृष्टियों से युक्तियुक्त नहीं प्रतीत होता है^१ । १७ वीं शताब्दी के एक ग्रन्थ वचनकोश में इस संघ की उत्पत्ति के सम्बन्ध में लिखा है कि उमास्वामी के पट्टाधिकारी लोहाचार्य ने इस संघ की स्थापना उत्तर भारत के अमरोहा नगर में की थी । इस कथन में सचाई जो हो पर १६-२० वीं शताब्दी के लेखों में काष्ठासंघ के अन्तर्गत लोहाचार्य अन्वय का उल्लेख मिलता है । प्रस्तुत संग्रह के एक लेख नं० ७५६ (सं० १८८१) में यही बात हम पाते हैं ।

इस संग्रह में इस संघ से सम्बन्धित सभी लेख उत्तर और पश्चिम भारत से ही प्राप्त हुए हैं । लेख नं० ६३३ और ६४० में इसका नाम काञ्चीसंघ लिखा है, जो कि माथुरान्वय (मयूरान्वय) एवं पुष्करगण के साथ होने से लगता है कि यह काष्ठासंघ का ही अपर नाम होना चाहिए । इस संघ के प्रमुख गच्छ या शाखायें चार थीं:—नन्दितट, माथुर, बागड़ और लाटवागड़ । ये चारों नाम बहुतकर स्थानों और प्रदेशों के नामों पर रखे गये हैं । नन्दितट से संबन्धित एक लेख नं० ११६ इस संग्रह के प्रथम भाग में है जिसमें कि नन्दितट को भूलकर मण्डित-तट लिखा गया है । संभव है इस गच्छ का संबन्ध दक्षिण से था । माथुर गच्छ

यथा अन्यत्र से संबन्धित ६ लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं। अथर्वशा से प्राप्त लेख नं० ३०५ क में यद्यपि काष्ठासंघ का उल्लेख नहीं है फिर भी उसके प्रसिद्ध अन्यत्र माथुरान्वय का निर्देश है और लेख से इस संघ के एक आचार्य लुत्तसेन का नया नाम मालूम होता है। लेख नं० ५८६ में मसार से प्राप्त तीन प्रतिमालेखों में इस संघ के आचार्य कमलकीर्ति का नाम देकर एक लेख में उन्हें माथुरान्वय का लिखा है। ग्वालियर से प्राप्त दो लेख नं० ६३३ और ६४० में तोमरवंशोय नरेश दूंगरसिंह और उसके पुत्र कीर्तिसिंह (१५ वीं शता०) के समय इस संघ के कतिपय प्रतिष्ठित भट्टारकों के नाम मिलते हैं। लेख नं० ६३३ में भट्टा० गुणकीर्ति और उनके शिष्य यशःकीर्ति का उल्लेख है, साथ में प्रतिष्ठाचार्य श्री परिडत रइधू का भी। भट्टा० यशःकीर्ति वे ही हैं जिन्होंने अपभ्रंश भाषा में पारडवपुराण (वि० सं० १४६७) और हरिवंशपुराण (वि० सं० १५००) की रचना की थी। अपभ्रंश चंदपहचरिउ भी इनकी रचना है। इन्होंने प्रसिद्ध कवि स्वयम्भू के हरिवंशपुराण की जीर्ण-शीर्ण खण्डित प्रति का समुद्धार भी किया था। ये गुणकीर्ति भट्टारक के अनुज तथा शिष्य भी थे। प्रतिष्ठाचार्य रइधू, प्रसिद्ध कवि रइधू ही हैं जिन्होंने बीसों ग्रन्थों की रचना की थी। ये महान् कवि होने के साथ साथ भट्टारकीय परिडत थे, प्रतिष्ठा आदि में भाग लेते थे इसलिए प्रतिष्ठाचार्य कहलाते थे। ग्वालियर से प्राप्त ले० नं० ६४० में और वावा गंज से प्राप्त लेख नं० ६४३ में इस संघ के कुल दूसरे भट्टारकों के नाम गुरुपरम्परा पूर्वक मिलते हैं, वे हैं—
 क्षेमकीर्ति, हेमकीर्ति, विमलकीर्ति (६४०) तथा क्षेमकीर्ति, हेमकीर्ति, कमलकीर्ति एवं रत्नकीर्ति (६४३)। संभव है इन दोनों लेखों के भट्टारक एक परम्परा से सम्बन्धित थे और लेख नं० ६३३ की परम्परा से जुड़े थे, क्योंकि ज्ञानार्णव की लेखक-प्रशस्ति से मालूम होता है कि उक्त लेख के भट्टारक यशः-कीर्ति के बाद उनकी गद्दी पर उनके शिष्य मलय कीर्ति और प्रशिष्य गुणमद भट्टारक हुए थे^१। ले० नं० ६४३ में भट्टारक रत्नकीर्ति को मण्डलाचार्य लिखा

१. जैन साहित्य और इतिहास, पृष्ठ ५३५ (प्रथम संस्करण)।

हैं। माथुर गच्छ (अन्वय) पुष्कर गण का उल्लेख करने वाला सं० १८८१ का एक लेख पम्पोसा (कौशाम्बी) से प्राप्त हुआ है जिसमें भट्टारक जगत्कीर्ति और उनके शिष्य ललितकीर्ति का निर्देश है।

माथुर गच्छ या संघ का इतना प्रभाव था कि आचार्य देवसेन को अपने ग्रन्थ दर्शनसार में इसकी गणना अलग करना पड़ी। माथुर संघ नाम भी स्थान के कारण पड़ा है—मथुरा नगर या प्रान्त का जो मुनिसंघ है वह माथुर संघ। मथुरा प्राचीन काल से जैन धर्म का प्रमुख स्थान रहा है यह हम मथुरा से प्राप्त बहुसंख्यक लेखों से जान चुके हैं। स्थान सापेक्षिकता के कारण संघों, गणों एवं गच्छों के नाम को लेकर बाबू कामताप्रसाद जी जैन ने काष्ठासंघ की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कल्पना की है कि यह संघ मथुरा के निकट जमुना तट पर स्थित काष्ठा ग्राम से निकला^१ है, या हो सकता है कि काष्ठासंघ जैन मुनियों के उस साधुसमुदाय का नाम पड़ा जिसका मुख्य स्थान काष्ठा नामक स्थान^२ था।

काष्ठासंघ माथुरान्वय के प्रसिद्ध आचार्यों में सुभाषितरत्नसन्दोह आदि अनेक ग्रन्थों के रचयिता आ० अमृतगति हो गये हैं जो परमार नरेश मुंज और भोज के समकालीन थे (वि० सं० १०२० से १०७३)।

काष्ठासंघ, की दूसरी शाखा लाट वागट से भी सम्बन्धित दो लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं और वे हैं दूबकुण्ड से प्राप्त ले० नं० २२८ और २३५। सन् १०८८ ई० के लेख नं० २२८ में इस शाखा (गण) के देवसेन, कुलभूषण, दुर्लभसेन, शान्तिषेण एवं विजयकीर्ति नामक आचार्यों के नाम गुरु-शिष्यपरम्परा के रूप में दिये गये हैं। अन्तिम आचार्य विजयकीर्ति उक्त प्रशस्ति के रचयिता थे। यदि पूर्ववर्ती चार आचार्यों का समय १०० वर्ष मान लिया जाय

१. जैन सिद्धान्त भास्कर भा० २, किरण ४, पृष्ठ २८-२९।

२. पं० नाथूराम जी प्रेमी ने बतलाया है कि दिल्ली के उत्तर में जमुना के किनारे काष्ठा नगरी थी जिस पर नागवंशियों की एक शाखा का राज्य था। १४वीं शताब्दी में 'भदनपारिजात' निबन्ध यहीं लिखा गया था।

नरेश का नाम, दंडिग कोङ्कुणि देते हैं और उसका समय सन् ३५५-२०० के लगभग मानते हैं^१।

प्रस्तुत संग्रह में इस वंश का सबसे प्राचीन ले० नं० ६० है, जिसे गुप्त काल के प्रारंभ का होना चाहिये। इसमें कोङ्कुणिवर्मा प्रथम से माधववर्मा द्वितीय तक पाँच नरेशों की वंशावली दी गई है यदि प्रथम राजा के राज्य का प्रारंभ समय ई० सन् २०० के लगभग मान लिया जाय और प्रत्येक नरेश को ३५-४० वर्ष या उससे कुछ अधिक वर्ष का राज्यकाल दिया जाय (जो कि संभव है) तो लेख के अन्तिम राजा माधवद्वितीय का समय ई० सन् ३७५-४०० के लगभग या कुछ बाद आता है। उक्त लेख में इस बात का उल्लेख नहीं है कि कोङ्कुणिवर्मा और उसके बाद के दो नरेश किस धर्म के प्रतिपालक थे। पर इस बात का वहाँ स्पष्ट निर्देश है कि तृतीय नरेश हरिवर्मा महाधिराज का उत्तराधिकारी विष्णुगोप नारायण भक्त था और उसका उत्तराधिकारी माधववर्मा व्यम्बकभक्त था^२। माधववर्मा द्वितीय ने चिर प्रनष्ट देवभोग, ब्रह्मदेय आदि को फिर से संचालित किया था और कलियुग में धर्मोद्धार किया था (६४)। इसका विवाह कदम्बवंशी नरेश काकुस्थवर्मा की बेटी से हुआ था क्योंकि गंगवंश के अनेक लेखों में इसके बेटे अविनीत को कदम्बनरेश कृष्णवर्मा (संभव है प्रथम) का प्रिय^३ भागिनेय लिखा है^४ (६५, १२१, १२२)। कृष्णवर्मा काकुस्थवर्मा का द्वितीय पुत्र था। व्यम्बकभक्त होते हुए भी माधववर्मा द्वितीय की धार्मिक नीति बड़ी उदार थी।

१. मैसूर एण्ड कुर्ग इन्स्ट्रिप्सन्स पृष्ठ, ३२, ४६.

२. लुइस राइस महोदय सन्देह करते हैं कि इन ताम्रपत्रों में प्रत्येक राजा के साथ पूर्व निर्धारित या सांचे में ढले हुए के समान जो विवरणात्मक वाक्य दिये हैं, वे संभव हैं, तथ्य नहीं हैं। वे मानते हैं कि ब्राह्मण प्रभाव के कारण ताम्रपत्र उत्कीर्ण करने वाले ने स्वेच्छा पूर्वक तथ्यों को विवृत कर उनके जैन होने पर पर्दा डाला है।

३. पीछे कदम्बों का परिचय भी देखिये।

ले० नं० ६० के अनुसार उसने अपने राज्य के १३ वें वर्ष में आचार्य वीरदेव^१ को सम्मति से मूलसंव द्वारा प्रतिष्ठापित जिनालय के लिए कुछ भूमि और कुमारपुर गाँव दान में दिया था।

माधव द्वितीय का पुत्र एवं उत्तराधिकारी कोङ्कुणिवर्म धर्ममहाधिराज अविनीत था। ले० नं० ६४ में इसके प्रतापी होने का वर्णन है। लेख से ज्ञात होता है कि यह जैनधर्मानुयायी था। इसने अपने गुरु परमार्हत विजयकीर्ति के उपदेश से अपने राज्य के प्रथम वर्ष में ही मूलसंव के चन्द्रनन्दि आदि द्वारा प्रतिष्ठापित उरनूर के जैन मन्दिर के लिए एक गाँव प्रदान किया था तथा एक दूसरे जिनमन्दिर के लिए चुंगी से प्राप्त धन का चतुर्थ भाग दान में दिया था। लु० राइस महोदय उक्त लेख का समय सन् ४२५ के लगभग मानते हैं। यदि उनका यह अनुमान सच है तो कहना होगा कि अविनीत सन् ४२५ के लगभग राजगद्दी पर बैठा था। अविनीत ने बहुत समय तक शासन किया था क्योंकि उसके बेटा दुर्विनीत का समय अनेक प्रमाणों के आधार पर लगभग सन् ४८० और ५२० ई० के बीच बैठता है^२। अविनीत जैनधर्मानुयायी था यह बात मर्करा से प्राप्त ताम्रपत्रों (६५) से भी सिद्ध होती है^३।

१. जैन धर्म के केन्द्र प्रकरण में हमने इन वीरदेव और सोनभरडार के वीरदेव मुनि में साभ्य स्थापित किया है।
२. प्रो० ज्योतिप्रसाद जैन, 'गङ्गनरेश' दुर्विनीत का समय', जैन एन्टीक्वेरी, भाग १८, अंक २, पृष्ठ १-११।
३. मर्करा से प्राप्त ताम्रपत्र असली नहीं है क्योंकि उनमें पश्चात्कालीन अकाल-वर्ष पृथ्वीवल्लभ (राष्ट्रकूट नरेश) का निर्देश है तथा जो आचार्यपरम्परा दी गई है वह ई० ६-१० वीं शताब्दी की मालुम होती है। लेख में सम-योल्लेख के साथ यह निर्देश नहीं है कि वह किस (शक या विक्रम) संवत् का है।

अविनीत का उत्तराधिकारी एवं पुत्र दुर्विनीत संस्कृत और कन्नड भाषा का बड़ा विद्वान् था। उसे एक ताम्रपत्र में 'शब्दावतारकार, देवभारतीनिबद्ध बृहत्कथा' आदि कहा गया है। राहस महोदय एवं डा० सालेत्तोरे आदि विद्वान् इस पद को व्याख्या कर यह सूचित करते हैं दुर्विनीत जैन वैय्याकरण पूज्यपाद का शिष्य था और उसने पूज्यपाद द्वारा लिखे शब्दावतार को कन्नड भाषा में परिवर्तित किया था^१। उसने भारवि के किरातार्जुनीय काव्य के १५ सर्गों पर संस्कृत टीका भी लिखी थी (१२१-१२२)। इसके समय का उल्लेख किया जा चुका है। हां, इसके समकालीन कोई जैन लेख हमारे संग्रह में नहीं है।

इसके बाद इस वंश के राजाओं का वर्णन ई० सन् ७५० के लेख नं० ११६ तथा बाद के लेखों (१२०-१२२) में मिलता है। इससे ज्ञात होता है कि गङ्ग वंश एक स्वतन्त्र राज्य था, उसने किसी की पराधीनता स्वीकार न की थी। इन लेखों से दुर्विनीत के बाद के नरेशों—मुष्कर, श्रीविक्रम, भूविक्रम, शिवमार प्रथम (नवकाम) श्रीपुरम्, शिवमार द्वितीय एवं मारसिंह प्रथम तक वर्णन मिलता है। लेख नं० १२१ और १२२ में इन राजाओं का राजनातिक सफलताओं और सामरिक विजयों का उल्लेख है।

शिवमार द्वितीय के पुत्र मारसिंह प्रथम के सम्बन्ध में उसके समकालीन लेख नं० १२२ से ज्ञात होता है कि ई० सन् ७६७ में वह युवराज ही था। उसके राज्यकाल का ऐसा कोई लेख नहीं मिला जिससे कहा जाय कि वह राजा हो सका हो।

इसके बाद ईस्वी सन् ७६७ से ८८६ तक इस वंश का कोई लेख इस संग्रह में नहीं आ सका।

मण्डे से प्राप्त सन् ८०२ ई० के एक लेख (१२३) से ज्ञात होता है कि राष्ट्रकूट गोविन्द तृतीय के समय में राष्ट्रकूट वंश दूसरे वंश की प्रतियोगिता में

१. मेडीवल जैनियम, पृष्ठ १६-२३।

ऊपर उठ गया था। उसने गङ्गाओं को बहुत समय से पराधीन देख उन्हें मुक्त किया पर उनके उद्धत स्वभाव के कारण पुनः बांध दिया। गङ्गा वंश के पराधीन होने की बात सन् ८६० के कोन्नूर से प्राप्त एक लेख (१२७) से भी ज्ञात होती है। इतिहासज्ञों का अनुमान है कि गङ्गा वंश के इन बुरे दिनों में शिवमार द्वितीय उक्त वंश की गद्दी पर था। उसने राष्ट्रकूट वंश की अधीनता मान ली थी। इस राजा के सम्वन्ध में लेख नं० १८२ में लिखा है कि यह राष्ट्रकूट नरेश अमोघ-वर्ष प्रथम (८१४-८७७ ई०) का पञ्चमहाशब्दधारी महामण्डलेश्वर था। इसने कल्हावी में एक जैन मन्दिर बनवाकर उसके लिए एक गांव दान में दिया था।

इसके बाद भी जैनधर्म की परम्परा इस वंश के नरेशों में बराबर चलती रही। लेख नं० १३१ से ज्ञात होता है कि सन् ८८७ में सत्यवाक्य कोण्णिवर्मा ने अपने राज्याभिषेक के १८ वें वर्ष में एक जैन मन्दिर के उद्देश से भट्टारक सर्वनन्दि के लिए १२ गांव दान में दिए थे। इतिहासज्ञ इस राजा को राचमल्ल द्वितीय मानते हैं जिसे राष्ट्रकूट नृप कृष्ण द्वितीय ने हराया था। इस लेख में और इसके बाद के लेखों में इस वंश की राजधानी का नाम कुवलालपुर (वर्तमान कोलार) और किले का नाम उच्च नन्दगिरि नाम दिया गया है। लेख नं० १३८ से विदित होता है कि सत्यवाक्य (राचमल्ल द्वितीय) तथा उनके भतीजे एरैयप्परस (चतुर्थ) ने कुमारसेन भट्टारक को दान दिया था। ले० नं० १३६ के अनुसार एरैयप्परस के पुत्र नीतिमार्ग अर्थात् राचमल्ल तृतीय का राज्य उत्तरोत्तर बड़ा रहा था। उसने कनकगिरि तीर्थवसदि को दुगुना कर भट्टारक कनकसेन को दान दिया।

सूदी से प्राप्त सन् ९३८ का एक लेख (१४२) इस वंश के इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व का है। इसमें गंगवंश की आदि से लेकर बूतुग द्वितीय तक सारे राजाओं की वंशावली दी गई है तथा कहीं कहीं उनके राजनीतिक महत्त्व के कार्यों का भी उल्लेख किया गया है। इस लेख में लिखा है कि बूतुग द्वितीय ने अपनी पत्नी द्वारा निर्मापित एक जैन मन्दिर के लिए कुछ भूमि दान में दी।

बूतुग, राचमल्ल तृतीय का भाई एवं उत्तराधिकारी था, तथा राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय अकालवर्ष (६३८-६६६ ई०) का बहनोई और सामन्त राजा था ।

बूतुग द्वितीय का पुत्र मारसिंह तृतीय इस वंश का बड़ा प्रतापी राजा हुआ है । लेख नं० १४६ और १५२^१ में इसकी जो अनेक उपाधियाँ दी गई हैं और उसके लिए जो प्रशंसात्मक वाक्य प्रयुक्त हुए हैं उनसे इसके प्रतापी होने में कोई संदेह नहीं रह जाता । लेख नं० १४६ के अनुसार उसने पुलिगेरे नामक स्थान में एक जिन मन्दिर बनवाया जो कि इसके नाम पर 'गंगकंदर्प जिनेन्द्र मन्दिर' कहा जाता था । लेख नं० १५२ के उल्लेखानुसार इसने अनेक पुण्य कार्य किए थे, और जैन धर्म के उत्थान में बड़ा योग दिया था । इसी लेख में उसकी अनेक सामारिक विजयों का उल्लेख है । उक्त लेख के अनुसार इस राजा ने अन्त में राज्य का परित्याग कर अजितसेन भट्टारक के समीप तीन दिवस तक सल्लेखना व्रत का पालन कर बंकापुर में देहोत्सर्ग किया था । यह राजा राष्ट्रकूट नरेशों का महासामन्त था और इसने कृष्ण तृतीय के लिए अनेक देश जीत कर दिये थे तथा इन्द्र चतुर्थ का राज्याभिषेक कराया था । इसका और इसके बेटे राचमल्ल चतुर्थ का मंत्री और सेनापति प्रसिद्ध चामुण्डराय था ।

राचमल्ल चतुर्थ के समय का केवल एक लेख (१५४) प्रस्तुत संग्रह में है । उसने श्रवणबेलगोल निवासी श्रीमत् अनन्तवीर्य के लिए पेर्गदूर नामक ग्राम तथा कुछ और दान दिये थे । इसके राज्यकाल में सेनापति चामुण्डराय ने श्रवणबेलगोल स्थान में बाहुबलि की एक विशालमूर्ति का निर्माण कराया था ।

गंग वंश के राजाओं में अन्तिम उल्लेखनीय नाम है रक्कसांग पेर्मनडि-राचमल्ल पंचम का जो कि सन् ६८४ में सिंहासनारूढ़ हुआ था । उसका असली नाम अरुमुलि देव था । वह बूतुग द्वितीय की दूसरी पत्नी रेवकन्निम्मदि से उत्पन्न पुत्र वासव का पुत्र था । इसने अपनी कन्याओं के विवाह द्वारा पल्लवों

और शान्तरवर्ष से सम्बन्ध स्थापित किया था। हुम्नव से प्राप्त लेख नं० २१३ से विदित होता है कि नम्नि आदि शान्तर राजकुमारों की अभिमाविका प्रसिद्ध जैन महिला चट्टल देवी इसी की पुत्री थी। इसके गुरु द्रविड संघ के विजय देव भट्टारक थे। इस राजा ने अपने वंश की गिरती हुई हालत को सुधारने का प्रयत्न किया पर सफल न हो सका।

यद्यपि इस वंश का अन्त सन् १००४ में राज राज चोल प्रथम की लड़ाई में हो गया, तो भी यह यत्र तत्र शाखाओं के रूप में जीवित बना रहा।

अपर निर्दिष्ट इस वंश के लेखों के अतिरिक्त दूसरे वंश के लेखों (नं० १७२, २२२, २५१, २५३, २६७, २७७, २६६, ३१४, ४३१) में गंगवंश के अनेकों महामण्डलेश्वरों एवं राजाओं का नाम आता है। ले० नं० २६७, २७७ एवं २६६ में तो इस वंश की प्रारम्भ से अन्त तक की वंशावली दी गई है, पर पीछे के राजाओं के सम्बन्ध में बहुत ही कम बातें माळुम होती हैं जिनसे क्रमबद्ध इतिहास नहीं लिखा जा सकता।

प्रस्तुत शिलालेख संग्रह के देखने से इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं रह जाता कि इस वंश के राजा प्रारम्भ से ही जैन धर्म और साहित्य के उपासक एवं संरक्षक साथ ही अपनी उदारनीति के कारण दूसरे सम्प्रदायों को भी दान आदि द्वारा संरक्षण प्रदान करते थे। इस वंश के संरक्षण में जैन धर्म ने अपना स्वर्णयुग देखा है।

१. कदम्बवंशः—प्रस्तुत संग्रह में कदम्ब वंश से सम्बन्धित १० लेख (६६, ६७, ६८, ६९, १००, १०१, १०२, १०३, १०४ और १०५) संग्रहीत हैं जिनमें कतिपय तो संस्कृत भाषा की सुन्दर काव्यात्मक शैली के नमूने हैं। यद्यपि इन लेखों में कोई काल-निर्देश नहीं है पर जिन राजाओं के ये लेख हैं उनका समग्र अन्य प्रमाणों से ज्ञात होता है इसलिए हमें इन्हें लगभग सन् ३६६ से ५५० के भीतर के मानना चाहिए।

इन लेखों से कदम्ब नरेशों के गोत्रादि विदित होते हैं। तदनुसार वे मानव्य गोत्र एवं हारितीपुत्र अंगिरस के वंशज तथा काकुत्स्थान्वयी थे। यद्यपि यह वंश

नामधर्मन्यायी था पर इसके कतिपय नरेशों की धार्मिक नीति बड़ी ही उदार थी और कुछ तो जैनधर्म प्रतिपालक भी थे। इस वंश का आदि नरेश मयूर-शर्मा माना जाता है पर उपर्युक्त लेखों में उसका तथा उसके बाद के चार नरेशों का नाम नहीं दिया गया। प्रस्तुत लेखों में इस वंश के पांचवें नरेश काकुस्थवर्मा से ही वंश परम्परा का उल्लेख है।

काकुस्थवर्मा के समय का केवल एक लेख (६६) अवतक उपलब्ध हुआ है। इसमें काकुस्थ वर्मा को कदम्बयुवराज लिखा है तथा उल्लेख है कि उसने ८० वें वर्ष में अपने एक जैन सेनापति श्रुतकोर्ति के लिए अर्हन्तों के खेत ग्राम में, वदोवर क्षेत्र दान में दिया था। लेख के ८० वाँ वर्ष को इतिहासज्ञ गुप्त संवत् का मानते हैं। इस मान्यता का आधार यह है कि कदम्बों का अपना कोई संवत् नहीं चला था तथा काकुस्थवर्मा की कुछ कन्याओं में से एक का विवाह गुप्त नरेश चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य द्वितीय (सन् ३७५-४१५ ई०) के एक पुत्र से हुआ था। गुप्त संवत् के लेखा के अनुसार युवराज काकुस्थवर्मा का समय ३१६ + ८० = ३९६ ई० होना चाहिए। इसके बाद काकुस्थवर्मा ने राजा के रूप में कुछ वर्ष अवश्य राज्य किया होगा। हम गंग अविनीत के सम्बन्ध में लिख आये हैं कि उसे काकुस्थवर्मा की एक पुत्री विवाही गई थी। समय की दृष्टि से अविनीत (लग० सन् ४०० ई० के बाद) और काकुस्थवर्मा प्रायः समकालीन भी थे। काकुस्थ वर्मा पलासिका में राज्य करता था, पर उसके पुत्र और प्रपौत्र वैजयन्ती से राज्य करते थे। सम्भव है पलासिका, कुछ समय के लिये उनसे छिन्न गई थी।

काकुस्थवर्मा का पुत्र शान्तिवर्मा था (६६) उसके सम्बन्ध का इस संग्रह में कोई लेख नहीं है। ले० नं० ६६ में इसके सम्बन्ध में लिखा है कि जैसे दुर्जन किसी स्त्री को बलात् खींचता है उसी तरह उसने शत्रु के गृह से लक्ष्मी को आकृष्ट किया था। यह उल्लेख उसके किसी संघर्ष का द्योतक है। उसका बेटा मृगेश

वर्मा हुआ जिसके राज्य काल के तीन लेख (६७, ६८, ६९) प्रस्तुत संग्रह में हैं । ले० नं० ६७ से श्रुत होता है कि उसने अपने राज्य के तीसरे वर्ष में अर्हन्तदेव के अभिषेक, उपलेपन एवं पूजनादि के लिए भूमिदान किया था । उसने अपने राज्य के चतुर्थ वर्ष में एक गाँव को तीन भागों में विभाजित कर एक भाग अर्हन्महाजिनेन्द्र के लिए, दूसरा भाग श्वेताम्बर श्रमण संघ तथा तीसरा भाग दिगम्बर श्रमण के उपभोग के लिए दान में दिया था (६८) । आठवें वर्ष में उसने पलाशिका नामक स्थान में एक जिनालय बनवाकर ३३ निवर्तन प्रमाण भूमि को यापनीयों के लिए तथा निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय के कूर्चकों के उपभोग के लिए दान में दे दिया (६९) । ले० नं० ६९ में उसे एक धर्मविजयी नृप लिखा है । यह लेख राजनीतिक इतिहास की दृष्टि से महत्व का है । इसमें उसे उन्नत गंग कुल को नष्ट करने वाला तथा पल्लव वंश के लिए प्रलयार्थि लिखा है^१ । इस लेख से मालुम होता है मृगेशवर्मा पलाशिका से राज्य कर रहा था ।

मृगेशवर्मा के तीन बेटे थे रविवर्मा, भानुवर्मा और शिवरथ । उनमें रविवर्मा उसका उत्तराधिकारी हुआ । उसके राज्यकाल के तीन लेख (१००, १०१, १०२) इस संग्रह में हैं । ले० नं० १०० के अनुसार सेनापति श्रुतकीर्ति के पौत्र जयकीर्ति ने कदम्ब राजाओं द्वारा परम्परा से प्राप्त पुरुखेटक ग्राम को रविवर्मा की आज्ञा से अपने माता पिता के कल्याणार्थ यापनीय संघ के कुमारदत्त प्रमुख आचार्यों को दान में दे दिया । ले० नं० १०१ राजनीतिक इतिहास की दृष्टि से महत्व का है । इसमें लिखा है कि विष्णुवर्मा प्रभृति राजाओं को नष्ट कर तथा कांचीपति चण्डदण्ड को पराजित कर रविवर्मा पलाशिका में समवस्थित था । इतिहासज्ञ इस लेख के विष्णुवर्मा को काकुत्स्थवर्मा के द्वितीय पुत्र कृष्णवर्मा (प्रथम) का इस नाम वाला ज्येष्ठ पुत्र मानते हैं, जिसने सम्भव है, मुख्य शाखा के विरुद्ध विद्रोह खड़ा किया

१. इस लेख में गंगकुल के जिस नरेश से मतलब है वह पेरुर शाखा का गंग नृप अर्यवर्म या माधव प्रथम होना चाहिये । पल्लव नृप को सिंहवर्म का पुत्र स्कन्दवर्मा होना चाहिये । (सक्शेसर आफ सातवाहनाज, पृष्ठ २६४) ।

था; तथा क्राञ्जीपति चण्डदण्ड को नन्दिवर्मा पल्लव का लसका कोई एक उत्तराधिकारी मानते हैं^१। इस ले० के अनुसार दामकीर्ति (श्रुतीर्ति का पुत्र) के अनुज श्रीकीर्ति ने अपनी माता के कल्याणार्थ अपने स्वामी रविवर्मा से चार निवर्तन भूमि लेकर जिनेन्द्र के लिए दान में दी। ले० नं० १०२ से ज्ञात होता है कि रविवर्मा के ११ वें राज्य वर्ष में उसके अनुज भानुवर्मा से किसी फण्डर भोक्क ने १५ निवर्तन भूमि प्राप्त कर जिनेन्द्र के लिए दान में दे दी। रविवर्मा का राज्यकाल साधारणतः सन् ४७८ से ५१३ ई० के लगभग माना जाता है।

रविवर्मा का उत्तराधिकारी उसका पुत्र हरिवर्मा हुआ। इसके राज्य के दो लेख (१०३-१०४) इस संग्रह में हैं। ले० नं० १०३ से ज्ञात होता है कि उसने अपने राज्य के चतुर्थ वर्ष में अपने चान्ना शिवरथ के उपदेश से पलाशिका में सिंह सेनापति के पुत्र मृगेश द्वारा निर्मापित जैन मन्दिर की अष्टाद्विका पूजा के लिए तथा सर्व संघ के भोजन के हेतु कूर्चकों के वारिषेणान्चार्य संघ के हाथ में चन्द्रक्षान्त को प्रमुख बनाकर वसुन्तवाटक ग्राम दान में दिया। इसी तरह ले० नं० १०४ से ज्ञात होता है कि उक्त नरेश ने अपने राज्य के पांचवें संवत्सर में सेन्द्रक राजा भानुवर्मा की प्रार्थना पर अहिरिष्ठ नामक दूसरे श्रमण संघ के लिए मरदे नामक ग्राम दान में दिया। हरिवर्मा का राज्य काल सन् ५१३ से ५३४ ई० में माना जाता है।

कदम्बों की एक शाखा और थी जिसके कुछ नरेशों ने मुख्य शाखा से विद्रोह किया था यह हमें ले० नं० १०१ से ज्ञात होती है। इस शाखा से सम्बन्धित इस संग्रह में केवल एक लेख (१०५) है। जो कि कृष्णवर्मा प्रथम के राज्यकाल का है। इतिहासज्ञों ने इस कृष्णवर्मा को शान्तिवर्मा का अनुज एवं काकुत्स्थवर्मा का पुत्र माना^२ है। ले० नं० १०५ में उसके अश्वमेधयाजिन्, समराजित विपुल ऐश्वर्य, एकातपत्र आदि विशेषण दिये हैं जो कि इसके प्रताप

१. सक्शेसर आफ सातवाहनाज, पृष्ठ २७२-२७३।

२. सक्शेसर आफ सातवाहनाज, पृष्ठ २८२।

के सूचक हैं। लेख में इसके त्रिपुस्तक देवराज का उल्लेख है जो कि युवराज था। वह त्रिपुस्तक का शासक था तथा जिनधर्म का भक्त था। उसने अर्हन्त भगवान् के वैश्यालय की पूजा मरम्मत आदि के लिए यापनीय संघों के लिए कुछ खेत दान में दिये थे।

गंग वंश के कई लेखों में अविनीत महाधिराज को कदम्ब कुल के कृष्णवर्मा का प्रिय भागिनेय माना जाता है। कदम्ब नरेशों में कृष्णवर्मा दो हो गये हैं। अविनीत का मामा कौन कृष्णवर्मा था इसमें इतिहासज्ञ एक मत नहीं है। फिर भी समकालीन राजवंशों के इतिहास पर दृष्टिपात करने से यह प्रतीत होता है उसे कृष्णवर्मा प्रथम होना चाहिए^१। कृष्णवर्मा प्रथम अविनीत का समकालीन भी था।

३. चालुक्य वंशः—प्रस्तुत संग्रह में इस वंश से सम्बन्धित अनेकों लेख संगृहीत हैं जिनसे मालुम होता है कि ये मानव्य गोत्र तथा हारीति के वंशज थे, वराह इनका लाल्लन था। इस वंश के राजाओं की साधारणतः वल्लभ एवं सत्याश्रय उपाधियाँ थीं। इस वंश की एक शाखा जिसे पश्चिमी चालुक्य कहा जाता है वातापी (बादामी) नामक स्थान से ६ वीं ईस्वी से ८ वीं ईस्वी तक शासन करती रही और पीछे दो शताब्दी बाद १०वीं से १२वीं तक कल्याणी नामक स्थान से। इसी तरह दूसरी एक शाखा पूर्वी चालुक्य के नाम से विख्यात थी और आंध्र देश के वेंगी नामक स्थान से ७ वीं शताब्दी से ११-१२ वीं शताब्दी तक सत्तारूढ़ रही। इस तरह इस वंश ने दक्षिण भारत के बहु भाग पर शासन किया।

(क) पश्चिमी चालुक्यः—जैन लेखों में इस वंश का सबसे प्राचीन दानपत्र (१०६) शक सं० ४११ (ई० ४८२) का आड़ते से मिला है। यह ले० सत्याश्रय पुलकेशि का था। तदनुसार उस राजा ने चोल, चेर, केरल, सिंहल और कलिङ्ग के राजाओं को कर देने वाला बना दिया था एवं पाण्ड्य

१. प्रो० ज्योतिप्रसाद, 'गंग नरेश दुर्विनीत का समय', जैन एण्टीक्वेरी, भाग १२, अंक २, पृष्ठ १-११

आदि मण्डलीक राजाओं को दिये जाते थे। लेख का उद्देश्य है कि उक्त नरेश के शासनकाल में सेन्द्रकवंशी सामन्त सामियार ने अलकनगर में एक जैन मन्दिर बनवाया था और राजाशा लेकर चन्द्र ग्रहण के समय कुछ जमीन और गाँव दान में दिये। इस लेख के समय के सम्बन्ध में इतिहासज्ञ एकमत नहीं है। डा० रा० गो० भण्डारकर प्रभृति विद्वानों की धारणा है कि पुलकेशि प्रथम के सिंहासनारूढ होने का समय ई० सन् ५५० से पहले नहीं हो सकता, पर यह लेख उस नरेश के राज्यकाल को ६२ वर्ष पहले ले जाता है। जो हो, इस लेख में पुलकेशि प्रथम के वंश गोत्रादि के निर्देश के अतिरिक्त पितृमह का नाम जयसिंह और पिता का नाम रणराग दिया गया है। ले० नं० १०६ से ज्ञात होता है कि रणराग के शासनकाल में उसके एक सेन्द्रक सामन्त दुर्ग-शक्ति ने पुलिगरे के प्रसिद्ध शंख जिनालय के लिए भूमिदान दिया था।

पुलकेशि प्रथम का उत्तराधिकारी उसका बेटा कीर्तिवर्मा प्रथम था। उसके शासन काल के एक लेख (१०७) के कन्नड अंश से ज्ञात होता है कि कीर्तिवर्मा ने कुछ सरदारों के निवेदन पर जिनेन्द्र मन्दिर के पूजा विधान के लिए कुछ खेत प्रदान किये थे। इसी तरह उक्त लेख के संस्कृत अंश से ज्ञात होता है कि उसने अपने सरदारों द्वारा निर्मापित जिनालय एवं दानशाला आदि के लिए भी कुछ खेतों का दान दिया था।

कीर्तिवर्मा प्रथम का बेटा पुलकेशि द्वितीय हुआ जिसके काल का एक प्रसिद्ध लेख एहोले (१०८) से प्राप्त हुआ है, जिसे कविता के क्षेत्र में कालिदास एवं भारवि की कीर्ति पाने वाले जैन कवि रविकीर्ति ने रचा था। भारतवर्ष का तत्कालीन राजनीतिक इतिहास जानने के लिए यह लेख बड़े महत्त्व का है। इसमें पुलकेशि द्वितीय के पिता कीर्तिवर्मा और चाचा मंगलीश की सामरिक विजयों के उल्लेख के बाद पुलकेशि द्वारा राज्य प्राप्ति और उसकी विस्तृत दिग्विजय का वर्णन मिलता है। उक्त लेख के अनुसार पुलकेशि उत्तर भारत के सम्राट् हर्षवर्धन का समकालीन था और उसने दक्षिण की ओर बढ़ते हुए हर्ष का हर्ष (उत्साह) विगलित कर दिया था। लेख के अन्त में लिखा है कि प्रतापी पुल-

केशि के आश्रित कवि रविकीर्ति ने पाषाण का एक जैन मन्दिर शक सं० ५५६ में बनवाया था ।

इस वंश के अन्य ले० नं० १११, ११२, ११४ से ज्ञात होता है कि चालुक्य नरेश प्रारम्भ से लेकर जैन धर्म और उसके उपास्य स्थानों को संरक्षण देते आये हैं । ले० नं० १११ पुलकेशि द्वितीय के पौत्र विजयादित्य के राज्यकाल का है और नं० ११३ विक्रमादित्य तथा नं० ११४ विक्रमादित्य द्वितीय के राज्यकाल का है । इनसे विक्रमादित्य द्वितीय तक की वंशावली के अतिरिक्त हमें इन राजाओं के राजनीतिक इतिहास की कोई सूचना नहीं मिलती । ये लेख छोटे दान पत्र के रूप हैं । ले० नं० ११३ से मालुम होता है कि विजयादित्य ने अपने पिता के पुरोहित उदय देव परिणत अर्थात् निरवद्य परिणत को एक गाँव दान में दिया था । इसी तरह ११४ वें लेख से मालुम होता है कि विक्रमादित्य द्वितीय ने पुलिगरे नगर में धवल जिनालय की मरम्मत एवं सजावट करायी थी । तथा मूलसंघ देवगण के विजयदेव परिणतार्च्य के लिए जिनपूजा प्रबन्ध के हेतु भूमिदान दिया था ।

विक्रमादित्य द्वितीय के बाद चालुक्य कुल के बुरे दिन आते हैं । यह बात हमें ले० नं० १२२, १२३, १२४, एवं १२७ से सूचित होती है । गंग और राष्ट्रकूट राजाओं ने इस साम्राज्य को तहस नहस कर दिया और लगभग २०० वर्षों तक यह फिर न बन सका । इस बीच काल में इसका स्थान राष्ट्रकूट वंश को मिला ।

इस राजवंश का इतिहास पढ़ने से मालुम होता है कि सन् ६७४ के आस पास तैलप द्वितीय ने इस वंश का पुनरुद्धार किया तथा कल्याणी नामक स्थान को राजधानी बनाया । नूतन शक्ति प्राप्त इस वंश के कतिपय राजाओं ने यद्यपि उतने उत्साह के साथ तो नहीं, फिर भी जैनधर्म की यथाशक्ति सेवा की । कविचरिते नामक ग्रन्थ से मालुम होता है कि तैलप द्वितीय महान् कन्नड जैन कवि रत्न का आश्रयदाता था । यह धारा नरेश मुंज और भोज का समकालीन था ।

ले० नं० १८२ में अमोघवर्ष के उल्लेख के बाद गंगनरेश शिवमार सैमोट्ट का नाम दिया गया है जिससे मालुम होता है कि यह अमोघवर्ष प्रथम (सन् ८१४-८७७ ई०) के समय का है। पर लेख में गलत रूप से शक सं० २६१ दिया गया है और किसी कञ्जरल सैमोट्ट गंग का उल्लेख है जिससे लेख जाली मालुम होता है। फ्लोट महोदय इसके उत्तरार्ध भाग को सच्चा मानते हैं।

कृष्ण तृतीय (अकालवर्ष) के पौत्र इन्द्र चतुर्थ के सम्बन्ध में ले० नं० १६३ (सन् ६८२) से ज्ञात होता है कि वह पोलो के खेल में बड़ा निपुण था। उसने श्रद्धावेलगोल में सल्लेखनापूर्वक मरण किया था। इस लेख में इन्द्र के अनेक विशेष द्विये गये हैं और कहा गया है कि वह गंग गंगेय (बुदुग द्वितीय) का कन्यापुत्र एवं राजचूड़ामणि का दामाद था। ले० नं० १५२^१ से ज्ञात होता है कि राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय के लिए गंग नरेश मारसिंह तृतीय ने गुर्जरप्रदेश को जीता था एवं और कृष्ण तृतीय के पौत्र इन्द्र चतुर्थ का राज्याभिषेक किया था। इन लेखों से ज्ञात होता है कि उस काल में इन दोनों राजवंशों में घनिष्टता थी।

६. कलचूरि वंशः—ले० नं० ४०८ से हमें ज्ञात होता है कि चालुक्य नूर्मण्डि तैल (तैल तृतीय) के बाद चालुक्य राज्य की लक्ष्मी कलचूरितिलक विज्जल के हाथ चली आई। कलचूरि वंश बहुत प्राचीन है इसका उल्लेख हम एहोलो के लेख (१०८) में पाते हैं जहाँ चालुक्य मंगलीश द्वारा उनके परास्त होने का उल्लेख है। कलचूरि वंश के अन्य लेखों से तथा इस संग्रह के लेख नं० ४०८, ४३५ से ज्ञात होता है कि ये अपनी उत्पत्ति उत्तर भारत के कालञ्जर नामक स्थान से मानते थे। लेख नं० ४०८ में विज्जल की शूर वीरता का वर्णन है। उसका भाई मैजुगिदेव था। लेख से विज्जल के तीन पुत्रों—सोयिदेव (राय-मुगारि), शंकम (निःशंकमल्ल), आइवमल्ल (रायनारायण)—और पौत्र कन्दार का नाम एवं परिचय मिलता है। उक्त लेख में लिखा है कि राजा विज्जल को सप्ताङ्ग सम्पत्ति दिलाने वाला उसका एक जैन सेनापति रेचि था जो

‘वसुधैकवानभव’ कहलाता था। लेख का विषय है कि आहवमल्ल (रायनारायण) कलचूरि के शासनकाल में उक्त सेनापति ने मागुडि गाँव के रत्नत्रय चैत्यालय के लिए भानुकीर्ति सिद्धान्त देव को तलवे गांव दान में दिया था।

लेख नं० ४३५ से मालुम होता है कि विज्जल के शासनकाल में वीरशैव मत का बोलवाला था। उक्त मत का आचार्य एकान्तदरामय्य जैनों पर अत्याचार कर रहा था (४३५, ४३६)। यद्यपि कलचूरि जैन धर्मानुयायी थे, उनके शासन पत्रों पर तीर्थंकर की पद्मासन मूर्ति, इन्द्रादि सेवकों के साथ बनायी जाती थी, पर विज्जल समय की गति देखते हुए वीर शैवों की ओर झुका, और कहा जाता है कि उन्हीं के द्वारा उसकी मृत्यु भी हुई। लेख नं० ४६५ से ज्ञात होता है कि उसके सेनापति रेचि ने उसे छोड़ कर जैन धर्मावलम्बी होय्सल नरेश वीर बल्लाल द्वितीय का आश्रय लिया था। लेख नं० ४४८ में उल्लेख है कि कुन्तल देश से विज्जल के शासन को हटाकर बल्लाल होय्सल ने उसे अपने अधीन कर लिया था। इस तरह दक्षिण भारत में इस वंश का शीघ्र ही अन्त हो गया।

७. होय्सल वंशः—चालुक्यों के पतन के बाद दक्षिण भारत में दो नई शक्तियों का जन्म होता है। ये दोनों अपने को यादव वंश से उत्पन्न मानते हैं। उनमें चालुक्य साम्राज्य के दक्षिण भाग पर अधिकार करने वाले होय्सल थे और उत्तर भाग पर यादव (सेऊण)।

गङ्गा वंश के समान होय्सल वंश के अभ्युदय में जैन प्रतिभा का बड़ा भारी हाथ रहा। जैन गुरुओं ने इस वंश के उत्थान में योग देकर अदिसा और अनेकान्त की दुन्दुभि को फिर एक बार दक्षिण प्रान्त में बजाया। इस वंश का उत्पत्ति स्थान सोसेवूर (सं० शशकपुर) था जिसे राइस सा० ने वर्तमान अङ्गडि (मुडगेरे तालुका, कडूर जिला, मैसूर राज्य) माना है। अंगडि से इस वंश से सम्बन्धित अनेकों लेख भी प्राप्त हुए हैं। यहीं इस वंश की कुलदेवता वासन्तिका देवी का मन्दिर अब भी विद्यमान है। संभव है यहीं इस वंश की उत्पत्ति से संबंधित एक महत्त्वपूर्ण घटना हुई थी जिसका उल्लेख कतिपय जैन

लेखों में मिलता है। अण्वेत्तोल से प्राप्त सन् ११२३ के एक लेख^१ से ज्ञात होता है कि एक समय इस वंश के प्रवर्तक प्रथम पुरुष सल से एक जैन मुनि ने एक कराल व्याघ्र को देखकर कहा कि—पोयसल—हे सल ! इसे मारो। लेख नं० ४५७ के अनुसार यह घटना इस प्रकार है:— कुन्तल आदि देशों का अधिपति, यदुकुल के सल को बनवास देश का मुख्य क्षेत्र दान में देना चाहता था। उस समय सुदत्त मुनि ने पद्मावती को एक चीते के रूप में प्रकट करवाया। पद्मावती को चीते के रूप में देखते ही उन्होंने सल से कहा— पोयसल (सल, मारो)। जिस पर उसने चीते को सल (डण्डे) से मारा और देवी पद्मावती के समक्ष उसके साहस का प्रदर्शन कराया। इससे राजा का नाम पोयसल पड़ा।

इस घटना के उल्लेख से इतना तो मालुम होता है कि सल उस समय एक होनहार। सरदार था जैन प्रतिभा को राज्याश्रय से वंचित होते समय यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि वह किसी उदीयमान सरदार को आगे बढ़ाये जो जिनधर्म को पुनः संरक्षण प्रदान करे। इतिहास हमें बताता है कि सचमुच ही इस वंश ने अपने अन्तिम दिनों तक जैन धर्म को आश्रय प्रदान किया था।

इस वंश के उद्गम होने के पहले अंगडि एक जैन केन्द्र था यह बात हमें लेख नं० १६६ से ज्ञात होती है। लेख नं० २०१ तथा अन्य लेखों से ज्ञात होता है कि इस वंश के शासक अपने को मले परोल गण्ड (पहाड़ी सामन्तों में मुख्य) मानते थे, जिससे मालुम होता है कि वे लोग पहाड़ी जाति के थे। यद्यपि प्रस्तुत संग्रह के लेखों से वंश के प्रारम्भ के तीन नरेश—सल, विनयादित्य प्रथम एवं नृपकाम—के सम्बन्ध में विशेष नहीं मालुम होता है पर अन्यत्र उल्लेखों से अनुमान किया जाता है कि ये तीनों नरेश सुदत्त मुनि के प्रभाव में थे^२। नृपकाम के सम्बन्ध में ले० नं० ३४७ से ज्ञात होता है कि वह विनयादित्य

१. जै० शि० सं० प्रथम भाग, ५६; प्रस्तुत संग्रह का २८२ या २८३ वां लेख।

२. सालेतोरे, मेडीकल जैनिज्म, पृष्ठ ६४-७३

द्वितीय का पिता था। लेख नं० २७८^१ में नृपकाम ह्योयसल का जैन सेनापति गंग-
राज के पिता एचि के संरक्षक के रूप में उल्लेख है। लेख नं० १७८ के आधार
पर कुछ इतिहासज्ञ इस नरेश का समय सन् १०२२ या १०४० (?) के लगभग
निर्धारित करते हैं, तदनुसार इसका दूसरा नाम राचमल्ल पेम्मनडि था जो कि
गंगवाडी के मुनिगों में प्रसिद्ध था^२। इसके गुरु द्रविड़संघ के वज्रपाणि ने सोसवूर
(अङ्गडि) में अपना जीवन व्यतीत कर अन्त में संन्यासपूर्वक देह त्यागा था।
नृपकाम का पुत्र विनयादित्य द्वितीय हुआ जिसने सन् १०४०—११०० के लगभग
शासन किया। लेख नं० २६०^३ से ज्ञात होता है कि इसके गुरु शान्तिदेव थे,
जिन की चरणसेवा से उसे राज्यलक्ष्मी प्राप्त हुई थी। लेख नं० २८६^४ में
उल्लेख है कि उसने अनेक तालाब एवं जैन मन्दिर बनवाये थे। लेख नं० १२५
से ज्ञात होता है कि विनयादित्य के राज्यकाल में अङ्गडि में मकर जिनालय
नाम से एक प्रसिद्ध चैत्यालय था। ले० नं० २०० के अनुसार उक्त नरेश के गुरु
शान्तिदेव सन् १०६२ ई० में दिवंगत हुए थे। उक्त अवसर पर उस नरेश ने और
सभी नगरवासियों ने मिलकर उनकी स्मृति में एक स्मारक बनवाया था। यह नरेश
चालुक्य नृप विक्रमादित्य षष्ठ का सामन्त था। उसका बेटा एरेयङ्ग (त्रिभुवनमल्ल)
सोमेश्वर तृतीय भूलोकमल्ल चालुक्य का सामन्त था (२१८)। ले० नं०
४०३^५ और ३६३^६ में उसे चालुक्य नरेश का बलद (दक्षिण) भुजादण्ड कहा
गया है। ले० नं० ३४८ में कई पद्यों द्वारा इसकी सामरिक वीरता की प्रशंसा

१. जै० शि० सं० प्रथम भाग लेख नं० ४४

२. रावर्ट सेवल, हिस्टोरिकल इन्स्क्रिप्शन्स आफ सदर्न इण्डिया, पृष्ठ ३५१

३. जै० शि० सं० प्रथम भाग, ले० नं० ५४.

४. वही—ले० नं० ५३.

५. वही—ले० नं० १२४.

६. वही—ले० नं० १३७ (?)

की गई है और अनेकों उपाधियाँ दी गई हैं। लेख नं० २३३^१ से, जो कि एरेयंग के राज्यकाल का ही है, ज्ञात होता है कि वह गंग मण्डल पर राज्य करता था। उसने अपने गुरु जैनतार्किक गोपनन्दि को अवणवेल्गोल की वसदियों के जीर्णोद्धार के हेतु कुछ ग्राम दान में दिये थे।

इतिहासज्ञों का अन्य लेखों के आधार पर विश्वास है कि एरेयंग अपने अन्तिम दिनों तक युवराज बना रहा और उसका वृद्ध पिता विनयादित्य गद्दी पर बैठा रहा। होयसल वंश में एरेयंग प्रथम व्यक्ति था जिसने वीर गङ्ग उपाधि धारण की। पीछे इसके उत्तराधिकारियों में यह उपाधि बड़ी प्रिय समझी गई।

लेख नं० २६५ से ज्ञात होता है कि एरेयङ्ग की रानी एचलदेवी से बल्लाल, विष्णुवर्धन (विट्टिग) एवं उदयादित्य नामक तीन पुत्र हुए। लेख नं० २६६ में इसके एक दामाद का उल्लेख है जिसका नाम हेम्माडिदेव था, यह गंगवंशोत्पन्न एवं जैन धर्मानुयायी था। लेख नं० २१८ के अनुसार मालुम होता है कि उसके ज्येष्ठ पुत्र बल्लाल ने कुछ समय के लिए शासन किया था यद्यपि उक्त लेख का शक संवत् १००० सन्देहास्पद है। इस लेख में बल्लाल के शौर्य की प्रशंसा भी है। लेख नं० ५६६ तथा ६२५^२ से ज्ञात होता है कि उसके जैन गुरु चारु-कीर्ति मुनि थे जिन्होंने इसे असाध्य बीमारी से बचाया था। बल्लाल का शासन काल सन् ११०० से ११०६ ईस्वी तक माना जाता है।

बल्लाल का उत्तराधिकारी उसका भाई विष्णुवर्धन हुआ। यह इस वंश का सबसे बड़ा प्रतापी राजा था। इस राजा ने कर्नाटक देश को चोल आधिपत्य से मुक्त किया था। इस संग्रह में उसके राज्य के अनेकों लेख संग्रहीत हैं। लेख

१. वही—ले० नं० ४६२।

२. वही—ले० नं० १०५, १०८

नं० २६३, २६४, २८३, २८७, २८६, ३०४, ३४८, ३६३ एवं ४०३^१ में विष्णु-वर्धन के अनेकों विरुद्धों तथा प्रतापादि का उल्लेख है। उसके आठ जैन सेनापतियों—गङ्गाराज, बोप्प, पुण्डिस, बलदेव, मरियाने, भरत, ऐच एवं विष्णु ने अनेकों महत्व के युद्धों में उसे विजय प्रदान कर उसके राज्य को मजबूत बनाया था। लु० राइस महोदय की मान्यता है कि सन् १११६ ई० के पहले विष्णुवर्धन ने जैन धर्म को छोड़कर रामानुजाचार्य के प्रभाव में आकर वैष्णव धर्म ग्रहण कर लिया था। सत्य जो हो पर उसके मन पर जैन प्रभाव और कृतज्ञता इतनी अधिक थी कि जैनत्व के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति में उसने कमी नहीं की थी। लेख नं० २८७ और ३०१ से ज्ञात होता है कि सन् ११२५ और ११३३ ई० में भी जैन धर्म के प्रति श्रद्धालु था। २८७ वें लेख के अनुसार उसने चोल सामन्त अदियम, पल्लव नरसिंह वर्म, कोङ्क, कलपाल तथा अङ्गरन के राजाओं को पराजित किया था तथा पोछे, वसदियों के जाणोंद्वार के हेतु तथा ऋषियों को आहार दान देने के लिए अपने जैन गुरु द्रविड़ संघ के श्रीपाल त्रैविद्य देव को चलय (शल्य) नामक ग्राम दान में दिया था। लेख नं० ३०१ (सन् ११३३) से विदित होता है कि उसके एक सेनापति बोप्पदेव द्वारा हनसोगेवलि के द्रोहघरट्ट जिनालय की स्थापना के बाद जिस समय पुरोहित लोग चढ़ाये हुए भोजन (शेषा) को विष्णुवर्धन के पास बङ्कापुर ले गये, उसी समय वह एक शत्रु पर विजय प्राप्त कर आया था, तथा उसको रानी लक्ष्मी महादेवी से पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ था। उसने उनका स्वागत कर प्रणाम किया और यह समझकर कि इन्हीं पार्श्वनाथ भग० की स्थापना से उसे युद्ध में विजय, पुत्रोत्पत्ति एवं सुख समृद्धि मिली है, उसने देवता का नाम विजयपार्श्व तथा पुत्र का नाम विजय नरसिंह देव रखा था। ले० नं० २८३^२ से ज्ञात होता है कि उसकी एक पत्नी शान्तलदेवी जैन धर्म परायणा था। उसकी एक उपाधि थी उद्बृत्तसवतिगन्धवारणे अर्थात् उच्छुङ्खल सौतों के लिए मत्त हाथी। उसने श्रवणवेल्लोल में 'सवति गन्धवारण' वसदि भी बनवायी थी। उसके अनेक

१. वही—(२८३ से क्रमशः) ले० नं० ५६, ४६३, ५३, १४४, १३८, १२४, १३७।

२. वही—ले० नं० ५६

दानादि कार्यों का वर्णन जैन महिलाओं के प्रकरण में दिया गया है। विष्णु-धर्म से सम्बन्धित प्रायः सभी लेखों में उसके जैन सेनापतियों मन्त्रियों एवं अफसरों की शूर वीरता, दानादि कार्यों का वर्णन है जो कि प्रसंगानुसार पृथक् किया गया है।

यद्यपि विष्णुवर्धन ने होय्सल वंश को दक्षिण भारत की राजनीति में समु-न्नत बनाया था और अपने वंश के पूर्व अधिपति चालुक्य वंश से बहुत कुछ स्वतंत्र कर लिया था, पर वह सम्राट् का पद धारण न कर सका। लेख नं० २६५ से सिद्ध होता है कि वह चालुक्याभरण त्रिभुवनमल्ल (विक्रमादित्य षष्ठ) का आधिपत्य स्वीकार किया था। उसके अन्तिम वर्षों के लेखों (३१८ आदि) में भी उसे महामण्डलेश्वर कहा गया है।

इतिहासज्ञों की मान्यता है कि विष्णुवर्धन सन् ११४० ई० में दिवंगत हुआ और उसका बेटा नरसिंह (प्रथम) गद्दी पर आरूढ़ हुआ। यद्यपि विष्णु-वर्धन के राज्यकाल का उल्लेख करने वाले लेख सन् ११४६ ई० तक के मिलते हैं पर या तो वे पुराने लेखों की पुनरावृत्ति हैं या जाली हैं। जैन लेखों में ऐसा ही एक लेख (३१८) उसकी मृत्यु के दो वर्ष बाद का है। विष्णुवर्धन को नर सिंह के अतिरिक्त एक और पुत्र था। ले० नं० २६३ (सन् ११३० ई०) से ज्ञात होता है कि उसका ज्येष्ठ पुत्र श्रीमन् त्रिभुवनकुमार बल्लालदेव राज्य कर रहा था। उसकी बहिनों में सबसे बड़ी हरियम्बरसि थी जो जैन धर्मपरायण थी। उक्त राजकुमार के संबंध में इससे अधिक और कुछ ज्ञात नहीं।

नरसिंह प्रथम के राज्यकाल के भी अनेकों लेख इस संग्रह में दिये गये हैं (३२४, ३२८, ३३३, ३३६, ३४७, ३४८, ३५१, ३५२, ३५६, ३६३, ३६७)। ये सामन्तों, सेनापतियों एवं अफसरों से सम्बन्धित हैं। लेख नं० ३४८^१ से ज्ञात होता है कि उक्त नरेश के भारद्वाजागरिक एवं मंत्री हुल्ल ने

श्रवणवेल्लोल में चतुर्विंशति विन मन्दिर निर्माण कराया । यह मन्दिर आङ्ग-कल भी भण्डारिबस्ति कहलाता है । उक्त लेख में लिखा है कि एक समय नर-सिंह अपनी दिग्विजय के समय श्रवणवेल्लोल आये और उक्त जिलाय को देख प्रसन्न हो उसका नाम भव्य चूड़ामणि रखा । नरसिंह ने उस समय मन्दिर के पूजनादि प्रबन्ध के लिए 'सवणेर' नामक ग्राम दान में दिया । यही बात ले० नं० ३४८ में भी लिखी है । अन्य लेखों से प्राप्त इसके सेनापतियों एवं महाप्रधानों का वर्णन दूसरे प्रकरण में दिया गया है । इन लेखों से ज्ञात होता है कि उक्त नरेश ने अपने शासनकाल में होयसल वंश की समृद्धि के लिए कोई विशेष प्रयत्न नहीं किये । केवल अपने पिता द्वारा अर्जित राज्य वैभव और उसके यश का ही उपयोग करता रहा । लेख नं० ३३६ में इसकी एक उपाधि 'जगदेकमल्ल' दी गई है जो सूचित करती है कि यह चालुक्यों का आधिपत्य स्वीकार करता था ।

नरसिंह का उत्तराधिकारी उसका प्रतापी बेटा वल्लाल द्वितीय हुआ जिसे लेखों में वीर वल्लाल कहा गया है । यह बड़ा बहादुर राजा था । इसने होयसल वंश को स्वतन्त्र बनाया और राज्य में शान्ति एवं सुख समृद्धि स्थापित की । इसका राज्य सन् ११७३ से १२२० ई० तक अर्थात् ४८ वर्ष के लगभग रहा । इस नरेश के राज्यकाल के भी अनेकों लेख इस संग्रह में दिये गये हैं । लेख नं० ३७३ (सन् ११६८) इसकी युवराज अवस्था का है जिससे ज्ञात होता है कि यह अपने पिता के शासनकाल में सक्रिय सहयोग देता था । इसके जैन गुरु का नाम वासुपूज्य सिद्धान्त देव था । लेख नं० ३७६ और ३८१^१ इसके राज्य के प्रथम वर्ष के हैं । ले० नं० ३७६ से विदित होता है कि अपने पट्ट-बन्धोत्सव में महादान दिये थे । शक सं० १०६५ की आरवण शुक्ला एकादशी (दशमी) रविवार को उसका राज्याभिषेक हुआ था । उस दिन उक्त लेखा-

नुसार उसके महासांघिविग्रहिक मंत्री बूचिमय्य ने त्रिकूट जिनालय बनवा कर, उसकी पूजादि के लिए द्रविड संघ के वासुपूष्य सिद्धान्तदेव को मरिकली गाँव भेंट किया। इसी तरह लेख नं० ३८१ से विदित होता है कि उसका दण्डाधिप हुल्ल था। यह हुल्ल उसके पितामह विष्णुवर्धन के समय से ही उक्त वंश की सेवा में था। बल्लाल देव ने उस वर्ष भानुकीर्ति व्रतीन्द्र को पार्श्व और चतुर्विंशति तीर्थंकर की पूजा हेतु मारुहल्लि ग्राम दान में दिया तथा हुल्ल के अनुरोध से बेक्क गाँव भी भेंट में दिया। ले० नं० ३९६^१ में लिखा है कि बल्लाल ने अपने पिता द्वारा दिये गये तीन गाँवों के दान को हुल्ल मंत्री द्वारा पूरा कराया।

इस राजा के इस संग्रह के अनेक लेख उसके सेनापतियों, मंत्रियों एवं सेठों से संबंधित हैं जिनका वर्णन पीछे प्रकरणों में दिया गया है। उसकी सामूहिक विजयों के सम्बन्ध में ले० नं० ३९४ में लिखा है कि इसने उच्चंगि के किले को जीता था, तथा ले० नं० ४३१ से विदित होता है कि उसने सेवुण राजा को हराया और ले० नं० ४४८ से ज्ञात होता है कि उसने कुन्तूल देश पर कलचूरि विज्जल के शासन को हटाकर अपने अधीन किया था। ले० नं० ४६५ से मालुम होता है कि इसका एक जैन दण्डनायक रेचि था जो कि ४०८ वें ले० में कलचूरि वंश का दण्डाधिनाथ बतलाया गया है। दोनों लेखों का अध्ययन करने से मालुम होता है कलचूरि नरेश के धर्म परिवर्तन के कारण तथा बल्लाल द्वारा अपने स्वामी के परास्त होने पर संभव है वह उसका सेनापति हो गया हो।

बल्लाल द्वितीय के पुत्र नरसिंह द्वितीय के राज्य का केवल एक लेख (४७५)^२ हमारे संग्रह में है जिसमें उसकी पृथ्वीवल्लभ, महाराजाधिराज, सर्वशत्रुहामणि आदि उपाधियाँ दी गई हैं। लेख में उक्त नरेश के राज्य में एक सेठ द्वारा गोम्मटेश्वर की पूजा के हेतु किये गए दान का उल्लेख है।

१ वही—ले० नं० ६०.

२ वही—ले० नं० ८१.

हमें नरसिंह द्वितीय के पुत्र सोमेश्वर के समय के दो लेख (४६५^१ एवं ४६६) मिलते हैं। ले० नं० ४६५ में सोमेश्वर की विजय एवं कीर्ति का परिचय उनकी उपाधियों से ज्ञात होता है। उक्त नरेश के सेनापति शान्त और उसके पुत्र सातलण ने मनलकेरे में जैनमन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था। द्वितीय लेख में वीर बल्लाल तक तो ठीक रूप से वंशावली दी गई पर पीछे की वंशावली नहीं। लेख में काल निर्देशको देखते हुए कहा जा सकता है कि यह उसके समय का है।

सोमेश्वर के राज्य के उत्तराधिकारी उसकी दो रानियों के दो पुत्र, नरसिंह तृतीय एवं रामनाथ हुए। नरसिंह तृतीय के चार लेख प्रस्तुत संग्रह में दिए गये हैं। ले० नं० ४६६ के अन्तर्गत दो लेखों से ज्ञात होता है कि सोमेश के पुत्र नरसिंह ने अपने जीजा द्वारा बनवायी गई चहार दीवारी एवं मकान की मरम्मत कराकर विजयपार्वदेव की सेवा में अर्पण किया था तथा कुछ महीने बाद अपने उपनयन संस्कार के समय उक्त देव की पूजादि के निमित्त दान दिया था। ले० नं० ५१२^२ में उक्त नरेश द्वारा तथा होन्नचगोरे के सम्भुदेव द्वारा भूमिदान का उल्लेख है। ले० नं० ५२८^३ में होय्सलराय शब्द से इस नरेश का निर्देश इसके गुरु महामण्डलाचार्य माघनन्द का उल्लेख तथा बेल्गोल के जौहरियों द्वारा भूमिदान का कथन है। चूँकि लेख का समय उक्त नरेश के राज्यकाल में पड़ता है इसलिए होय्सलराय से नरसिंह तृतीय ही समझना चाहिये।

अन्यत्र उल्लेखों से ज्ञात होता है कि रामनाथ तथा नरसिंह के उत्तराधिकारी बल्लाल तृतीय ने भी जैन धर्म को संरक्षण प्रदान किया था^४।

इस तरह हम देखते हैं कि इस वंश के आदि पुरुष से लेकर अन्तिम राजा तक सभी जैन धर्म के प्रति श्रद्धालु, भक्त एवं उसे संरक्षण प्रदान करने वाले थे।

१. वही-ले० नं० ४६६.

२. „ ले० नं० ६६.

३. „ ले० नं० १२६.

४. सालेतोरे, मेडीवल जैनज्म, पृष्ठ ८५-८६

८. विजय नगर राज्य:—होय्यसल साम्राज्य १३ वीं शताब्दी तक दक्षिण भारत में विद्यमान रहा पर मुसलमानों के दो तीन हमलों से वह ध्वस्त हो गया। उसका अन्तिम राजा कल्लाल तृतीय, मदुरा के सुल्तान गियासुद्दीन द्वारा मार डाला गया। दक्षिण के अन्य हिन्दू साम्राज्य भी खतरे में थे। वे सब सचेत हो विजय नगर के नायकों के झण्डे के नीचे आये।

विजय नगर साम्राज्य के संस्थापक अपने को यादव वंश का मानते हैं (५८५ श्लो० १५)। इस वंश का संस्थापक था संगमेश्वर या संगम (५६१) जिसके संबंध में हमें विशेष कुछ मालुम नहीं। इसके दो बेटों ने मिलकर हिन्दू शक्ति को नेतृत्व प्रदान किया। हरिहर प्रथम जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह सन् १३३६ में गद्दी पर बैठा था सन् १३५५ तक जीवित रहा। प्रस्तुत संग्रह में उसके समय के दो ले० नं० ५५८, ५५९ हैं जिनमें उसे महामण्डलेश्वर, हिन्दुवराय, सुरताल श्री वीर कहा गया है। उसका उत्तराधिकारी उसका भाई बुक्कराय हुआ जिसने सन् १३५५ से १३७७ ई० तक राज्य किया। इसके राज्य के ६-७ ले० प्रस्तुत संग्रह में दिए गये हैं, जिनमें उसे महामण्डलेश्वर कहा गया है। ले० नं० ५६६ में उसे पूर्व दक्षिण पश्चिम समुद्राधीश्वर तथा ले० नं० ५६२ में अभिनव बुक्कराय कहा गया है। ले० नं० ५६१ में उसके एक पुत्र विरुपण्ण बोडियर का उल्लेख है। ले० नं० ५६१, ५६५, एवं ५६६ में उक्त नरेश की धार्मिक नीति का निरूपण है। तदनुसार वह अपने राज्य में जैन और वैष्णवों में कोई भेद नहीं देखता था और जब कभी विवाद के प्रश्न उठते थे तो दोनों के पारस्परिक मेल मिलाप कराने में उद्यत रहता था। उसके राज्य के शेष लेख प्रायः समाधिमरण के स्मारक हैं।

बुक्कराय का उत्तराधिकारी उसका पुत्र वीर हरिहरराय द्वितीय हुआ जिसने सन् १३७७ से १४०४ ई० तक शासन किया। इसके राज्यकाल के करीब १३

लेख इस संग्रह में हैं जो कि प्रमयः साधारण जनता, सरदारों एवं सेनापतियों से सम्बंधित हैं। ले० नं० ५७६ में उसके एक जैन सेनापति वैचप्य का उल्लेख है जो कि उसके पिता के समय से उक्त पद पर था। उक्त लेख में उसकी कोंकण देश से लड़ाई का वर्णन है जिसमें वैचप्य की जीत हुई थी। ले० नं० ५८१ में हरिहर द्वितीय के पुत्र बुक्कराय द्वितीय तथा वैचप्य सेनापति के पुत्र इरुगप्प महामंत्री का उल्लेख है। ले० नं० ५८५ में वैच (वैचप) और इरुगप्प की प्रशंसा के साथ बुक्क और हरिहर की प्रशंसा है। सन् १३८६ में इरुगप्प ने विजयनगर में एक मन्दिर बनवाया और उसमें कुन्थु जिन्ननाथ की स्थापना की थी। ले० नं० ५८६ में और उसके बाद के लेखों में महामण्डलेश्वर के स्थान में उक्त राजा की अश्वपति, गजपति आदि तथा महाराजाधिराज उपाधियां मिलती हैं। ले० नं० ६०२ में हरिहरराय की मृत्यु का उल्लेख है। उक्त लेखानुसार वह सन् १४०४ (शक सं० १३२६ भाद्रपद कृष्ण १० सोमवार) में दिवंगत हुआ था।

हरिहर द्वितीय का उत्तराधिकारी उसका बेटा बुक्क द्वितीय हुआ जिसने १४०४ से १४०६ ई० के बीच राज्य किया था पर उसके राज्य का एक भी जैन लेख प्रस्तुत संग्रह में नहीं है। उसका उत्तराधिकारी देवराय हुआ जो कि उसका भ्राता था। इसने १४०६ से १४२२ ई० तक राज्य किया। इसके राज्य के ६ लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं। ले० नं० ६०४ में उसकी अधिराट् जैसी उपाधियां दी गई हैं तथा ६०५ में इसकी प्रशंसा की गई है। ले० नं० ६०६ में उसकी अनेक उपाधियों के साथ उसके जैन सेनापति गोप का उल्लेख है। लेख नं० ६१५ के अन्तर्गत दो लेखों से विदित होता है कि उसका एक बेटा हरिहरराय था जो कि जैन धर्मानुयायी था। उसने कनकगिरि के विजयनाथ देव की उपासना आदि के लिए मलेश्वर ग्राम दान में दिया था।

ले० नं० ६१६ एवं ६२० में इस वंश की वंशावली दी गई है जिससे

विदित होता है कि देवराय का उत्तराधिकारी विजय अर्थात् बुक्क तृतीय था जिसने कुछ ही महीने राज्य किया था। ले० नं० ६१८ में विजय बुक्कराय के सम्बंध में लिखा है कि उसने स्वर्ण प्राप्ति के लिए गुम्फनाथ स्वामी की पूजा एवं सजावट के लिए तोटहल्लि गांव में दिया था। वह भगवद् अर्हात् परमेश्वर का आराधक था। उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र देवराय द्वितीय हुआ। ले० नं० ६१९ और ६२० में इस वंश की देवराय द्वितीय तक वंशावली दी गई है। ले० नं० ६१९ के अनुसार उक्त ताम्रपत्रों का दाता यही देवराय था। ६२० में इस वंश के प्रत्येक राजा की प्रशंसा में एक एक शार्दूलविक्रीडित छन्द दिया गया है। देवराय द्वितीय की प्रशंसा में अनेक छन्द हैं और कहा गया है कि उसने अपने पान सुपारी वगीचे में एक चैत्यालय बनवाया था और मन्दिर में श्री पार्श्वनाथ स्वामी की प्रतिमा विराजमान की थी। इस नरेश ने सन् १४२२ से १४४६ तक राज्य किया। ले० नं० ६३५^१ (सन् १४४६ ई०) में इसकी मृत्यु का संवत् दिया गया है।

देवराय द्वितीय का उत्तराधिकारी उसका बेटा मल्लिकार्जुन हुआ पर उसका एक भी लेख प्रस्तुत संग्रह में नहीं है। इसकी मृत्यु के बाद सन् १४६५ में उसका भाई विरूपाक्ष तृतीय गद्दी पर बैठा। उसका राज्य सन् १४८५ तक था। उसके समय का एक लेख नं० ६४६ (सन् १४७२) है जिसमें उसकी अनेक उन्नतियाँ—पृथ्वीमनोवल्लभ, महाराजाधिराज, राजपरमेश्वर आदि—दी गई हैं। यह संगम वंश का अन्तिम राजा था। इसके मंत्री सालुव नरसिंह ने इसे मार कर राज्य छीन लिया और इस तरह सन् १४८५ में इस वंश का अन्त हो गया। इस वंश के बाद विजयनगर पर शासन करने वाले अन्य वंश भी हुए हैं। उनमें तुलुव और आरवीडु वंश ख्यात हैं। तुलुव वंश के तृतीय नृप कृष्णदेव राय का नाम इतिहास में विशेष प्रसिद्ध है। अन्य उल्लेखों से ज्ञात होता है कि इसने

जैन धर्म को अच्छी तरह संरक्षित प्रदान किया था ^१। उसका उत्तराधिकारी उसका भाई अच्युत राय हुआ था। लेख नं० ६६७ में लिखा है कि वादि विद्यानन्द ने नरसिंह के कुमार कृष्णराय के दरबार में परमतवादियों को अपने वाग्बल से परास्त किया था तथा उनके चरख कमलों को कृष्णराय के भाई अच्युतराय अपने मुकुट से पूजते थे।

विजय नगर राज्य पर शासन करने वाले आरवीडु वंश के दो नरेशों के राज्य काल के दो लेख नं० ६६१ (सन् १६०८) और ७१० (सन् १६३७) भी इस संग्रह में उपलब्ध हैं। प्रथम लेख बेङ्गटाद्रि प्रथम के समय का है। जिसमें उसे राजाधिराज आदि उपाधियां दी गई हैं और उल्लेख है कि मेलिगे नामक स्थान में बोम्मण श्रेष्ठो ने जिन मन्दिर बनवाकर अनन्त जिन की प्रतिष्ठा की थी। इसी तरह दूसरे लेख में बेङ्गटाद्रि द्वितीय का अनेक उपाधियों के साथ उल्लेख है। उसे कलिकाल अष्टम चक्रवर्ती कहा गया है। इस लेख में लिंगायत और जैनों के बीच उठे धार्मिक विवाद पर आपसो समझौता होने का उल्लेख है।

विजय नगर राज्य के लेखों को देखने से हमें भली भांति ज्ञात होता है कि जनता के बीच विशेषतः नायकों और गौड़ों के बीच जैन धर्म प्रिय था। वे उसका विधिवत् पालन करते, दान देते तथा अन्त में समाधि विधि पूर्वक देहत्याग करते थे। हिरियाबलि एवं नव निधि आदि ऐसे स्थान थे कि जहाँ समाधि विधि साधक आचार्य रहते थे। स्त्रियां अपने पति के मरने के बाद या तो सहगमन ^१ (सती होकर) या समाधि विधि से मरण करती थीं। सती प्रथा के दो तीन दृष्टान्तों से ज्ञात होता है कि जैन समाज हिन्दू संस्कारों से प्रभावित होने लगा था। उनके धार्मिक मामलों में बैष्णवों की ओर से भी समय समय पर बाधाएं आने लगी थीं।

६. मैसूर राज्यवंशः—मैसूर राज्य के सम्बंध के इस संग्रह में प्रायः वे ही लेख हैं जो कि जैनशिलालेख संग्रह प्रथम भाग में वर्णित हैं। केवल दो लेख नं० ७५८

१. देखो, लेख नं० ५५६, ५७४, ६०५,

(सन् १८२८ कैलसुर से प्राप्त) एवं नं० ७६४ (सन् १८२६) नरसीपुर से प्राप्त नये हैं, जो कि मुम्बुडि कृष्णराज चतुर्थ के राज्यकाल के हैं। इसका राज्य सन् १७६६ से १८३१ ई० तक था। पहले भाग के लेख नं० ४३३, ६८ एवं ४३४ इस संग्रह में लेख नं० ७५२, ७५७ एवं ७६६ के रूप में संगृहीत हैं, जो कि इसी नरेश के समय के सम्झने चाहिये, कृष्ण राज तृतीय (राज्य काल ई० १७३४-१७६१) के नहीं।

ई. दक्षिण भारत के छोटे राजवंश एवं सामन्त गण।

१. सेन्द्रक कुल:—इस कुल की उत्पत्ति नागवंश से कही जाती है। लेख नं० १०६ में इन्हें भुजगेन्द्रान्वय का कहा गया है। इनका देश नागरखण्ड था जो कि बनवासि प्रान्त का एक भाग था। पहले ये कदम्बों के सामन्त थे पर पीछे कदम्बों के पतन के बाद बादामी के चालुक्यों के सामन्त हो गये। प्रस्तुत संग्रह के लेख नं० १०४, १०६ एवं १०६ से ज्ञात होता है कि ये जैन धर्मानुयायी थे। इस वंश के सामन्त भानुशक्ति राजा ने कदम्ब हरिवर्मा से जैनमन्दिर की पूजा के लिए दान दिलाया था (१०४) तथा चालुक्य जयसिंह (प्रथम) के राज्य में सामन्त सामियार ने एक जैन मन्दिर बनवाया था (१०६)। लेख नं० १०६ से ज्ञात होता है कि चालुक्य रणराग के शासन काल में विजयशक्ति के पौत्र एवं कुन्दशक्ति के पुत्र दुर्गशक्ति ने पुलिगेरे के प्रसिद्ध शंख विनालय के लिए भूमिदान दिया था।

२. नीगुन्द वंश:—इस वंश का उल्लेख गंगवंश के एक लेख नं० १२१ में मिलता है। वहां लिखा है कि बाणकुल को भयभीत करने वाला दुण्डु नाम का एक नीगुन्द नामक युवराज हुआ। उसका बेटा परगूल पृथ्वी नीगुन्द राज हुआ उसकी पत्नी कुन्दाब्धि थी जिसकी माता पल्लव नरेश की पुत्री थी तथा उसका पिता संगर कुल का मरुवर्मा था। परगूल और उसका पिता दुण्डु दोनों जैन थे। उसकी पत्नी कुन्दाब्धि ने लोक तिलक नामक जैन मन्दिर बनवाया। जिसके लिए:

परगूल ने अपने अविर्षित नरेश से एक ग्राम दान में दिलाया था । उक्त लेख में दुण्डु के जैन गुह विमलचन्द्राचार्य का उल्लेख है ।

३. शान्तरं वंश—दक्षिण भारत में जैन धर्म को शक्तिशाली बनाने में शान्तरंवंशी राजाओं का बड़ा भारी हाथ था । प्रस्तुत संग्रह के अनेक जैन लेख इस बात के प्रमाण हैं ।

शान्तरं राजाओं के वंश का नाम उग्रवंश था और सातवीं शताब्दी के लगभग पश्चिमी चालुक्य नरेश विनयादित्य के शासनकाल में यह वंश हमारे सामने आता है । राज्य के रूप में इस वंश को स्थापित करने वाले प्रथम पुरुष का नाम जैन लेखों में, जिनदत्तराय मिलता है । लेख नं० १४६ के अनुसार यह जिनदत्तराय कलस राजाओं के खानदान कनककुल में उत्पन्न हुआ था । उसने जिनामिषेक के लिए कुम्हसेपुर नामक गांव दान में दिया था । जिनदत्तराय के प्रताप का वर्णन ले० नं० १६८ में दिया गया है जिससे विदित होता है कि उसने पद्मावती देवी के प्रसाद को प्राप्त कर एक राज्ञस के पुत्र को अपने भुज-बल से भयभीत कर दिया था । ले० नं० २१३ और २४८ से जिनदत्तराय और उसके वंश के सम्बन्ध की अनेक सूचनाएँ मिलती हैं । इनसे मालूम होता है कि इस वंश की उत्पत्ति उत्तर भारत के मथुरा नगर में हुई थी और जिनदत्तराय ने पद्मावती के प्रसाद से पट्टिपोम्बुच्चपुर (वर्तमान हुम्मच) में अपना शासन स्थापित किया था । इसके बाद शान्तर लोगों की राजधानी बहुत समय तक हुम्मच ही रही । इस वंश के अनेकों लेख भी हुम्मच से ही प्राप्त हुए हैं ।

जिनदत्तराय के वंश में कुछ समय बाद तोलापुरुष विक्रमशान्तर हुआ जिसने मौनिमट्टारक के लिए एक पाषाणवसदि (१३२) बनवाई थी । ले० नं० २१३ से विदित होता है कि विक्रमशान्तर ने एक महादान देकर सान्तलिंगे हजार नाड् नाम का एक भिन्न राज्य स्थापित किया, इससे वह कन्दुकाचार्य, दान-विनोद, विक्रमशान्तर इन तीन नामों से प्रसिद्ध हुआ । उसका पुत्र चागि शान्तर हुआ जिसने चागि समुद्र का निर्माण कराया था । उक्त लेख से ज्ञात होता है कि चागि के बाद क्रमशः वीर, कन्नर, कावदेव, त्यागि, नन्नि, राय, चिकवीर, अम्मन

तथा तैल (सन् ८५० ई० के लगभग से १०२५ ई० के लगभग तक) इस वंश में उत्पन्न हुए । दुर्भाग्य से इन सबके सम्बन्ध में कोई लेख नहीं मिलते ।

तैल (प्रथम) के तीन पुत्र थे उनमें वीर शान्तर (द्वितीय) ज्येष्ठ था । वही राज्य का अधिकारी हुआ । उसके राज्य के इस संग्रह में दो लेख हैं । ले० नं० १६७ में उसके अनेक विरुद्ध दिये गये हैं । ले० नं० १६८ से ज्ञात होता है कि उसने समस्त विरोधियों को नष्ट कर अपने राज्य को निष्कण्टक कर दिया था । इस लेख में उसकी पत्नी चागलदेवी द्वारा निर्मापित तोरण एवं मन्दिर आदि कार्यों तथा दानों की प्रशंसा है । वीरशान्तर का अधिराजा त्रैलोक्यमल्ल चालुक्य (सोमेश्वर प्रथम-सन् १०४२-१०६८ ई०) था इसके नाम पर ही वीर शान्तर का दूसरा नाम त्रैलोक्यमल्ल पड़ा (१६७, १६८) । ले० नं० २१३ से ज्ञात होता है कि इसका विवाह जिन भक्त कुल गंगवंश में हुआ था । उसका ससुर रक्षस गंग था । उसकी पत्नी कञ्जलदेवी (वीर महादेवी) से उसे चार पुत्र उत्पन्न हुए—तैल, गोमिग, ओडुग और बर्म । ये सब जैन धर्म के परम भक्त थे । इन भाइयों ने अपनी जैन धर्मपरायणा मौसी चट्टलदेवी के सहयोग से जैन धर्म की प्रभावना के अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये थे । इस संग्रह में तैल-शान्तर के राज्यकाल के ७ लेख (२०३, २१२, २१३, २१४, २१५, २१६, २२६) हैं जो सभी हुम्मच से प्राप्त हुए हैं । ले० नं० २०३ से ज्ञात होता है कि तैल द्वितीय ने सन् १०६६ में अपनी राजधानी पोम्बुच्चपुर में एक जिनालय बनवाया था, जिसका नाम भुजबल शान्तर जिनालय था । अन्य लेखों में उसके भाइयों के धार्मिक कार्यों का उल्लेख है । तैल द्वितीय भी अपने पिता के समान चालुक्य त्रिभुवन मल्ल (विक्रमादित्य षष्ठ) के अधीन था । उसका विरुद्ध भी था त्रिभुवन मल्ल । उसने अपनी माता वीरञ्जरिस की स्मृति में, वादिन्नरट्ट अजित सेन परिबलदेव का नाम लेकर एक बसुदि की नींव रखी थी ।

ले० नं० २४८ और ३२६ से ज्ञात होता है कि तैल शान्तर के पम्पादेवी नाम की एक पुत्री तथा श्रीवज्राय नाम का पुत्र था तथा ओडुग शान्तर के तैल

(तृतीय) नामका पुत्र था । अन्यत्र उल्लेखों से ज्ञात होता है कि तैल तृतीयः श्रीवल्लभ का उत्तराधिकारी हुआ^१ । ले० नं० ३४६ में इस वंश के अन्तिम अंश का वर्णन है । यह लेख तैल चतुर्थ के वर्णन से प्रारम्भ होता है । तैल चतुर्थ, श्रीवल्लभ शान्तर का पुत्र था । इसकी पत्नी अकलादेवी थी जिससे काम, सिंह और अम्भण ये तीन पुत्र हुए । काम से जगदेव और सिंगिदेव दो पुत्र तथा अलिया देव पुत्री हुई । काम, तैल चतुर्थ का उत्तराधिकारी हुआ और जगदेव कामदेव का । उक्त लेख में अलियादेवी के दान कार्यों का वर्णन है । यह देवी गंगवंश के राजकुमार होन्नेयरस की पत्नी थी ।

यद्यपि पिछे के शान्तर नरेश वीर शैवधर्म की ओर झुक गये थे तो भी जैन धर्म को कृतज्ञता के भाव उनके मन में बराबर थे । २-३ शताब्दी बाद भी इस वंश के नायकों को अपने पूर्वजों के धर्म की याद बनी रही । कारकल से प्राप्त दो लेखों (६२४ और ६२७) से हमें ज्ञात होता है कि जिनदत्तराय के वंशज भैरव के पुत्र वीर पाण्ड्य ने कारकल में बाहुबलि की प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित कराई थी तथा वहीं जिनभक्त ब्रह्म (क्षेत्रपाल) की प्रतिमा भी प्रतिष्ठापित की थी ।

४. कोङ्गात्ववंशः—कोङ्गात्ववंश राजाओं का शासन कोङ्गलनाड ८००० प्रान्तपर था जो कि वर्तमान कुर्गके उत्तरीभाग येलु सावीर प्रान्त और मैसूर के हसन जिले के दक्षिणीभाग अर्कुलगुद तालुका को शामिल किये था । यहाँ के पूर्व इतिहास का हम पता नहीं पर ११वीं शताब्दी इस्वी से कोङ्गात्व नरेशों के शिलालेखों से ज्ञात होता है कि उस समय यह क्षेत्र महत्वपूर्ण था ।

इस वंश के जो भी लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं उनसे उनके राजवंश का विशेष परिचय नहीं मिलता पर उनकी जैन धर्मपरायणता का परिचय अवश्य मिलता है । सन् १०५८ ई० के लेखों (१८८, १८९, १९०) से मालुम होता है कि राजेन्द्र कोङ्गात्व ने अपने पिता द्वारा निर्मापित बसदि के लिए भूमिदान दिया था । उसकी मां ने भी एक बसदि बनवाई थी और उसमें अपने गुह गुणसेन

१—रावर्ट सेवेल, हिस्टोरिकल इन्क्रिप्शन्स आफ सदर्न इण्डिया, पृष्ठ ३६०

पश्चिम देव की प्रतिमा प्रतिष्ठित की थी। ले० नं० १६० में राजेन्द्र का पूरा नाम राजेन्द्र चोल कोङ्गात्वं दिया गया है। सन् १०७० के एक मुद्रित लेख (२०६) में पृथुषि कोङ्गात्वं नाममात्र मिलता है उसके आगे का अंश नहीं पर ले० नं० २२०^१ में उसका पूरा नाम राजेन्द्र पृथ्वी कोङ्गात्वं अदररादित्य दिया गया है। इसने अदररादित्य नामक चैत्यालय निर्माण कराया था। पहले के उद्धृत लेखों और इस लेख से ज्ञात होता है कि उसका शासन काल कम से कम सन् १०५६ से १०७६ ई० तक अवश्य था। उक्त लेख में राजेन्द्र कोङ्गात्वं की महत्वपूर्ण अनेकों उपाधियाँ दी गई हैं जिनसे मालुम होता है कि वे सूर्यवंशी थे और चोलवंश से उनकी उत्पत्ति हुई थी। उन्हें ओरेयूर पुरवराधीश्वर कहा गया है। ओरेयूर व उरगपुर चोलराज्य की प्राचीन राजधानी थी। इस वंश के नरेश प्रारंभ से ही होयसल राजाओं के अधीन सामन्त थे तथा पीछे विजय नगर राज्य के अधीन बने रहे।

प्रस्तुत संग्रह में इस वंश के और राजाओं के लेख नहीं आ सके। ले० नं० ५६० (सन् १३६१) में कोङ्गात्वंवंशी किसी राजा की रानी सुगुण देवी द्वारा प्रतिमा स्थापना एवं दानादि कार्यों का उल्लेख है। इससे विदित होता कि इस वंशके नरेश चौदहवीं शताब्दी या उसके बाद तक जैन धर्म पालन करते रहे।

५. चङ्गात्वं वंश:—कोङ्गात्वं के दक्षिण में चङ्गात्वं वंश का राज्य था। पहले वे चङ्गनाड (मैसूर रियासत का वर्तमान हुणसूर तालुका) के अधिपति थे। पश्चात् इनका राज्य पश्चिम मैसूर और कुर्ग में फैला था। यद्यपि ये शैव सम्प्रदाय के थे पर प्रस्तुत संग्रह के कुछ लेख यह सिद्ध करते हैं कि ११ वीं शताब्दी के अन्तिम एवं १२वीं के प्रथम दशकों में वे जैन धर्मावलम्बी थे। ले० नं० १७५, १६५, १६६ एवं २२३ से ज्ञात होता है कि वीर राजेन्द्र चोल नन्नि चङ्गात्वं ने देशिकाणा, पुस्तक गच्छ के लिए कुछ बसदियाँ बनवायी थीं। लेख नं० २४० और २४१ में कथन है कि उसी राजेन्द्र चङ्गात्वं ने सन् ११०० में

चन्द-तीर्थ की बसन्दि को, जिसे पहले राम ने बनवाया था और जिसकी बर्तनी दान में दिया था, फिर से बनवाया ।

ले० नं० ३७७ में उल्लेख है कि कदम्बरवंशी सोविदेव ने किसी चंगाल्व राजाको हरा दिया था-और ४५२ में लिखा है कि होयसल सेनापति ने चंगाल्व नृप को मार भगाया था । पर इन राजाओं का क्या नाम है, हमें मालुम नहीं । ले० नं० ६६१ में सूचना है कि सन् १५१० के लगभग इस वंश के एक नरेश के मंत्री पुत्र ने गोम्मटेश्वर की ऊपरी मञ्जिल का जीर्णोद्धार कराया था ।

६. निडुगल वंशः—१३ वीं शताब्दी ईस्वी में इस वंश का राज्य उत्तर मैसूर प्रान्त के कुछ हिस्से पर था । ये अपने को चोल महाराज तथा ओरेयूर पुरवराधीश्वर कहते थे । इस वंश के दो लेख (४७८ और ५२१) हमारे संग्रह में हैं जिनसे मालुम होता है कि इस वंश के कुछ नरेश जिनधर्म भक्त थे । ले० नं० ४७८ में इस वंश की एक वंशावली दी गई है जो कि तीसरे वंशधर से प्रारंभ होता है, यथा—चोल राजाओं में हुआ मंगि, उससे बन्वि, उससे गोविन्द, उसका पुत्र हुआ इरङ्गोल (प्रथम) । इरङ्गोल का पुत्र हुआ भोगनृप जिससे बर्म (ब्रह्म) नृप हुआ । उस बर्म नृप की रानी वाचालदेवी से इरङ्गोल द्वितीय हुआ । इस नरेश ने अपने आश्रित एक जैन व्यक्ति गंगेयन मारेय के अनुरोध पर पार्श्व जिनबसदि के लिए कुछ भूमियों का दान दिया । उक्त बसदि का निर्माण उक्त जैन ने कराया था । उस बसदि की पूजा आदि के लिए कुछ किसानों ने चन्दा एवं तैलादि दान की व्यवस्था की थी । ले० नं० ५२१ में उसकी अनेक उपाधियाँ दी गई हैं तथा उक्त जिन बसदि का नाम ब्रह्म जिनालय दिया गया है जो कि सम्भव है उसके पिता के नाम पर रखा गया था । उक्त बसदि के लिए सन् १२७८ ई० में मल्लि सेट्टि ने सुपारी के २००० पेड़ों के २ हिस्से दान में दिये थे । इरङ्गोल द्वितीय के सम्बन्ध में इतिहासज्ञों की मान्यता है कि वह जैन धर्मावलम्बी था^१ ।

१—रावर्ट सेवेज, हिस्टोरिकल इन्स्क्रिप्शन्स आफ सदर्न इण्डिया, पृष्ठ ३६६

इकोशोल प्रथम के सम्बंध में श्रवण-वेल्लोल से प्राप्त दो लेखों (३४८, ३७८) से ज्ञात होता है वह भी जैन था। उसके पुत्र नयकीर्ति सिद्धान्त देव थे तथा वह होयसल विष्णुवर्धन द्वारा पराजित हुआ था।

७. चेर वंश—चेर वंश की एक शाखा अदिगैमान् का एक लेख (४३४) हमारे संग्रह में है, जिससे उस वंश का थोड़ा परिचय मिलता है। उक्त लेख में एलिनि उर्फ यर्वनिका नामक एक अदिगैमान् सरदार का उल्लेख है। दूसरा सरदार राजराज था। उसका पुत्र विहुकादलगिय पेम्माल अर्थात् व्यामुक्त श्रवणोज्ज्वल था, जिसे लेख में तकटानाथ कहा गया है। अन्यत्र उल्लेखों से मालुम होता है कि वह सन् ११६८-१२०० ई० में जीवित था। उक्त लेख के अनुसार व्यामुक्त श्रवणोज्ज्वल ने अपने पूर्वज यर्वनिका द्वारा तूण्डीर मण्डल के अर्हसुगिर पर प्रतिष्ठापित यक्ष-यक्षिणी की प्रतिमाओं का जीर्णोद्धार कराया तथा एक षष्ठ्य दान में दिया और एक नाली भी बनवायी थी। लेख से ज्ञात होता है कि इस शाखा के तीनों पुरुष जैन धर्म में रुचि रखते थे।

८. शिलाहार वंश—शिलाहार अपने को जीमूतवाहन का वंशज मानते हैं। प्रस्तुत संग्रह में पश्चात्कालीन शिलाहारों के केवल तीन लेख संग्रहीत हैं, जो कि कोल्हापुर और उसके आसपास प्रदेश में राज्य करते थे। ले० नं० ३२० और ३३४ में इस वंश की वंशावली दी गई है जिसमें जतिग से इस वंश का प्रारम्भ माना गया है। जतिग को नरेन्द्र, क्षितीश कहा गया है। जतिग के चार बेटे थे—गोङ्गल, गूवल, कीर्तिराज और चन्द्रादित्य। इसमें गोङ्गल का पुत्र मारसिंह हुआ जिसके पाँच पुत्र थे—गूवल, गंगदेव, बल्लाल, भोजदेव, गरुडरा-दित्य। उक्त दोनों लेख गरुडरादित्य के पुत्र विजयादित्य के राज्य के हैं जो कि भूमिदान संबंधी है। इन लेखों में उसके जो विरुद्ध दिये गये हैं उनसे ज्ञात होता है कि वह अपने समय का बड़ा प्रतापी मण्डलेश्वर था। बल्लालदेव और

गण्डरादित्य के सम्बन्ध में ले० नं० २५० में उल्लेख है कि उसने जैन मुनियों के लिए एक भवन दान में दिया था। उसकी महामण्डलेश्वर उपाधि थी। भोजदेव के सम्बन्ध में अन्यत्र उल्लेख से मालुम होता है कि उसके दरबार में रहकर सोमदेव ने शब्दार्थव चन्द्रिका बनायी थी।

६. रट्ट वंश—इस वंश के अनेक लेख इस सग्रह में दिखाई देते हैं। इस वंश के राजे जैन धर्म के संरक्षक राष्ट्रकूट एवं चालुक्य नरेशों के सामन्त थे। हुल्लस महोदय की मान्यता है कि इस वंश का व्यवहारो नाम रट्ट था जब कि राष्ट्रकूट अलंकारिक एवं शाही रूप था। जो भी हो, रट्ट लोग राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय के समय से प्रभाव में आये थे। सौंदत्ति से प्राप्त एक लेख (१३०) से मालुम होता है कि रट्टों में प्रथम जिसने प्रमुख अधिकारी होने का पद पाया था वह था मेरड का पुत्र पृथ्वीराम। उसे यह पद राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय की अधीनता में मिला था। उससे पहले वह मैलाप तीर्थ के कारेयगण के इन्द्रकीर्ति स्वामी का शिष्य था। ले० नं० १६० में पृथ्वीराम के पुत्र, प्रपौत्र एवं उनकी पत्नियों के नाम दिए गए हैं। संभव है ये सब सामन्त या महासामन्त थे। इसके बाद इस वंश की परम्परा का क्रम कुछ भंग हो गया है।

वंशावली का द्वितीय अंश २०५ और २३७ वें लेख में वर्णित है, जिसमें नन्न से सेन द्वितीय तक वंश परम्परा दी गई है। इन लेखों में तथा पीछे के लेखों में कार्तवीर्य को लत्तलूपुरवराधीश्वर तथा महामण्डलेश्वर आदि कहा गया है। ले० नं० ३६६, ४४६, ४४८, ४५३, ४५४ और ४७० इसी वंश से संबंधित है जिनमें सेन द्वितीय से ४-५ पीढ़ी तक अर्थात् कार्तवीर्य चतुर्थ, मल्लिकार्जुन और लक्ष्मीदेव द्वितीय तक की वंशावली दी गई है। ज्ञात होता है कि इस वंश का अभ्युदय ई० सन् ६७८ के लगभग से १२२६ ई० तक रहा। इस वंश के प्रथम पुरुष पृथ्वीराम ने राष्ट्रकूट वंश की अधीनता में वृद्धि की पर उसके उत्तराधिकारी शान्तिवर्मा से लेकर सेन द्वितीय तक कल्याणी के चालुक्यों की

अधीनता में रहे । सेन द्वितीय पीछे स्वतन्त्र हो जाता है और संभव है कि उसके बाद के सभी वंशधर स्वतन्त्र थे ।^१

वंश के आदि पुरुष पृथ्वीराम के सम्बन्ध में ले० नं० १३० में कहा गया है वह एक जैन मुनि का विनीत छात्र था । उपर्युक्त लेखों से मालुम होता है कि कर्तवीर्य और मल्लिकार्जुन ने अपने दानों द्वारा जैन धर्म को अच्छी तरह संरक्षित किया था ।

१०. यादव वंशः—यह वंश अपनी उत्पत्ति विष्णु से मानता है (३१७) पर इसके प्रारम्भिक इतिहास के विषय में हमें कुछ नहीं मालुम । इस संग्रह के जैन लेखों से ज्ञात होता है कि वे राष्ट्रकूटों के तथा पीछे कल्याणी के चालुक्यों के सामन्त थे । ईस्वी १२ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में यह शक्ति कुछ स्वतन्त्र होती दिखती है । प्रारम्भिक यादवों को सेउण देश के यादव भी कहते हैं । पीछे इन्होंने द्वेवगिरि में अपने राज्य को स्थापित किया था ।

प्रस्तुत संग्रह में इस वंश के राजा सेउणचन्द्र तृतीय से लेकर रामदेव या रामचन्द्र तक के शिला लेख संग्रहीत हैं । ले० नं० ३१७ से ज्ञात होता है कि राजा सेउणचन्द्र तृतीय ने चन्द्रप्रभ भगवान् के मन्दिर के खर्च के लिए अंजनेरी में तीन दुकानें दान में दी थीं पर उसकी राजनीतिक स्थिति का पता नहीं चलता । ४२१ वें लेख में उल्लेख है कि होय्सल नृप वीरबल्लाल द्वितीय ने, सन् ११६८ के लगभग सेऊणदेश के किसी राजा को जिसके पास अग्रणीत हाथी घोड़े तथा वीर योद्धा थे, युद्ध में अकेले ही हराया । इतिहास को देखने से पता चलता है कि उस समय वहाँ भिल्लम पञ्चम का बेटा जैत्रपाल (जैतुगि) प्रथम शासन कर रहा था । उसके शौर्यसम्पन्न विशेषणों से ज्ञात होता है कि उस समय तक यादवों का प्रभाव एतद् स्थिति अच्छी हो गई थी । जैत्रपाल प्रथम का बेटा सिंहण हुआ जिसका राज्य सन् ११६१ ई० से १२४७ ई० तक था ।

१. विशेष इतिहास के लिए देखो, दिनकर देसाई, महामण्डलेश्वरज अण्डर दि चालुक्यज आफ कल्याणी, बम्बई, १९५१

इसके ३७ वें वर्ष को स्मृत करने वाला एक समाधिमंश स्मारक लेख (४६०) प्रस्तुत संग्रह में दिया गया है । इसी तरह सिन्धु के पौत्र कन्धार देव या कन्धार देव के समय का वैसा ही एक लेख (५०२) इसी संग्रह में है । इस वंश से सम्बन्धित ले० नं० ५११ में वंशावली वाला भाग भ्रष्ट है, तो भी इससे इतना ज्ञात होता है कि कन्धार देव का सहोदर महदेव था तथा कन्धार-राय का पुत्र रामदेव (रामचन्द्र) था । उक्त लेख के अनुसार दण्डेश कूचिराज ने अपने स्वामी महदेव के करकमलों द्वारा अपनी पत्नी के नाम पर निर्मापित लक्ष्मी जिनालय को कुछ दान दिलवाया था । रामचन्द्र या रामदेव के राज्य काल के ५ लेख (५१३, ५३५, ५३८, ५४०, ५४१) इस संग्रह में हैं जो कि दाताओं द्वारा दिये दान के स्मारक हैं । सन् १२६२-६५ के बीच के ले० नं० ५३८, ५४०, ५४१ में उक्त राजा की भुजबल प्रौढ प्रताप चक्रवर्ती आदि उपाधियाँ दी गयी हैं ।

होयसल वंश के समान ही इनका राज्य मुसलमानों ने नष्ट कर दिया ।

११. संगीतपुर के सालुव मण्डलेश्वरः—१५ वीं ई० के उत्तरार्ध से लेकर १६ वीं के उत्तरार्ध तक संगीतपुर के शासक जैन धर्म के नेता के रूप में हमारे सामने आते हैं । तौलव देश (उत्तर कनारा जिला) में संगीतपुर, जिसे हाडुहस्ति भी कहते हैं, एक समृद्ध नगर था । उस नगर के शासक काश्यप गोत्र तथा सोमवंश के कहलाते थे । ले० नं० ६५४ में इस नगर का बड़ा सुन्दर वर्णन है । वहाँ का शासक महामण्डलेश्वर सालुवेन्द्र था जोकि चन्द्रप्रभ भगवान् का भक्त था । लेख में उक्त राजा के अनेक विशेषण दिये गये हैं जिससे विदित होता है कि वह राज्य और जैनधर्म दोनों को अच्छी तरह पालन कर रहा था । उसके मंत्री का नाम पद्म या पद्मण था जो कि शाही खान्दान का था । उसे सन् १४८८ में सालुवेन्द्र महाराज ने एक ग्राम भेंट दिया जिसे उसने जिनधर्म की उन्नति के लिए दान में दे दिया (६५४) । इसी मंत्री ने १० वर्ष बाद सन् १४९८ में पद्माकरपुर में एक चैत्यालय बनवाकर पार्श्व जिन की स्थापना की तथा अनेक दान दिये (६५८) ।

महामण्डलेश्वर सालुवेन्द्र के पिता का नाम संगिराय था तथा अनुब का नाम कुमार इन्दगरस बोडेयर था। इन्दगरस का दूसरा नाम इम्मडि सालुवेन्द्र था जो कि अपनी शूर वीरता के लिए प्रसिद्ध था (६५६)। वह जैनधर्म का भक्त था और उसने विदिरु में वर्धमान स्वामी की पूजा के निमित्त दान की व्यवस्था की थी।

आगे इस वंश के सालुव मल्लिराय, सालुव देवराय, सालुव कृष्णराय के नाम मिलते हैं जिन्होंने जैनधर्म को संरक्षण प्रदान किया था। सालुव कृष्णराय, सालुव देवराय की बहिन पद्माम्बा का पुत्र था। ले० नं० ६६७ से ज्ञात होता है कि ये तीनों शासक प्रसिद्ध जैन वादी विद्यानन्द मुनि के भक्त थे। सालुव मल्लिराय और देवराय के दरबारों में उक्त मुनि ने अनेकों प्रतिवादियों को परास्त किया था। ले० नं० ६७४ में तीनों राजाओं के पूर्वजों का परिचय तथा एक दूसरे के सम्बन्ध का परिचय दिया गया है। वहाँ उन्हें ज़ेमपुर का शासक भी कहा गया है।

५. जैन सेनापति एवं मन्त्रिगण

इन लेखों पर दृष्टिपात करने से यह निश्चय रूप से मालूम होता है कि दक्षिण भारत में जैन धर्म ने अपना व्यावहारिक रूप अच्छी तरह पा लिया था। जैन सन्तों के उपदेश से न केवल व्रत नियमादि पालन कर अन्त में समाधि से देहोत्सर्ग करने वाले व्यक्ति ही प्रभावित थे बल्कि विशाल सेनाओं के नायक दण्डाधिपति एवं राज्यसंचालक मन्त्रिगण भी प्रभावित हुए थे। अहिंसा का सन्देश केवल उनकी श्रद्धा का विषय न था, वह तो देश की प्रगति में बाधक होने की जगह साधक था। उसके बिना चाहे धार्मिक क्षेत्र हो या राजनीतिक, स्वतन्त्रता संभव न थी।

इन लेखों में अनेकों वीर सेनानियों की अमर कहानियाँ भरी पड़ी हैं। उनमें से प्रमुख कुछ का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

१. **श्रुतकीर्ति:**—जैन धर्म के आश्रयदाता कदम्बों के सेनापति श्रुतकीर्ति और उसके वंशजों की भक्ति उल्लेखनीय है। ये लोग यापनीय संघ के आचार्यों के भक्त थे। पलाशिका (हल्सी) और देवगिरि से प्राप्त लेखों में इस वंश का चरित चित्रित है। ले० नं० ६६ से विदित होता है कि श्रुतकीर्ति सेनापति ने अपने कल्याण के लिए बड़ोवर क्षेत्र को अर्हन्तों के लिए दे दिया था जो कि उसने अपने स्वामी कदम्ब काकुस्थवर्मा से खेटक ग्राम में प्राप्त किया था। लेख नं० १०० में इसके गुणों की प्रशंसा है और इसे भोजवंश का या भोजक लिखा है। वह काकुस्थवर्मा का विशेष कृपापात्र था। उक्त लेख के अनुसार काकुस्थवर्मा के बेटे शान्तिवर्मा के पुत्र मृगेश ने श्रुतकीर्ति की पत्नी एवं दामकीर्ति की मां को खेटग्राम धर्मार्थ दे दिया था। उनी लेख में लिखा है उस दामकीर्ति का ज्येष्ठ पुत्र जयकीर्ति था जिसके गुरु आचार्य बन्धुषेण थे। उसने अपने माता पिता के पुण्यार्थ खेटक ग्राम को यापनीय संघ के आचार्य कुमारदत्त को दे दिया था। ले० नं० १०१ में दामकीर्ति के छोटे भाई का नाम श्रीकीर्ति था जो कि अपने कुल के अनुरूप धर्मात्मा था। ले० नं० ६७ और ६६ में दामकीर्ति का उल्लेख है जिनसे ज्ञात होता है कि वह कदम्ब शान्तिवर्मा की धार्मिक प्रवृत्तियों का प्रेरक था। उन दिनों पलाशिका (हल्सी) यापनीय संघ का केन्द्र था और श्रुतकीर्ति के वंशज उक्त संघ के अनुयायी थे।

२. **चामुण्डराय:**—इसका प्रिय नाम 'राय' भी था। इतना शूरवीर, इतना दृढ़ भक्त एवं इतना स्वामिभक्त मंत्री कर्नाटक के इतिहास में दूसरा और कोई नहीं दिखाता। उसके समय के अनेकों लेखों और उसकी कन्नड भाषा में कृति चामुण्डराय पुराण से उसके जीवन का परिचय मिलता है। ले० नं० १६५ (प्रथम भाग, नं० १०६) से ज्ञात होता है कि वह ब्रह्मचत्र कुल में पैदा हुआ था। वहाँ उसे 'ब्रह्मचत्रकुलोदयाचलशिरोभूषामणि' कहा गया है। यह गंग नरेश राचमल्ल चतुर्थ का सेनापति था पर मालुम होता है कि वह उसके पिता मारसिंह तृतीय के समय भी सेनापति था। मारसिंह के विषय में लिखा जा चुका है कि वह उस वंश का बड़ा प्रतापी नरेश था। वह राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय

का महासामन्त था। श्रवणवेल्लगोल से प्राप्त ले० नं० १५२ (प्रथम भाग, ३६) और १६५ (प्रथम भाग, १०६) में इसकी अनेक विजयों का वर्णन किया गया है। ले० नं० १५५ (प्रथम भाग, ६१) में वर्णित अनेक विजयों का श्रेय राजा मारसिंह को दिया गया है पर उक्त लेख के कथन को ले० नं० १६५ और चामुण्डराय पुराण के सहारे पढ़ने से वास्तविकता समझ में आ जाती है। रान्धमल्ल की 'जगदेकवीर' उपाधि सूचित करती है कि ये सब विजयें उसके राज्य में सम्पन्न हो सकी थीं। मारसिंह और राचमल्ल ने ये सब युद्ध अपने अधिराट् राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय और इन्द्र चतुर्थ के लिए सेनापति चामुण्ड राय के द्वारा जीते थे।

उपयुक्त लेखों में चामुण्डराय की शूरवीरता को सूचित करने वाली अनेक उपाधियाँ दी गई हैं। खेद है कि ले० नं० १६५ छः पद्यों के बाद अकस्मात् समाप्त हो जाता है जिससे हमें उसके सम्बन्ध की पूरी जानकारी नहीं हो पाती। उसके जीवन के अन्य पहलुओं को उसकी अमरकृति चामुण्डराय पुराण और उसके आचार्यों के ग्रन्थों से जाना जा सकता है।

उसकी अमर कीर्ति की प्रतीक श्रवणवेल्लगोल में बाहुबलि की जगद्विख्यात एक विशाल मूर्ति (५७ फुट ऊँची) प्रतिष्ठित है। इस मूर्ति के निर्माण का हेतु ले० नं० ३६५ में वर्णित है जिसका कि अन्यत्र उल्लेख किया गया है। चामुण्डराय के दो गुरु थे एक का नाम था अजितसेन और दूसरे का नाम नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती। श्रवण वेल्लगोल के एक लेख (प्रथम भाग, १२२) से ज्ञात होता है कि इस सेनापति ने चिक्क बेट्ट पर एक बसदि बनवाई थी तथा ले० नं० १५७ (प्रथम भाग, ६७) से ज्ञात होता है कि उसके पुत्र जिनदेवराय ने भी जो कि अजितसेन मुनि का शिष्य था, एक बसदि बनवाई थी।

चामुण्डराय की जैन धर्म के प्रति की गई सेवाओं की छाप दक्षिण भारत में

१. देखो, 'जैनधर्म के केन्द्र' प्रकरण।

शताब्दियों तक रही। ले० नं० ३६३ (प्रथम भाग, १३७) में एक प्रसंग में लिखा है कि जिन शासन के स्थिर उद्धार करने में प्रथम कौन है ? तो उत्तर होगा सचमल्ल भूति के वरमन्त्री राय (जामुण्डराय) (पृष्ठ २२)।

३. शान्तिनाथ—इसके सम्बन्ध में ले० नं० २०४ में लिखा है कि वह सहजकवि, चतुरकवि, निस्सहायकवि... नुनमहाकवीन्द्र था। उसकी उपाधि सरस्वतीमुखमुखर थी। उसका यश अति विशद था और वह जिन शासन की सत्सरोजिनी का कलहंस था। उसने अपने राजा लक्ष्मणसे प्रार्थना कर बल्लि-नगर में लकड़ी के बने जैन मन्दिर को पाषाण का बनवाया। इस मन्दिर का नाम मल्लिकामोद शान्तिनाथ था।

१२ वीं शताब्दी में होयसल वंश से सम्बन्धित हम अनेक जैन सेनापतियों को देखते हैं। इस वंश का प्रतापी नरेश विष्णुवर्धन था। उसकी अनेक विस्तृत विजयों का श्रेय उस नरेश के आठ जैन सेनापतियों को था। ये सेनापति थे—गंगराज, बोप, पुणिस, बलदेवण, मरियाने, भरत, ऐच और विष्णु। इन सेनापतियों के कारण ही होयसल राज्य दक्षिण भारत की प्रधान शक्तियों में गिना जाने लगा।

४. गंगराज—इन सेनापतियों में प्रधान था गंगराज। इसके सम्बन्ध में जैन शिलालेखसंग्रह प्रथम भाग की भूमिका में पर्याप्त लिखा गया है। इसके जीवन वृत्त को जानने के लिए इस संग्रह में दो दर्जन से अधिक लेख हैं। प्रस्तुत द्वितीय तृतीय भाग में इस सेनापति से सम्बन्धित केवल ले० नं० २६३, २६६, २६६, ३०१ और ४११ के मूल पाठ हैं। शेष २८५ (४३) २७८ (४४) २५४ (६६) २५५ (४७) २६० (६५) २८१ (४४६) २८३ (४८६) ३६६ (६०) के मूल पाठ प्रथम भाग में दिए गये हैं, कोष्ठक में उन लेखों की संख्या दी गई है। प्रथम भाग के ले० नं० ७५, ७६, ४४७ और ४७८ इन भागों के लेखों की संख्या से नहीं पहिचाने जा सके। लेख २६३, २६६ और २६६ में उसकी अनेक सामरिक विजयों का उल्लेख तथा जैन मुनियों और

मन्दिरों को अनेक प्रकार के दानों का उल्लेख है। इन लेखों में उसके दो जैन गुरुओं—मेघचन्द्र सिद्धान्त देव एवं शुभचन्द्र सिद्धान्त देव—का नाम मिलता है। ले० नं० ३०१ में गंगराज की बड़ी प्रशंसा की गई है। उसकी मृत्यु के स्मरण स्वरूप उसके पुत्र बोप्प सेनापति ने दोर समुद्र में एक जिनालय बनवाकर पार्श्वनाथ की मूर्ति स्थापित की थी। उक्त लेख में लिखा है कि अनेक उपाधियों से विभूषित गंगराज ने अग्रणीत ध्वस्त जैन मन्दिरों का पुनर्निर्माण कराया था। अपने अनवधि दानों से उसने गंगवाडि ६६००० को कोपण के समान चमकाया था। गंगराज के मत से ये ७ नरक थे—भूठ बोलना, युद्ध में भय दिखाना, परदारारत रहना, शरणार्थियों को शरण न देना, अधीनस्थों को अपरितुष्ट रखना, जिनको पास में रखना चाहिए उन्हें छोड़ देना और स्वामी से द्रोह करना।

उक्त जिनालय का नाम गङ्गराज की एक विशिष्ट उपाधि पर से द्रोहघट्ट जिनालय पड़ा था। इसी जिनालय की स्थापना को अपनी सुख समृद्धि के वर्षण में हेतु मानकर होयसल विष्णुवर्धन ने इसे ग्रामादि दान दिये थे। (३०१) ।

५. बोप्प—गंगराज का पुत्र दण्डेश बोप्प देव भी बड़ा ही शूरवीर एवं धर्मिष्ठ था। उसने उपर्युक्त द्रोहघट्ट जिनालय के सिवाय दो और मन्दिर बनवाये थे, कम्बदहस्त्रि से शान्तीश्वर बसदि तथा सन् ११३८ में त्रैलोक्यराज्यन श्रीदि जिसका दूसरा नाम बोप्पण चैत्यालय था (३०३)। इसे ले० नं० ३०३ में बुचक्रभु, सतां बन्धुः कहा गया है। इसी तरह ले० ३०१ और ४११ में उसके अनेक विशेषणों के साथ उसकी वीरता की प्रशंसा की गई है। ले० नं० ३०४ में उल्लेख है कि सन् ११३४ में उसने शत्रु पर आक्रमण किया और उनकी प्रबल सेना को खदेड़कर अपने भुजबल से कोटकों को परास्त किया था।

६. पुण्डितः—गंगराज के बहादुर साथियों में पुण्डित भी था। उसके पूर्वज अमात्य होते आये थे। उसका पितामह पुण्डिसम्म चम्पू था जो कि सकल शासन वाचक चक्रवर्ति था। उसके ज्येष्ठ पुत्र चामरा का पुत्र पुण्डित था। यह होयसल नरेश विष्णुवर्धन का सान्निविग्रहिक था। ले० नं० २६४ में उसकी सामरिक शूर

वीरता के कार्यों का वर्णन है। उसने अनेकों देश जीतकर होयसल विष्णुवर्धन को दिये। पुण्डिस, गंगराज के समान ही विशाल हृदय का था। उसने धर्म और मानवता की समान दृष्टि से सेवा की। ले० नं० २६४ में लिखा है कि युद्ध के कारण जो व्यापारी बिगड़ गये थे, जिन किसानों के पास बीज बोने को नहीं था, जो किरात सरदार हार जाने से अधिकार वंचित हो नौकर हो गए थे, उन्हें तथा उन सबको जिनका जो नष्ट हो गया था, वह सब पुण्डिस ने दिया और उनके पालन पोषण में मदद की। उक्त लेख में यह भी उल्लेख है कि उसने एरणोनाडू के अरकोट्टार स्थान में अपने द्वारा बनवाई गई त्रिकूट बसदि से संलग्न बसदियों के लिए भूदान दिया तथा निर्भय होकर गंगों की तरह गंगवाडि की बसदियों को शोभा से सज्जित किया।

७. बलदेवणः—विष्णुवर्धन का चौथा सेनापति बलदेवण था। ले० नं० २६५ में इसके सम्बन्ध में थाड़ा परिचय मिलता है। वह राजा अरसादित्य और आचाम्बिके का तृतीय पुत्र था। उसके दो बड़े भाइयों का नाम पम्पराय और हरिदेव था। लेख में उसके 'मंत्रियूयाग्रणि, गुणी, सकलसचिवनाथ एवं जिनपादाग्नि सेवक' आदि विशेषण दिये गए हैं।

८-९. मरियाने और भरतः—होयसल विष्णुवर्धन के सेनानायकों में दो भाई-दण्डनायक मरियाने और भरत या भरतेश्वर भी थे। इनके वंश का परिचय ले० नं० ३०७, ३०८ और ४११ में दिया गया है जिससे ज्ञात होता है कि इसके वंशज होयसल राजवंश से सम्बन्ध रखते थे। इस कारण इन दोनों भाइयों का पद सर्वाधिकारी, माणिकभाण्डारी तथा प्राणाधिकारी था। विष्णुवर्धन ने मरियाने दण्डनायक को अपना पट्टदाने (राज्य गजेन्द्र) समझकर ही उसे सेनापति बनाया था। ये दोनों भाई जैसे शूर वीर थे वैसे ही धर्मिष्ठ थे। लेख में इन्हें 'निरवध-स्याद्रादलदमीरत्नकुण्डल, नित्याभिषेकनिरत, जिनपूजामहोत्सहजनितप्रमोद, चतुर्विधदानविनोद' आदि कहा गया है। ले० नं० ३०७ में भरत के अनेक गुणों की प्रशंसा की गई है। वहाँ लिखा है कि उसका धन जिनमन्दिरों के लिए था, दया सभी प्राणियों के लिए थी, उसका अच्छा मन जिनराज की पूजा

में था, श्रीदार्च सज्जन वर्ग के लिए तथा दान सन्मुनीन्द्रों के लिए था। श्रवण-बेलगोल से प्राप्त ले० नं० ३५४^१ और ३५५^२ से विदित होता है कि उसने श्रवणबेलगोल में ८० नई बसदियाँ बनवायीं और गंगवाडि की २०० पुरानी बसदियों का जीर्णोद्धार कराया था। इन दोनों भाइयों के गुरु थे देशीगण, पुस्तक गच्छ के आचार्य माघनन्दि के शिष्य गण्डविमुक्त प्रती। ले० नं० ४११ से ज्ञात होता है कि ये दोनों भाई विष्णुवर्धन के बेटे नारसिंह के समय में भी विद्यमान थे। इन दोनों ने ५०० होन्तु देकर उक्त नरेश से सन्दगेरी आदि तीन गांवों का प्रभुत्व प्राप्त किया था।

१०. ऐचः—गंगराज का भताजा एवं उसके बड़े भाई का पुत्र ऐच भी विष्णुवर्धन के सेनापतियों में था। उसकी शूरवीरता आदि के सम्बन्ध में विशेष ती नहीं मालुम पर ले० नं० ३०४ (प्रथम भाग १४४) में लिखा है कि उसने कौपण, बेलगुल आदि स्थानों में अनेक जिन मन्दिर बनवाये और सन् ११३५ में संन्यासविधि से प्राणोत्सर्ग किया। गंगराज के पुत्र बोप्प ने अपने चचेरे भाई की स्मृति में निषद्या बनवाई थी।

✓ ११. विष्णु दण्डाधिप—ले० नं० ३०५ से ज्ञात होता है कि विष्णुवर्धन होय्सल का एक और सेनापति था जिसका नाम विष्णु दण्डाधिप या दण्डि दण्डनायक जिट्टियण था। इसने आधे महीने में ही दक्षिण प्रान्त की विजय कर ली थी। विष्णुवर्धन होय्सल का यह दाहिना हाथ था। यह बचपन से ही उक्त नरेश का प्यारा था। लेख में लिखा है कि किशोरावस्था प्राप्त होने पर नरेश ने इसका बड़े उत्सव के साथ स्वयं ही उपनयन संस्कार कराया, सात आठ वर्ष की आयु के बाद जब वह समस्त शास्त्र विज्ञान में पारंगत हुआ तब उसको अपने प्रधान मंत्री की सर्व लक्षण सम्पन्न पुत्री व्याह दी और १०-११ वर्ष की उम्र में महाप्रचण्ड दण्डनाय तथा सर्वाधिकारी का पद दिया।

१. प्रथम भाग, ३६८.

२. वही, ११५.

यह सेनापति बड़ा ही धर्मिष्ठ एवं दानी था। इसने कई सार्वजनिक कार्य कराये थे तथा राजधानी दोरसमुद्र में एक जिनालय बनवाया था। इसके गुरु का नाम श्रीपाल त्रैविद्यदेव था जिन्हें उक्त जिनालय के प्रबन्ध और श्रुधियों के आहार दान के हेतु उसने एक ग्राम और भूमियां दान में दी थीं।

१२. मादिराज—विष्णु वर्धन का एक जैन मंत्री महाप्रधान मादिराज था। ले० नं० ३१६ में उसके धार्मिक गुणोंकी बड़ी प्रशंसा की गई है। वह श्रीकरण का अधिपति था और अपनी वक्तृता से समा भवन को प्रभावित किये था। वह कोष का लेखा रखता था। उसके भी गुरु श्रीपाल त्रैविद्यदेव थे। विष्णुवर्धन के उत्तराधिकारी नरसिंह के भी चार सेनापति जैन धर्मावलम्बी थे। वे थे देवराज, हुल्ल, शान्तियण्ण और ईश्वर चमूप।

१३. देवराज—ले० नं० ३२४ में देवराज का उल्लेख है। इसका गोत्र-कौशिक था। लेख में इसे 'श्रीजिनधर्मनिर्मलाम्बरहिमकर' एवं 'श्रीहोयसल महीशराज्यभूयन्निलय मणिप्रदीपकलश' कहा गया है। राजा नरसिंह ने उसकी धर्मबुद्धि और स्वामिभक्ति से प्रसन्न होकर उसे सूरनहल्लि गाँव दिया जहाँ उसने जिन चैत्यालय बनवाया जिसके लिए होयसलदेव ने अष्टविधार्चन और आहार दान के निमित्त १० होन्तु दान में दिये और गाँव का नाम पार्श्वपुर रख दिया। उक्त ले० में उसके गुरु मुनिचन्द्र का नाम दिया है। उन गुरु की पट्टावली भी उक्त ले० में दी गई है।

१४. हुल्ल—नरसिंह होयसल का द्वितीय सेनापति हुल्ल या हुल्लप था। उस युग में जैन धर्म के उद्धारकों में चामुण्डराय और गंगराज के बाद हुल्लप का ही नाम आता है। इसके सम्बन्ध में जैन शिलालेख संग्रह प्रथम भाग की भूमिका में पर्याप्त लिखा गया है। इस संग्रह में ये ले० नं० ३४८, (१३८) ३६२ (४०) ३६३ (१३७) ३८१ (४६१) ३६६ (६०) इस सेनापति से सम्बन्धित हैं। कोष्ठक में प्रथम भाग के लेखों की संख्या दी गई है। इस सेना-

पति ने होयसल विष्णुवर्धन, नरसिंह और बल्लाल द्वितीय के राज्य में होयसल वंश की सेवा की थी।

१५. शान्तियण्ण—ले० नं० ३४७ में उक्त नरेश के एक और जैन सेनापति शान्तियण्ण का नाम मिलता है। वह पारिसण्ण और बम्मलदेवी का पुत्र था। पारिसण्ण मरियाने दण्डनायक का दामाद था। लेख में उसे महा-प्रधान, पट्टिस भण्डारि (भालों का अध्यक्ष) कहा गया है। उसने युद्ध में शत्रुओं को परास्त कर अन्त में अपने प्राण दे दिये। उस पर नरसिंह ने उसके पुत्र शान्तियण्ण को कण्णुण्ड का स्वामी तथा सेना का दण्डनायक बना दिया। उक्त स्थान में शान्तियण्ण ने अपने पिता की स्मृति में एक बसति बनवायी और उसकी सुरक्षा के लिए दान दिया। उसके गुरु मल्लिषेण पण्डित थे।

१६. ईश्वर चमूपः—ले० नं० ३५२ में उक्त नरेश के राज्य में एक जैन सेनापति का और उल्लेख है। वह है महाप्रधान, सर्वाधिकारी, दण्डनायक एरेयङ्ग का पादोपजीवी ईश्वर चमूप। ये दोनों श्वसुर दामाद थे। ईश्वर चमूपति ने जिनालयों की मरम्मत करवायी और उसकी पत्नी माचियक्क ने मयदबोलल नामक पवित्र तीर्थ में एक जिन मन्दिर एवं एक तालाब बनवाया। उसके गुरु का नाम गण्डविमुक्त मुनिप था।

नरसिंह के उत्तराधिकारी बल्लाल द्वितीय के समय भी होयसल राज्य का भाग्य निर्माण करने वाले कुछ जैन सेनापति थे।

१७. रेचरसः—ले० नं० ४६५ में उल्लेख है कि बल्लालदेवकी रत्नत्रय और धर्म में हड़ता सुनकर कलचूर्य कुल के सचिवोत्तम रेचरस ने बल्लालदेव के चरणों में आश्रय पाकर अरसिधेरे में सहस्रकूट जिन की प्रतिमा स्थापित की और मन्दिर की व्यवस्था के लिए राजा बल्लाल से हन्दरहालु ग्राम प्राप्त कर अपने वंश के गुरु सागरनन्दि सिद्धान्त देव को सौंप दिया। उक्त जिनालय का नाम एल्कोटि जिनालय था। इस रेचरस के सम्बन्ध में ले० नं० ४०८ में लिखा है कि वह ३३ वर्ष पहले सन् ११८२ में कलचूरिवंश के नरेश विष्णु का दण्डार्थिनाम था। उक्त लेख में इसकी अनेक विषय प्रशंसा एवं वंश का परिचय दिया गया है।

उस लेख में लिखा है कि रेचण को कलचुरि नरेशों से बहुत से देश मिले थे उनमें नागर खण्ड था । वहाँ मागुडि नामक स्थान में, शान्तिनाथ जिनालय के लिए उसने दानादि दिये थे । श्रवणबेलगोल से प्राप्त एक लेख नं० ४२६ (प्रथम भाग ४७१) से ज्ञात होता है कि उसने सन् १२०० के लगभग शान्तिनाथ भगवान् की प्रतिष्ठा करायी और बसदि को कोल्हापुर के सागरनन्दि को सौंप दिया । लेख में उसे 'वसुधैकब्रान्धव' कहा गया है ।

१८. बूचिराजः—होय्सल बल्लाल द्वितीय का दूसरा सेनापति बूचिराज था । ले० नं० ३७६ में उसे मन्त्रीश्वर एवं सांघिविग्रहिक कहा गया है । उसमें चतुर्विध पाण्डित्य था तथा वह संस्कृत और कन्नड दोनों भाषाओं में कविता कर सकता था । इसके अतिरिक्त उसकी धर्मिष्ठता की अनेक विध प्रशंसा की गई है । उसने सन् ११७३ में राजा बल्लाल के पट्टबन्धोत्सव के समय सीगेनाड के मारिकलि स्थान में त्रिकूट जिनालय बनवाया और मन्दिर की पूजा, जीर्णोद्धार एवं आहार दान आदि के लिए अपने गुरु वासुपूज्य सिद्धान्त देव को मारिकलि ग्राम भेंट में दिया ।

१९. चन्द्रमौलिः—उक्त बल्लाल नरेश के राज्य में जैनधर्म के प्रति उदारता दिखलाने वाला एक शैव मंत्री चंद्रमौलि था । ले० नं० ४०६ (प्रथम भाग ४६४) में वह भारत शास्त्र, आगम, तर्कव्याकरण, उपनिषद्, नाटक, काव्य आदि में विद्वन्मान्य था तथा बल्लालनृप के दाहिने हाथ का दण्डस्वरूप था । यद्यपि वह स्वयं कट्टर शैव था पर उसकी पत्नी आचलदेवी परम जैन धर्मावलम्बिनी थी । उस देवी ने श्रवणबेलगोल तीर्थपर बड़ी भक्ति के साथ पार्व-नाथ का मन्दिर निर्माण कराया और मंत्री चंद्रमौलि ने राजा बल्लाल से स्वयं प्रार्थना कर उक्त जिनालय की पूजादि के लिए बम्मेयनहल्लि नामक गांव दान में दिलाया ।

२०. नागदेवः—बल्लाल द्वितीय के मंत्रियों में एक जैन मंत्री नागदेव भी था । वह बोम्मदेव सचिव का पुत्र था । ले० नं० ४२८ (प्रथम भाग १३०) में लिखा है कि वह जैन मन्दिरों का प्रतिपालक था तथा राजा ने उसे पट्टन-

स्वामी बनाया था। उसके गुरु का नाम नयकीर्ति सिद्धान्तदेव था। उसने सन् ११६५ में श्रवणवेल्गोल तीर्थ पर पार्श्वदेव के आगे नृत्यरंगशाला एवं शिला-कुट्टिम बनाकर अपने दिवंगत गुरु की स्मृति में एक निषिधि बनवायी थी। जिनधर्म के लिए नागदेव की स्थायी कृति थी श्रवणवेल्गोल में 'श्रीनिलय' नगर-जिनालय का निर्माण तथा उसके लिए भूमिदान। उसके प्रतिपालन के लिए उसने खण्डलि और मूलभद्र के वंशज श्रवणवेल्गोलवासी वणिजों को नियुक्त किया था।

२१. महादेव दण्डनाथः—जैन मंत्रियों में उस मंत्री का नाम भी उल्लेखनीय है। वह बल्लाल द्वितीय के महामण्डलेश्वर एकलरस का महाप्रधान था। उसके गुरु का नाम सकलचन्द्र भट्टारक था। लेख नं० ४३१ में लिखा है कि उसने सन् ११६८ में उद्धरे नामक स्थान में एक अनुपम जिनालय बनवाया और उसका नाम एरण जिनालय रखा और उक्त जिनालय की पूजा, जीर्णोद्धार के हेतु स्वयं बहुत प्रकार के दान दिये तथा एकलरस आदि से भी विविधदान दिलाये।

२२. कम्मट माचय्यः—सन् १२०० के लगभग के कुम्बेयनहल्लि ग्राम से प्राप्त एक ले० नं० ४३७ (प्रथम भाग ४६५) में एक और जैन मंत्री का उल्लेख है। वह है महाप्रधान, सर्वाधिकारी, तन्त्राधिष्ठायक, कम्मट माचय्य। उसने उक्त सन् में अपने श्वसुर के साथ कुम्बेयनहल्लि नामक ग्राम में पश्चिमादि-मल्ल जिनालय के लिए दान दिया था। उक्त लेख में यह भी लिखा है कि महाप्रधान, सर्वाधिकारी हरियण ने कुम्बेयनहल्लि के देव की प्रतिष्ठा की थी।

२३. अमृतः—ले० नं० ४५२ से विदित होता है कि बल्लाल द्वितीय के अमृत नाम का एक और दण्डनायक था जो कि महाप्रधान, सर्वाधिकारी, महापसायस (आमूषणाध्यक्ष) एवं भेदन मोत्तदिष्ठायक (उपाधिधारियों का अध्यक्ष) था। लेख में उसे कविकुलज और चतुर्थकर्ण (शूद्र) का कहा गया है। उसे धार्मिक, धर्ममति, पुण्याधिक, मंत्रिचूडामणि, सौम्यरम्याकृति कहा गया है। उसने आर्वकुलगैरे में सन् १२०३ में एककोटि नामक जिनालय बनवाया और सभी

पाम्बव्बे ने, जो अभयनन्दि पण्डितदेव की शिष्या नाणव्वेकन्ति की शिष्या थी, केशलोच करने के बाद तप के पुरे ३० वर्ष पूर्ण किए और पांच अणुव्रतों (१) को धारण कर दिवंगत हुई। लेख में उसके व्रत एवं तपस्या की प्रशंसा है।

कोङ्गात्व वंश की जैनधर्म के प्रति भक्ति सुविदित है। उक्त वंश के राजा राजेन्द्र कोङ्गात्व की मां पोच्चव्वरसि ने सन् १०५० में एक वसदि बनवायी थी, और उसमें अपने गुरु गुणसेन पण्डितदेव की मूर्ति स्थापित की थी तथा सन् १०५८ में उसने उक्त वसदि को भूमिदान दिया था (१८८, १८९)। ले० नं० ५६० में कोङ्गात्व वंश की एक और महिला सुगुणिदेवी का नाम दिया गया है जिसने अपनी माता के पुण्यार्थ एक प्रतिमा की स्थापना की और भूमिदान दिया।

जैन सेनापतियों की परिणियों का भी जैनधर्म की सेवा में बड़ा हाथ था। इनमें सबसे उल्लेखनीय नाम है सेनापति गंगराज की पत्नी लक्ष्मली या लक्ष्मीमती का। वह लक्ष्मीमती दण्डनायकिति कहलाती थी। उसे लेख नं० २५८ (प्रथम भाग, ६३) में गंग सेनापति के 'कार्ये नीतिवधू' और 'रणे जयवधू' कहा गया है। उसने सन् १११८ में श्रवणवेल्लोल में एक जिन्नालय बनवाया था। ले० नं० २६८ (प्रथम भाग ५६) से ज्ञात होता है कि सेनापति गंगराज ने अपने राजा विष्णुवर्धन से एक गांव पारितोषिक रूप में पाकर अपनी माता पोचल देवी एवं अपनी भार्या लक्ष्मी देवी द्वारा निर्मापित जैन मन्दिरों के स्तूप-अर्पण किया था। लक्ष्मीमति ने भी आहार, अभय, औषधि और शास्त्र इन चारों दानों को देकर 'सौभाग्यखानि' पद पाया था (२५५, प्रथम भाग, ४७)। ले० नं० ३०६ (प्रथम भाग, ४८) में लक्ष्मीमति के रूप, गुण, शील आदि की प्रशंसा की गई है। इस धर्मपरायण महिला ने सन् ११२१ में संन्यास विधि पूर्वक शरीर त्यागा था। सेनापति गङ्गाराज ने अपनी साध्वी पत्नी की स्मृति में एक निषद्या बनवा दी थी।

गङ्गाराज के बड़े भाई का नाम बम्मदेव चम्पू था। इसकी पत्नी जम्बव्वे थी जो कि दण्डनायकिति कहलाती थी। वह सेनापति बौप्य की माता थी तथा शुभचन्द्रदेव की शिष्या थी। प्रथम भाग के ले० नं० ४४६ और ४८९ से ज्ञात

होता है कि उसने मोक्षतिलक नामक व्रत किया था और पाषाण पर नयणदेव की मूर्ति खुदवायी थी । उसी वर्ष उसने श्रवणवेल्गोल में मूर्ति की प्रतिष्ठा करायी एवं वहाँ एक तालाब खुदवाया था । ले० नं० २८५ (प्रथम भाग, ४३) में इस महिला की बड़ी प्रशंसा है ।

ले० नं० २८८ से एक और जैनधर्म भक्त महिला का नाम ज्ञात होता है । वह है कालियक्कब्बे, जो कि चालुक्य नरेश त्रिभुवनमल्ल के सामन्त पाण्ड्य भूपाल के सेनापति सूर्य की पत्नी थी । इसने सन् १२२८ में साम्बनूरु में एक सुन्दर जिनालय बनवाया और पूजा के हेतु तथा पुजारी की आजीविकायें मन्दिर के पुरोहित को कुछ भूमि दान में दे दी ।

ले० नं० ३१३ में हमें दानशील तीन महिलाओं के नाम मिलते हैं । गंग नरेश मारसिंह की छोटी बहिन समियव्वरसि ने उद्धरे नामक स्थान में अनेक जैन मुनियों को दान दिलाया और पञ्चवसदि जिनालय को सजाया था, तथा वसदि के लिए, सवणविलि नामक ग्राम दान में दिया था । उसी लेख में कनकियव्वरसि नामक एक महिला का उल्लेख है । उस महिला ने वहाँ जिन मन्दिर नहीं थे वहाँ जिन मन्दिर बनवाये और जहाँ जैन यतियों को आश्रमदनी के क्षेत्र नहीं थे वहाँ उसने दान दिये । तीसरी महिला शान्तियक्क ने, जो कि बोप्प दण्डेश की भतीजी एवं केतिसेट्टि की पत्नी थी, उद्धरे में एक वसदि बनवायी ।

ले० नं० ३३६ में जैन धर्म परायणा दो बहिनों का नाम आता है । वे हैं जक्कब्बे और पडियक्क । जक्कब्बे के विषय में लिखा है कि वह होय्सल नरेश नरसिंह के पुराने सेनापति चाविमय्य की पत्नी थी । उसने हेरगू में एक जिनालय बनवाकर पार्श्वनाथ की प्रतिमा प्रतिष्ठित करायी तथा पूजनादि प्रबंध के लिए नरसिंह से भूमि का दान भी ले लिया था । इसी तरह ले० नं० ३५२ में ईश्वर चम्पू की पत्नी माचियक्क द्वारा जिन मन्दिर निर्माण एवं भूमिदान का उल्लेख है । ले० नं० मालियक्क को अन्तर्गुण गुणरत्नमण्डन एवं चातुर्वर्ण्यसमुदयैकशरण्य कहा गया है ।

जैन धर्म पर अच्छल श्रद्धा रखने वाली एक विशिष्ट महिला आचल देवी का उल्लेख करना यहाँ आवश्यक है। वह शैव धर्म को मानने वाले सेनापति चन्द्र-मौलि की पत्नी थी। वह अपने चार प्रकार के दान के लिए विख्यात थी। उसके इस कार्यों में उसके पति ने कभी बाधा नहीं दी बल्कि धार्मिक उदारता के कारण उसने सहायता ही की है। आचल देवी ने अरण्यवेल्गोल में एक जिनालय बनवाया और उसके पति ने अपने नरेश होयसल बल्लाल से बम्मेयन हस्ति नामक गांव दान में दिलाया (ले० नं० ४०३, प्रथमभाग १२४)। ले० नं० ४०४ (प्रथम भाग १०७) से ज्ञात होता है कि वीर बल्लाल ने उक्त महिला की प्रार्थना पर बेक्क नामक ग्राम भी गोम्मटेश्वर की पूजा के हेतु दिया था।

मंत्री एचण की पत्नी सोमल देवी भी जैन महिलाओं में उल्लेखनीय है। ले० नं० ४५१, ४५५ और ३५६ में उसकी प्रशंसा है। उसने बेलवर्त्त नाडू में एक जैन बसदि का निर्माण कराया और उसके पूजन के हेतु दान भी दिया था।

यह नहीं समझना चाहिए कि राजघराने, सामन्तों एवं सेनापतियों की पत्नियों में ही जिन धर्म के प्रति विशेष अनुराग था बल्कि वैसा ही अनुराग नागरिकों की पत्नियों में भी देखने को मिलता है। ले० नं० ३५३ में लिखा है कि हेगाडि जक्कय्य और उसकी पत्नी जक्कब्बे ने दीडगुरु में एक चैत्यालय बनवाया और पार्श्वनाथ भगवान् की स्थापना करके देवपूजा और ऋषियों के आहार के लिए भूमिदान दिया।

ले० नं० ३८३ में जैनधर्म पर दृढ़ श्रद्धा रखनेवाली हर्यल्ले महासती का उल्लेख है। उक्त लेख में लिखा है कि उक्त सती ने मृत्यु के समय अपने पुत्र भूवय नायक को बुलाकर कहा कि स्वप्न में भी मेरा ख्याल न करना, केवल धर्म का विचार करना। यदि मुझे और तुम्हें पुण्योपार्जन करना है तो जिन मन्दिर बनवाओ ... आदि। इसके बाद जिनेन्द्र के चरणों में पंच नमस्कार मंत्र को जपते हुए उसने समाधि से देह त्याग दिया। ले० नं० ३८४ से मालुम होता है कि

इसी तरह चन्द्रायण देव की यहस्य शिष्या हरिहर देवी भी समाधिमरण से दिवंगत हुई थी। ११वीं शताब्दी के मध्य के नल्लूर से प्राप्त एक लेख (१८३) में जन्निकयन्बे नामक आदिका भी संन्यसन विधि से स्वर्गगत हुई थी।

१२वीं शताब्दी के उत्तरार्ध और १३वीं के पूर्वार्ध के ऐसे अनेकों लेख इस संग्रह में हैं जिनमें समाधिभावना से देहोत्सर्ग करनेवाली अनेकों महिलाओं का उल्लेख है। ले० नं० ४२३ में शान्तियक्क या शान्तले, ले० नं० ४३६ में मालम्बे तथा ले० नं० ४२७ में जक्कम्बे का नाम, यहाँ उदाहरण के रूप में समझना चाहिये।

८. धार्मिक उदारता एवं सहिष्णुता

इन लेखों में सहिष्णुता के अनेक उदाहरण मिलते हैं। जैनाचार्यों और जैन नेताओं, नरेशों, सामन्तों और सेठों में भारतीय संस्कृति के अनुरूप यह विशेष गुण था और इस भावना का उन्होंने निष्पक्षभाव से प्रदर्शन भी किया।

इन लेखों से जैनाचार्यों की विद्वत्ता एवं इतिहासप्रियता के साथ साथ उनकी विस्तीर्ण हृदयता का परिचय मिलता है। उन्होंने शिलालेखों की रचना ही अपने स्थानों और धर्म और सम्प्रदाय के लेखों के उपयोग के लिए नहीं की प्रत्युत अन्य धर्म और सम्प्रदाय के उपयोग के लिए भी की। उदाहरण स्वरूप दिगम्बराचार्य रामकीर्ति ने चित्तौड़गढ़ से प्राप्त प्रशस्ति (३३२) वहाँ के तोकलजी के मन्दिर के लिए लिखी थी। बृहद्गच्छ के जयमंगल सूरि ने मुन्ब पहाड़ी से प्राप्त एक लेख (५०७) लिखा जो कि वहाँ चामुण्डा देवी के मन्दिर से प्राप्त हुआ है। इसी तरह यशोदेव दिगम्बर ने ग्वालियर के कच्छवाहों की प्रशस्ति तथा रत्नप्रभसूरि ने गुहिल्लोत वंश के घाघसा एवं चिर्वा से प्राप्त लेख लिखे। पीछे के ये लेख इस संग्रह में नहीं हैं। यहाँ यह न समझना चाहिये कि वे लेख उन स्थानों में जैनों से छीन कर ले जाये गये हैं, प्रत्युत इसके विपरीत, वे लेख विशेषतः उन स्थानों के लिए ही जैनाचार्यों ने लिखे थे, क्योंकि उन लेखों के अन्त में जैनाचार्यों के नाम, गुरु परम्परा, गण्य, गच्छ के सिवाय हमें ऐसा कुछ नहीं मिलता जो जैनों से सम्बन्धित हो। यहाँ

तक कि मङ्गलाचरण के पद्य भी अजैन देवी देवताओं के मंगलाचरण से प्रारम्भ होते हैं। हाँ, कुछेक में ॐ सर्वज्ञाय नमः, पद्मनाथाय नमः आदि से उनका प्रारम्भ हुआ है। ये लेख निश्चय रूप से जैनाचार्यों की विशाल हृदयता को सूचित करते हैं।

जैनाचार्यों की इस नीति का अनुसरण जैन नेताओं ने भी किया। ले० नं० १८१ (सन् १०४८) से विदित होता है कि एक जैन महाभण्डलेश्वर चामुण्डराय ने बनवसेनाड़ में जिननिवास, विष्णुनिवास, ईश्वरनिवास, और जैन मुनियों के लिए निवास बनवाये थे। इसके समान ही और दूसरे सामन्त थे जो जैन और ब्राह्मणों में भेद नहीं मानते थे। ले० नं० २४६ से विदित होता है कि नोलम्बवाड़ी के शासक बम्बरस ने सन् ११०६ में एक जैन मन्दिर तथा सपेश्वर देव के लिए चुंगी से प्राप्त आय को तथा कई प्रकार के और दानों को दिया था। सामन्तों की ऐसी रुचि को सूचित करने वाले और भी लेख हैं। ले० नं० ३५६ से मालुम होता है कि सामन्त गोव, महेश्वर, बौद्ध, वैष्णव एवं अर्हन् इन चार समयों का प्रतिपालक था।

ब्राह्मण और जैनों के बीच असाधारण हार्दिक सम्बन्ध था। ले० नं० ४४८ से ज्ञात होता है कि सन् १२०४ में नागर खण्ड के पाँच अग्रहारों के ब्राह्मणों ने स्थानीय अधिकारियों, सेठों, नागरिकों और किसानों के साथ मिलकर बन्दिलिके के शान्तिनाथ की पूजा के लिए भूमिदान किया।

धार्मिक उदारता के विषय में अदलकुल के सामन्तों का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इस वंश के सामन्त विष्णुवर्धन ने सन् ११४० में अपने ही क्षेत्र में एक शिवमन्दिर तथा अदल जिनालय बनवाया था (३१५)। इसी वंश के एक ले० नं० ३३३ का मंगलाचरण सर्वधर्म समन्वय की भावना से ओतप्रोत है (शिवाय धात्रे सुगताय विष्णवे जिनाय तस्मै सकलार्त्तमे नमः)। इस लेख में उदारचेता सामन्त ब्राह्मणों की विस्तार पूर्वक प्रशंसा की गई है। उक्त सामन्त ने कैदाल नामक स्थान में न केवल जैन मन्दिर ही बनवाया था बल्कि गंगेश्वर, नारायण, चलबखिरेश्वर तथा रामेश्वर के मन्दिर भी बनवाये थे। उसने अपनी

पत्नी भीमलै के नाम पर भीम जिनालय तथा भीम समुद्र नामक विशाल तालाब बनवाकर पार्श्वदेव के नाम पर कर दिया था। उक्त लेख में बाचिराज को चतुः समय-धर्मोद्धार-धौरेय कहा गया है।

हमें अन्य जैन लेखों से मालूम होता है कि १३ वीं शताब्दी के मध्य तक धार्मिक उदारता की भावना का अच्छा प्रचार था पर तेरहवीं के अन्तिम पाद के बाद १०० वर्षों तक दक्षिण भारत के ऊपर मुस्लिम आक्रमणों के कारण उनसे रक्षा के महत्त्वपूर्ण प्रश्न के आगे धार्मिकता का प्रश्न फीका पड़ गया।

किसी तरह मुस्लिम आतङ्क्यों का जोर कम करने के लिए विजय नगर साम्राज्य की स्थापना हुई। इस वंश के राजाओं में धार्मिक निष्पक्षता का एक बड़ा महत्त्वपूर्ण गुण था। सन् १३६३ के एक लेख (५६१) से विदित होता है कि बुक्कराय प्रथम के शासन काल में जैन मन्दिर की सीमाओं के विषय में जब हेदर नाड के लोगों और मन्दिर के आचार्यों में भगड़ा उठ खड़ा हुआ तो राज्य की ओर से उस मामले को जाँच पड़ताल हुई। राज्य के प्रधान मंत्री नागरण ने वृद्धजनों की एक सभा में फैसलाकर मन्दिर की टीक सीमा बाँधकर शासन पत्र भी लिख दिया।

इसके पाँच वर्ष बाद सन् १३६८ में बुक्कराय के सामने जैनों और भक्तों (श्रीवैष्णवों) के बीच धार्मिक विवाद फिर खड़ा हुआ। ले० नं० ५६५ (प्रथम भाग, १३६) और ले० नं० ५६६ में इन घटनाओं का चित्रण है। इन लेखों में लिखा है कि जैनों ने अपने ऊपर वैष्णवों द्वारा हुए अन्याय की शिकायत लिखित रूप में बुक्कराय से की तब बुक्कराय ने स्वयं इस बात की जाँच की और जैनों के हाथ को वैष्णवों और उनके आचार्यों के हाथ में रखकर कहा कि जैन दर्शन एवं वैष्णव दर्शन में कोई भेद नहीं है। जैन धर्म वाले भी पंच महावाद्य बजा सकते हैं। जैन धर्म की हानिवृद्धि को वैष्णवों को अपनी हानिवृद्धि समझना चाहिये। वैष्णवों को इस विषय के शासन पत्र समस्त बस-दियों में लगाना चाहिये। जब तक सूर्य और चन्द्र हैं तब तक वैष्णव जैन धर्म की रक्षा करेंगे। जो इस नियम को तोड़ेगा वह राजा, संघ एवं समुदाय का द्रोही

होगा। ले० नं० ५६६ के अन्त में लिखा है कि जैनो और वैष्णवों ने मिलकर वसुधि सेट्टिको संघ नायक की उपाधि दी।

उपयुक्त तीन लेखों से ज्ञात होता है कि विजयनगर नवोदित हिन्दू समाज के अधिनायकों में देश की सुरक्षा और शान्ति के साथ धार्मिक निष्पक्षता का बड़ा ध्यान था। इस बात के प्रमाण अन्य लेखों में भी मिलते हैं जो कि इस संग्रह में नहीं हैं।

धर्म समभाव की इस भावना का प्रभाव हम कतिपय शिलालेखों के प्रारंभिक मंगल पद्यों में भी पाते हैं। ले० नं० ६४६ पार्श्वनाथ जिनेश्वर के नमस्कार से प्रारम्भ होता है। तत्पश्चात् जिनशासन की प्रशंसा व पञ्चपरमेष्ठियों के नमस्कार के बाद नमस्तुंगशिरः आदि पदों से शम्भु की स्तुति है। उसके बाद बराह और शम्भु की स्तुति की गई है। ले० नं० ६८८ में भी जिनशासन की स्तुति तथा शम्भु की स्तुति साथ साथ की गई है।

जैन और शैवों के परस्पर मेल मिलाप को प्रदर्शन करने वाले एक महत्वपूर्ण लेख की ओर भी हम ध्यान दें। ले० नं० ७१० के प्रारम्भ में जिनशासन और शम्भु की स्तुति के बाद एक घटना का उल्लेख है। विजयनगर के आरवीडु वंश के नरेश बैकटाद्रि द्वितीय के राज्य में एक वीर शिव हुब्लप देव ने हलेवीड की विजय पार्श्व बसदि के खम्भे पर लिंग मुद्रा लगा दी थी जिसे विजयप्प नामक जैन ने साफ कर दी। तब पद्यण्ण सेट्टि आदि जैनो ने यह समझा कि इससे दूसरे धर्म वालों की भावना को क्षति पहुँचेगी, वीर शैवों के मुखियों से निवेदन किया। इस पर दोनों सम्प्रदाय के लोग इकट्ठे हुए और उचित जांच के बाद उन्होंने आज्ञा निकाली की कि विभूति और विल्वपत्र प्रदान करने के बाद जैन लोग आचन्द्रसूर्य अपनी सब धर्म विधि कर सकते हैं। इसके बाद इस शासन पत्र पर राज्य की स्वीकृति ली गई और वह वीर शैवों की ओर से जैनो को समर्पण किया गया। लेख के अन्त में वीर शैव सम्प्रदाय ने अपने उदार भाव दिखलाये हैं कि जो व्यक्ति जैन धर्म का विरोध करेगा वह महामहत्तु के चरणों से निकाल दिया जायगा, वह शिव, जंगम तथा काशी, रामेश्वर के लिंग का द्रोही समझा जायगा।

अन्त में महामहत्तु की स्वीकृति के बाद वर्षतां विनशासनम् लिखा है ।

९. जैनधर्म पर संकट

१२ वीं शताब्दी के बाद दक्षिण भारत में जैन धर्म के पतन के एवं विमृश-लित होने के चार प्रधान कारण थे ।

प्रथम तो वह राज्याश्रय से वंचित हो गया था, गंग, राष्ट्रकूट, होयसल जैसे साम्राज्य नष्ट हो चुके थे ।

द्वितीय, पश्चात्कालीन जैन नेता गण ब्राह्मण धर्म के नवोदित रूप वैष्णव और वीर शैव सम्प्रदाय से जैन धर्म की रक्षा करने में उदासीन हो रहे थे । जैनाचार्यों में ऐसे कोई प्रभावक आचार्य न थे जो कि धार्मिक क्षेत्र में प्रतिद्वन्द्वियों को परास्त करते ।

तृतीय, जैन मन्दिरों को आश्रय देने वाले व्यापारी संघ, वीर वणिज आदि वीर शैव धर्म के प्रभाव में आकर जैन धर्म को छोड़ चुके थे । शेष सामान्य जन वर्ग में ऐसी शक्ति न थी कि वे संगठित हो विधर्मियों का प्रतिरोध कर सकते ।

चतुर्थ, वीर शैव धर्म के आचार्यों ने जैन धर्म के केन्द्रों पर हमला करना प्रारम्भ किया और स्थानीय सामन्तों को अपने धर्म में परिवर्तित कर उनसे ही जैनों का तिरस्कार कराया ।

उपयुक्त बातें जैन लेखों पर दृष्टिपात करने से भलीभाँति सिद्ध होती हैं । इस संग्रह के लेख नं० ४३५ और ४३६ से वीर शैव धर्म के एक आचार्य एकान्तद रामय्य के सम्बन्ध में ज्ञात होता है कि उसने कलचूर नरेश बिज्जल को अपने प्रभाव में लाकर जैनों पर भयंकर उत्पात किए थे । उसने अन्नूर में जैन-मूर्ति को फेंककर वेदी को ध्वस्त कर दिया और शिवलिंग की स्थापना की । इस पर जैनों ने कलचूर नरेश बिज्जल से शिकायत की पर वह तो उक्त आचार्य के प्रभाव में था । इसने उनका उपहास किया और एकान्तद रामय्य को प्रोत्साहन देते हुए जय पत्र प्रदान किया (४३५) । उसी लेख से ज्ञात होता है कि चालुक्य वंश का अन्तिम नरेश सोमेश्वर चतुर्थ भी उस मत का अनुयायी हो गया था ।

विजय नगर राज्य के ले० नं० ५६१, ५६५, ५६६ और ७१० से विदित होता है कि दूसरे सम्प्रदाय के लोग जैनो पर ज्यादती करते थे पर तत्कालीन राजाओं की उदार एवं निष्पक्ष नीति के कारण उनकी सुरक्षा बनी रही। ले० नं० ७१० से ज्ञात होता है कि जैनो को अपमानजनक शर्तें मानने को भी बाध्य होना पड़ा, पर उन्होंने अपने पड़ोसियों की भावना की रक्षा के लिए वह शर्त भी मान ली। उक्त लेख में लिखा है जैन लोग पहले विभूति और विल्व पत्र वांटकर अपनी सब धर्म विधि कर सकते हैं। जैनियों ने जब यह शर्त मान ली तो उसका प्रभाव दूसरे धर्म वालों पर तत्काल हुआ और उन्होंने भी प्रतिज्ञा की कि जैन मन्दिरों आदि को कोई क्षति पहुँचावेगा तो वह उनके धर्म से बाहर कर दिया जायगा। जैनियों में उनकी अहिंसा नीति का ही प्रभाव था कि वे परमत सहिष्णु थे और इससे वे आज तक भारत में रह सके।

१०. जैन धर्म के केन्द्र

प्रस्तुत लेख संग्रह को ध्यान से पढ़ने से मालूम होता है कि भारत में उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम सभी ओर अनेक प्रभावक जैन केन्द्र थे। इन केन्द्रों का इतिहास देखने पर विदित होता है कि जैनाचार्यों ने जैन धर्म को राजाओं और सामन्तों के दरबारों तक ही सीमित न रखा था बल्कि साधारण जनता के बीच भी उसे जनप्रिय बनाने के प्रयत्न किये थे। इसीलिए राजाओं और सामन्तों के सतत परिवर्तित होते रहने पर एवं उनके प्रभुत्व का लोप होने पर भी जैन धर्म की नींव अस्तवर्ष में अक्षुण्ण बनी रही।

(अ) उत्तर भारत के जैन केन्द्रों में मथुरा एक समय प्रमुख स्थान था। इस सम्बन्ध में हम पर्याप्त लिख चुके हैं। इसके अतिरिक्त, उदयगिरि-खण्डगिरि (उड़ीसा) पधोसा, राजगृह, रामनगर (अहिच्छत्र), उदयगिरि (सांची), देवगढ़, दूबकुण्ड, खालियर, बवागंज, बड़नगर, खजुराहो, और महोबा के नाम उल्लेखनीय हैं।

उदयगिरि-खण्डगिरि—उड़ीसा प्रान्त में भुवनेश्वर के पास की उक्त

दो पहाड़ियां जैन तीर्थों के इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्व की हैं। यहाँ से भारतीय लेखों में महत्वपूर्ण एक लेख (२) हाथी गुफा से प्राप्त हुआ है जो जैन सम्राट् खारवेल के इतिहास पर प्रकाश डालता है। उक्त लेख में लिखा है कि यहाँ आदिनाथ भगवान् की एक प्रतिमा थी जिसे मगध का राजा नन्द उठा ले गया था। इसका अर्थ यह हुआ कि नन्दकाल से ही यह स्थान एक जैन केन्द्र था। इस संग्रह में दो और लेख (३ और २४५) इस स्थान के दिये गये हैं। अन्तिम लेख सूचित करता है कि ११वीं शताब्दी में भी यह जैन तीर्थ था। इसका प्राचीन नाम कुमारी पर्वत था। यहाँ से और भी अनेक लेख मिले हैं। जिनकी प्रतिलिपि स्व० वेणीमाधव वसुन्ना ने ओल्ड ब्राह्मी इन्स्क्रिप्सन्स् नामक ग्रन्थ में दी है।

प्रभोसा:—इलाहाबाद के पास कौशाम्बी जैन और बौद्धों का एक प्राचीन तीर्थस्थान है। कौशाम्बी के पास ही प्रभास पर्वत नाम की एक पहाड़ी है जो प्राचीन काल से ही जैन तीर्थ रही है। इस स्थान के तीन लेख (६, ७ और ७५६) इस संग्रह में दिये गये हैं। प्रथम दो लेख वहाँ की प्राचीन दो गुफाओं से प्राप्त हुए हैं। इन लेखों की लिपि शुंगकालीन है। उनसे मालुम होता है कि अहिच्छत्र के अप्रादुर्भवेन ने जो कि वहसतिमित्र (मगध नरेश) का मामा था, काश्यपोय अर्हन्तों के उपयोग के लिए ये गुफाएँ बनवायीं। काश्यप, भग० महावीर का गोत्र था। संभव है ये गुफाएँ भग० महावीर के अनुयायी भिक्षुओं के लिए बनवायी गई थीं। तीसरा लेख १६ वीं शताब्दी का है। ये तीनों लेख इस बात को सिद्ध करते हैं कि यह स्थान प्राचीन काल से अब तक बराबर जैनो का मान्य तीर्थ है।

राजगृह:—यह स्थान जैन, बौद्ध और हिन्दुओं का पवित्र तीर्थ है। इस स्थान के तीन जैन लेख (८७, ८३६ और ७४३) इस संग्रह में दिये गये हैं। ले० नं० ८७ पाँचवें पर्वत वैभार की तलहटी में एक गुफा से प्राप्त हुआ है जिसे सोन-भण्डार कहते हैं। यह लेख बड़े महत्व का है और इस प्रकार पढ़ा गया है:—

१. निर्वाण लामाय तपस्विन्योन्मे शुभे गृहेऽर्हत्प्रतिमा प्रसिष्टे

२. आचार्यरत्नं मुनि वैरदेवः विमुक्तयेऽकारयद्दीर्घतैजाः ॥

जित्का भाव है कि किसी मुनि वैरदेव ने निर्वाण प्राप्ति के हेतु दो गुफाएँ बनवायीं,

बन० कनिष्क ने आर्या० स० रिपो० के प्रथम भाग में इसकी प्रतिलिपि छापी थी और टी० ब्लॉख महोदय ने इसे पढ़कर एपि० इण्डिका के ८ वें भाग में प्रकाशित कराया। ब्लॉख महोदय इसे लिपि विद्या की दृष्टि से तीसरी या चौथी शताब्दी का कहते हैं। इस लेख के आ० वैरदेव कौन थे यह ठीक तरह से नहीं कहा जा सकता। कुछ विद्वान् इसे श्वेताम्बर पट्टावलियों के वज्रस्वामी मानते हैं जिनका समय सन् ५७ ई० है^१। हमारा अनुमान है कि ये वैरदेव ले० नं० ६० (सन् ३६० के लगभग) के वीरदेव होना चाहिये जो कि मूलसंघ के आचार्य थे और जिनके सम्बंध में लेख में 'श्रीमद् वीरदेवशासनाम्बरावभासनसहस्रकर' अर्थात् भग० महावीर के शासन रूपी आकाश को प्रकाशित करने वाला सूर्य, विशेषण दिया गया है। लेख की लिपिका समय ३ री ४ थी शताब्दी, हमें वैरदेव से वीरदेव का साम्य स्थापन करने को बाध्य करता था। यदि यह अनुमान ठीक है तो मानना होगा वीरदेव का प्रभाव उत्तर भारत में राजपूत की ओर और दक्षिण भारत में कन्नड प्रान्त में बराबर था।

इस स्थान के दो अन्य लेख १८ वीं शताब्दी के हैं जिनसे सिद्ध होता है कि यह स्थान जैनो का अविच्छिन्न रूप से तीर्थ रहा है।

राम नगरः—(अहिच्छत्र) से प्राप्त अनेकों लेखों में से केवल दो लेख (५३, ५४३) इस संग्रह में दिये गये हैं। ले० नं० ८४३ के कोत्तरि शब्द से बात होता है कि यहाँ अनेकों जैन मन्दिरों के ढेर थे। अब भी वहाँ कोत्तरि के

१—जर० विहार० रि० सो०, भाग ४६, अंक ४, पृष्ठ ४००-४१२; उमाकान्त प्रेमचंद शाह—राजगीर की जैन गुफा सोन भग्नावशेष के मुनि वैरदेव।

अपभ्रंश रूप में कतारि खेरा नामक छोटी पहाड़ी है। यह स्थान एक समय दिगं सम्प्रदाय का केन्द्र था^१।

उदयगिरि:—(साँची) यहाँ की एक अकृत्रिम गुफा से एक लेख (६१) मिला है जो इस स्थान को जैन केन्द्र होने की सूचना देता है।

देवगढ़ से प्राप्त ले० नं० १२८ से ज्ञात होता है कि गुर्जर प्रतिहार नरेश मिहिर भोज के समय इसका एक नाम लुअच्छगिरि था वहाँ शान्तिनाथ भगवान् का एक मन्दिर था। दो अन्य लेखों (६१७, ६१८) से जो कि १५ वीं शताब्दी के हैं, विदित होता है कि यहाँ मूलसंघान्तर्गत नन्दिसंघ मदसारद गच्छ, बलात्कार गण का अच्छा प्रभाव था।

११ वीं शताब्दी में दुबकुण्ड, काष्ठासंघ के लाटवागट गण का प्रमुख स्थान था। यह स्थान ग्वालियर से ७६ मील दक्षिण पश्चिम दिशा में है। इस क्षेत्र के आसपास कच्छवाहों (कच्छप घाट वंश) का राज्य था। सन् १०८८ ई० में महाराजाधिराज विक्रमसिंह कच्छवाहा ने यहाँ के एक जैन मन्दिर को दान दिया था। उस मन्दिर की स्थापना एक जैन व्यापारी साधु लाहड़ ने की थी जो जायसवाल वंश का था। उसे विक्रमसिंह ने श्रेष्ठि की पदवी दी थी। यहाँ काष्ठासंघ लाटवागट गण के प्रमुख गुरु देवसेन की पादुकाओं की स्थापना सन् १०६५ ई० में की गयी थी (२२८, २३५)।

ग्वालियर से प्राप्त दो लेखों (६३३, ६४०) से विदित होता है कि १५ वीं शताब्दी में तोमर वंशी राजाओं के काल में यह स्थान काञ्चीसंघ (काष्ठासंघ का दूसरा नाम) माथुरान्वय, पुष्करगण के भट्टारकों का प्रमुख केन्द्र था। इन लेखों में उक्त संघ के कतिपय भट्टारकों के नाम दिये गये हैं।

वषागंज (मालवा) से प्राप्त १२ वीं शताब्दी से १५ वीं तक के तीन लेखों से विदित होता है कि यह प्रमुख जैन केन्द्रों में एक था। सन् ११६६ में

१—यहाँ से प्राप्त अनेकों लेख, अनेकान्त, वर्ष १० किरण ३-४ में प्रकाशित हुए हैं।

यहाँ एक प्रभावक जैन मुनि रामचन्द्र थे, जो राज्यमान्य मुनि (भूपतिवृन्दवन्दित-पदः) थे। ये सर्वसंघतिलक देवनन्दि मुनि के शिष्य थे जो कि राज्यमान्य लोक नन्दि मुनि के शिष्य थे (३७०, ३७१)। १५ वीं शताब्दी में यह स्थान ग्वालियर के भट्टारकों के अधीन था (६४३)।

खजुराहो के जैन और हिन्दू मन्दिर भारतीय शिल्पकला के विशिष्ट नमूने हैं। यहाँ से प्राप्त अनेक लेखों में से केवल १२ मूर्तिलेख इस संग्रह में हैं इनमें कुछ लेखों से विदित होता है कि यह स्थान ग्रहपति वंश (गहोई वैश्यों) का प्रमुख केन्द्र था। यहाँ के सन् ६५५ के एक लेख से मालुम होता है कि यहाँ जिननाथ का एक प्रसिद्ध मन्दिर था जिसे चन्देल नरेश धंग के राज्य में पाहिल्ल नामक सेठ ने अनेक वाटिकायें बगीचे दान में दिए थे (१४७)।

इसी तरह मझोबा भी चन्देल नरेशों के समय में एक जैन केन्द्र था। इस संग्रह में इस स्थान से प्राप्त सं० ११६६ से.सं० १२२१ अर्थात् ५२ वर्ष के ८ मूर्ति लेखों से विदित होता है कि यहाँ जैन लोग निर्विघ्न रीति से सोत्साह प्रतिष्ठा आदि कराते थे। ले० नं० ३३७, ३४२ पर चन्देल नरेश मदन वर्म का नाम और ले० नं० ३६५ में परमर्दि का नाम एवं राज्य संवत्सर दिया हुआ है।

(आ) इस संग्रह में पश्चिम भारत के संग्रहीत लेखों को देखने से विदित होता है कि इस क्षेत्र में श्वेताम्बर सम्प्रदाय के अनेक जैन केन्द्र थे जैसे आबू, सिरोही, अजमेर, अनहिलवाड़, खम्भात, दोहद, दिलमाल, नड-लार्ह, नडोले जैसलमेर, पालनपुर, बयाना आदि। गिरनार से प्राप्त २-३ लेख दिग० सम्प्रदाय के हैं, शेष बहुसंख्य लेख श्वेताम्बर सम्प्रदाय के हैं। शत्रुघ्न से ११८ संग्रहीत लेखों में दिगम्बर सम्प्रदाय का केवल एक लेख (७०२) है जिसमें मूलसंघ, सरस्वतीगच्छ, बलात्कारगण कुन्दकुन्द अन्वय के भट्टारकों की पट्टावली दी हुई है। यहाँ सं० १६८६ में अहमदाबाद के संघपति हुं'वड़ ज्ञातीय श्री रत्नसी के वंशजों ने, जब कि शाहजहाँ का राज्य प्रवर्तमान था, श्री शान्तिनाथ की प्रतिमा स्थापित की थी।

(इ) दक्षिण प्रान्त के प्रमुख जैन तीर्थों और केन्द्रों में श्रवणबेल्गोल, पोदनपुर, पलासिका, पुलिगेरे, कोपण, हनसोगे, हुम्मुच, बसिगाम्बे, कुप्पदूर, हलेबीड, मलेयूर, मुल्लूर, मुगलूर, अंगडी, बन्दालिके, आबलि, उद्री, कारकल, गेरसोप्पे आदि प्रसिद्ध थे ।

श्रवण बेल्गोल—यहाँ के सम्बन्ध में विशेष कुछ नहीं कहना है क्योंकि उसके माहात्म्य को प्रकट करने के लिए जैन शिलालेख के ५०० शिलालेख प्रथम भाग के रूप में प्रकाशित हो चुके हैं । इस स्थान की परम्परा का सम्बन्ध अनेक विद्वानों के मत से श्रुतकेवली भद्रबाहु और सम्राट् चन्द्रगुप्त से है । कुछ विद्वानों के मत से उज्जयिनी के द्वितीय भद्रबाहु और उनके शिष्य गुप्तिगुप्त से है । जो भी हो पर जैन शि० सं० प्रथम भाग के प्रथम लेख का साधारणतः अर्थ करने से यहाँ की परम्परा का सम्बन्ध भद्रबाहु द्वितीय से ही मालुम होता है ।^१

१. 'जैन परम्परानो इतिहास' के लेखक विद्वान् मुनि श्री दर्शन विजय जी आदि (त्रिपुटी महाराज) ने आर्य सिंहगिरि के उत्तराधिकारी आर्य वज्रस्वामी और भद्रबाहु द्वितीय के जीवन चरित में अनेक प्रकार का साम्य दिखलाया है और संभावना प्रकट की है कि यदि दोनों आचार्यों को एक मान लिया जाय तो श्वेताम्बर दिगम्बर इतिहास संबंधी अनेक गूथियां सरल रीति से उत्कल जा सकती हैं । इन वज्रस्वामी का जन्म वीर संवत् ४६६ में, दीक्षा काल वार सं० ५०४ में युगप्रधान पद ५४८ में और सं० ५८४ में स्वर्गगमन हुआ था । वे लिखते हैं:—दिगम्बर ग्रन्थों में इस अरसे में द्वितीय भद्रबाहु होने का उल्लेख है जिनके दूसरे नाम वज्रयशा (तिलोपपण्णलि) महायशा (महापुराण), यशोबाहु (उत्तर पुराण, हरिवंश पुराण), जयबाहु (श्रुतावतार), वज्रर्षि (हरिवंश पुराण सं० १ श्लोक ३३), महायशा (आवश्यक निर्युक्ति) मिलते हैं । श्रवणबेल्गोल के चन्द्रगिरि स्थित एक लेख में उल्लेख है कि श्रुतकेवली भद्रबाहु की परम्परा में महानि-मित्तज्ञ भद्रबाहु ने उज्जयिनी में रहते हुए १२ वर्षीय दुष्काल को आते देख

दक्षिण कर्नाटक की ओर विहार किया और ७०० शिष्यों के साथ इस पहाड़ी पर आये। उन्होंने यहाँ अपने समाधिमरण की आराधना के लिए केवल एक शिष्य को साथ रख शेष को विसर्जित कर दिया इत्यादि (पृष्ठ २८४-२८२)।

आगे मुनिश्री लिखते हैं कि आर्य वज्रस्वामी ने वि० सं० १७४ में अपने शिष्य संघ के साथ बारह वर्ष के दुष्काल में दक्षिण जाकर एक पहाड़ी के ऊपर अनशन किया और समाधि पूर्वक स्वर्गगमन किया। इस भूमि की इन्द्र ने रथ के द्वारा तीन प्रदक्षिणा की इससे इस पहाड़ का नाम 'रथावर्तगिरि' पड़ा।

इस रथावर्तगिरि का असली नाम क्या था और वर्तमान में उसका नाम क्या है, इस बात का कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। किन्तु हमें लगता है कि आज जो इन्द्रगिरि (विन्ध्यगिरि) के रूप में पहाड़ी बोली जाती है वही वास्तव में रथावर्त गिरि है, और उसके ऊपर जो विशालकाय मूर्ति है वह आर्य द्वितीय भद्रबाहु स्वामी याने वज्रस्वामी की मूर्ति है।

आ० वज्रस्वामी ने अनशन के लिए प्रथम एक पहाड़ी पसन्द किया था अपने एक बालमुनि को भी छोड़ने के लिए उन मुनि को वहीं रख उस पहाड़ी का त्याग कर सामने की दूसरी पहाड़ी पर अनशन किया और बालमुनि ने पहली पहाड़ी पर अनशन किया।

इसके पश्चात् उनके प्रशिष्य आचार्य चन्द्रसूरि यहीं पवारे थे और उनके उपदेश से उसी पहाड़ी की विशाल शिला पर आ० वज्रस्वामी की विशाल काय प्रतिमा बनी। ये दोनों पहाड़ियाँ आज इन्द्रगिरि और चन्द्रगिरि नाम से प्रसिद्ध हैं, इत्यादि।

(देखो, जैन परम्परानो इतिहास, भा० १, लेखक त्रिपुटी महाराज, प्रकाशक—श्री चारित्र स्मारक ग्रन्थ माला, अहमदाबाद, १९५२, पृष्ठ ३३७-३३९)

जो भी हो पर 'अनेकग्रामशतसंख्यं मुदित जन धन कनक सस्य गोमहिषाबावि कुल समाकीर्ष्य जनपदं प्राप्तवान्" उल्लेख जिस स्थान के लिए किया गया है वह पुष्पाट देश के उत्तरी भाग के सिवाय और कोई दूसरी जगह नहीं है।

पोदनपुर—तीर्थ के सम्बन्ध में हमें ले० नं० ३६५^१ (सन् ११८०) से विदित होता है कि भरत चक्रवर्ती ने पोदनपुर के समीप ५२५ धनुष प्रमाण बाहुबलि की मूर्ति प्रतिष्ठित करायी थी। कुछ काल बीतने पर मूर्ति के आसपास की भूमि कुक्कुट सर्पों से व्याप्त और बीहड़ बन से आच्छादित होकर दुर्गम्य हो गयी थी। राचमल्ल नृप के मंत्री चामुण्ड राय को बाहुबलि के दर्शन की अभिलाषा हुई पर यात्रा के हेतु जब वे तैयार हुए तब उनके गुरु ने उनसे कहा कि वह स्थान बहुत दूर और अगम्य है। इस पर चामुण्ड राय ने वैसी मूर्ति की प्रतिष्ठा कराने का विचार किया और उन्होंने वैसा कर डाला।

कहा जाता है कि यह पोदनपुर निजाम हैदराबाद प्रान्त के निजामाबाद जिले का 'बोधन' नामक गाँव है जो कि १० शताब्दी के पूर्वार्ध में राष्ट्रकूट नरेश इन्द्र चतुर्थ की राजधानी था और वहाँ वैष्णवों का बोलवाला था तथा वहाँ एक विशाल वैष्णव मन्दिर भी बनवाया गया था। यहाँ अब भी जैन एवं ब्राह्मण पुरातत्त्व की सामग्री मिलती^२ है।

पलासिका—हलसी या हलसिगे (जिला बेलगांव) से प्राप्त ६ लेखों से ज्ञात होता है कि पांचवीं शताब्दी ईस्वी में कदम्बों के राज्यकाल में पलासिका एक प्रमुख जैन केन्द्र था। यहां यापनीय, निर्ग्रन्थ एवं कूर्चक ये तीनों सम्प्रदाय समान भाव से आदृत थे। ले० नं० ६६ में लिखा है कि कदम्ब नरेश काकुत्स्थवर्मा ने अपने जैन सेनापति श्रुतकीर्ति को धार्मिक कार्य के लिए एक क्षेत्र दान में दिया था। ले० नं० ६६ के अनुसार कदम्ब भृगेशवर्मा ने अपने पिता की स्मृति में

१. जैन शि० ले० संग्रह, नं० ८५

२. सालेतोरे, मेडीवल, जैनियम, पृष्ठ १८६.

यहाँ एक जैन मन्दिर बनाकर यापनीय, निर्ग्रन्थ और कूर्चकों को दान में दिया था। इसी तरह ले० नं० १०० उल्लेख करता है कि अष्टाहिका पर्व मनाने के लिए कदम्ब नरेश रविवर्मा और अन्य लोगों ने पुरुखेटक गांव यापनीय संघ को दिया था। ले० नं० १०१-१०२ के अनुसार यहाँ कदम्ब रविवर्मा और उसके छोटे भाई भानुवर्मा द्वारा जिन भगवान् की पूजा के लिए दान दिये गये थे। ले० नं० १०३ से विदित होता है कि कदम्ब नरेश हरिवर्मा ने पलासिका में सिंह सेनापति के पुत्र भृगेश द्वारा निर्मापित जैन मन्दिर में अष्टान्हिका पूजा के लिए और सर्व संघ के भोजन के लिए कूर्चकों के वारिषेणाचार्य संघ के लिए चन्द्रक्षान्त को प्रमुख बनाकर दान दिया था। इसी तरह ले० नं० १०४ के अनुसार अहि-रिष्ट नामक श्रमण संघ के लिए सेन्द्रक राजा भानुवर्मा की प्रार्थना पर हरिवर्मा ने दान दिया था। इस तरह कदम्ब राजाओं की ४-५ पीढ़ी तथा पलासिका यापनीय, निर्ग्रन्थ और कूर्चक सम्प्रदाय का प्रमुख केन्द्र रहा है।

पुलिगेरे (लक्ष्मेश्वर):—इस स्थान के सातवीं से दशवीं शताब्दि ईस्वी के संघहीत पाँच लेखों से मालुम होता है यह एक जैन तीर्थ था। यहाँ शंखवसदि नामक विशाल जैन मन्दिर था जिसकी छत ३६ खम्भों पर खम्भो थी। इस बसदि के नाम से इस स्थान का नाम शंखतीर्थ पड़ा था। ले० नं० १०६ से विदित होता है कि सेन्द्रक राजा दुर्गशक्ति ने शंखजिनेन्द्र की नित्य पूजा के लिये कुछ भूमि दान में दी थी। ले० नं० १११ के अनुसार चालुक्य विनयादित्य सत्याश्रय ने इस मन्दिर को अपने राज्य के ५ वें या ७ वें वर्ष में माघ पूर्णिमा के दिन दान दिया था। ले० नं० ११३ में उल्लेख है कि चालुक्य वंशी विजयादित्य सत्याश्रय ने अपने राज्य के ३४ वें वर्ष में इस मन्दिर के लिए दान दिया था और ले० नं० ११४ से ज्ञात होता है कि सन् ७३४ ई० में विक्रमादित्य ने शंखतीर्थ बसदि का जीर्णोद्धार कराया था। यहाँ शंख बसदि के अतिरिक्त एक और जिनालय था, जिसका नाम धवल जिनालय था। ले० नं० १४६ इस तीर्थ के इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्व का है। उक्त लेख के अनुसार सन् ६६८ में इस तीर्थ का विशाल रूप हो गया था। यहाँ गंगराजा मारसिंह गङ्ग-

कन्दर्प ने एक जिनालय बनवाया जो कि शंख बसदि तीर्थ बसदि मण्डल के लिए मण्डन स्वरूप था । उसका नाम उक्त राजा के नाम पर गङ्गकन्दर्प भूपाल जिनेन्द्र मन्दिर रखा गया और उसके लिए दान देते समय सीमा के रूप में अनेक जैन एवं अजैन बसदियों का उल्लेख है ।

कोपणः—यह स्थान अवण वेलगोल के बाद बड़े महत्व का जैन तीर्थ रहा है । शिलालेखों के पर्यवेक्षण से प्रतीत होता है कि यह ७ वीं से लेकर १६ वीं शताब्दी तक जैनों का महातीर्थ रहा है । प्रस्तुत संग्रह में कोपण के सम्बन्ध के ११ वीं शताब्दी के पहले के लेख संग्रहीत नहीं पर उसके बाद के जो भी लेख हैं उनमें उसकी प्रसिद्धि का ही उल्लेख है । ले० नं० १६८ से विदित होता है कि सन् १००० के लगभग कोपण तीर्थ के कुछ यात्री अवण वेलगोल आये थे । ले० नं० २६६ में लिखा है कि जैनों के सहस्रों तीर्थों में प्रमुख तीर्थ कोपण था । ले० नं० २५५ में उल्लेख है कि जैन सेनापति गंगराज ने अपनी अनवधिक दानशीलता से गङ्गवाडि ६६००० को कोपण के समान चमका दिया था । यही बात ले० नं० ३०१ और ४११ से पुष्ट होती है । ले० नं० ३०४ के अनुसार गंगराज के ज्येष्ठ भ्राता बम्मदेव के पुत्र ऐच दण्डनायक ने कोपण वेलगोल आदि स्थानों में अनेक जिन मन्दिर निर्माण कराये थे । उसी लेख में कोपण को 'कोपण आदि तीर्थदलु' अर्थात् एक प्रमुख या आदि तीर्थ के रूप में माना गया है । सन् ११५६ (३५४) में सेनापति हुल्ल ने कोपण महातीर्थ में २४ जैन साधुओं के संघ के लिए अक्षयदान दिया था । ले० नं० ४५१ में उल्लेख है कि ऐचण ने वेलगवत्तिनाड में एक ऐसा जिनालय बनवाया था जैसा उस प्रदेश में और कहीं नहीं था और इस तरह उसने वेलगवत्तिनाड को कोपण के समान बना दिया ।

१६ वीं शताब्दी में भी कोपण का महत्व कुछ कम न हुआ था । इस शताब्दी के महान् विद्वान् वादि विद्यानन्द के विषय में ले० नं० ६६७ में उल्लेख है कि इन्होंने कोपण तथा अन्य दूसरे तीर्थों में महोत्सव करके विद्यानन्द नाम से प्रसिद्धि प्राप्त की ।

कु० राहस महोदय कोपण को निबाम हैदराबाद के दक्षिण-पश्चिम में स्थित वर्तमान कोपल को माना है। इस विषय में अब सन्देह नहीं है।

चिक्क हनसोगे:—जैन तीर्थों में चिक्क हनसोगे का नाम भी प्रमुख था। इस संग्रह के लेखों से प्रतीत होता है कि उक्त स्थान ११ वीं शताब्दी के पहले से भी जैन धर्म का केन्द्र था। ले० नं० २४० से ज्ञात होता है कि वहाँ एक समय ६४ बसदियां थीं जो कि अब सब ध्वस्त हालत में हैं पर उन्हें देखने से मालूम होता है कि वे चालुक्य शिल्प की शैली में सुन्दर ढंग से निर्मित हुई थीं। ले० नं० २२३ (लगभग सन् १०८० ई०) से विदित होता है कि दाम-नन्दि भट्टारक के अधिकार क्षेत्र में हनसोगे के चङ्गात्व तीर्थ को सारी बसदियाँ थीं, अम्बेय बसदि तथा तोरेनाडू की बसदि भी उनके प्रधान शिष्यगण के अधिकार में थी। ले० नं० १६६, २४० और २४१ से उन बसदियों का एक विचित्र इतिहास मालूम होता है कि इन बसदियों के आदि प्रतिष्ठापक मूलसंघ, देशोगण, होत्तगे गच्छ के रामस्वामी थे जो कि दशरथ के पुत्र, लक्ष्मण के भाई सीता के पति और इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न हुए थे। पीछे इन्हीं बसदियों को दान देने वाले क्रमशः शक, नल, विक्रमादित्य, गंग और चङ्गात्व थे। सन् १०६० के लगभग यहाँ चङ्गात्व नरेश राजेन्द्र चोल नभि चङ्गात्व ने कुछ बसदियों का निर्माण कराया था।

हनसोगे के जैन गुरुओं का बड़ा प्रभाव था। इनकी एक शाखा हनसोगे बलि नाम से प्रसिद्ध थी। सन् १३०३ में हनसोगे के बाहुबलि मलबारि देव के शिष्य पद्मनन्दि भट्टारक ने होन्नेयन हल्लि में गंध कुटो निर्माण करायी थी तथा १५ गद्याण का दान भी दिया था (५५१)। पन्द्रहवीं शताब्दी के लगभग कारकल के शासकों को जैन धर्म के प्रभाव में लाने वाले इसी स्थान के गुरु थे। हनसोगे के ललितकीर्ति सुनीन्द्र के उपदेश से शक सं० १३५३ फाल्गुन शुक्ल १२ के दिन सोमवंश के भैरवेन्द्र के पुत्र पाण्ड्य राय ने कारकल में बाहुबलि की प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित करायी थी (६२४)।

हुस्मचः—शान्तर कुल के संस्थापक जिनदत्तराय के समय (६ वीं शता०) से यह बराबर महत्व पूर्ण जैन तीर्थ रहा है । इस संग्रह के लगभग २२ लेखों से यह बात भली भाँति सिद्ध होती है । यहाँ की प्राचीन बसदि का नाम पालियक्क बसदि था जो कि सन् ८७८ के लगभग निर्मापित हुई थी । ले० नं० १४५ से से ज्ञात होता है कि तोलापुरुष शान्तर की पत्नी पालियक्क ने अपनी माता की मृत्यु पर उसे पाषाण बसदि के रूप में खड़ा किया था और इसके लिए बहुत से दान दिए थे । सन् ८६७ के ले० नं० १३२ में उल्लेख है कि तोलापुरुष विक्रमादित्य ने मौनिसिद्धान्त भट्टारक के लिए एक पाषाण बसदि बनवायी । सन् १०६२ के दो ले० नं० १६७ और १६८ क्रमशः सुले बसदि और पार्श्वनाथ बसदि से प्राप्त हुए हैं । प्रथम लेख में पट्टणस्वामि नोक्कय्य सेट्टि के दानों का उल्लेख है और दूसरे में वीर शान्तर की पत्नी चागलदेवी के दान कार्यों की प्रशंसा है । सन् १०६५ के एक लेख (२०३) में उल्लेख है कि त्रैलोक्यमल्ल शान्तर ने अपने गुरु कनकनन्दि देव को यहाँ दान दिया था । सन् १०७७ के ५ लेख उसी तीर्थ से प्राप्त हुए हैं जिनमें से ले० नं० २१२ में तैलह शान्तर के दानों और पट्टणस्वामि नोक्कय्य सेट्टि की प्रशंसा है । ले० नं० २१३ बहुत ही विशाल लेख है जो कि पञ्चकूट बसदि के प्राङ्गण में एक बड़े पाषाण पर उत्कीर्ण है । पञ्चकूट बसदि प्रसिद्ध उर्वीतिलक जिनालय का ही नाम है । इस लेख के अनुसार चट्टलदेवी ने अपने पति एवं पुत्रादि की याद में तालाब कुआँ, बसदि, मन्दिर, नाली, पवित्र स्नानागार, सत्र, कुंज आदि प्रसिद्ध धर्म एवं पुण्य के कार्यों को सम्पन्न कराया था । चट्टलदेवी शान्तरकुल और गंगवंश से सम्बन्धित कांची की रानी थी । लेख में शान्तर वंश और गंग वंश की वंशावली तथा द्रविड़ संघ, अरुञ्जलान्वय नन्दिगण की पट्टावली भी दी हुई है । इस लेख के अनुसार पंचकूट जिनालय का स्थापना काल शक सं० ६६६ था । ले० नं० २१४ में पंचकूटबसदि के निर्माण कार्य का विशेष इतिहास दिया गया है और मन्दिर के प्रतिष्ठाचार्य श्रंयांस देव की (ले० नं० २१३ के समान ही) परम्परा दी गई है । ले० नं० २१५ में नज्जि शान्तर, राजा ओडुग और चट्टलदेवी आदि

निधियों की तथा हेमसेन (कनकसेन) दयापाल, पुष्पसेन, वादिराव, अजितसेन आदि आचार्यों की प्रशंसा को गई है। ले० नं० २२६ में शान्तर राजाओं के दान का उल्लेख है। ले० नं० ३२६ में उल्लेख है कि सन् ११४७ में विक्रम शान्तर की बड़ी बहिन पम्पादेवी ने उर्वीतिलक जिनालय के समान ही शासन देवता की मूर्ति निर्माण करायी थी, तथा उसने उसके भाई और पुत्री ने पञ्च-बसदि के उत्तरीय पट्टसाले को बनवाया था। ले० नं० २३८, ४६७, ४६४, ४६७, ५००, ५०३, ५४२, तथा ५६७ समाधिमरण के स्मारक लेख हैं। ले० नं० ६६७ बहुत विशाल है और विजयनगर साम्राज्य के प्रसिद्ध विद्वान् वादि विद्यानन्द तथा तत्कालीन राजाओं पर उनके प्रभाव का सुन्दर वर्णन करता है।

बल्लिगाम्बे :—के भी जैन तीर्थ होने के अनेक लेख प्रमाण हैं। यहाँ सन् १०४८ में वज्राहुति शान्तिनाथ से सम्बद्ध वलगारगण के मेघनन्दि भट्टारक के शिष्य केशवनन्दि अष्टोपवासि भट्टारक की बसदि थी। इस बसदि के लिए उक्त सन् में महामण्डलेश्वर चामुण्डराय ने कुछ भूमि का दान दिया था (१८१)। यहाँ सन् १०६८ में जैन सेनापति शान्तिनाथ ने काष्ठ से बनी हुई प्राचीन मल्लिकामोद शान्तिनाथ तीर्थकर की बसदि को पाषाण की बनवाया था तथा इस मन्दिर के निमित्त वहाँ माघनन्दि भट्टारक को कुछ जमीन दान में दी थी (२०४)। इस लेख में तथा इससे पहले के ले० नं० १८१ में उल्लेख है कि यहाँ सभी धर्मों के—जिन, विष्णु, ईश्वर आदि के मन्दिर थे। ले० नं० २०४ की अन्तिम पंक्तियों से यह भी विदित होता है जगदेकमल्ल (जयसिंह तृतीय जगदेकमल्ल) तथा चालुक्य गंग पेर्मनानडि विक्रमादित्य ने उक्त बसदि को पहले कुछ जमीनें दान में दी थीं। ले० नं० २१७ (सन् १०७७) से मालुम होता है कि यहाँ के चालुक्य गंग पेर्मनानडि जिनालय को विक्रमादित्य चतुर्थ ने सेन गण के आचार्य रामसेन को एक गाँव दान में दिया था। सन् ११८६ ई० करीब का एक लेख (४२०) समाधि मरण का स्मारक है। ले० नं० ४५३ और ४५४ (सन् १२०५ ई०) में एक जैन बसदि के लिए एक जैन राजा (सम्भव है रट्ट वंश के राजा)—द्वारा दान का उल्लेख है। इन दोनों लेखों में रट्टवंश के पिछले

राजाओं की वंशावली दी गई है। इस सबसे यही मालुम होता है कि बल्लिगाम्बे ११-१२ वीं शताब्दी के प्रमुख जैन केन्द्रों में एक था।

कुप्पटूरः—के सम्बन्ध में संशुद्धी कतिपय लेखों से ज्ञात होता है कि यह स्थान ११ वीं से १५ वीं शताब्दी तक एक महत्त्वपूर्ण जैन केन्द्र था। ले० नं० २०६ से विदित होता है कि कदम्ब राजा मलाल देवी ने सन् १०७७ में पार्श्व-देव चैत्यालय की स्थापना की थी और पद्मनन्दि भट्टारक ने उसकी प्रतिष्ठा करा के उसका नाम वहां के ब्राह्मणों के नाम पर 'ब्रह्म जिनालय' रखा था। यहीं देशी गण के आचार्य देवचन्द्र के शिष्य श्रुत मुनि थे जिन्होंने एक मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था, और सन् १३६७ में समाधिगत हुए थे (५६३)। ले० नं० ५५५ से विदित होता है कि सन् १४०२ में कुप्पटूर एक प्रसिद्ध स्थान था। विजय नगर के सम्राट् हरिहर के समय यहां एक जैन मन्दिर था, जिसमें कदम्बों का एक शासन पत्र मिला था। सन् १४०८ के ले० नं० ६०५ से विदित होता है कि कुप्पटूर नागर खण्ड का तिलक स्वरूप था वहां अनेक जैन रहते थे, तथा अनेक जैन चैत्यालय थे। वहां का शासक जैन धर्मावलम्बी गोपमहाप्रभु था।

अङ्गडिः—यह होय्सल वंश का उत्पत्ति स्थान था। इसका दूसरा नाम सोसेबूर था। १० वीं शताब्दी के मध्य से इसके जैन केन्द्र होने के अनेक प्रमाण मिलते हैं। ले० नं० १६६ से ज्ञात होता है कि यहां ब्रविड़ संघ के प्रसिद्ध मुनि विमलचन्द्र पण्डित देव थे जिन्होंने सन् ९६० में लगभग संन्यास विधि से मरण किया था और उनकी शिष्याओं ने इस उपलक्ष्य में स्मारक खड़ा किया था। इसी तरह ले० नं० १७८ वज्रपाणि मुनि के समाधिमरण का स्मारक है। ये वज्रपाणि होय्सल नरेश नृपकाय राच मल्ल के गुरु थे। ले० नं० १६४, २०० २४२ भी समाधिमरण के स्मारक हैं। ले० नं० १८५ से मालुम होता है कि ये वज्रपाणि मुनि सूरस्थ गण के थे। उनकी शिष्या जाकियम्बे ने कुछ जमीनें वहां के मकर जिनालय के लिए छोड़ दी थीं। इस लेख के समय विनयादित्य होय्सल का राज्य प्रवर्तमान था। ले० नं० २०१ में पाषाणशिल्पियों के प्रधान, माणिक होय्सलाचारि द्वारा निर्मित एक बसदि का उल्लेख है। यह बसदि मुल्लूर के गुणसेन

पण्डितदेव को सौंप दी गई थी। इसी तरह ले० नं० ३६७ (सन् ११६४) में उल्लेख है कि यहाँ एक बसदि पट्टणसामि नागसेट्टि के पुत्र ने बनवायी थी जिसके लिए सन् ११६४ में वीर विजय नरसिंह देव ने दान दिया था। सन् ११-७२ के एक लेख (३७८) में एक होन्नंगिय बसदि के लिए किसी कम्बरस नामक व्यक्ति द्वारा दान का उल्लेख है।

बन्दालिके:—इस स्थान की तीर्थ रूप में प्राचीनता यहाँ से प्राप्त सन् ६१८ (ठीक ६११) के एक लेख (१४०) से विदित होती है जहाँ इसे बन्दनिके तीर्थ रूप में लिखा है। उक्त सन् में नागर खण्ड सत्तर की शासिका जन्कियम्बे ने सल्लेखना पूर्वक देहत्याग किया था। सन् १०७५ के एक लेख (२०७) में भी इसका तीर्थ के रूप में उल्लेख है। वहाँ शान्तिनाथ बसदि के लिए चालुक्य नृप सोमेश्वर ने कुछ भूमि दान में दी थी। ले० नं० ४०८ से ज्ञात होता है कि कदम्ब वंश की एक शाखा की अधीनता में इस स्थान की कीर्ति एवं यहाँ के शान्तिनाथ जिनालय की प्रसिद्धि जगह जगह फैल रही थी। इसी लेख के अनुसार एक बार यहाँ के जिनालय को देखने होयसल सेनापति रेचणु आया था। उसने इस मन्दिर के दर्शन से प्रसन्न होकर पूजा के खर्च के लिए एक गाँव दान में दिया था। इसी शान्तिनाथ जिनालय में सन् १२०० के लगभग सोमलदेवी नामक महिला ने समाधि मरण किया था (४३३)। ले० नं० ४३८ के अनुसार उक्त बसदि के लिए तीन गाँव दान में दिये गये थे। ले० नं० ४४८ में बन्दालिके (बान्धव नगर) की समृद्धि एवं सौन्दर्य का अच्छा वर्णन है। यहाँ एक सेट्टि ने शान्तिनाथ देव के लिए एक मण्डप खड़ा किया था। ललितकीर्ति सिद्धान्त के शिष्य शुभचन्द्र पण्डित ने इस तीर्थ का प्रबन्ध (पादपत्त्य) अपने हाथ लेकर उसे समुन्नत किया था एवं नागर खण्ड सत्तर के सभी प्रमुख व्यक्तियों ने, प्रजा ने, और किसानों ने अनेक दान दिये थे और होयसल सेनापति मल्ल ने उक्त क्षेत्र की रक्षा की थी। उक्त जिनालय के प्रबन्धक शुभचन्द्र देव ने सन् १२१३ में सन्यासपूर्वक देहत्याग किया था (४५६)।

उद्धरे (उद्धि):—इस तीर्थ के १२ वीं से १४ वीं शताब्दी के ही लेख इस संग्रह में हैं जिनसे मालुम होता है कि यहाँ प्रसिद्ध तीन बसदियाँ थीं— पञ्च बसदि, कनक जिनालय एवं एरग जिनालय । सन् ११२६ में यहाँ का शासक गंगनरेश मारसिंह का पुत्र महामण्डलेश्वर एक्कलरस था उसके सेनापति सिंगण का विरुद्ध जैनचूडामणि था (२६१) । यह एक्कलरस नाना देशों के विद्वानों और कवियों के लिए कर्ण के समान दानी था । वह वहाँ की सारी प्रवृत्तियों का संचालक था । उसकी फुआ सुगियव्विरसि ने यहाँ पञ्चबसदि में रहने वाले साधुओं के लिए दान दिया था (३१३) । एक दूसरी महिला कनकव्विरसि ने वहाँ बहुत से दान दिये (३१३) । इसका अनुकरण कर दूसरी महिलाओं ने भी दान दिये थे । राजा एक्कल ने कनक जिनालय की भूमि दान दिया था । (३१३) । सन् ११६८ के एक लेख (४३१) में उल्लेख है कि होय्सल सेनापति महादेव दण्डनाथ ने वहाँ एरग जिनालय नाम का एक विशाल जिनालय बनवाया था । उसने उक्त मन्दिर के लिए अनेक दान भी दिये थे । इसी लेख में लिखा है कि उद्धरे बनवासी देश के शासकों के रत्न और कोष भवन के रूप में अद्वितीय स्थान था । सन् १२८० के एक लेख (५७६) से विदित होता है कि इस स्थान में विजयनगर नरेश हरिहर राय द्वितीय के समय में वैचप नामक एक जैन वीर रहता था । उसने अपने देश को अतातायियों से बचाने के लिए उनसे युद्ध किया और उन्हें परास्त करने में अपने जीवन की बलि दे दी । ले० नं० ५६६ में वैचप के पुत्र सिरियण की जिनधर्म भक्ति का और उद्धरे की महिमा का वर्णन है । सन् १४०० में सिरियण ने समाधि विधि से देह त्याग किया था । चौदहवीं शताब्दी में उद्धरे अति समुन्नत एवं प्रख्यात स्थान था, यहाँ तक कि इस स्थान के आचार्य ने अपने वंश का नाम उद्धरे वंश रख लिया था । यहाँ के आचार्यों मुनिमद्र देव ने हिसुगल बसदि बनवायी थी तथा मुलगुन्द के जिनेन्द्र मन्दिर का विस्तार कराया था । ले० नं० ५८८ उनके समाधिमरण का स्मारक है ।

हलेबीड:—जैन धर्म का एक महत्वपूर्ण केन्द्र होय्सलों की राजधानी हलेबीड

था। जिसका कि दूसरा नाम उक्त वंश के लेखों में दोरसमुद्र या द्वारावती मिलता है। प्रस्तुत संग्रह में इस स्थान का पुराना लेख सन् १११७ के लगभग का (२६३) है जो कि विष्णुवर्धन नृप के समय का है। इसमें जैन मंत्री गंगराज के कार्यों की बड़ी प्रशंसा है। सन् ११३३ के ले० नं० ३०१ में विष्णुवर्धन की विजय का, तथा साथ में सेनापति गंगराज द्वारा अग्रणीत जैन मन्दिरों के जीर्णोद्धार कार्यों का उल्लेख है। गंगराज के पुत्र बोप ने दोर समुद्र में पार्श्वनाथ बसदि का निर्माण कराया था और अपने पिता की स्मृति में पार्श्वनाथ की मूर्ति स्थापित की थी। राजा विष्णुवर्धन को दैवयोग से इसी अवसर पर युद्ध विजय, पुत्रोत्पत्ति और सुख समृद्धि मिली थी। उसने इस मांगलिक स्थापन की ही उक्त बातों में निमित्त मान बड़ी प्रसन्नता से देवता का नाम विजयपार्श्व एवं पुत्र का नाम विजय नारसिंह देव रखा और जावगल नामक गाँव तथा अन्य प्रकार के दान दिये। उक्त लेख से यह भी मालुम होता है कि मन्दिर के पुरोहित नयकीर्ति सिद्धान्तदेव को तेली दास गौड़ ने भूमिदान दिया तथा उसने और राम गौड़ ने उत्तरायण संक्रमण में बहुत से दान दिए। सन् ११६६ के एक लेख (४२६) में यहाँ की शान्तिनाथ बसदि के लिए कुछ किसानों द्वारा गाँव एवं तालाबों के दान का तथा वसदि के आचार्य, स्थानीय किसान वर्ग, एवं गाँव के ६० कुटुम्बों द्वारा दान की रत्ना का उल्लेख है। ले० नं० ४६६ के अन्तर्गत दो लेखों का संकलन हुआ है। पहले लेख में होयसल नरसिंह तृतीय द्वारा जीर्णोद्धार कार्य का तथा दूसरे में उक्त राजा द्वारा अपने उपनयन संस्कार के समय दान का उल्लेख है। सन् १२७४ के एक लेख (५१४) में बालचन्द्र पण्डित देव के चमत्कार पूर्ण समाधि मरण का वर्णन है। उनके स्मारक रूप में भव्य लोगों ने उनको तथा पंच परमेश्वर की प्रतिमायें बनाकर प्रतिष्ठित की थीं। इसी तरह ले० नं० ५२४ (सन् १२७६) में उक्त बालचन्द्र पण्डितदेव के श्रुतगुव अभयचन्द्र महासैद्धान्तिक के समाधिमरण का उल्लेख है। ये अभयचन्द्र अनेक शास्त्रों के प्रकाण्ड पण्डित थे। इसी तरह इस लेख के २० वर्ष बाद बालचन्द्र पण्डित देव के प्रधान शिष्य रामचन्द्र मलधारि देव के समाधिमरण

का अनोखा वर्णन है (५४८) । ले० नं० ५४९ में एक अद्भुत सूचना है । उसमें उल्लेख है कि वहाँ से ईशान दिशा की ओर १५ बिलस्त के अन्तर पर शान्ति-नाथ देव जिनकी ऊँचाई ६ बिलस्त है, जमीन के अन्दर गड़े हैं, कोई भव्य पुरुष उनको बाहर निकालकर उनकी प्रतिष्ठा कर पुरय लाभ ले । सन् १६३८ के महत्वपूर्ण एक लेख (७१०) में जैन और शैवों की एकता तथा परधर्म सहिष्णुता का वर्णन है ।

मलेयूरः—चामराजनगर तालुके में जैन धर्म का एक मजबूत गढ़ मलेयूर था । यहाँ के कनकाचल पर्वत पर अनेक बसदियाँ थीं । सन् ११८१ में यहाँ की पार्श्वनाथ बसदि के लिए अच्युत वीरेन्द्र शिष्यप वैद्य की पत्नी चिक्कतायी ने पूजा प्रबन्ध के लिए, मुनियों के नित्यदान के लिए और हमेशा शास्त्रदान के लिए किन्नरीपुर ग्राम को दान में दिया था (४०१) । यहाँ के १४ वीं से लेकर १९ वीं शताब्दी तक के १० लेखों से विदित होता है कि यहाँ अनेक बसदियाँ थीं ।

आवलि नाडः—सोराब तालुके के अनेकों जैन केन्द्रों में प्रसिद्ध केन्द्र आवलिनाड् (हिरिय आवलि) था । मध्य युग में इस स्थान के अनेकों सामन्तों ने, उनकी पत्नियों ने तथा नगरवासियों ने अपने उत्साहपूर्ण धर्मसेवन से इस स्थान को अमर बना दिया था । जैनधर्म की दृष्टि से उस स्थान का महत्त्व यद्यपि १२ वीं शताब्दी में भी था (२८६, ३२२) पर विशेषकर यहाँ १४ वीं शताब्दी के मध्य से लेकर पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रथम दर्शकों के अनेक लेखों से, जो कि इस संग्रह में दिये गये हैं, विदित होता है कि यहाँ जैन धर्म की धारा अच्छी तरह प्रवाहित थी । इन लेखों में अधिक संख्या समाधिमरण के स्मारक लेखों की है । इन लेखों से ज्ञात होता है कि यहाँ के सामन्त आवलि प्रभु या आवलि महाप्रभु कहलाते थे और अपने जीवन के अन्तिम क्षणों को सुधारने में कितने जागरूक रहते थे ।

तबनिधि:—सोराब तालुके का यह स्थान भी एक जैन तीर्थ था । यहाँ से अपनेको जैन लेख मिले हैं पर यहाँ केवल ६ ही लेख संग्रहात हैं जो कि सब समाधिमरण के स्मारक हैं जिनसे ज्ञात होता है कि ऐसे स्थानों में समाधिविधि सम्पन्न कराने वाले आचार्य होते थे जहाँ कि श्रावक जन अपने जीवन के अन्तिम क्षणों में आकर संन्यासविधि से जीवन त्याग करते थे ।

मुल्लुरु:—यह स्थान कुर्ग तालुके में है । यहाँ के ११ वीं से १४ वीं शताब्दी तक के ८ लेख संग्रहीत हैं जिनसे विदित होता है कि यहाँ शान्तीश्वर बसदि, पार्श्वनाथ बसदि एवं चन्द्रनाथ बसदि नाम के तीन जिनालय थे । ले० नं० १७७, १८८, १९१, २०२, २०६ से विदित होता है कि यह स्थान कोङ्गा-त्व नरेशों की श्रद्धा एवं विनय का क्षेत्र था । यहाँ राजेन्द्र नील कोङ्गात्व के समय में एक प्रसिद्ध आचार्य गुणसेन परिणत थे, 'जनके भक्त, उक्त परिवार के सभी लोग थे । उक्त सभी लेख दान या समाधि के स्मारक हैं । ले० नं० ५६० (सन् १३६१) से सिद्ध होता है कि यहाँ चौदहवीं शताब्दी के अन्तिम दशकों तक कोङ्गात्व राज्य का अस्तित्व था, और वे लोग जैन धर्म के अग्रगण्य भक्त थे । इस लेख में चन्द्रनाथ बसदि की पुनः स्थापना का उल्लेख है ।

मुगल्लर (मुगुलि) :—हसन तालुके का यह स्थान होयसल राज्य में एक समय जैन धर्म का केन्द्र था । प्रस्तुत संग्रह में यहाँ के चार लेख संग्रहात हैं जिन से ज्ञात होता है कि यहाँ १२ वीं शताब्दी में द्रविड़ सभ्यान्तर्गत नान्दसंघ अरुङ्ग-लान्घ्य की गद्दी थी । उस गद्दी के अधिकारी श्रीपाल त्रैविद्य के शिष्य वासुपूज्य देव थे । ले० नं० ३२७ से मालुम होता होता है कि यहाँ होयसल विष्णुवर्धन के राज्य में एल्कोटि जिनालय नामक एक प्रसिद्ध मन्दिर था । यहीं महाप्रभु पेर्मनिडि के पुत्र गोविन्द ने बड़ी बसदि बनवायी थी । उस मन्दिर के भट्टारक वासुपूज्य देव को उक्त जिनालय के लिए नारसिंह होयसल देव ने कुछ भूमि का दान दिया था ।

कारकल:—उल्लु देश में यह महत्त्वपूर्ण जैन केन्द्र है । इस स्थान का इति-

हास हुम्मच के शान्तर वंश के साथ जुड़ा हुआ है। जिनदत्तराय ने ६ वीं शताब्दी में शान्तर राज्य की नींव हुम्मच की राजधानी बनाकर डाली थी और छठी शताब्दी में वह उसे कलस नामक स्थान में ले गया था। ले० नं० ५२२ से विदित होता है कि सन् १२७७ में उक्त राजाओं की राजधानी कलस ही थी। कुछ लेखों से ज्ञात होता है कि चौदहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में शान्तर नरेश अपनी राजधानी कलस से कारकल ले आये थे। इसी शताब्दी में यहाँ के राजाओं पर लिंगायत मत का प्रभाव भी पड़ने लगा था। परन्तु १५ वीं १६ वीं शताब्दी के लेखों से मालुम होता है कि वे जैन धर्म के भी प्रतिपालक थे। सन् १४३२ के एक लेख (६२४) से मालुम होता है कि शक सं० १३५३ के फाल्गुन शुक्ल १२ बुधवार को भैरवेन्द्र के पुत्र वीर पाण्डेयशी या पाण्ड्यराय ने यहाँ बाहुबल की प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित करायी थी। यह कार्य उन्होंने देशीगण की पनसोगे शाखा में ललितकीर्ति मुनीन्द्र के उपदेश से किया था। ले० नं० ६२७ में वीर पाण्ड्य की मनो कामना पूर्ण करने के लिए ब्रह्मदेव (जिसकी मूर्ति वहीं थी) से याचना की गई है। ले० नं० ६६४ से मालुम होता है कि सन् १५३० में कारकल की गद्दी पर वीर भैरवस वीरेयड थे। उसकी बहिन कालल देवी ने कल्लवस्ति के पार्श्वनाथ के लिए अनेक प्रकार के दान दिये थे। ले० नं० ६८० से ज्ञात होता है कि सन् १५८६ में ललित कीर्ति मुनीन्द्र के उपदेश से भैरव द्वितीय ने चतुर्मुख वसदि बनवाया, जिसके दूसरे नाम त्रिभुवनतिलक जिनालय या सर्वतोभद्र भी थे। इस लेख में भैरव द्वितीय द्वारा अन्य अनेकों मूर्तियों की स्थापना का उल्लेख है।

वेणूरः—कारकल तालुके में इस छोटे से गाँव में गोम्मटस्वामी की एक विशाल मूर्ति मिली है जिसकी स्थापना सन् १६०४ में तिममराज ने की थी, जो कि प्रसिद्ध चामुण्डराय के वंशज थे। इस मूर्ति की स्थापना श्रवणवेल्लोख के भट्टारक चारुर्काति पण्डितदेव की सलाह से की गई थी (६८६, ६९०)।

गेरसोपे:—१५-१६ वीं शताब्दी के जैन केन्द्रों में गेरसोपे का नाम प्रमुख था। अब तक यहाँ की स्थिति को प्रकट करने वाले अनेकों लेख प्रकाशित हो चुके हैं। प्रस्तुत संग्रह के कतिपय लेखों से उसकी महत्ता पहचानी जा सकती है। गेरसोपे के राजवंश का वैवाहिक सम्बन्ध संगीतपुर और कारकल के राजाओं से था। गेरसोपे का नाम बढ़ाने का श्रेय वहाँ के राजाओं और जैन नागरिकों को विशेष था। ले० नं० ६७४ में इस नगर का सुन्दर वर्णन है जिससे मालुम होता है कि यहाँ अनेक भव्य जिनालय थे, योगियों के निवास तथा विद्वानों की मण्डली थी। इस लेख से विदित होता है कि सन् १५६० में यहाँ अनन्तनाथ और नेमीश्वर नामक दो विशाल चैत्यालय थे। उक्त लेख में यहाँ के वणिक् वर्ग के धार्मिक कार्यों का उल्लेख है। यहाँ के उदारचेता कतिपय सेट्टियों के दान कार्य का उल्लेख हमें श्रवणचेलगोल से प्राप्त कुछ लेखों में भी मिलता है। ले० नं० ६६६^१ से विदित होता है कि सन् १४१२ में गेरसोपे के गुम्मतण्ण सेट्टि ने यहाँ आकर पाँच बसदियों का जीर्णोद्धार कराया था। इसी तरह ले० नं० ६७१^२ से ज्ञात होता है कि सन् १४१६ के लगभग गेरसोपे की श्रीमतो अम्बे और समस्त गोष्ठी ने चार गद्याण का दान दिया था। ले० नं० ६७०^३ (सन् १५३६) में चार बातों का उल्लेख है जिनमें गेरसोपे के सेट्टियों से लेन देन सम्बन्धी कुछ आपसी समझौतों के उपलक्ष्य में आहार के लिए दान देने की प्रतिशाय करायी गई है।

मैसूर राज्य से पन्द्रहवीं शताब्दी के अनेक जैन लेखों से ज्ञात होता है कि यहाँ और भी अनेक जैन केन्द्र थे जैसे सरगूर (६१८) मोरसुनाडू (६२१), निडगल्लु पर्वत (४७८, ६३७) थिडुवणि (६४६) वोगेयकरे (६५५) आदि।

१. प्रथम भाग, १३१

२. प्रथम भाग, १३५

३. , ६६-१०२

कर्नाटक प्रान्त के अन्य कई जैन केन्द्रों का नाम इन शिला लेखों से विदित होता है जैसे नन्दिपर्वत (११४), तडताल (२३२), चामराज नगर (२६४), कैदाल (३३३), एलम्बल्लि (३४६), निन्नूर (४३६-४४१, ४६६), हिरिय-महालिंगे (४३८) कुन्तलापुर (४४६), सोरब (४५७), जोगमत्तिगे (४२१), कलस (५२२), होन्नेयनहल्लि (५५१), हरवे (६५२) आदि ।

(ई) तामिलदेश के अनेक जैन केन्द्रों में से केवल तीन स्थानों के लेख प्रस्तुत संग्रह में संगृहीत हो सके हैं ।

वल्लीमल्लैः—यह स्थान उत्तरी अर्काट जिले के बन्दिवास तालुका में है । यह ६-१० वीं शताब्दी में जैन धर्म का केन्द्र था । यहां गंगराजा शिवमार के प्रपौत्र, श्रीपुरुष के पौत्र तथा रणविक्रम के पुत्र राचमल्ल सत्यवाक्य ने इस स्थान को अपने अधिकार में करके एक मन्दिर बनवाया था (१३३) । यहां किसी बाणवंशी राजा के गुरु देवसेन की प्रतिमा स्थापित की गई थी । ये देवसेन भट्टारक भवणन्दि के शिष्य थे (१३६) । इस प्रतिमा की स्थापना एक जैन मुनि श्री अज्जनन्दि भट्टार ने की थी (१३५) । यहां से प्राप्त एक दूसरी प्रतिमा के लेख से मालुम होता है कि ये अज्जनन्दि भट्टारक बालचन्द्र के शिष्य थे और इन्होंने गोवर्धन भट्टारक की प्रतिमा की स्थापना की थी (१३४) ।

पञ्चपाण्डवमलैः—इस स्थान से प्राप्त दो लेखों में से एक (११५) से ज्ञात होता है कि पल्लव राज नन्दि पोत्तरसर (नन्दि) के ५० वें राज्य संवत्सर में पोजियक्कियार नामक यज्ञी और नागनन्दि गुरु की एक पाषाण पर मूर्ति खुदवायी गई थी । ले० नं० १६७ से विदित होता है कि अपनी रानी की प्रार्थना पर वीर चोल ने तिरुप्पानमलै देवता के लिए एक गांव की आमदनी बाँध दी पर लेख पलिच्चन्दमू शब्द से मालुम होता है कि यहाँ एक प्रसिद्ध जैन बसदि थी । ये दोनों लेख ६-वीं, १० वीं शताब्दी के हैं ।

तिरुमलै—उत्तरी अर्काट जिले में यह स्थान ११ वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही जैन केन्द्र रहा है । इस नाम का अर्थ पवित्र पर्वत होता है । यहाँ सन्

१००५ ई० में चोलराजा राज प्रथम के २१ वें वर्ष में एक जैन मुनि गुणवीर ने अपने कान्वादि कला में विशारद गुरु गणेशोत्तर के नाम पर एक नहर या मोरी बनवायी थी (१७१) । दूसरे लेख नं० १७४ से ज्ञात होता है कि राजेन्द्र चोल प्रथम के १२ वें राज संवत्सर में मल्लियूर के एक व्यापारी की पत्नी ने तिरुमलै में एक जैन मन्दिर की पूजा और दोषक के लिए दान दिया था इस मन्दिर को राजराज चोल की पुत्री कुन्दवै ने बनवाया था इसलिए इसका नाम कुन्दवै जिनालय था । ले० नं० ४३४ से विदित होता है कि इस पर्वत को अर्हसुगिरि (अर्हत् का पर्वत) कहते थे जिसका तामिल नाम एणगुणविरै तिरुमलै (अर्हत् का पवित्र पर्वत) कहा गया है । यहाँ चेर वंशके राजा अतिरैमान् ने केरल नरेश द्वारा संस्थापित यक्ष यक्षिणी की प्रतिमाओं का जीर्णोद्धार कराकर प्रतिष्ठापित किया था और एक घण्टा दान में दे यहाँ मोरी बनवायी थी । ले० नं० ५५७ में उल्लेख है कि राजनारायण शम्बुवराज के १२ वें वर्ष में पोन्नूर निवासा मण्णै पौन्नायडे की पुत्री नल्लाताल ने एक जैन प्रतिमा की प्रतिष्ठापना की थी । इसी तरह ८३१ वें लेख में उल्लेख है कि परवादिमल्ल के शिष्य अरिष्टनेमि आचार्य ने एक यक्षी की प्रतिमा बनवाकर स्थापित की थी ।

(३) आन्ध्र देश में जैन धर्म का आगमन संभवतः कलिंग देश से हुआ था वह भी ईशा की दो शताब्दी पूर्व जैन सम्राट् खारवेल के समय में । पर शिलालेखों से जैनधर्म के केन्द्रों के प्रमाण ७ वीं शताब्दी से ही मिलते हैं । इस शताब्दी में यहाँ जैन धर्म को प्रश्रय कतिपय पूर्वी चौलुक्य नरेशों ने दिया था । प्रस्तुत संग्रह में केवल दो केन्द्रों के लेख ही आ सके हैं ।

ले० नं० १४३ से ज्ञात होता है कि नेल्लोर जिले के ओगले तालुका में मल्लिय पूण्डि ग्राम में कटकाभरण नाम का एक प्रसिद्ध जैन मन्दिर था इसे कृष्णराज के पोत्र दुर्गराज ने बनवाया था । यह स्थान यापनीय संघ नन्दि गच्छ

१. संभव है वह राजा राज राज चोल तृतीय का समकालीन था ।

का प्रमुख केन्द्र था मन्दिर के अधिष्ठाता धीरदेव मुनि थे जो कि जिननन्दि के शिष्य थे। उक्त बिनालय के लिए मल्लियपूगिड ग्राम दान में दिया गया।

इसी तरह अत्तिलिनाड् में कलुचुम्बरु नामक स्थान में एक सर्वलोकाभय बिनालय था। ले० नं० १४४ से ज्ञात होता है कि सन् ६४५ से ६७० के लगभग पूर्वी चालुक्य अम्म द्वितीय (विजयादित्य षष्ठ) ने उक्त जैन मन्दिर की भोजन शाला की मरम्मत के लिए दान दिया था। यह दान पट्टवर्धिक वंश की भाविका चामेकाम्बा की ओर से उसके गुरु अर्हन्नि को दिलाया गया था। ये मुनि बलिहारिगण अड्डकलि गच्छ के थे।

गुलाबचन्द्र चौधरी

— — —

सहायक ग्रन्थ निर्देश

१. पं० नाथू रामश्रेष्ठ, जैन साहित्य और इतिहास, प्रथम, द्वितीय संस्करण, बम्बई.
२. डा० हीरालाल जैन, जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग, बम्बई १९२८
३. डा० अनन्त सदाशिव अल्लेकर, राष्ट्रकूटाज एण्ड देयर टाइम, पूना, १९३४.
४. डा० भास्कर आनन्द सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, बम्बई, १९३४.
५. डा० दिनेशचन्द्र सरकार, सक्सेसर आफ सातवाहनाज्, कलकत्ता, १९३६.
६. डा० बे० मा० बरुआ, ओल्ड ब्राह्मी इन्स्क्रिप्सन्स्, कलकत्ता, १९२६.
७. डा० मजूमदार और पुसलकर, एज आफ इम्पीरियल यूनिटी, बम्बई १९५१.
८. " " क्लासिकल एज, बम्बई, १९५४
९. डा० गुलाबचन्द्र चौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री आफ नार्दर्न इण्डिया फ्राम जैन सोर्सेज (७-१२ वीं शताब्दी), बनारस (अप्रकाशित)
१०. रावर्ट सेवेल और कृष्ण-स्वामी आर्यंगर, हिस्टोरिकल इन्स्क्रिप्सन्स् आफ सदर्न इण्डिया मद्रास, १९३२.
११. एम० आर० शर्मा, जैनिज्म एण्ड कर्नाटक कल्चर, धारवाड, १०४०
१२. प्रो० नीलकण्ठ शास्त्री, हिस्ट्री आफ साउथ इण्डिया, आक्सफोर्ड १९५४
१३. विलियम कोल्हो, होय्सल वंश, बम्बई, १९५०
१४. दिनकर देसाई, मण्डलेश्वराज् अण्डर दि चालुक्याज् आफ कल्याणी, बम्बई, १९५१
१५. वेंकट रमनय्य, ईस्टर्न चालुक्याज् आफ बेंगी,
१६. मुनि दर्शन विजय जी, पट्टावली समुच्चय, प्रथम भाग, वीरमगाम, १९३३
१७. त्रिपुटी महाराज, जैन परम्परानो इतिहास, अहमदाबाद, १९५२
१८. प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ, टीकमगढ़ १९४६
१९. जैन सिद्धान्त भास्कर, आरा, भाग १-२१
२०. अनेकान्त, देहली, १-१०
२१. इण्डियन एण्टीक्वेरी

सन्दरवरि बलिक तदीय-श्रीमद्-द्रमिल-संघाग्रेसरण्य पात्रकेसरि-स्वामिगलि चक्र-
प्रीवतिमि.....रिन्दनन्तरम् ।

यस्य दि.....न् कीर्त्तिस्त्रैलोक्यमप्यगात् ।

येव स भात्येको वज्रनन्दी गणाप्रणी ॥

अवरि बलिक सुमति-भट्टारकरवरि बलिक...समय-दीपक.....रं
उन्मीलित-दोष-क.....रजनीचर-वत्समुद्बोधित-भव्य कमलमाटूर्जितमकलङ्क
प्रमाण-तपन स्फु.....॥ अवरि बलिक चक्रवर्त्ति-भट्टारकरवरि बलिक कर्म-
प्रकृति.....वरि बलिक पल्लवन गुरुगुलु विमलचन्द्राचार्य्यवरि बलिक
परिषादिमल्ल-देवरवरि बलि कनकसेन श्री-वादिराज-देवरवरि बलिक गंग
कुल-कमल-मार्त्तण्डनय वृत्तुग-पेम्माडिय गुरुगुलु श्री-विजय-भट्टारकरवरि
बलिक चक्रवर्त्ति-जयसिंह-देवन गुरुगुलागि ।

गत-सर्वज्ञाभिमानं सुगतनपगतात-प्र...दं कणादं ।

कृत-नीति-भ्रान्ति-नश्यन्-निज-नय-नयनालोकनं सन्द लोका-

यस निन्नी-मर्य-मात्रंग त नुदगलोलवोम्बनं मीरि लोकोन्-

नतमाप्तर्हन्मताम्भोनिधि...विभवं वादिराजेन्द्र-भावं ॥ •

अवरि बलिक यादवान्वय-चूडामणियपेरेयङ्ग-देवङ्गे गुरुगुलु जगद्गुरुगुलु-
मैनिसि ।

• चरणानुस्मरणा.....य-निकरविष्णुार्थ-संसिद्धियं ।

तर् वाचं ग्रहणं कुमार्य-सुत-वादि-व्रातमं तूले दुर-

ङ्गर-चारित्रद दुर्जयोजित-वच-श्रीयोलपु तम्मोल मनो-

हरमगल् तलदस्समन्तजितसेन स्वामिगल् कीर्त्तियं ॥ अवर सधम्मं ।

कन्तुवनान्तु मेय् देगेयदोडिसि दुम्मद-कम्म-वैर-वि-

क्रान्तमनेद्वे भाञ्जसि लसत्परमागम-वित्त्वादन्दिदा-

नीन्तन-सीर्य्य-आधरेने रुदियनान्त कुमारसेन-सै-

झान्तिक रादमुज्जल...जिन-धम्म-यशो-विलासमम् ॥

अवरि बलिक श्रीमद्जितसेन-स्वामिगलप्र-पुत्ररं कालपवित्ररुमागि ।

सले सन्द योग्यतेयनमलिसिद दुर्द्धर-तपो-विभूतिय पेम्पम् ।
 कलियुग-यणकरेम्बुदु नेलनेल्लं मसिषेण-मल्लचारिमल्लं ॥
 अवरि बलिक मकल्लं-सिंहासनमनलंकरिसि तार्किक्कचवर्त्तिगलु वादीअ-
 सिंह रुमेम्ब पेसरेसेये ।

अवसर्पिण्यर्द्धदिन [दि] तुलुगडे जिन-जामूत-संघात-मी भू-
 भुवनन् तेक्कादुवन्नं सुरिद सकल-विद्या-नादि-पूरदिन्ती ।
 वि विपरिन्त्पापसन्तापमनुडुगिसुतिर्दप्युदादं मुनीन्द्र- ।
 प्रवर-श्रीपालयोगेश्वर नेनिय जगत्-साल्थक्कत्-पुण्य-तीर्थं ॥
 आवन विप्रयमो पट्-तर्क्कीविल-बहु-भंगि-संगतं श्रीपाल- ।
 त्रैविद्य-गद्य-पद्य-वाचो-विन्यासं निसर्ग-विजय-विलासम् ॥

अन्तु जगद्गुरुगलर्नासिद श्रीपाल-त्रैविद्य-देवर कालं कर्त्तुं श्रीमदि-
 म्मडि-दण्डनायक बिट्टियण्णनो-अमदिय खण्ड-स्फुटित-जाण्णोडारक्कं, देवता-
 पूजेगमिसिर्पि रि(श्रु)प्पिममुदायदाहारदानक्कं शक-वर्ष १०४६ नेयत्तल-
 संवत्सरदुत्तरायण-संक्रान्ति यन्दु श्रीविष्णुवर्द्धन-पोय्सल देवर श्री
 हम्तदि धारेयेरेपिसि परमेश्वरवत्ति माडि बिर्डिसद ग्राम मय्से-नाड बीजे-
 बोललदर सामान्तर (आगेकी ६ पंक्तियोंमें सीमाश्रीका वर्णन है)
 दोरसमुद्रद पट्टण-न्वाभि वोण्डादि-सोर्टिय मग नाडवलसेट्टिय कण्णलु हिरि-
 यक्केरेयोलगण तावरेयकेरेयोलगाद नेलनं मारुगोण्डी-असहिगे कोट्ट श्री हिरियकेरेय
 केलगण तावरेयकेरेय बडगण-कोडिय विष्णुभट्टन तोट...सण गलेय...लु चतुरस्न
 १५ गलेय भूमिपं मारुगोण्डी-असदिगेबिट्ट ॥ द्वादशसोमपुरवाद होलेयब्बेगे-
 रेय हन्नेरुडुवृत्तियोलगोण्डु वृत्तियं गोग्गण-पण्डितर म...से गुलियण्णन
 कय्यलु मारुगोण्डी-असदिगे बिट्ट ॥ (बे ही परिचित श्लोक)

(प्रथम भाग नष्ट हो गया है)

[राजा एरंगके पुत्रने अपनी रानियोंका परित्याग करके, राज्य छोड़कर,
 और चेन्निरिके निकटके देशमें मरते वक्त देह त्याग करते हुए नरसिंहकी
 पत्नियोंके ऊपर अधिकार जमा लिया था, अङ्गरको नष्ट कर दिया था

और गंगाकी ओर मुड़कर उत्तरदेशके राजाओंका सत्यानाश किया । उत्तर के आक्रमणमें सफलता प्राप्त कर उसके हाथीने पाण्ड्य राजाकी सेनाको कुचल दिया था, भयङ्कर महान् युद्धोंमें चोल और गौलोंको हराया । कञ्ची-गौण्ड-विक्रम-गंगने पाण्ड्यका पीछा करके नोलम्बवाडिको अधिकृत करके उच्चैर्गिर दखल कर लिया । इसके बाद तेलुङ्ग (तैलंग) देशकी तरफ बढ़ा, और इन्द्र...को सारी सम्पत्ति सहित कैद कर लिया । इसके बाद भस्मको, जो सारे राष्ट्रका कण्ठ था, समूल नष्ट किया और बनवसे बारह हजारको अपने कदित (हिसाबकी किताब) में लिख लिया । क्षुणाधर्मने राजाविष्णुने (एरे-गंगके पुत्रने) प्रसिद्ध पानुङ्गल् ले लिया, किसुकुलपर राज्य करने वाले..... नाथको अपनी नजरसे ही मार डाला । जयकेसीका पीछा करके पलसिगे १२००० का तथा.....५०० पर अधिकार जमा लिया ।

इस महाद्वित्रिय विष्णुवर्द्धन देवके अनेक पद और उपाधियोंमें से कुछेक ये हैं:—चोलकुलप्रलय-चैरव, चेरस्तम्बेरमराजकण्ठीरव, पाण्ड्य कुलपयोधिबडवानल, पल्लवयशोवल्लीपल्लवदावानल, नरसिंहवर्म-सिंह-सरम, निश्चलप्रतापद्वीप-पतित-कलपालादि-नृपाल-शालभ । कञ्चीपर अधिकार करनेवाला (कञ्ची-गौण्ड), विक्रम-गंग वीर-विष्णुवर्द्धनदेव जिस समय इस तरह गंगवाडि ६६०००, नोणम्बवाडि ३०००० तथा बनवसे १२००० पर सुग्व व शान्तिसे राज्य कर रहा था:—

उसके पादमूलसे प्रभूत (उच्चर) तथा उसके कारुण्यरूपी अमृतप्रवाहसे परिवर्द्धित विष्णु-दण्डाधिप था । (उसकी प्रशंसा) विष्णु-दण्डाधिपका नाम इम्मडि-दण्डनायक बिट्टियण था । इस दण्डनायकने आषे महीने (१५ दिन) में ही दक्षिण विजय कर ली थी । विष्णुवर्द्धन-देवका यह दाहिना हाथ था । बहुत-सी उपाधियों और पदोंसे युक्त यह महाप्रधान, इम्मडि-दण्डनायक बिट्टियण 'सर्वाधिकारी' और सर्वजनोपकारी होता हुआ शान्तिसे ममय व्यतीत कर रहा था:—

इसके बाद पद्यमें विष्णु-दण्डाधिनायकके उन्हीं पराक्रमोंका वर्णन आता है जिनका वर्णन पहिले गद्यमें हो चुका है ।

विष्णु-दण्डाधिपकी भूत-कुल-परम्परा इस प्रकार थी:—सबसे पूर्वमें (आदि ब्रह्माके युगमें) काश्यप प्रजापति थे, जिनसे बहुत-से महान् पुरुष उत्पन्न हुए; उनके बाद एक उदयवित्त्व हुए, जिनकी पत्नीका नाम शान्तियक्के था। उनका पुत्र विष्णु-राज-दण्डाधीश था। उसकी पत्नी चन्दले थी, उनका पुत्र उदयवत्त था। उदयवत्तका छोटा भाई विष्णु हुआ, जो नये चन्द्रमाकी तरह आकार और यशमें बढ़ता ही गया।

इसके किशोरावस्था प्राप्त होने पर स्वयं काञ्चिगोण्ड विक्रमर्गग विष्णुवर्द्धन देवने, उसको अपने पुत्रके समान मानकर, बड़े उत्सवसे स्वयं ही उसका उपनयन संस्कार किया। सात या आठ वर्षकी उमरके बाद जब वह समस्त शास्त्र-विज्ञानमें पारंगत हो गया तब उसको अपने प्रधान मन्त्रीकी पुत्री ब्याह दी। और १० या ११ वर्षकी उम्रमें बुद्धिमें कुशाग्रकी तरह तीक्ष्ण होने और चार उपाधियों (राजभक्ति, निस्पृहता, संयम और धैर्य) में पूर्ण होने पर विष्णु-वर्द्धनदेवने दुर्गुने विश्वासके साथ उसे 'महा-प्रचण्ड-दण्डनाथ' का पद दिया। और उसे सर्वाधिकार दे देनेसे वह सर्वाधिकारी तथा समस्त जनोका उपकार करने की सामर्थ्य वाला हो गया।

पूर्ण यौवन प्राप्त होने पर समस्त सार्वजनिक कामोंके करनेसे अनुभवकी वृद्धि होनेपर महापवित्र स्थानोंमें दान देनेके बाद, उसने यादव राज्यकी राजधानी दोरसमुद्रमें यह विष्णुवर्द्धन जिनालय बनवाया।

इस महापुरुषके गुरुकी गुरु-परम्परा इस प्रकार थी:—वर्द्धमान स्वामीके बाद केवली और श्रुतिकेवलियोंके हो जानेके बाद, जिन शासनके प्रभावको सहस्र-गुणा बढ़ानेवाले समस्त भद्र स्वामी हुए। उनके बाद, उसी द्रमिल-संघके अग्रणी पात्रकेसरी-स्वामी हुए। तत्पश्चात् क्रमसे वक्रग्रीव-वज्रनन्दी गणाग्रणी, सुमतिभट्टारक, जिनसमयदीपक अकलङ्क-चन्द्रकीर्ति-भट्टारक-कर्मप्रकृति-पल्लवाधिपगुरु विमलचन्द्राचार्य-परिवादिमल्लदेव, कनकसेन-वादिराजदेव—श्रीविजयभट्टारक (बूतुग-पेम्माडिके गुरु-जयसिंहदेवके गुरु वादिराजेन्द्र—जो दर्शन शास्त्रके प्रकाण्ड विद्वान् थे) —यादवान्वय-चूड़ामणि एरेयङ्क-देवके गुरु अजितसेन-स्वामी (उनकी

मण्डला ७), इनके एक सतीर्थ्य कुमारसेन-सैद्धान्तिक हुए, जो अपने समयके तीर्थनाथ कहे जाते थे—उनके बाद अजितसेन स्वामीके ज्येष्ठ पुत्र मल्लिवेण-मलधारि हुए, जो कलियुगके गणधर माने जाते थे। तपश्चान् वादीमसिंह अकलङ्ककी गद्दी संभालने वाले मुनीन्द्रप्रवर श्रीपाल-योगीश्वर हुए, जिन्होंने सम्यग् ज्ञानका प्रचार कर अज्ञानके हटानेमें बड़ा काम किया। उन्होंने अनेक तर्कशास्त्रके ग्रन्थ बनाये थे।

इन जगद्गुरु श्रीपाल-त्रैविद्य-देवके पैरोंका प्रक्षालन करके,—इम्मडि-दण्ड-नाथक विट्ठियण्णे 'बसदि' की मरम्मत, भगवानकी पूजाके प्रबन्ध, तथा ऋषियोंके आहारदानके लिये, (उक्त मितिको) विष्णुवर्द्धन-पोसलदेवके हाथसे मण्डसे-नाड्में वाजजोलल्का गाँव प्राप्त किया और उसे परमेश्वरको दानमें दे दिया। इसी तरह दोरसमुद्र-पट्टण-स्वामी (नगरसेट) वाण्डाडि-सेट्टि के पुत्र नाडवल-सेट्टिसे खरीदी गयी (उक्त) दूसरी भूमि भी उक्त मंदिरको दानमें दे डाली। द्वादश सोमपुरके १२ हिंसांसेसे एक जो होलेयव्वेगंर था—वह भी दानमें दे दिया। (वे ही अन्तिम श्लोक)।]

[EC, V, Bbur tl., No. 17]*

३०५ क

अर्थूणाका शिलालेख

अर्थूणा (उच्छूणक)-संस्कृत ।

[विक्रम सं० ११६६, वैशाख सुदि ३]

१—४० ॥ ॐ नमो वीतरागाय ।

स जयतु जिनभानुर्भव्यराजीवराजी-

जनितवरविकाशो दत्तलोचप्रकाशः ।

परसमयतमोभिर्न स्थितं कपुरस्तात्

क्षणमपि चपलासदादिखद्यौतकैश्च ॥ ॥ छ ॥

२—आसीच्छीपरमारवंशजनितः श्रीमण्डलीकामिधः

कन्हस्य ध्वजिनीपतैर्निधनकुच्छीसिंधराजस्य च ।

जज्ञे कीर्तिलतालवालक इतश्चामुंडराजो नृपो

योऽर्वातप्रभुसाधनानि बहुशो हति स्म

३—देशे स्थलौ ॥ २ ॥ श्रीविजयराजनामा तस्य सुतो जयति मति (जगति)
विततयशाः । सुभगो जितारिखगो गुणरत्नपयोनिधिः शूरः ॥ ३ ॥ देशेऽस्य
पत्तनवरं तलपाटकाख्यं पण्याङ्गनाजनजिता—

४—मरसुंदरीकम् । अस्ति प्रशस्तसुरमन्दिरवैजयन्तीविस्ताररुद्धदिननाथकर-
प्रचारं ॥ ४ ॥

तस्मिन्नागारवंशशेखरमणिर्निःशेषशास्त्राम्बुधि-

जैनेन्द्रागमवासनारसमुधाविद्धास्थिमज्जाभवत् ।

५— श्रीमानंबरसंशकः कलिबहिर्भूतो मिषघ्ना (ग्ना) मणी-
गोर्हस्ये (स्थे)पि निकुञ्जिताक्षप्रसरो देशप्रतालकृतः ॥ ५ ॥ यस्याव
[श्य] क [क] र्मनिष्ठितमतेः श्रेष्ठा वनांते भवन्तेवासिवदाहितांज-
लिपुटा ।

६—श्रोसः (पः) कृतोपासनाः । यस्यानन्यसमानदर्शनगुणैरन्तश्चमत्कारिता शुश्रूषां
विदधे स्तेव सततं देवी च चक्रेश्वरी ॥ ६ ॥ पापाकस्तस्य सूनुः समजन
जनितानेकभव्यप्रमोदः प्रादुर्भू—

७—तत्प्रभूतप्रविमलाधिपणः पारदृशा श्रुतानां [।] सर्वायुर्वेदवेदा विदितसकल-
रुक्क्रान्तलोकानुकम्पो निर्नीताशेषदोषप्रकृतिरपगदस्तत्प्रतीकास्सारः ॥ ७ ॥
तस्य पुत्रास्त्रयोऽभूवन्भूरिशा-

८—स्त्रविशारदाः । आलोकः साहसाख्यश्च लल्लुकाख्यः परोनुजः ॥८॥ यस्त-
त्रायः सहजाविशदप्रज्ञया भासमानः स्वांतादर्शस्फुरितस्कलैतिह्यतत्त्वार्थसारः ।
संवेगादिस्फुटतरगुणव्य-

६—कृतम्यकप्रभावः तैस्तैदानप्रभृतिभिरपि स्वोपयोगी कृतश्रीः ॥ ६ ॥ आषा
[रो] यः स्वकुलसमितेः साधुवर्गस्य चाभूदग्रे शीलं सकलजनताह्लादिरूपं
च काये । पात्रीभूतः कृतियतिभृतीनां

१०—श्रुतानां श्रियां च सानन्दानां धुरमुदवहद्भोगिनां योगिनां च ॥ १० ॥ यो
मायुषाम्बय नभस्तलतिग्मभानोव्याख्यानरंजितसमस्तसभाजनस्य । श्री-
च्छत्रसेनसुगुरोश्चरणारविन्दसे—

११—वापरो भवदनन्यमनाः सदैव ॥ ११ ॥

तस्य प्रशस्तामलशीलवत्यां हेलाभिधायां वरधर्मपत्न्यां । त्रयो बभूवुस्तनया
नयाद्या विवेकवंतो भुवि रत्नभूताः ॥ १२ ॥ अभवदमल—

१२—बोधः प्राहुः कस्तत्र पूर्वः कृतगुरुजनभक्तिः स्तकुशाम्रीयबुद्धिः । बिनवचसि
यदीयप्रश्नजाले विशाले गणभृदपि विमुह्यत् कैव वार्ता परस्य ॥ १३ ॥

करणचरणरूपानेक—

१३—शास्त्रप्रवीणः परिहृतविषयाथो दानतीर्थप्र [वृत्तः] । ग (श) मनीर्यमित-
चित्तो जातवैराग्यभावः कलिकलिलविमुक्तोपासकीयप्र (त्र) ताक्यः ॥ १४ ॥
कनिष्ठस्तस्याभूद्वनविदितो भूषण इति श्रियः पात्रं—

१४—कातेः कुलएहमुमायाश्च वसतिः । सरस्वत्याः क्रीडागिरिमलबुद्धेरतिवनं क्षमा-
वत्याः कंदः प्रविततकृपायाश्च निलयः ॥ १५ ॥ स्मरः (रो) सौ रूपेण प्रबलसु
[भ] गत्वेन गणभृत् कुबेरः संप—(॥)

१५—त्या सम्पन्निकविवेकेन धिक्कणः । महोन्नत्या मेरुर्जलनिधिर्गणधेन मनसा विद-
ग्धत्वेनोच्चैर्य इह वरविद्याधर इव ॥ १६ ॥ जैनेन्द्रशासनसरोवरराजहंसो मौनी-
न्द्रपादकमलद्वय—

१६—चंचरीकः । निःशोशास्त्रनिवहोदक नाथनक्रः । सीमंतिनीनयनकैरवचार-
चन्द्रः ॥ १७ ॥ विदग्धजनवल्लभः सरससारशृंगारवानुदारचरितश्च यः सुभग-
सौम्यमूर्तिः सुधीः । प्रसाद—

१७—नपरा नमद्वरविलासिनीकुन्तलव्यपस्तपदपंकजद्वितयरेणुरत्युन्नतः ॥ १८ ॥
प्रथमधवलप्राये मेघे गतेऽपि दिवं पुनः । कुलरथमरो येनैकेनाप्यसंभ्रमसु-
दृष्टवः । गुरुतरविप-

१८—इगर्त्तग्रावग्रहाडुदनादिव (तारि च) स्थिरमतिमहास्थाम्ना नीतो विभूति-
गिरेः शिरः ॥ १८ ॥ द्वे भार्ये भूषणस्य स्तः लक्ष्मी सीसीती विश्रुते ।
पतिव्रतत्वसंयुक्ते चारित्रगुणभूषिते ॥ २० ॥ स सी-

१९—लिकायामुदपादि पुत्रान् सन्तानयोग्यान् गुरुदेवभक्तः । आलोकसाधारण-
शांतिमुख्यान् स्वबन्धुचित्ताब्जविकाशभानून् ॥ २१ ॥ आयुस्ततमर्हीन्द्रसार-
निहितस्तोकांभुवजश्चरं

२०—संनित्य द्विपकर्णचंचलतरां लक्ष्म्याश्च दृष्ट्वा स्थितिं । ज्ञात्वा शास्त्रमुनिश्चयात्
स्थिरतरे नूनं यशः श्रेयसी तेनाकारि जिनगृहं...भूमेरिदं भूषणम् ॥ २२ ॥
भूषणस्य क-

२१—निष्ठो यो लल्लाक इति विश्रुतः । देवपूजापरो नित्यं भ्रातुरादेशकृत्
सदा ॥ २३ ॥

ज्येष्ठो बाहुकनामा यः सीडकायामजीजनत्

शुभलक्षणसंयुक्तं पुत्रमम्बटसंशकम् ॥ २४ ॥

२२—वर्षसहस्रे याते षट्षष्ठ्युत्तरशतेन संयुक्ते विक्रमभानोः काले
स्थलावयमवति सति विजयरजे ॥ २५ ॥ विक्रम संवत् ११६६
वैशाख सुदि ३ सोमे वृषभनाथस्य प्रतिष्ठा ॥

२३—श्री वृषभनाथधाम्नः प्रतिष्ठितं भूषणेन विम्वमिदं । उच्छृण्वणकनगरेस्मि-
न्निह जगतौ वृषभनाथस्य ॥ २६ ॥ युगलं ॥०॥ तुर्यवृत्तात्समारम्य वृत्ता-
न्येतानि

२४—षोडश । आद्यवृत्तेन युक्तानि कृतवान् कटुको बुधः ॥ २५ ॥ भाइल्लो-
वंशेऽमृतजः श्रीसावडो द्विजः । तत्सूनोर्भादुकस्येयं निःशेषाय पद्मा
कृति ॥ २५ ॥ बालभान्वयकायस्थराजपालस्य

२५—सुनुना । सेधिविग्रहसंस्थेन लिखिता वासवेन वै ॥ २६ ॥ यावद्रावण-
रामयोः सुचरितं भूमौ जनैर्गायते [।] यावद्विष्णुपदीजलं प्रवहति व्योम्य-
स्ति यावच्छशी । ग्रह-

२६—द्रक्त्रविनिर्गतं श्रवणकैः याव [च्छू] तं श्रूयते तावत्कीर्तिरियं चिराय जयतां-
स्तंस्तूयमाना जनैः ॥ ३० ॥ उत्कीर्णा विशानिकसुमाकेन ॥ ० ॥ मंगलं
महाश्रीः ॥ ० ॥

शिलालेखका परिचय'

[इंगूरपुरके अन्तर्गत अर्थूणा (उच्छूणक) नामका एक स्थान है, जो एक समय विशाल नगर था; और परमारवंशी राजाओंकी राजधानी रह चुका है । एक समय यह स्थान एक छोटे-से गाँवके रूपमें आबाद है और इसके पास ही सैकड़ों मन्दिरों तथा मकानों आदिके खण्डहर भग्नावशेषके रूपमें पाये जाते हैं । यह शिलालेख यहींसे मिला है जो आजकल अजमेरके म्यूजियममें मौजूद है ।

उक्त शिलालेख वैशाख सुदि ३ विक्रम सं० ११६६ का लिखा हुआ है और उस वक्क लिखा गया है जबकि परमारवंशी मंडलीक (मदनदेव) नामके राजाका पौत्र और चामुण्डराजका पुत्र 'विजयराज' स्थलि देशमें राज्य करता था । उच्छूणक नगर में, उस समय 'भूषण' नामके एक नागरवंशी जैनने श्री वृषभदेवका ममोहर जितभवन बनवाकर उसमें वृषभनाथ भगवानकी प्रतिमाको स्थापित किया था, उसीके सम्बन्धका यह शिलालेख है । इसमें भूषणके कुटुम्बका परिचय देनेके सिवाय, माथुरान्वयी श्री छत्रसेन नामके एक आचार्य

१. पं० शुगल किशोर मुख्तार ; अर्थूणाका शिलालेख, जैनहितैषी, भाग १९, अंक ८, पृ० ३३२ से उद्धृत ।

का भी उल्लेख किया है, जो अपने व्याख्यानोंद्वारा समस्त सभाजनोंको सन्तुष्ट किया करते थे और भूषणका पिता 'आलोक' जिनका परमभक्त था। माथुरसंघी इन आचार्यका, अभी तक, कोई पता नहीं था। माथुरान्वयसे सम्बन्ध रखने वाली काष्ठासंघकी उपलब्ध गुर्बावलीमें भी छत्रसेन गुरुका कोई उल्लेख नहीं है^१। इस शिलालेखसे माथुरसंघके एक आचार्यका नया नाम मालूम हुआ है।

३०६

अजमेर-प्राकृत

[सं० १११५ = ११३८ ई०]

संवत् ११६५ आगणमुदि ३ आचार्य गदानन्दीकृते पण्डितगुणचन्द्रेण शान्तिनाम प्रतिमा कारिता ।

अर्थ स्पष्ट है ।

[J. A.S.B., VII, p. 52, no. 6]

३०७

सिन्दिगेरे;—संस्कृत तथा कन्नड

[शक १०६० = ११३८ ई०]

[सिन्दिगेरे में, ब्रह्मेश्वर बसदिके दालानके स्तम्भ पर]

(पूर्वमुख)

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोषलाच्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराजं परमेश्वरं परम-भट्टारकं सत्याश्रयकुलतिलकं चालुक्याभरणं श्रीमत्-त्रिभुवनमल्ल-देवर विजय-

१. देखो जैनसिद्धान्त भास्कर, किरण ४, पृ० १०३

राज्यमुत्तरेत्तरामिद्विप्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्क-तारं सलुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि सम-
 किगत-पञ्च-महाशब्द महा-मण्डलेश्वरं द्वारावतीपुर-वराधेश्वरं यादवकुला-
 म्बरधुमणि सभ्यक्त्व-चूडामणि मलेपरोळु गण्डाद्यनेक-नामावली-समलंकृतारम्प श्रीमत्
 विमुचनमल्ल तळकाडु-कोत्तुनङ्गलि-गङ्गवाडि-नोळम्बवाडि-वनवसेहानु-
 ङ्गलु-हलसिगे-गोण्ड भुजबल वीरगङ्ग होयसळ देवर श्रीमद्-राजधानि-दोर-
 समुद्रद बीडिनलु सुख-संकण-विनोददि पृथ्वी-राज्यं गेप्पुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजी-
 विगळु श्रीमन्महाप्रधानं हिरिय-मरियाने-दण्डनायकर मगं दाकरस-दण्ड-
 नायकर पुत्ररुं द्रोह-घरह-गङ्गपटय-दण्डनायकर बाचरस-दण्डनायकर
 सोवरस-दण्डनायकरळियन्दिस्मप्प श्रीमन्महा-प्रधानं हिरिय-भण्डारि-मरि-
 याने-दण्डनायकरं श्रीमन्महाप्रधानं दण्डनायकं भरतरुप्पणलु शक वर्ष
 १०६० नेय पिङ्गळ-संवत्सरद पुण्य-सु १० आदिवारदुस्तरायण संक्रा-
 न्तियलु तुलापुरुष महादानदलु तम्म नेलेपूरु सिन्दङ्गेरेय वसदिगे श्री-
 विष्णुवर्द्धन होयसल-देवर कट्यलु धारा-पूर्वकं हडेदु विट्ट सवगोन-हल्लिय
 सीमा-सम्बन्धमेत्तेन्दडे (आगेकी २० पंक्तियोंमें सीमाओंकी चर्चा है तथा हमेशा
 का अन्तिम श्लोक)

(दक्षिण मुख)

जय-जया-शरणं रण-क्षिति-हत-क्षत्रं हत-क्षत्र- निर्- ।
 हय-निर्हीरित-देह-लोहित-पयश-शातासि शातासि-दुर्- ।
 जय-धारा-चक्रितारि-रत्न-भुजा-दण्डं भुजा-दण्ड-को- ।
 टि-युवद्-वीर-वधू-प्रमोदि भरत-श्रीमच्चमूवल्लभं ॥
 नय-युक्त-क्रम-विक्रमं क्रम-नमद्-भू-मण्डलं मण्डल- ।
 प्रिय-वृत्तं प्रिय-वृत्त-संगत-गुण-ग्रामं गुण-ग्रामणी- ।
 नयनानन्दकरं करार्पित-धनु-ज्या-राव-दूरीकृता- ।
 रि-यशो-राजि जितोद्धताजि भरत-श्रीमच्चमूवल्लभम् ॥
 अवनी-नूत-यशं यशो-धवलताशा-मण्डलं मण्डला- ।
 अ-विलुनारि-बलं बल-प्रभु-नमस्चञ्चिङ्गुला-शेखरी- ।

भवदात्माडि घ्न-नरवोत्करं कर-गतारि-श्री-विलासं विला- ।
 सवती-मानित-मीनकेतु भरत-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥
 स्मर-लीलं स्मर-लील-लोल-ललित-भ्रू-भ्रू-धनुर्विभ्रमो- ।
 लकर-लीलायत-दृष्टि दृष्ट-विलसत्-पुष्पेषु पुष्पेषु-बर्- ।
 ज्जरितोन्मत्त-विलासिनी-जन-मनो-मानं मनो-मान-खे- ।
 द-रतोत्कण्ठ-वधू-कदम्बि भरत-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥
 बित-मन्त्रं बित-मन्त्र-नूत-महिम-स्तोमं हिम-स्तोम-शु- ।
 भ्रतमात्मीय-यशं यशो-लहरिका-मज्जगत-त्तर्पि तर- ।
 पित-लोक-स्तुत-कीर्त्ति कीर्त्तित-भुज-स्तम्भं भुज-स्तम्भ-सं- ।
 भृत-विक्रान्त-वधू-करेण भरत-श्री मच्चमू-वल्लभम् ॥
 बित-विद्विष्ट-चमू-चमूप-विलसन्मन्त्रं लसन्मन्त्र-सा- ।
 धित-दुर्वृत्त महो-महोज्जित-मही-चक्रं मही-चक्र-सं- ।
 स्तुत-दोर्मर्ण्डल मण्डलाग्र-दमितानम्रारि नम्रारि-कीर्- ।
 तित-दिग्-वर्त्तित-जैत्र-लक्ष्मि भरत-श्रीमच्चमूवल्लभम् ॥
 प्रतिपक्ष-क्षिति-केतु केतु-जनित-द्विड्-भीति भीति-द्रुता- ।
 श्रित-रक्षा-निष्ठयं लयानल-लुठत्-तापाग्नि-कोपाग्नि-शो- ।
 पित-युद्धोद्धत-जीवनं वन-शिखि-प्रोद्यत्प्रतापं प्रता- ।
 प-तत-श्री-परिलब्ध-लक्ष्मि भरत-श्रीमच्चमूवल्लभम् ॥
 करवाळाहत-विद्विषं द्विषदसृक्-पूर-प्लुतेभं प्लुते- ।
 भं रथालम्बित-खड्गि खड्गिग-निहत-श्रौघं हताश्रौघ-बर्- ।
 बरितान्त्रौघ-विकर्षि-फेरव-रव-व्याजृम्भितं जृम्भितो- ।
 दुर-दोर्दण्ड-भवजिताभि भरत-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥
 ललनानीकमनो-मनोभव भव-स्फाराळिकाख्यानळो- ।
 ज्वळ-तेजो-निब-बाहु बाहु-निहत-द्विड् (द्वि) द्विट्-चिचरो-देवकीर्- ।
 तित-लता-वेल्लित-वार्द्धि वार्द्धि-बलय-क्षोणि-तल्ल-स्तुत्य निन्-
 न लसद्-वक्षदोळिकके लक्ष्मि भरत-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥

३१०-३११

अवधबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १०६१ (?) = ११३३ ई०]

३१२

बादामी—कन्नड।

[शक १०६१ (?) = ११३३ ई०]

नमः श्री-वासुदेवाय भोगिने योगमूर्तये ।

हरेश्वराय सत्याय नित्याय परमात्मने ॥

स्वस्ति समस्त भुवनाश्रय श्रीपृथ्वीवल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक
 [सत्या] श्रय-कुळ-तिळक चाळुक्याभरण [श्री] मनु-प्रतापचक्रवर्त्ति **जयदेकमल्लदेव**
 [२] विजयराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिप्रवर्द्धमानमा-[चं]द्रार्कतारं वरं सलुत्तमिरे [॥] [त]
 त्यादप[द्यो]पजीवि [१] श्रीवल्लभममळं भू [दे]वाङ्घ्रिसरोजभृङ्गनङ्गजकल्पं कोविद-शुक्-
 सहकारं देवं श्री**कालिदास**दण्डाधी[श]म् ॥ समधिगतपं[च]महाशुन्द महासा[म]-
 न्ता[धि]पति महाप्रचण्डदण्डनायक समस्ताधिकारिं मनेवेगडे काविम[र]स.....ने
 (१) गल्द (१) **कालिदास**चमूनाथनाद.....सुबनैकनिळयं
 श्री-ना.....धीशं ॥ मत्तन्ते कालिमरसजुत्तम^१.....**महादेव**-
 चमूपोत्तमनुदग्रमहिमं मत्तेभवलं विनीतनाततसौ(शौ)र्य्य ॥ इन्तेनित्तिद **महादेव**-
 दण्डनायकनुं **पासदेव**दण्डनायकनुं चाळुक्य-जगदेक मल्लवरिषद एरडे(ड)नेय
सिद्धार्थि-संवत्सरद कार्तिक सु(शु)ख त्रयोदसि (शि) सोमवारदन्दु
 श्रीमद्योगिजनहृदयानन्दनेनिप परमानन्ददेवरु माडिसि(द) योगेश्वरदेवगो बादामिय
 सिद्धापदोळ्गे हतु (तु) गद्याण पोन्नु बरिसवरिसक्के कुडुहदेन्दाचन्द्रार्कस्थापियागे
 (गि) पेमाडे-**रामदेव**-रसन क्लिपदि बिट्टरु ॥ [क्रम] दिन्दित्तिद [नेगदे काव
 पुरुषङ्गायुं [जय] श्रीयु [मक्के] यिदं कायदे [कायव पापिगे] कुरुक्षेत्रं गळोळु वार

१. सम्भवतः यहाँ पाठ 'उत्तमसुपुत्र भोगेद' है ।

[णासियोळेर-कोटि मुनीन्द्रं कविले] यं वेदाङ्गरं कोन्दुदेन्दवशं सागु] मि(दें)
[दुसारिदपुदी शैलान्तरं धानियोळु ॥]

यह लेख बताता है कि किस तरह, जगदेकमल्लके राज्यके द्वितीय वर्ष सिद्धार्थि संवत्सरमें उसके दो अधीनस्थ दण्डनायक **महादेव** और **पालदेव** ने रामदेव नामके किसी सरदारकी प्रार्थना करने पर मन्दिरको वार्षिक दानके रूपमें १० गद्याण 'सिद्धाय' नामके करकी आयसे दिये ।

चालुक्य वंशावलीमें दो जगदेकमल्ल आते हैं : एक तो **जयसिंह द्वितीय** जिसका काल, सर डब्ल्यू ईलियट (Sir W. Elliot) के मतके अनुसार, **शक ६४० से ६६२ (?)** है,—और दूसरा **सोमेश्वर तृतीय का ज्येष्ठ पुत्र एवं उत्तराधिकारी**, जिसकी सिर्फ उपाधि, नाम नहीं, शिलालेखों में आता है और जिसका समय, उसीके अनुसार **शक १०६० से १०७२** है ।

इस प्रकार दोनोंके राज्यके प्रारम्भका अन्तराल १२० (१०६०-६४०) वर्ष आता है । यह काल २ युगके बराबर होता है । इसके संवत्सरका नाम तथा राज्यका वर्ष अभी भी लेखको सन्देहापन्न बनाये रखते हैं । लेकिन ईलियटके मैनुस्क्रिप्ट कलेक्शन (**Elliot Ms. Collection**) से जे. एफ. फ्लीटको इस बातका पता चला कि जयसिंह द्वितीयने 'श्रीमत्प्रतापचक्रवर्ति' यह पदवी कभी धारण नहीं की थी, और उधर यह पदवी सोमेश्वर द्वितीयके उत्तराधिकारीकी उपाधियों में हमेशा आती है । अतएव यह लेख द्वितीय जगदेकमल्लके समयका है, और इसकी तिथि **शक १०६१ (११३६-४० ई०)** है, जो कि '**सिद्धार्थ संवत्सर** था ।]

३१३

बुद्धि—संस्कृत तथा कन्नड ।

वर्षं कालयुक्त [११३६ ई० (ल. राइस) ।]

[बुद्धिमें, बन-शङ्करी मन्दिरके पूर्वकी ओरके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

भद्रं समन्तभद्रस्य पूज्यपादस्य सन्मते ।
 अकलङ्कगुरोर्भूयात् शासनायाधनाशिने ॥
 धुरदोळ् चाळुक्य-चक्रेश्वरमधिक-बळं तैलपं सत्य-रत्ना- ।
 करना-सत्याश्रयं विक्रम-भुज-बलदिं विक्रमादित्य भूपम् ।
 वर-तेजं अप्यगं भूतल-नुत-जयसिंह मनोजात-रूपम् ।
 धरेपोळ् त्रैलोक्यमहं निरुपमनेसेटं सोमनुर्वी-ललामम् ॥
 त्रिभुवन-जन-नुतनेसेदम् ।
 त्रिभुवनमहं विरोधि-बळ-द्वत-सेल्लम् ।
 विमवद-भूलोकमहं ।
 विभु सले जगदेकमहं नाळदं धरेयन् ॥
 कुन्तल-विषयकधिपति ।
 कुन्तल-चक्रेशनल्लि बनघसे नागेळ् ।
 कन्तु-श्री-निळयं सले ।
 भ्रान्तेम् जिड्डुल्लिगेर्याल्लियुदरेयेसेगुम् ॥
 बेळे दिर्हा-गन्ध-शाळी-वन-परिवृतदिम् तेङ्गु-पङ्केच-पण्डङ्-
 गळि (नो)प्यं पेत्तु तोर्प्पा-वकुल-रिळकदि चम्पकाशोक-जम्बू- ।
 कुळदि अम्बीर-पूगाद्रुम-कुरवकदि नागवल्ली-तटाकङ्- ।
 गळिनादं हर्म्यदिन्दुदरे बुध-जन-सम्प्रीतियं माडुतिकुर्म् ॥
 धरणीशं गङ्ग-वंशं जन-नुतनिरिवा-चट्टिगं वैरि-भूपा- ।
 लरुमं बेङ्कोण्ड-गण्डं सोगयिसे हरि-त्रा-कञ्चिगंधाळियिट्टम् ।
 मरेयं तान्...नाडोळ्गण हणवं कोण्डना-मारसिगम् ।
 वर-तेजं कीर्त्ति-राजं रण-मुख-रसिकं मारसिगं नृपेन्द्रम् ॥
 गङ्ग-कुळ-कमळ-दिनकरन् ।
 अङ्गज-सन्निभमनून-दाम-विनोदम् ।
 भङ्गिसिदं वैरिगळम् ।
 तुङ्ग-यशं नेगळ्दनोप्पेयेकल-भूपम् ।

वृत्त ॥ परमात्थं वीर-तीर्थं पर-हित-चरितार्थं सदा-भाक्वितार्थम् ।
 तरुणी-सम्मोहनार्थं मन्त्रसिद्ध-बनितारूप-संशुद्धितार्थम् ।
 वर-शिष्टानीककर्थं सले कुडे पडेगुं लोक-संरक्षणार्थम् ।
 पुरुषार्थं स्वार्थमेन्देककल-नरपति भू-लोककन्ति...तिमकुंम् ॥
 बलवद्विष्ट-भूपालरनवय[व]दिं कादि बेङ्कोण्ड-मण्डम् ।
 दलबेत्तं बोडे गण्डं विरुद-भट्टर बेन्ति पोपल्लि गण्डम् ।
 कळनं पेल्लदे गण्डं रिपु-मदहरणं गङ्ग-मार्त्तण्ड-देवम् ।
 तळेदं भू-कान्तेयं येककल-नृप-तिलकं चारु-दोर-दण्डदिन्दम् ॥
 कूरारातीभ-कुम्भ-स्थळ-विदलन-कण्ठीरवं विश्व-विद्या ।
 धरं श्री-भारती-मण्डन-कुच-मणि-हारं मनोजात-रूपा- ।
 कारं गम्भीर-नीराकारनमल-गुणं सत्य-भाषा-विभूयम् ।
 तारा-शुभ्राभ्र-गङ्गा-शशि-विशद-यश-ङ्गेकलङ्कोष्पातकुंम् ॥
 अङ्ग-कलिङ्ग-वङ्ग-कुरु-जाङ्गळ-कौराळ-मध्यदेश-भट्ट- ।
 रङ्ग-तुरुष्क-गौड-मगधान्ध्रमवन्ति वराट-चोळ-दे- ।
 शङ्गळ पण्डितर् ककविगमुत्तम-याचकगेट्टे कोट्टु-कर्- ।
 णङ्गे समानमागे सलेयेककलनित्तपनोप्ये वित्तमम् ॥
 अमर्दिन बरि-वोनलिन्दम् । कमनीयं कल्य-वल्लि पुट्टु-व तेरदिम् ।
 प्रमदा-रत्नं ज्ञानियिसल्ल अमळाङ्गने सुगियञ्जरसि धारिणियोल् ॥
 परमेष्ठि-स्वामि देव्यं गुरु तनगोसवो-भाघणन्दि-वतीन्द्रम् ।
 वर-भय्यर्-वन्धु-वर्मां निरुपम-मरेयं एरिंदा-मारसिङ्गम् ।
 नरपाळमण्णना-सुगियञ्जरसि यताशर्मा कोट्टु-ब-दानम् ।
 धरेगाप्पम्बेत्तुदा-पञ्चवसदि जसवं बीरगुं माटादन्दम् ॥
 वीर-जिनेन्द्र-पाद-सरसी [६] ह-राजित-राजहंसयम् ।
 चारु-चरित्रेयं गुण-पवित्रेयनूज्जित-दान-शीलेयम् ।
 भारति-वर्णपूरे सुनि-राज-पयो [६] ह-भृङ्गेयं गुणा- ।
 धारद सुगियञ्जरसियं धरे बणिमुत्तिककुं मागळुम् ॥

सखणन-विठिलोळे विट्ठळ् । भुवन-स्तुते मत्तरोप्ये सले पन्नेरडम् ।
 मव-हर-पञ्चवसदिगा- । प्रवरान्विते **सुगियब्बरसि** धारिणियोल् ॥
 कतिपय-कालान्तरितं । हितवेनिपा-पूर्व-वृत्ति तळयेयलु पडेगुम् ।
 सततं जिन-पूजोत्सव- । रतेयप्पा-**कनकियब्बरसि**यिं घरेयोळ् ॥
 जिन-पूजेगे जिन-महिमेगे । जिन-राजन मजनक्के जिन-भवनक्कम् ।
 जिन-मुनिगेसवी-दानमन् । अनवरतं माडुतक्कुं **कनकियब्बरसि** ॥
 जिन-गृहमिल्लदल्लि जिन-मन्दिरमं जिन-गेहमागियुम् ।
 जिन-मुनिगळ्गे दान-निचयं दोरेकोळ्द थाविनल्लिया- ।
 मुनि-जनगित्तु कीर्त्ति-लते पत्तजिसुत्तिरे लोकदल्लियन्त् ।
 अनुपममागला- **कनकियब्बरसि**योप्पुतविककुं धात्रियोळ् ॥
 सुर-कुञ्जमनिळिसि **शक्रन** । सुर्गभयनिम्नेबुदेन्दु चिन्तामणियम् ।
 परिहरिसि कुडले वल्लळे । परमार्थं **चट्टियब्बरसि** धारिणियोळ् ॥
 जनकनु **मारसिन्न**-नृपनग्रजनेकल भूप वल्लभम् ।
 दिनकर-तेजनोप्ये **दशवर्म्म** नृ-**क्षेरेयन्न**नग्र-नन्- ।
 दनननुजात **केशव**-नृपाळ चतुर्विध-दानदिन्द मान्- ।
 तनदोळे **चट्टियब्बरसि**यं बुध-मण्डलि मेच्चि बणिणकुम् ॥
 परमाराध्यं जिनेन्द्रं गुरु ऋषि-निवहं बोप्प-दण्डेश मावम् ।
 निरुतं **बोप्पवेयन्ता**-जनति जनकना-**काटि-सेट्टि** प्रमोदम्- ।
 वेरशिर्द्दी-**शान्तियक्कं** करवेसदिरेला-पत्ति सम्यक्व-रत्ता- ।
 करनप्पी-**केति-सेट्टु**दरेय बसदियं माडिदं पुण्य-पुडुजम् ॥
 विमळ-यशो-विताननकळक्कनुपार्जित **जैन-धर्म्मना**- ।
 गमिक-जन प्रपूर्ण-विकचाब्ब- सरोवर-राब्बंसनेन्दु ।
 अमम धरित्रि बणिणपुदु भव्य-शिखामणि भव्य-बन्धुवम् ।
 सुमति-निवासनं नेगळ्द केतननुत्तम-दान-सत्त्वनम् ॥
 परम-**श्री-मूलासंघं** सौगयिसुत्तिरे श्री-**कोण्डकुन्दान्वयम्** ।
 इरे श्री-**क्राणूर्गर्गणं** गच्छमेसदिरे सन्दा-**तिन्निणीका**ख्यमोघं ।

बेरसा-श्री-रामणन्दि-व्रति-पतियेसेदं पञ्चणन्दि-व्रतीन्द्रम् ।
 वर-शिष्यङ्गम-शिष्यं नेगळ्दनु मुनिचन्द्राख्य-सिद्धान्त-देवम् ॥
 अन्तवर शिष्यनेसेगुं । भ्रान्तेम् श्री-भानुकीर्ति-सिद्धान्तेशम् ।
 क (श) त्रु-मद-दर्प-दळनम् । सन्तत-बुध-कळर-मुबनेगळ्दं धरेयोळ् ॥
 कनक-जिनालयवेसेदिरल् । अनुपमनेकल-नृपाळ सखणन-विल्लिखोळ् ।
 जन-नुतमेने भानुकीर्त्ती- । मुनिगोप्पिरे बिट्ट मत्तरं पन्नेरडम् ॥
 नेगळे चाळुक्य-चक्रि-वर्षं जगदेक-महीश सासिरम् ।

मिगिलरुवत्तु-कालयुत-माघ...दा दशमी वृहस्पती ।

सोगयिसे वार पन्नेरडु-मत्तरना कोडगेम्महादमम् ।

तगरदे भानुकीर्त्ति-मुनीगेकल बिट्ट शशाङ्कनुळ्ळनम् ॥

कोटि-पयं कविलेयनेळ् - । कोटि-तपोधनर वेद-विदरं पन्निर ।

कोटियने कोटि-तीर्थदे । कोटि-महा-दिनदोळ्ळिदनिन्तिदनळ्ळिदम् ॥

(हमेशाका अन्तिम श्लोक) श्री-बन्धुणिकेय तीर्थद प्रतिबद्ध...॥

[बिन-शासनकी प्रशंसा । पृथ्वीका शासन करनेवाले क्रमशः ये राजा हुएः—]

- १ चालुक्य-चक्रेश्वर तैलप; २ सत्याश्रय; ३ विक्रमादित्य; ४ अय्यण;
- ५ जयसिंह; ६ त्रैलोक्यमल्ल; ७ सोम; ८ त्रिभुवनमल्ल; ९ भूलोकमल्ल;
- १० जगदेकमल्ल ।

कुन्तल-देशमें, बनबसे-नाहमें, जिङ्गु, लिगेमें उद्धरेके वृद्धों और बगीचोंका वर्णन ।

गंग-वंशके राजा मारसिंगका वर्णन । राजा एकलकी प्रशंसा । अज्ञादि नानादेशोंके विद्वान् और कवियोंके लिए वह कर्णके समान दानी था ।

सुभियन्बरसिंकी प्रशंसा । उसके गुरु माघनन्दि-व्रतीन्द्र थे, राजा मारसिंग उसका बड़ा भाई था । सुभियन्बरसिने यतीशोंको आहारदान तथा बढिया पञ्च-बसदि दी थी । बसदि के लिए सवणविळिमें भूमिदान किया था ।

कनकियन्बरसिने इस पूँजीमें और भी वृद्धि की । वहाँ बिन-मन्दिर नहीं थे

वहाँ बिन-मन्दिर बनवाये, और जहाँ बिन-मुनियोंको आमदनीका क्षेत्र नहीं था वहाँ उसने दान दिये ।

चट्टियम्बरसिं कामधेनु और चिन्तामणिके समान थी । उसके पिता राजा मारसिंग थे, ज्येष्ठ भाई राजा एक्कल, पति राजा दशवर्मा था, जिसका एरेयङ्ग ज्येष्ठ पुत्र था, और उसका छोटा भाई राजा केशव था ।

शान्तियक्षकेके परमदेव बिनेन्द्र थे, गुरु श्रृषि-गण थे, बोण्य-वृण्डेश उसका चाचा, बोणले उसकी मां, कोटि-सेट्टि उसके पिता थे,—उसके पति केति-सेट्टिने उह (४) रेकी बसदिका निर्माण कराया ।

मूलसंघ, कोण्डकुन्दान्वय, काणूर-गण और तिम्रिणीक-गच्छमें रामणन्दि-व्रति-पति—पद्मणंदि—मुनिचन्द्र सिद्धान्त-देव—भानुकीर्ति-सिद्धान्तेश क्रमशः शिष्य-परम्परामें हुए । अन्तिम मुनिको राजा एक्कलने कनक-जिनालयके साथ-साथ चालुक्य-चक्रो जगदेव राजाके राज्यमें (उक्त मितिको) भूमिदान दिया]

[Ec, VIII, Sorab Tl. No. 233]

३१४

रायबाग;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[१]

[“रायबाग गाँवमें नरसिंगशेट्टिके जैन मन्दिरके पाषाणखण्ड पर ।”]

यह एक चालुक्य शिलालेख है । इसमें दासिमरसु पेनानायकके दानका वर्णन है । यह दान सिद्धार्थी संवत्सर के आषाढ़ महीनेकी कृष्णपक्षकी त्रयोदशी, सोमवारको, जबकि सूर्य दक्षिणायन हो रहा था, किया गया था । वही संवत्सर जगदेकमल्लदेव राजाके राज्यका दूसरा वर्ष था । यह दान हबिनबाग के नरसिंगशेट्टिके जैन मन्दिरके लिये किया गया था । सर डब्ल्यू. ईलियटकी सूची में दो चालुक्य राजाओंकी ‘जगदेकमल्ल’ उपाधि है,—एक तो जयसिंह द्वितीय की, जिसका क़रीब-क़रीब काल शक ६४० से शक ६६२ तक दिया हुआ है,

और दूसरे का नाम तो नहीं दिया हुआ है, परन्तु इतना मालूम है कि वह सोमेश्वर तृतीयका उत्तराधिकारी था। शक वर्ष ६४२, उन्नी तरह शक वर्ष १०६२ सिद्धार्थी संवत्सर था, और तदनुसार वर्तमान लेखका काल सन्देहास्पद है, लेकिन सम्भवतः शक १०६२ (११४०-१ ई०) यथार्थकाल है।

[JB, X, P. 183-184, N. o. 10. A.]

३१५

मौंट शिवगङ्गा;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[बिना काल-निर्देशका [लगभग ११४० ई० (ल. राइस) ।]

[गङ्गाधरेश्वर मन्दिरके मण्डपके खम्भे पर]

एतन्मित्र-कुलाम्भोज-भास्करस्य यशस् स्थिरम् ।

विष्णोरडल-वंश-श्री **नायक**स्यैव शासनम् ॥

ललितेन्दु-द्युतिर्यं तेरलिम भवनं माडिट्टो संकरा- ।

चल्लम मेळ् कडिदिट्टो शिव-एहं माडिट्टो पुण्य-सङ्- ।

कुलमं येळिमेनह्के कूतु **शिवगङ्गे शाद्रि**योळ् माडिदम् ।

कुल-नामं गडिमेन्दु देव-एहमं **सामन्त-कञ्जासनम्** ॥

अदळ-कुल-रत्न-भूषणन् । अदळ-कुलाम्भोज-भानुवदळे श्वरमेन्दु ।

उदुभव-वर्गितं माडिद- । नुदुव-यशं **बिट्टि-देवनी**-शिवएहमम् ॥

पूर्वलि पूजे निवेयं । दाविगे जळ गन्ध धूपवत्तते पात्रम् ।

पाकुळमेनिपुवनारैद् । आवागमवं कपके बर्प धनमं कोट्टम् ॥

अन्नुमल्लदेयुं निज-जनकन पेशरिं ब्रह्मेश्वर-देवालयं वूरं ब्रह्मसमुद्रमं नेगह्द-
मतम् ।

अदळ-जिनालवर्कळळे श्वर-देवएहळ्ळितिवेन्दु ।

अदळसमुद्रमेन्देसेव विष्णुसमुद्रमिवैन्दु धर्मदिम् ।

पुदिदवनन्दु माडिसिद कट्टिसिद केपेयं निजान्वयक्क ।

उट्टुभवमाणलेन्दुल्ल-वंश-शिखामणि [वि] ण्णुवर्द्धनम् ॥

अस्ति बल्लिक तम्मवगे परोक्ष-विनयमाणे बोचसमुदमेव्व केपेयं कट्टिसि

शिव-महिमेयेडेगे केशव- । भवनोद्धरणक्के... ऐ-कोडिगेधम्म- ।

प्रवरमो वेडितनितर- । त्थमनिवनीव विट्ठि-देवनदटर देवम् ॥

स्वस्ति श्री विष्णु-सामन्त स्थिरं जीव

[इस लेखमें बताया गया है कि विट्ठि-देव, अपरनाम विष्णुवर्द्धन, शिवग-
जेशाद्रि (Mount Shivaganga) में शिव-मन्दिर बनवाया था । विट्ठि-देव
अदल्ल-कुलका था । उसने, इसके सिवाय, अदल्ल-बिनालाय, अदल्लेश्वर-देवगृह भी
बनवाये थे ।]

[EC. IX, Nelamangala U., No. 84]

३१६

मुगुल्लर—कव्व ।

[विना काष्ठ-निर्देशका, ११४० ई० (ल. राहस).]

[बस्तिके अन्दर पड़ी हुई मूर्ति के पीठस्थलपर]

श्रीपाल-त्रैविद्य-देवर गुडुगळु मेळसिन मारि-सेट्टियरि नेगर्त्तिय गोवन-
सेट्टियर सोगे-नाड मुगुल्लियलु बसदियं माडिसिदरु... माडिसि श्री-पार्श्व-देवर
प्रतिष्ठेयं माडिसि आ-ब्रसदियुमं आ-देवर भूमियुमं तम्म गुरुगळ्ळिगे धारा-पूर्वकं
माडि कोट्टरु ॥

[श्रीपाल-त्रैविद्य-देवके गृहस्थ-शिष्य मारि-सेट्टि और गोवन-सेट्टिने सीगे-नाडमें
मुगुल्लिमें एक 'बसदि' बनवायी और उसमें पार्श्व-देवकी स्थापनाकर, बसदि और
उसकी काह (बमीन) देवताके लिये अपने गुरुको अर्पित करदी ।]

[E, C, V. Hassan U. 129.]

३१७

—अञ्जनेरी (नासिक के पास);—संस्कृत

—[शक १०६३ = ११४२ ई०]

यादववंश शिलालेख

- (१) ओं पंच परमेष्ठिन्यो नमः । स्वस्ति श्री शक संवत् १०६३ दुंदुभिसंवत्सरां-
तर्गांत ज्येष्ठ सुदि पंचदश्यां सोमे अनु-
- (२) राघानक्षत्रे सिद्धयोगे अस्यां संवत्सरमासपक्षदिवसपूर्वायां तिथौ समधिगता-
शेषपंचमहाशब्दद्वारावतीपुरपरमे-
- (३) श्वर विष्णुवंशोद्भवयादवकुलकमलकलिकाविकासभास्करयादवनारायण
सामंतपितामह सामंतजमरा इत्यादिममस्त-
- (४) निजराजावलीविराजितमहासामंत श्रीसेउणदेवविजयराज्ये तत्पाद-प्रासादा-
वाप्तमहामहत्तमः प्रतापसंतापितवैरिवर्माः
- (५) संग्रामशौंड [ः] शूरवैरिघटाविमर्दनकण्ठीरवः अनवरतदानार्द्राङ्कितदक्षिणकर-
प्रकोष्ठः निशितनिस्तृंश (निखिंश) विदारितारा-
- (६) तिकरिकुंभस्थलगलितमुक्ताफलमंडितरणांमाण (रणांगण) मनस्विनीमानो-
न्मूलनकंदर्पः दर्पाभर्मरं (र) हितः सौ (शौ) योदार्थदयादाक्षि-
- (७) प्यधर्मगुणसत्योत्साह मंत्रशीलसंपन्न [ः] प्रजापालनानंदशत्रुपराजयानंतोषित-
कीर्तिप्लावितदिग्बलयः^१ अनेकराजनीतिशा-

१ इस वाक्य का ठीक अर्थ नहीं निकलता । यदि 'पराजयानं' के बाद 'द' खुल हुआ मान लें, तो 'शत्रुपराजयानंदतोषित' ऐसा पाठ होता और जिसका ठीक अर्थ भी निकलेगा ।

६. सेउणचन्द्र (द्वितीय.) शक ६६१.

.....

.....

.....

(१३१) सेउणचन्द्र (तृतीय) शक १०६३.

[IA, XII, P. 126-128]

३१८

कसलगेरी—संस्कृत तथा कन्नड ।

—[शक १०६४ = ११४२ ई०]—

[कसलगेरी (देवलापुर परगना) में, कल्लेश्वर मन्दिरके सामनेके पाषाण पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्थाद्रादामोघलाऽञ्जुनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

भद्रमस्तु जिनशासनाय सम्बधतां प्रतिविधानहेतवे ।

अन्यवादिमदहस्तिमस्तकस्फोटनाय घटने पटीयसे ॥

स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वरं द्वारावतीपुरवराधीश्वरं यादव-
कुलाम्बरधुमणि सम्यक्त्वचूडामणि मलेपरोळ् गण्ड कोत्तु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोळ-
म्बवाडि-तलेकाहुउच्चङ्गि-न्नवसे-हानुङ्गलु-गोण्ड भुबळ वीर-गङ्ग-होय्सळ-
विण्णु वर्द्धन-देवर विजयराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिप्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्कतारं सल्लु-
त्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ।

स्वस्ति स्वस्तिळकै शुभैश्शुभतमैः पुण्याहवैः कीर्त्तयां ।

स्यान्वन्ते चित्त-पाश्वर्जं जिनपादपङ्कजदले श्री-ही-धृतिर्दीर्यताम् ।

त्वं दत्तं देयात्तु देव-देवभुवने भुत्तयङ्गनावल्लभो

सामन्तं कय-बीय-वर्द्धनकरं सोमं रियरं बीयातु ॥
उदेयं मेय्यमृतं (१) ह्युबिम्ब भुवनककुत्साहमं माक्कुविन्-
दु तज्जननिगाचन्द्रार्कतारं यशस्पतरं केयिमगे तन्-
देगे तज्ज बाहुबलदिं दोदण्डदर्पिष्ठरं तर्दिदं सौ-
ल्लने सील्लं अदर्पिदं बेङ्कोण्डनी-सामन्त सोमं घराचक्रदण्ड ॥
प्रल्लेय-प्रल्लोभ-वाताहतदे कदडि मय्यादिंयं दाण्टि चात्री-
तल्लकल्पन्तदौर्वानल्लोपाटोपवेशं कयिमगे चोळ-
ल्लमल्लकल्लोल्लमप्पन्तु पिरिदे घल्लं बन्दु बिट्टम् ।
हृदुवनकरैर्योळु वीर-पेर्माडि-देवम् ॥
मदगन्देभमदान्ध वारिचयदिन्देयन्दुदाबीडना ।
बिडलासार्त्तन्दुदासार्त्तन्-
दुदेनल्लु वीरगङ्गनेने भीमाटवी-हृदु-स्थान-नदी-तीरमन् ।
अय्यदे साल्दमोघसरलिदेच्चनाकरियं करियक्कणम् ॥
वोदविद-मददिन्दिरदैय्तरे बीडनदरं कुम्भस्थल्लमम् ।
बिरियेच्चु कोन्दनेन्दडे करियक्कणनेम्बुदातनं जगमेल्लम् ॥

अन्तु वीर-गङ्ग-पेर्माडि हृदुवनकरैर्य कदुल्लेय तडि विडदु चातुर्दन्तवल्लं
वेरसु चोळन मेले नड्युतं बन्दिरे काडेने बीडं कविये पाय् वुर्दं कण्डु अयक्कणं
करियनेच्चडे कल्लुकणिनाडावं करियक्कणनेन्दु वीरपट्टमं कट्टि सुखदिन्दिरे ।

करियक्कय-सावन्तन । पिरिय-मगं नागनातनग्रतनूळं
सुरवेनुकल्पवृक्षद । दोरेयेनिसिद सुग्ग-गोण्डनदिदद गण्ड ॥
एने नेगल्लद सुग्ग-गण्डन । तेनेयं सावन्त-सोमनाहवभीमम् ।
बिनपादकमल्लभृङ्गं । बिननाथस्नपनल्लपवित्रितगात्रम् ॥
मदवदरातिनायकरनाहवदोळ तरिदिक्कि कीर्त्तियम् ।
नेरेये दिगन्तरं मेरेदुदारते सिंहनाशदिन्दु ।
ओदविद-भीम-सूदु कनो धनञ्जय-रामनो दुन्दुमारणो ।

नळ-नहुषादि सोमदेवनेने सोवण धन्यनो पन्नगे-वैनतेयनो ॥
 मारन सतिगं सीतेगे । रेवतिगनु (रु) ष्वतिगे अचिमब्बेगे सहर्शं पेळु ।
 सारगुणं सोमन सतिगुदारगुणं निम्बन्नेयराह मारब्बेणी-धारिणियलु ॥
 आतन सतिथं पोलिपडी- । मूळदोळु रूपु अब्बनितेगे रतिगन्तु
 आ-सति पासटियेनि- । प जिनतु-पाद-भक्के माचले-नारि ॥

आ-मारव्वे सोमनोडने लीलेयि... उळर कुल-ललेनेयेनिसि जळचर-निचय-
 निचित-कुन्द-कुटु-मळ-वदन-वन-व्वतेये वन-लद्धिमये कल्प-व्ववेनिसि बहु-पुत्रियरं
 पडेदु जिन-जननियेने जिनधम्मक्काधारी-भूतेयुं आहाराभय-मैषज्य-शास्त्र-दीन-
 विनोदेयुं जिनगन्धोदकपवित्रीकृतोत्तमाङ्गेयुं जिनसमयसमुद्धरणेयुं पारिश्व-देव-
 पादाराधकेयुमप्य ।

जिनपति दैव पोरेदाल्दने होयसळविण्णभूप सज्-

जननुते मारे माचले गुणान्वितेयर्तनगप्रपुत्ररेन्द ।

अनुपम-चट्ट-देव कलि-देवने सन्द-

अनुपम-कीर्त्तिथं नेरेंये ताल्दद-भव्यने सोवणनी-धरित्रियलु ॥

स्वास्ति समस्तगुणसम्पन्नं विबुधप्रसन्नं आहाराभयमैषज्यशास्त्रदानविनोदं
 जिनगन्धोदकपवित्रीकृतोत्तमाङ्गं जिनसमयसमुद्धरणं तोडल्लर डोक्कियुं तोडरे
 बल्ल-गण्हं नुडिदु मत्तेन्नं परनारी-पुत्रं पार्श्व-देव-पादाराधकनुमप्य कलुकणि-
 नाडाल्ल सामन्त-सोवेय-नायकं भानुकीर्त्ति-सिखान्त-देवर गुडुं कलुकणि-
 नाड् आल्लं हेब्बिडिरुव्वीडियलु उत्तुंगचैत्यालयवं माडि श्री पार्श्व-देवरं
 प्रतिष्ठे माडि श्रीमूलसंघ-सूरसूट (स्थ)-गणद ब्रह्मदेवर कालं कर्त्तव्व
 धारापूर्कं माडि कोट्ट देवर अङ्ग-भोगक्कमाहारदानकं बसदिय बीणोद्धारकं
 बिट्ट दत्ति शक-वर्ष १०६४ नेय दुन्दुभि-संवत्सरद पौष्य-मासदुत्तरायण-संक्रमण-
 पञ्चमी-वृह (स्पति) वारदन्दु बसदिगे वायव्यद देसेयलु अरुहणहळि ल्लय सीमान्तर
 वेत्तेन्दे (अन्तिम ८ पंक्तियोंमें सीमाकी चर्चा है, और इसके बाद अन्तिम पद्य)

[उसी पाषाणके बायीं ओर—]

स्वस्ति कलकणि-नाड एक्कोटि-जिनालय वेन्दु समे...रु कूडि कोट्ट हेसव ।।
स्वस्ति स्वारि-माचोज कलुकणिनाड आचार्य कलियुग-विश्वकर्म्म

[जिनशासनकी प्रशंसा ।]

जिस समय (अपनी हमेशाकी उपाधियों सहित), मुज्जवल वीर-गङ्ग-होय्छ-विष्णुवर्द्धन-देवका विजयी राज्य अपनी वृद्धि पर थाः-तत्पादपद्मोपजीवी सामन्त-सोम था (उसकी प्रशंसा) ।

जिससमय वीर-गङ्ग पेम्माडि चोल राज्य पर आक्रमण करनेके लिये हृदुवनकेरीमें कदुले नदीकै किनारे-किनारे बा रहे थे, एक जंगली हाथी भागता हुआ आकर सेना पर टूट पड़ा । अय्कणने उस हाथीको अपने बाणोंसे मार दिया, जिसपर कलुकणि-नाडके शासकने उसे 'करिय्-अय्कण' की उपाधि दी ।

करिय्-अय्कणका सबसे बड़ा पुत्र नाग था, उसका ज्येष्ठ पुत्र सुग्ग-गऊण्ड था, उसका पुत्र सामन्त-सोम था । उसकी मारय्वे और माचले नामकी पालियाँ थीं । मारय्वे की बहुत-सी पुत्री हुईं, पर माचले के पुत्र हुए, जिनमें ज्येष्ठ चट्टदेव और कलि-देव थे ।

कलुकणि-नाडके शासक, सामन्त-सोवेय-नायक ने (अपनी बहुत-सी उपाधियों सहित), जो कि धार्मिक जैन और भानुकीर्त्ति-सिद्धान्तदेवके गृहस्थ-शिष्य थे, हेब्बिदरूव्वीडिमें एक ऊँचा चैत्यालय बनवाया और उसमें पार्श्व-जिनकी स्थापना करके पूजा-सेवाके खर्चके लिये, मन्दिर की मरम्मत तथा आहारदानके लिये, श्री मूलसंघ तथा सूरस्ट (स्थ) गणके ब्रह्मदेवके पादों को प्रक्षालनपूर्वक 'अरुहन-हल्लि' नामक गांव दानमें दिया ।

जिनालयका नाम 'कलक (कलुक) णि का एक्कोटि जिनालय' रक्खा था । शिल्पि का नाम माचोज था । यह कलुकणि-नाड का आचार्य, कलियुग का विश्वकर्म्म था ।]

[E C, IV, Nagamargala U., no, 94 and 95]

- ११ अय्यन-सिंहाः सकल-गुण-तुङ्गः । रिपु-मण्डली (लि) कमैखः । विद्विष्ट-गण-
कण्ठीरवः ।
- १२ इडुवरादित्यः । कलियुग-विक्रमादित्यः । रूपनारायणः । नीति-विबित-चा-
१३ रायणः । गिरि-दुर्ग-लङ्घनः । विहित-विरोधि-बंधनः । शनिवारसिद्धिः ।
धर्मैकबुद्धिः । महा-
- १४ लक्ष्मीदेवी-लब्ध-वरप्रसादः । सहज-कस्तूरिकामोदः । एवमादि-
- १५ नामावली-विराजमान-श्रीमद्-विजयादित्यदेवः । बल्लवाड-स्थिर-
शिबिरे सुख-संकथा-विनोदेन राज्यं कु-
- १६ वर्णः । शक-वर्षेषु पञ्चषष्ठ्यं तर-सहस्र-प्रमितेष्वतीतेषु प्रवर्त्त-
मान-कुं-
- १७ दुमि-संवत्सर-माघ-मास-पौर्णमास्यां सोमवारे । सोमग्रहण-
पूर्व-निमि-
- १८ त माजिरगेखोलानुगत-हाविन-हेरिलगे-ग्रामे । सामन्त-कामदेवस्य हडप
- १९ बलेन श्री-मूलसङ्घ-देशीयगण-पुस्तक-गच्छाधितेः क्षुल्लकपुर-श्री रूप-
नारायण-जि-
- २० नालयाचार्य श्रीमन्माघनन्दि-सिद्धान्तदेवस्य प्रिय-च्छा [त] त्रेण ।
सकलगुणरत्न-पात्रेण ।
- २१ बिन-पदपद्म-भूज्जेन । विप्रकुल-समुत्तुङ्ग-रङ्गेण । स्वीकृत सद्भावेन ।
वासुदेवेन
- २२ कारितायाः वसतेः श्री-पार्श्वनाथदेवस्याष्टविधार्चनार्थं । तच्चैत्यालय-
खण्ड-
- २३ स्फुटित-जीर्णोद्वारार्थं । तत्रत्य-यतीनामाहारदानार्थं च । तत्रैव ग्रामे
- २४ कुण्डि-दण्डेन निवर्त्तन-चतुर्थ-भाग-प्रमितं क्षेत्रं । द्वादश-हस्तसम्मितं
गृह-निवेशनं
- २५ च । तन्माघनन्दि-सिद्धान्तदेव-शिष्यानां माणिक्यनन्दिपण्डित-
देवानां । पादौ प्रक्षाल्य धारा-पू-

- २६ सर्व्वं सर्व्वनमस्य सर्व्व-बाधा-परिहारमाचन्द्रार्कतारं सशासनं दत्तवान् ॥
 २७ तदागामिभिरभ्यर्च्यैरन्यैश्च । राजभिरात्मसुख-पुण्य-यशस्तन्तति-वृद्धिभिः।
 स्व-
 २८ दत्ति-निर्व्विशेषं प्रतिपादनीयमिति ॥ शान्तरसकके ताने नेलेयाद
 २९ जिन-प्रभु तन्न दैवमश्रान्त-गुणकके ताने नेलेयाद तपोनिधि **माघनन्दि**
 सैद्धान्तिक-
 ३० योगी तन्न गुरु । तन्नाधिपं विभु कामदेव-सामंतनिदुत्तमत्वमिदु पुण्यमि-
 दुन्नति **वासुदेवेन** ॥

भावार्थ

[यह शिलालेख कोल्हापुर शहरके शुक्रवार दरवाजेके पासके जैनमन्दिरके सामनेके एक पत्थर पर उत्कीर्ण है ।

शिलालेखमें शीलदार कुलके **महामण्डलेश्वर** विजयादित्य देवके एक भूमिदानका उल्लेख है । पहलेके दो श्लोकोंमें जैनधर्मके यश की गाथा गाई गई है । तत्पश्चात् ३-१५ तक की पंक्तियोंमें दाताकी निम्नलिखित वंशावली और उसका वर्णन है—**शीलदार** क्षत्रिय वंशमें **जतिग** नामका एक युवराज था, जिसके चार लड़के, गोङ्कल गूवल, कीर्तिराज, और चन्द्रादित्य थे । राजपुत्र गोङ्कलका लड़का **मारिसिंह** था । उसके पुत्र **गूवलगङ्गदेव**, **बल्लालदेव**, **भोजदेव**, तथा **गण्डरावित्य-देव** थे । और **गण्डरावित्यदेव**का पुत्र **महामण्डलेश्वर विजयादित्यदेव** था । उनके ये पद थे—‘नगरपुरवराची-श्वर, श्री शिलाहारनरेन्द्र, निजविलास-विजितदेवेन्द्र, जीमूतवाहनाम्बयप्रसूत, शौर्यविख्यात, सुवर्णगरुडध्वज, युवतिजन-मकरध्वज, निर्दलित-रिपुमण्डलीक-दर्प्य, मरुवङ्क-सर्प्य अप्पनसिंग, सकलगुणतुङ्ग, रिपुमण्डलिक-भैरव, विद्धिष्टगञ्ज कण्ठीरव, इडुवरादित्य, कलियुग-विक्रमादित्य, रूपनारायण; नीतिविजितचारायण, गिरिदुर्गालं

घन, विहितविरोधिबन्धन, शनिवारसिद्धि, धर्मेकबुद्धि, महालक्ष्मीदेवी-लब्ध-
वरप्रसाद, तथा सहस्रकस्तूरिकामोद ।’

पंक्ति १५-२६ में बिजयादित्यने, अपने बल्लवाड्डके निवासस्थान पर आरामसे राख्य करते हुए, सोमवारके दिन चन्द्रग्रहण के अवसरपर, दुन्दुभिवर्षकी माघ महीने की पूर्णिमा तिथि सोमवारको भूमिदान किया। यह दुन्दुभिवर्ष शक वर्ष १०६५ के बीत जाने पर ही लगा था। जमीन कुण्डो नामक देशी माप से चौथाई निष्कर्तन थी। उसी सालमें १२ हाथका एक मकान भी अर्पण किया था। जमीन और मकान दोनों आजिरगखोल्ल नामके बिलेके हाधिन-हेरिल्लगे गाँवके थे। यह एक मन्दिरको दान किया गया था जिसे माघनन्दि सिद्धान्तदेवके शिष्य तथा कामदेव-सामन्तके अधीनस्थ वासुदेवने बनवाया था। यह दान मन्दिर के जोणोंद्वार तथा वहीं रहनेवाले मुनियोंके लिये आहारदानके प्रबन्धके लिये था। माघनन्दि सिद्धान्तदेव क्षुल्लकपुर (कोल्हापुर ही का दूसरा नाम) के रूपनारायण जैनमन्दिरके पुजारी (या पुरोहित) थे, मूलसंघ, देशीयगणके पुस्तकगच्छ के प्रधान थे। उनके एक दूसरे शिष्य माणिक्यनन्दि पण्डित-देव थे। इस दानके करते समय इन्हीं पण्डितदेवके पादोंका प्रक्षालन किया गया था। इस दानको सब करों और बाधाओंसे सदैवके लिये मुक्त किया गया था। २७-२८ की पंक्तियोंमें भविष्यमें होनेवाले राजाओंसे प्रार्थना की गयी है कि वे इस दानकी हमेशा रक्षा या सम्मान करते रहें, क्योंकि यह उन्हीं एक का किया है। और यह शिलालेख अन्तमें पुरानी वर्णीटकलिपिमें वह कहते हुए समाप्त होता है :—

शान्तरस प्रधान जिन देव ही मेरे देव हैं, अश्रान्त गुणवाला तपोनिधि,
योगी माघनन्दि वैद्वान्तिक ही मेरे गुरु हैं और कामदेव सामन्त ही मेरे राजा
या मालिक हैं ।’]

३२१

मत्तावार—कन्नड ।

—[शक १०१५=११४३१०]

[मत्तावार (चिकमगलूर परगना) में, पार्वनाथ मन्दिर के एक पाषाण पर]
 स्वस्ति शक वरुषद् सामि ६५ सन्द रुधिरोगारि (य)-संघत्सर
 दिरेशनिवारदन्दु य बुध जकवे गन्ति हेगोरेय
 मत्तिकापुरदिन्द पुरवेय्दलु । सुरव्रत देवेन्द्र बुधम् ॥
 आवकर तोयेतर बु- । धावळि-परमोपकारि मति-चतुर कळा- ।
 कोविदर वन्धु जन-मा- । निदान-पथरण्य सु-कवि-देवेन्द्र-बुधम् ॥
 गौजड-वेग्गडेय गुरुगळ, देवेन्द्र-पण्डितरिगे अवर मदमाळिगे देक्कन्बेय
 निषदिय कल्लं मत्तावारद गामुण्ड बूचि-वेग्गडे नारणवेग्गडेय्यं पडिकर-माडुव
 मावळय्य नु निलिसिदरु

[(उक्त मितिको) गौजके वेग्गडेके गुरु देवेन्द्र-पण्डित की पत्नी
 देक्कन्बे का स्मारक-पाषाण मत्तावारके गामुण्डोने खड़ा किया था ।]

[Ec, VI, Chik magalur tl, no 162]

३२२

हिरे-आवळी—संस्कृत—तथा कन्नड

[सोरब परगना, हिरे-आवळी-गाँव]

[ध्वस्त जैन बस्तिके पास २५ वें पाषाणपर]

स्वस्ति समस्तसुरासुरमस्तकमकुटांशुजालञ्जलीतपद प्रस्तुतबिन धर्म मस्त-
 भितचंद्रमखिलमन्यबज ... श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्जनं ।
 जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनं ॥

स्वस्ति समस्तभुवनाश्रय श्रीपृथ्वीवल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वरं परममहार्कं
सत्याश्रयकुलतिळकं चालुक्याभरणं श्रीमज्जगदेकमल्लदेव ... निर्मलकीर्ति ...
चोच्चंढ ... मंडितवीरश्रीयं निळे सळे नेगई रजेय ... नुर्विगे ... समुद्रदि
... विपुलकृष्णनैतिकृतिर्प्य ... वनेकं चालुक्य-पेर्मचमूप ... ॥

श्रीजगदेकमल्ल महीनाथन लक्ष्मिगे रम्य हर्म्यदि-
भ्राजितमष्ट ... लंग-मिवदळे निष्पमैमेयं

साजवेताळिद् तत्पतिगे वाद्धिवरं नेळनं निमिर्विरा-
राजित पट्टसाहणियोळोळ्दोरे बम्मणदण्डनाथनोळ् ॥ ... दळं सैरिपु-यकेरगदो
ळ्पं मीरे ताप्रभावदंदे किडलीय-युगंदे यप्पुदें नाडेरदंदिनं तन्नुडि नन्नियागि नडेदोडें
स्वामिसंपत्तिगास्पदवाद अनेक विक्रमविलास योगदंडाधिप ॥

६॥ चित्तदलुमल्लदेतत्र ।

सत्यद गुणविल्ल घनदे नीरेरिकरं ।

नित्तरिस मूरुलोकम् ।

नुत्तरिसितु निन्न कीर्त्तिलतेयुं कृतियुं ॥

कंद ॥ अय्दं जिनपदगणेगं ।

मेय्देगेयदे मनद धृतिय कामिनियरोळं - ।

तेय्द ... बेससे ... सुलु ।

मय्दुनमल्लरस क ... नाहवरामं ॥

शंकरदेवतनूजनु ।

क्किरनेनीसई स-णदान्वयदोडेयं ।

शंकिसदे धम्मदोळवं ।

शंकाधिगुणंगळं ... यरेयिसिदं ॥

स्वस्ति समस्तप्रशस्तिसहितं श्रीमन्महाप्रधानं योगेश्वरदण्डनाथकं बनवसे
पञ्चिच्छासिरमनाळुतमिरे जिड्वळिगे पप्पत्तर अधिकारि पेगंडे मय्दुन
मासिदेगं । श्रीमच्चाळुक्य विक्रमवर्षदं तुंदुमि संवसरद पुण्यसुद्ध सोमवारदंतुत्त-

रायणसंक्रांतिय पर्वनिमित्त दंडनायकगे विन्नपंगेय्दु श्रीमदवलिय पार्श्वदेवगं
कारगुलियबयल साल माविनसि बिट्ट केयि ... दुण्डिय गलेयलु कम्म 5—1

स्वस्ति समस्तजिनपादांभोच्चवरप्रसादरूपं मुहगाकुडुं (others named)
अक्कसालेच्चारणियोल् ... प्रतिष्ठेयं मडि समस्तप्रजेगळिद्दु । स्वस्ति यमनियम-
स्वाध्यायध्यानधारणमौनानुष्ठान जपगुणसंपन्नरूप । श्रीमूलसंघद सेनगणद पोगरि
गच्छद वीरसेनपण्डितदेव सद्दुर्म्ममगळप माणिक्यसेन पण्डितदेव
कालं कच्चि धारापूर्वकं माडि सर्व्वनमस्यमाणि कोट्टर । ई धम्मं प्रतिपालिसिदर
अनन्तपुण्यमनेय्दुवर इदनळिदवर अधोगति इळिउर ॥

(हमेशाका अन्तिम श्लोक)

[काल सन् ११४२-४३ ई० । दुन्दुभि वर्ष, पुण्य शुद्ध सोमवारकी उत्तरायण
संक्रान्ति । यह लेख पश्चिमी चालुक्य राजा बगदेकमल्ल द्वितीय के राज्यका उल्लेख
करता है और उसके बनवसे-१२००० के प्रदेशपर शासन करने वाले योगेश्वर
दण्डनायक सेनाध्यक्षकी तारीफ करता है । पेगडि मय्दुन मल्लिदेव सेनाध्यक्षकी
अनुमतिसे जिड्वल्लिगे-७०के राज्य पर शासन कर रहा था और इसने आवलीके
भगवान् पार्श्वनाथको एक भूमिका दान दिया था ।

एक और दान, संभवतः एक जैन मन्दिरको मुद् गावुण्ड तथा और दूसरे लोगोंके
द्वारा किया गया था (इसकी विगत लुप्त है) । ये लोग जैनधर्मके पक्के भक्त थे ।
यह दान वीरसेन पण्डित देवके सहधर्मी माणिक्यसेन पण्डितदेवके पाद-प्रक्षालन
पूर्वक किया गया था । वीरसेन पण्डितदेव, मूलसंघ, सेनगण और पोगरि गच्छके
थे ।]

[EC, VIII, socrat tl. no 125]

३२३

अवधबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १०६८=११४५ ई०]

[देखो, जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग]

३२४

यज्ञादहस्ति = संस्कृत तथा कथय ।

[वर्ष क्रोचन = ११२४ ई० (७० शहस्र)]

[यज्ञादहस्ति (बेलकीकेरी प्रदेश) में, गाँवके दक्षिण-पूर्वमें, ध्वस्त बस्तिके पासके पाषाण पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्जनम् ।
 बीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
 यस्य सद्धर्ममाहाम्यात् सौख्यं जग्मुर्मुनीश्वराः ।
 तस्य श्रीपार्वनाथस्य शासनं वर्द्धतां चिरम् ॥
 जयति विगत-संख्याराति-भूपाल-भूमि-
 ध्वज-गज-तुरगादीन् संविजित्याग्रहीदयः ।
 सफल-समय-धर्माचार-शौर्योऽरु-विद्वद्-
 गुण-मणि-खनि भूभृत् पोषल-क्षमापतिस्तः ॥
 श्रीकान्तानेत्रनीलोत्पलवदनसरोबात-स-स्मेर-लीला-
 लोकं लोकत्रयोज्ज्वलितविशदयशश्चन्द्रिकादोःप्रताप-
 व्याकीर्णं त्यक्त-युक्त-क्रम-कलित-कुभृच्चक्रखेद-प्रमोद-
 श्रीकं श्रीविष्णुभूषं बेळगुगे जगमं राजमार्त्तण्डरूपम् ॥
 जलधि-व्याबेष्टितोर्वीपतिथेनिसि सुखं बालो चन्द्रार्कतारं ।
 तल्लकाडं कोण्ड-गण्डं निगुलारं पदेयंकूडे बेळ्कोण्ड-गण्डम् ।
 तल्लवारल् तल्ल त भूपालर हेडतलेयं श्रोप्येनल् होयद गण्डम् ।
 बलवद्राज्यङ्गलं तबलगिन मोनेयोळ् पाय्दु कटकौण्डगण्डम् ॥
 तलेमलेयादियागे निम्निर्द्वैगण्डघटमनावगम्भद्वा-
 वल्लभद-धातदिन्दरेतु सण्णिसुतुं नडेत्तन्दु तन्दु तन्न दोर-
 वल्लदलि कोळ बेळ्किरिय मीसेगळं ससिक्कते विष्णु-दोर-

बलदले कितनोत्तिरिति कळङ्गिन तेगिन तेङ्गिन नन्दनङ्गळं ॥

स्वस्ति समधिगत पञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वर **हारावतीपुर**वराधीश्वर ।
यादवकुलाम्बरध मणि । मण्डलीक-चूडामणि । श्रीमदञ्च्युत-पादाराधना-लब्ध-
 जिष्णु-प्रभावम् । दिक्पालक-पराक्रमाक्रमाक्रमण-पटु-पराक्रमुक-स्वभावम् । शत्रु-क्षत्रिय
 कलत्र-गर्भस्रव-सम्पादक-गभीर-शङ्ख-नाद । वासन्तिका-देवी-लब्ध-वर-प्रसाद । हिर-
 ण्यगर्भ-तुलापुरुषादि-महा-क्रतु-सहस्र-सन्तर्पित-पितृ-देव-गुरु-सम ... निरुपम-क्षत्र-
 गुण-निर्जित-बिराज-विष्णु-वीर-विजयनारायण-पुराधरं ख्यात-देव-बुळ-बुळ-चळ-
 कुळ (कुळ)-यादवजळधि-विष्णुसमुद्र विलास-मुद्रित-मही-लोक-अविकरण चातु-
 र्य-चतुरानन । चतुर्वेदपाडित्य-मण्डितगोष्ठिषडानन समरमुखगृहीताहितमहीकान्त-
 कामिनीजन-मुखनिरीक्षणक्षणकृतसूर्यनिरीक्षण नृसिहध्याननिश्चलीभूत-निर्मळचरित्र ।
 पराङ्गनापुत्र । सकळजनसत्यनित्याशीर्वाद्-सामर्थ्य सम्पादितकल्पायुरारोग्याभिवृद्धि-
 युक्त दुर्द्धरसमरकेळीसंसक्त दोर्बळवळपदुश्शीलाश्वर्पातगजपति प्रमुखराज-लोक-
 निर्दयनिर्दलनोपाजिताश्वगजादिनानाविधरत्ननिचय-रुचिरलक्ष्मीविलासम् । सर-
 स्वतीनिवासम् । **चोळकुल**प्रलय-भैरवम् । चेरम-स्तम्बेरम-राजकण्ठीरव । **पारण्य-**
कुलपयोधि बडवानल । पल्लवयशोवल्लीपल्लवदावानल । **नरसिंहवर्मसिंह** सरम
 निश्चल-प्रतापाधिपतित-**कळपाळा**दि-नृपाल-सलभम् । निज-सेना-नाथ-निर्दलित
जननाथपुर जगद्-दारिद्र्य-विदारण-प्रवीण-कारुण्य-कटाक्ष-निरीक्षण प्रायक्ष-पद्मे
 क्षण-चतुस्समुद्र-मुद्रित-वसुमती-मनोहर-लक्ष्मी-वल्लभ । भयलोभदुर्लभ । नामादि-
 समस्त-प्रशस्ति-सहितम् श्रीमत्-**कञ्चि-गोण्ड** विक्रमगङ्ग वीर-विष्णु-वर्द्धन-
 देवरु **गङ्गावाडि**-तोम्बत्तर-शरीरनुं । **नोळम्बवाडि**-मूवत्तिट्-च्छीसिरुं ।
बनबसे-पन्नि-च्छीसिरुं । **हलसिंगे**-पन्नि-च्छीसिरुम्बेरडर-नूर्खवरं दुष्टनिग्रह-शिष्ट-
 प्रतिपालन-पूर्वकवेक-च्छत्र-च्छायेयिन्दाळ् दनामहानुभावनिं बळिय ।

कन् ॥ तन्देयल् अच्छोदित-तेर्ट- । दिन् दवे नेगल्दादिरासिब-पडविगे समनेम्ब ।
 ओन्दु-विभव-प्रभावते- । यिन्द **नरसिंह**नरमु-गेय्युत्तिर्दम् ॥
 वृ० ॥ हिमदिं सेतु-वरं तोलल्दु-नेलनं निष्कण्ठकं मादुव- ।
 लिळ महोभ्राजियोळान्तिदिदिदिदि **चक्राल्खनं** कोन्दुवा-

समदेभावळियं हय-प्रतितियं चेम्बोङ्गळं नूनरत्-

नमुमं कोण्डु नृसिहं-भूपनेळे यं दोस्-स्तम्भदोळ् ताल्दिदम् ॥

ब ॥ अन्तु समस्त-मण्डलिक-सामन्त-सेनानाथ-परिबन-परिवृतनागि **दोरसमुद्रद**
नेलेवीडिनोळ् समुत्तुंग सिंहासनासीननागि सुखसङ्कथाविनोददिं राज्यं गेय्यु-
त्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि । स्वस्ति समस्तराज्यभरनिरूपितमहामात्यपदवीप्रख्यातं
शक्तित्रयसमन्वितं श्री-वीर-**विष्णुवर्द्धन-देव**-प्रताङ्ग-लक्ष्मी-रक्षणाङ्ग- (२)
रक्षक सत्य-शौच-स्वामि-हितादि-सद्-गुण-शिक्षकं चतुर्वेदमहादाननिरतं श्रीमद-
भिनवभरत श्री वीर **विष्णुवर्द्धनदेव**भुज्यविजयमण्डितमानवाकारचक्रम् ।
स्वामि-समादेश-साधितसकलदिक्चक्र । कौशिक कुलाम्बरदिवाकरम् । सम्य-
त्त्वरत्नाकर । नामादिसमस्त प्रशस्तिसहितम् श्रीमन्महाप्रधानम् ।

वृ० ॥ कुडे नृपमेरे होयसळ-महीभुवनवर्करदुर्वर्केयिन्दे तां ।

पडेदनशेषराज्यकरभारधुरन्धरनेन्दु तन्त्र-त्रेग-

गडेतनमं निरन्तरवेनल् प्रभु-शक्तियनान्त पेम्मे नूर-

म्मडि मिगिलादुदे-वोगळ् वेनुन्नतियं विभु-**देव-राज**नम् ॥

अन्तु पति-हितनुं सकळ-नियतनुवेनिसिद् देव-राजन गुरुकुलुवेन्तेन्दोडे ।

श्लो० ॥ जयत्यमरनागेन्द्रपूजिताङ्घ्रियुगं प्रभोः ।

वर्द्धमानजिनेन्द्रस्य शासनं कर्मनाशनम् ॥

अन्तु श्रीवर्द्धमान-स्वामिगळ दिव्य-तौर्थादोळ् केवलिगळ् श्रुतकेवलिगळ् बुद्धि-
प्राप्तर्षं अप्य परम-मुनिगळ् सिद्ध साध्यरुमागे तत्तीर्थसामर्थ्यं सहस्रगुणं माडि
समन्तभद्र स्वामिगळ् वकलङ्कदेवरं । गृह्णपिञ्जलचार्यं (१ व्) आदि-
यागे षलम्बरं श्रुत-धररु सन्द बलिकके श्रीमूलसङ्घद श्री कोण्डकुन्दान्वयद देशिय-
गणद पुस्तक-गच्छद विशिष्टदोळगे **सागरनन्दि सिद्धांत-देव**भिनव-गणधररे-
निसिदरवर शिष्यरु**नन्दि-मुनि**-पुङ्गवरवर शिष्यरु तर्क-व्याकरण-सिद्धान्ताम्बुरुह-
वन-दिनकररुमेनिसिद् श्रीमन्-**नरेन्द्रकीर्ति-त्रैविद्यदेव**वर सधर्मर् पट्त्रिंशद्गुण-
मणिमण्डनमण्डितरु पञ्चविधाचार-निरतरुमप्य श्रीमन्**मुनिचंद्र-भट्टारकर** श्री-पादार-
किंदाराधक ।

नियत-स्याद्वादविद्याविभवभवनमागिर्णं निदूत-दोष- ।
 त्रयमभ्युद्यत्तपोलक्षिमगे सले नेलेपागिर्णं रुढाकलङ्का- ।
 न्वयदोळ् भव्याळिगेल्लं मोदलेनिसि करं पेम्पुवेत्ततु पेम्मा- ।
 डिय वंशं लोकवं कीर्त्तियोळ्, बेळगिततुज्ज्वळाचार-सारं ॥

अस्कर ॥ नय-विनयमननुकरिसुवननु- ।

नयदिं तेजोधिकनेने नेगर्हं पेम्माडिय पेम्मगने भी- ।

मय्यनातन चित्त-प्रिये देवसुखे पति-भ- ।

क्तियोळा-सीतेगमरुन्धतिगमेणेयेनिपळ् ॥

अवर्गे मगं सम्पत्त-गुण-रत्न-सुधाम्बुधि मसखि-सेट्टि भू-

भुवन-विनूतनातननुजं नेगर्दं प्रभु मारि-सेट्टि बान्- ।

धव-जन-सर्व-भव्य-जन-कल्प-महीरुहना-महात्मनी- ।

तवद-विभूतियं पडेदुदहतेयं धरेयोळ् निरन्तरम् ॥

दोरसमुद्रद नडुविदु । मेरु-महीधरमेनलके माडिसिदं श्री- ।

मारमनुज्ज-जिना- । गारमनिदु विश्वकर्म्म-निर्मितमेनिसल् ॥

आ-विभुविनणुग-दम्पं । गोविन्दं मन्दरावनीधर-धैर्यम् ।

श्री-वनिता-वल्लभना- । गोविन्दनवोल् महीमनःप्रियनादम् ॥

वसुधेगे कौस्तुभमेनली- । बसदियनी-मुगुळियल्ल सद्मक्तियिनेत्- ।

तिसिदनेने मत्ते गोविन्द-सेट्टियं पोगलादप्परे बुध-निधियं ॥

भू-विदितने भीमय्य म-हा-विभवे पुत्रि नागियल्लनुमिवरी- ।

गोविन्दन जिन-एहकति- । पावन-चरित् निरन्तरं पडि सलिपट् ॥

अवरप्र-तनूवमय-नय-शीलनप्रतिम-धम्म-सहा (नि) यकनरातिपूज्य-डुज्जयनखिलेष्ट-
 शिष्ट-जन-रक्षण-दक्षनु.....सरं नेगळुद महा-प्रभु वेडदे पुण्डा-बिट्टि-सेट्टिय
 गुण.....मं पोग [ळ] ला-चतुरास्यनु.....युतं मायोपायकै
 पेसवतिधन्यं स्वस्ति य.....खनेनल् नाकि-सेट्टिय.....करा-
 पेम्पुमं निमिर्चि गोत्र-पवित्रनाद गोविन्द.....समन्तभद्रस्वामिगळ
वाचार्यरि कनकसेन-वाधिराज-देवरि जनपाल भट्टारकरि

श्री... कसेन-भट्टारकरि मल्लधारि-स्वामि... त्रैविद्य-देवरि श्री-
वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवरि... देवरि बन्द द्रमिळ... विलयमो षट्-
तर्काविळ-बहु-भङ्गो-संगत-श्रीपाळ-त्रैविद्य-गद्य-पद्य - वाचो-विन्यास - निसर्ग-विजय-
विलासम् ॥

सच्चरित्र-पवि... विद्या-संशुद्ध-बुद्धये ।

विद्वज्जन-प्रपूज्याय वासुपूज्याय ते नमः ॥

इन्दु नेगल्लेवेत्त तन्न गुरु-कुलद पेम्पं नेगळि गोविन्द-सेट्टि माडिसिदनिन्ती-
जिनालयम् ॥

मनु-चरितर समस्त-सुवन-सावनीय-जिनेन्द्र-धर्म-वा-

रिनिधि-सरोजिनी-प्रभव-राग-विवर्द्धन्य-राजहंसरण् ।

णनुमनुजन्मनु गुण-युतगुणवजन-पारिजात रा-

मनिग्मडियागियुं भरतराज-चमूपनुमेम्बुदी-जगम् ॥

भारतदोळ् कानीनु- । दारतेयोळ् धर्म-नन्दनं सत्त्वदोळा- ।

चारदोळ् सिन्धु-नन्दन । ... ठडे भरत-राज-दण्डाधोशम् ॥

ई- गोविन्द-जिनालयके प्रभव-संवत्सरदुत्तरायण-संक्रान्ति व्यतीपातदन्दु...
रदलि... आगि श्री-नारसिंह-होयसळ देवं श्रीपाळ त्रैविद्य-देवर शिष्य-
रूप वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवर कालं कन्वि धारापूर्वकं श्रीमदग्रहारं मुगुळि-
यलि बिट्ट वृत्तिय सीमा-सम्बन्धि हिरियकेरेय केळगे गद्दे (आगेकी चार पंक्तियों
में दान का विशेष वर्णन है) आ-बेद्लेयोळगागि देवर सोडरिंगे गाणदल्लर-वाने
ण्येयूरोळगाव बण्डमारे वडहं गोण्डु विशद वण-सिद्दायवित्तवक्लि... ऐदु-पणवं
महाजनं कोडुवरिन्तिनितुवं मूर्वात्तव्वर्महा जनंगळ्, धारापूर्वकं माडि कोट्टर
(आगेकी चार पंक्तियों में कुछ परिचित वाक्यावयव तथा श्लोक हैं) ई-वर्म-
वनळिदतेळे [ते] य नरकं पुगुवं केरेय म ... डिमेयं ता-कहिसिद केरेयक्लि
कण्डुगगद्देयं देवरिंगे बिट्टनु ॥ अशेष-महाजनङ्गळ्, मत्तद-केरेयक्लि कण्डुग गद्देयं
बिट्टर । कळदळ् म-रुळ भट्ट ...

[जिन-शासन की प्रशंसा । यह एल्कोटि-जिनालय है । राजा विष्णुकी प्रशंसा,

जिसने हिमालयसे लगाकर सेतु तक और सेतुसे लगाकर हिमालय तक तमाम शत्रु राजाओं को नष्ट कर दिया ।

जिस समय द्वारावतीपुरवराधीश्वर, मलेय-चक्रवर्ती विष्णुवर्द्धन होय्सल देव शान्ति से अपने राज्य का शासन कर रहे थे:—

उनके चरण-कमलसे आर्जीविका करनेवाला, (अन्य-अन्य विशेषणों के साथ) अञ्जितसेन भट्टारक का शिष्य महाप्रभु पेर्माडि हुआ । उसकी सन्तति निम्न-लिखित थी:—

(अनेक प्रशंसाओं के बाद) पेर्माडि का व्येष्ट पुत्र भीमय था, उसकी पत्नी का नाम देवलम्बे था । उनके पुत्र मसणि-सेट्टि और मारि-सेट्टि थे । दोरसमुद्र के मध्यमें मारमने एक बहुत ऊँचा जिनालय बनवाया । उसका पुत्र गोविन्द था । उसने मुगुली में एक वसदि बनवायी, जिसके लिए भीमय और उसकी पुत्री नागियक्कने पूजा का सामान दिया । उसके दो पुत्र थे,—विट्ठि-सेट्टि और नाकि-सेट्टि ।

उसके गुह बासुपूज्य की परम्परा समन्तभद्र स्वामी से लेकर कनकसेन, वादि-राज, धनपाल, ... कसेन, कलधारि, ... वासुपूज्य, ... और श्रीपाल से होकर आई थी । उनके पैरों का प्रक्षालन करके मुगुलि अग्रहार में नारसिंह-होय्सल देव ने गोविन्द जिनालय के लिये उक्त भूमिका दान दिया ।]

[Ec, V, Hassan U., no 130.]

३२८

वस्ति;—कच्छ-मग्न ।

[वर्ष प्रभव या पार्थिव (?)]

[वस्ति (जिज्जुल्लो प्रदेश) में, जिन्नेदेवर वस्तिके सामने के मानस्तम्भ पर]

वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वर त्रिभुवनमल्ल तळकाडु-गोण्ड कोङ्क-नङ्गलि-गङ्गनाडि-नोण्मवाडि-वनवासि-हानुङ्गलु-गोण्ड भुब-बल वीर-गङ्ग प्रताप-चक्रवर्त्ति ... श्री-

मद्रासधानी-दोरसमुद्रदल्लु सुखसङ्कयाविनोददि राज्यं गेभ्युत्तमिरे ॥ भीमम्हा-
प्रधानं हेर्गाडे शिव-राज ..नम्बिहडे सोमय्यनु भीमद-माणिक्यद

बिनालयके पार्थिवसंक्तरद आषाढ-सुद्ध-पाणिमि-आदिवार अतिलियि-
राहार-दानक माणिक्यदोळल माडि..... चतुस्सीमेयलि गेदे गात्तु कम्बळ
माळुगाळ नूळु तोरे-मया होले-मया यिनितुमं धारा-पूर्वक-माडि कोट्टदत्ति
बसडिगे बिट्टी-धर्म..... । करं सलिसुतिर्द्वर्गो पुण्यं ।

..... अळिदवर्गं । पसुवुं ब्राह्मणन कोन्द गति समनिसुगुम् ॥

भीमद माणिक्यदोळल मूलस्थ चन्दककोजन सुपुत्रं परवादि-मल्लोजं.....
शासनमं बाळिसुवुदु ॥ वीतराग नमोऽस्तु मङ्गलमहा श्री

[जिससमय, (अपने वैदिक पदों सहित), प्रताप-चक्रवर्ती (१ नरसिंह-देव)
अपने राज्यका सुख और बुद्धिमत्तासे शासन करते हुए राजधानी दोरसमुद्र में
विद्यमान थे:—महाप्रधान हेर्गाडे शिवराज सोमय्य ने माणिक्य-दोळल
बिनालयको दान दिया ।

चण्डककोज, जो माणिक्यदोळलका मुख्य आदमी था, के पुत्र परवादि मल्लोज
इस शासनकी रक्षा करेगा । वीतराग को नमस्कार ।]

[Eo, 1V Krishnarajapet T1, no 36]

३२६

लज्जुराहो-संस्कृत

(विक्रम सं० १२०५, माघ वदि २)

ॐ ॥ ग्रहपत्यन्वये श्रेष्ठिपाणिधरस्तस्य सुत श्रेष्ठि ति-(त्रि) विक्रम तथा
आह्वण । लक्ष्मीधर ॥ संवत् १२०५ । माघ वदि ५ ॥

[यह लेख भी २ इञ्च लम्बी १ ही पंक्ति में है । इसके अक्षरोंका आकार करीब ३ इञ्चका है इसमें भेछी (सेठ) पाणिघरके पुत्रोंका नाम दिया है । उनके नाम हैं—त्रिविक्रम, आल्लहण और लक्ष्मीधर ।]

El, I, no XIX no7 (P, 153)

३३०

खजुराहो—संस्कृत

जैन मन्दिरोंकी प्रतिमाओं परसे लीन शिलालेख

[बिना काल निर्देश का]

१ [अ] हपत्यन्वये श्रेष्ठ भीपाणिघर [II]

[यह अधूरा शिलालेख एक ही पंक्तिमें है, जो कि ५ ३/४ इञ्च लम्बी है । लगभग ३ इञ्च अक्षरोंका आकार है । ग्रहपति—अन्वयु । जैसे इस शिलालेखमें है वैसे ही वह आगेके दो शिलालेखोंमें भी आया है ।

[EI, I. P. 152.]

३३१

खजुराहो—संस्कृत

[संवत् १२०५ = ११४८ ई०]

[इस शिलालेख के लेखक का पता नहीं है । इतना ही मालूम है कि यह संवत् १२०५ का है ।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 68, o, a.]

३३२

चित्तौड़ (राजपूताना);-संस्कृत-भाग ।

[सं० १२०७ = ११२० ई०]

- प० १. ओं ॥ नमः सर्व्व [ज्ञा] य ॥ नमो...[म] प्तार्त्तिचिर्दग्ध (ग्ध) संकल्प-
जन्मने । शूर्वाय परमज्योति [ध्व] स्तसंकल्पजन्मने ॥ जयतात्स मुहुः
श्रीमान् मुहुः...
२. दनाम्बु (म्बु) जे । यस्य कण्ठच्छवी रजे से (शे) वालस्थेव वल्लरी । यदीय-
शिखरस्थितोल्लसदनल्पदिव्यध्वजं समण्डपमहो नृणामपि वि[दू]-
३. रतः पश्यतां अनेकभवसंचितं क्षयमियत्ति पापं हृतं स पातु पदपंकजानतहरिः
समिद्धेश्वरः ॥ यत्रोल्लसत्यद्भुतकारिवाचः स्फुर [न्ति चि]-
४. ते विदुषां मदा तत् । सारस्वतं ज्योतिरनन्तमन्तर्विस्फूर्ज्जतां मे क्षतजाड्य-
वृत्ति । जयन्त्यजश्र (स) पायूपत्रन्दुनिष्यन्दिनोमनाः । कवीनां [सम]
५. कीर्त्ती (र्त्ती) नां वाग्मलासा महोदयाः ॥ न वैरस्य स्थितिः श्रीमान् न
जलानां सभाश्रयः । रत्नराशिरपूर्व्वोस्ति चैलुक्यानामिहान्वयः ॥ तत्रो-
६. दपद्यत श्रीमान्सद्रुत्तम्नेजमां निधिः । मूलराजा (ज) महोनाथो मुक्ता-
मणिरित्रोच्च (ज्ज्व) लः ॥ वितन्वति भृशं यत्र क्षेम (मं) सर्व्वत्र सर्व्वथा ।
प्रजा राजन्वती नून (नं) ज-
७. ज्ञेसौ चिरकालतः । तस्यान्वये महति भूपतिषु क्रमेण यातेषु भूरिषु सुपर्व्व-
पतेर्निवासं । प्रोणुत्य वाघ्रशशा ककुभां मुखानि श्रीसिद्धरा-
८. जनृपतिः प्रथितो व (व) भूव ॥ जयश्रिया समारिलष्टं ये विलोक्य समंततः ।
भ्रांत्वा जर्गति यत्कीर्त्तिज (र्ज) गा [हे] मरमंदिरम् ॥ तस्मिन्नमभसाम्रा-
९. जां (ज्यं) संप्राप्ते नियतेव्वसात्^१ कुमारपालदेवोभूषतापाक्रांतशात्रवः ॥
स्वतेजसा प्रसह्येन न परं येन शात्रवः । पदं भूमृच्छिरस्सूचैः कारि-

१. छुटे हुए अक्षर 'जीव' हैं ।

२. 'सर्व्वशात्' पदो ।

१०. तो वं (वं) धुरप्यलं ॥ आशा यस्य महीनायैश्चतुरम्बु (म्बु) धिमध्यगैः ।
 भ्रियते मूर्द्धभिर्नग्ने (नै) देवशेषेन सन्ततम् ॥ महीशृङ्गिकु (कु) जेषु
 शार्कभरी-

११. शः प्रियापुत्रलोके न शार्कभरीशः । अपि प्रास्तशत्रुर्भयात्कंप्रभूतः स्थितौ
 यस्य मत्तेभवाजिप्रभूतः ॥ सुपादलक्ष्मामार्द्यं नम्राकु-

१२. तभयानकः । [स्व] य [म] यान्महीनाथो ग्रामे शालिपुराभिधे ॥ सन्निवेश्य
 सि (शि) विरं पृथु तत्र त्रासितासहनभूर्पातचक्रम् । चित्रकू-

१३. टगिरिपु [ष्क] लशोभां द्रष्टुमार नृपतिः क्रतुकेन ॥ यदुच्चसुरसद्मागोपरि-
 ष्यात्प्रपतन्सदा । रथं नयत्यर्लं मंदं मंदं भंगभयाद्रवि. ॥ य-

१४. त्सौधशिखरारूढकामिनीमुखसन्निधौ । वर्त्तमानो निशानाथो लक्ष्यते लक्ष्म-
 लेखया ॥ प्रफुल्ल (ल्ल) राजीवमनोहरानना विवृत्तपाटीनविलोललोच-

१५. —।^१ —त [भृङ्गावलिरामराजयो रथांगवत्सोद्वहमंडलश्रयः ॥ परिभ्रम-
 त्सारसहंसनिस्वनाः सार्वभ्रमा हारिमृणालवा (वा) हुकाः । वृ (वृ)-
 हर्जितवा (वा) मलवारि-

१६. —।^२ —मुदे सतां यत्र सदा सरोज्जनाः ॥ स (सु) रभिकुसुमगंधाकृष्ट-
 मत्तालिमालाविहितमधुररावो यत्र चाधित्यकायां । स्वलिततरणिमानुः सल्ल-

१७. —। —। —। —। —। मयिषति शश्वत्कामिनः कामिनीभिः ॥ शुभे
 यद्वने शाखिशिखांतराले प्रियाः क्रीडया सन्निलीना निकामं । घने [प]—

१८. —। —। —। —। —। [णां] [न] नृगंधसक्तालयः स्रव (च)
 यन्ति ॥ प्राप कदापि न या हृदये शं सानुनयं समयो हृदये शं । यद्वनमेत्य
 सु [सं ?]—

१. यहाँके त्रुटित अक्षर संभवतः 'नाः । प्रम' हैं ।

२. यहाँके त्रुटित अक्षर संभवतः 'राशयो' हैं ।

१६. — — — — — [र] तरांग ॥ एकमादिगुणे
दुर्गो स्वर्गे वा भुवि [र] स्थिते । राजा विष्णुः परम्रीत्या संचरन्निजलील—
२०. या ॥ ति.....[ता ?] श्रयंसंकुलम् । ददर्शागावगंभीरस्वच्छं स्वमिव
मानसम् ॥ निर्मलं सलिलं यत्र पि—
२१. हितं प [द्वि] — — । ...जे नीलाब्ज (ज्ज) राग [भू] भ्रियम् ॥
विमुच्य व्योम पातालरसा यत्र त्रिमार्गागा । लोका—
२२. न पु [नाति] ... — — ॥ [त] स्योत्तरतटेऽ द्राक्षीन्-
भ्रामरसमर्चितं । श्रीसमिद्धेश्वरं देवं प्रसिद्धं—
२३. जगती — ॥.....— ते । त्रैसंध्य [तू] र्यनादेन
कलि (लि) निर्भर्त्सयन्निव ॥ य [त्त ?] वस्याधिपत्येस्थानपुरा म—
२४. ट्टारिकोत्त [मा ।] ..[वी] नृपाभ्य [च्छ्या ?] ... — — ॥
तस्याः शिष्याभक्तसाध्वी सुव्रतवात भूषिता । गौरदेवीति वि [ख्या] ...
[ता ?] कृतोद्यमा ॥ सु [मनो ?] —
२५. संसेव्या [मा ?] ...यविनाशिनी । दुर्गा हि.....— [ता] ॥
यत्तपः पावनं कीदृश पवित्रीकृतसज्जनं । सस्मरुः पूर्व्वयमि.....— ॥
शिवं प्रपूज्य त [त्प] —
२६. ...[म] गमत्प्रभुः । प्रणम्य [तावुभौ ?] भक्त्या सि (शि) रसा
— — ॥...[तस्वां] तः पूजार्थं हरपादयोः । कुमारपाल-
देवोदात्ताम श्री — — ॥.....त्यां—
२७. टा दक्षिणपूर्व्वोत्तरपश्चिमतः सरःपाली भूणादित्य...राज...दीपार्थं द्याण-
कमेकं सज्जनोप्यदात् दंडनाथ.....मेतद्दानम्—
२८. श्री ज [य] कोर्ति शिष्येण दिगं व (व) रगणेशिना । प्रशास्तरौडशी
चक्रे...श रामकोर्तिना ॥ संवत् १२०७ सूत्रधा.....^१

१. इस पंक्तिके नीचे भी कुछ अक्षर खोदे गये थे; लेकिन प्रतिक्रियिमें वे बिलकुल पढ़ने योग्य नहीं हैं ।

[(२८ वीं पंक्ति में) लेखका काल सं० १२०७ दिया हुआ है, जो, विक्रम संवत् मान लेनेसे, ११४६-५० या ११५०-५१ ई० ठहरता है; और इसका उद्देश्य चालुक्य राजा कुमारपालकी चित्रकूट पर्वत, आधुनिक 'चित्तौड़गढ़', की यात्रा, तथा वहाँ उसके द्वारा उस समय पर्वत पर 'समिद्धेश्वर [शिव]' देवके मन्दिरके लिये किये गये कुछ दानोंका उल्लेख करना है ।

“ॐ नमः सर्वज्ञाय” इन शब्दों के बाद, लेखमें पाँच श्लोक हैं । इनमेंसे शर्व, मृड, और समिद्धेश्वरके नामसे शिव परमात्माकी स्तुत करते हैं, जबकि अन्य दो सारस्वतीकी सहायताकी कामना, तथा कवियोंकी रचनाओंकी यशोगाथा गाते हैं । [पं० ५ में] लेखक चालुक्योंके वंशकी प्रशंसा करता है । उस अन्वय [वंश] में मूलराज राजा उत्पन्न हुआ था [पं० ६], और उसके तथा उसके बादके अन्य राजाओंके स्वर्गाराहणके बाद राजा सिद्धराज आये [पं० ७], जिनके उत्तराधिकारी कुमारपाल देव हुए [पं० ८] । जब इस राजाने शाकम्भरी (वर्तमान साँभर) के राजाको हरा दिया [पं० १०] और सपादलक्ष देशको मर्दन कर दिया [पं० ११], वह शालपुर नामक स्थानमें गया (पं० १२), और वहाँ अपनी छावनी (Camp) डालकर वह चित्रकूट [चित्तौड़गढ़] पर्वतकी सुन्दरताको देखने आया; वहाँके मान्दरों, राज-प्रासादों, झीलों या तालाबों, ढाल और जंगलोंका वर्णन १३-१६ की पंक्तियोंमें है । कुमारपालने वहाँ जो कुछ देखा उससे उसका चित्त प्रसन्न हुआ, और उत्तर दिशाकी तरफ ढालपर बने हुए 'समिद्धेश्वर' देवके मन्दिरमें आकर [पं० २२] उसने शिव ईश्वर और उसकी पत्नीकी पूजाकी, और मन्दिरके लिये एक गाँव दानमें दिया जिसका नाम सुरक्षित न रह सका [पं० २६] । पं० २७ में अन्य दान [एक 'द्याणक' या कोल्हू दिये जलानेके लिये, आदि] बनाये गये हैं; और पंक्ति २८ बताती है कि जयकीर्तिके शिष्य रामकीर्तिने जो दिगम्बर सम्प्रदाय के मुख्य थे, यह 'प्रशस्ति' लिखी है, और लेखके उपर्युक्त कालका निर्देश करती है ।]

[EI, II, no xxxiii, TI-421-424]

३३३

कैदाल;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १०७२-११५० ई०]

[कैदाल (गूलर परगना) में, प्रसन्न गङ्गावर मन्दिर में पाषाणों पर]
(पहला पाषाण) ।

बयन्ति यस्यावदतोऽपि भारती-विभूतयस्तीर्थकृतोऽपि...।
शिवाय धात्रे सुगताय विष्णवे जिनाय तस्मै सकळात्मने नमः ॥
दिनकृत्-तेजकके तेजं समनेसवददुद्वृत्त-कण्ठीरवकन्त ।
एनसुं मादृश्यवार्पन्तमर-कुजके माण्डलं नोळपडन्ता- ।
यन-बाहाटोप-भीमार्जुन-नृग-नल-भूपालरोळ् पाटियेन्दी- ।
जनमेल्लं कात्तिसल्ल धात्रगे पतियेसेद नारसिंघ-त्तितीशम् ॥

स्वस्ति समधिगत-मङ्गल-महा-शब्द महा-माण्डलेश्वर द्वारावती पुर-वराधीश्वर
यदु कुलाम्बर-शुमणि सम्यक्त्व-चूडामणि श्रीमत्-त्रिभुवन-मल्ल तळकाडु कोङ्क-
नङ्गलि गङ्गवाडि-नोळम्बवाडि-बनवसे हानुङ्गल्ल-हलसिगे-बेळवात-
बुच्चङ्कि-गोण्ड भुजळ-वीर-गङ्ग विष्णुवर्द्धन-श्री-नारसिंघ-देवरु दुष्ट-निग्रह-
शिष्ट-प्रतिगळनं माडि दोरसमुद्र नेलवीडिनोळु सुख-संकथा-त्रिनोददि राज्यं
गेयुत्तमिरे तत्पाद-पद्मोपभावि ॥ स्वस्ति समधिगत-मङ्गल-महा-शब्द महा-सामन्तं
वीर-लक्ष्मी-कान्तं नाल्वत-नाल्वर गण्ड मान्यखेड-पुर-वराधीश्वरं चतुर्मुख
दायिग-गोन्दळं बडिबं तोडर्दर डोङ्किपवळरादित्यं मरुगरे-नाडाळवं सामन्त-
गुळि-बाचिगे ।

जिन-पति कृत बेळ्प सुख-सम्पदमं हरनोल्दु कीर्त्तियम् ।

कनक-सरोद्धवं वर-चिरायुवमिम्बनलि ईगळच्युतम् ।

मनमोसेदोप्पुतिर्प सिरियं वर-बुध बयाभिवृद्धियम् ।

मनसिन्न-रूप-बाचि निनगीगे शशाङ्क-कुळद्रियुल्लिनम् ॥

सिंगद सौर्यवक्त्रेण रूपे मुरारिय शक्तिवागडुम् ।
 पिङ्गदे कर्णनीव-गुणविन्दन लीले भुवङ्ग-राजनोळ् ।
 सङ्गळिसिर्द पैमें सुरशैलद विण्पुवोपल्दु निन्दवी- ।
 गङ्गन पुत्रनोळ् सुमट-वाचियोळ्जित-सव्यसाचियोळ् ॥
 चरेयोळ् चागद पेम्पिनि रवि-सुतं संग्रामदोळ् रामनि ।
 पिरियं सौचदोळ्छना-तनयनोळ् सादश्यवे... ॥
 निरुतं निर्मळ-धर्म-सूनुवेळे योळ् तानाद नात्त्वत्त-ना- ।
 त्वर-गण्डङ्गिदिराम्य गण्डरोळरे विश्वम्भरा-भागदोळ् ॥
 अदळ-कुळ-कमळ-हंसन- ।
 नदळान्वय-राज्य-भवन-मणि-तोरणन- ।
 प्पदळर रामं बात्रिय ।
 विदिताम्नायमनलम्पिनिम् प्रकटिसुवे ॥
 श्री-रमणी-प्रियं जगदोळ्जित-तेजनपार-पौरुषम् ।
 वीर-रस-प्रियं जसके नल्लनुदारनदेन्तु नोळ्पडम् ।
 चारिणियल्लि ताने सुभटाग्रणि एम्बिनमोप्पिगोण्डदम् ।
 बारिज-नामनन्तदळ-वंश-कुळाम्बर-मानु बासयम् ॥
 बासणिसि जगमणोळ्पम् । भासुरतरमेनिप कीर्ति-दुकुलदिनांत ।
 सासिम्मंडि भीमङ्गेने । बासेयनन्तेसेदनावनुर्ब्बो-तलदोळ् ॥
 आतङ्गे तनयनादं । भूतलदोळ् राम भीमनिन्दर्जुननिम् ।
 मातेनो सुभटनधिक-वि- । नूतं तां नेगर्दनेळगे गङ्गुद-गङ्ग ।
 ओवदिदिरान्त वैरियन् ।
 आवगवान्तिरिदु गेल्लु जयदुन्नतियिम् ।
 रावणनि भिगिलेनिपम् ।
 केळ्ळमे जसदिनेसेद गङ्गुद-गङ्ग ॥
 अन्तेनिसि नेगर्दं गङ्गन ।
 सन्तति कलि-युग-वनञ्जयं कुल-तिलकम् ।

चिन्तामणि तानेनिपम् ।

भ्रान्तिपदे बेळू बनके नायक-बसव ॥

तत्-तनेयनान्त वैगिय ।

नेत्तरना-मूत-कोटिगेषुत्सवदिम् ।

गुप्तनुमनिळिमिदं बयद् ।

उत्तरदिं सुत्ति हरिव गङ्ग' धरेयोळ् ॥

मत्त-गज-वैरि निपं । त्रितरदिन्दान्त शत्रुगं रुपिनोळा- ।

चित्त नेळिपं गुण ।

दुत्तरदिं सुत्ति परिव गङ्गं बगदोळ् ॥

अवन मगनधिक-बलनी- ।

भुवनकाश्चर्यवागे तन्नेय सौय्यम् ।

नव-लंश्वर बसवेयन् । अविथ-वाक्यके ताने मोदलेनिसिर्द ॥

असदलवेनिसिद कांति- । प्रसरतेयं तळे दु खेचरङ्गेयादम् ।

वसु...पोगळलके नायक- । बसवं त्रैलोक्य-वीर मषेयुगे काव ॥

कुलवे सेयलु बलवेमंयलु । चलवेसेयलु तेजवेसेयलुर्वी-तळदोळ् ।

कलि-असवङ्गनुनयदिं । चलवषिषं तनेयनादनुत्सवदिन्दम् ॥

अट्टे कुणिदाडे रणदोळ् । निट्टुर-गति तोडर्दरङ्कुशं रण-धीरम् ।

क...ळहितरिगे भयं । बुदल् चलवषिषनिषिवनान्तरि-बलवम् ॥

सामन्तं चलवषिवङ्गा-मद-करि-गमन तनेयनादं मुददिम् ।

भीम-भुज...अदळ् । रामं श्री-गङ्गनमळ-लक्ष्मी-सङ्गम् ॥

भीमङ्गे भुज-बळदिं । रामङ्गे शौर्यदेळगेपि रुपिनोळा- ।

कामङ्गेयेनलोपि... । ई-महियोळ् गङ्गनमळ-लक्ष्मी-सङ्गं ॥

आतन पराक्रममदेन्तेन्दोडे ।

अदट्पुण्डरि-नायकर्णुलबन्दोन्दागि... ।

मददिं निन्दोडवन्दिरं बवनबोळ् सामन्त-काळानलम् ।

मिदुळं नेत्तर धारे सूते मळ्ळाईय्यव्य जीथेक्किनम् ।

कदन-धनञ्जय.....साहस-गङ्गानुर्बिम्बोळ् ।
 मदनन रूपनिन्देसेद बाचिये धन्यनदेन्तु नोळ्पडम् ॥
 तोडर्दर गण्ड वैरिगळ गण्ड मदान्बर गण्ड बीरदिन्द ।
 एडर्वर गण्ड मेन्चदर गण्ड पिसुण्बर गण्डनेन्दुदम् ।
 तोडेयद गण्डनाहवके सोलद गण्डनदेन्तु नोळ्पडम् ।
 तोडर्दर दोळे बाचि निनगार होरे गण्डरिवा-तळाप्रदोळ् ॥
 बुरदोळ् श्री-बधु कौस्तुभम्बोलेसेवळ् बाग्-बाण.....यिम् ।
 परमानन्ददे वक्त्रदोळ् तिलकम् पास्तिय्यळन्तोल्दु तोळ् - ।
 बेरगि वीरर बीर-लाक्ष्म नयदि कूतिकुर् नाल्वत्त-नाळ् - ।
 वर गण्डं कळि-बाचियोळ् सुवगनोळ् सामन्त-सङ्क्रन्दनोळ् ।
 हरियं माकौळुगुं भयङ्गाळुविनं दिग्-दन्ति-दन्तङ्गळम् ।
 पिरीदाश्चर्यदे कित्तुं तोक्कवदटिं टिक्पाळ-सन्दोहमम् ।
 करेदिन्तिन्तिःवेङ्गु तन्न बळाद नोळ्पाग नाल्वत्त-नाळ् - ।
 वर-गण्डं कळि बाचि-देवनधिकं सामन्त-सङ्क्रन्दनम् ॥
 धरेयं यीद् ।दनेश-सूनु-सदृशं त्यागके शौर्य्यके तान् ।
 अरविन्दोदरनल्ले पाट निज-रूपि...पुष्पायुधम् ।
 दोरे तामादरेनल्ले शौचदळं ताळिःई नल्वत्त-नाळ् - ।
 वर गण्डं कलि-बाचि-देवनेसेदं सामन्त-सङ्क्रन्दनम् ॥
 भरदिन्दान्त विरोधियं रण-मुख-व्यापारदोळ् तन्न दुर् - ।
 छर-बाहा-बळदि पडल्वदिसेयुं भूताळियुं काळियुम् ।
 नोरे-नेत्तर-ण्णोणेन्निम्बवं नोणोयुतन्तेईडि नाळ्वत्त-नाळ् - ।
 वर गण्डं कळि-बाचि-देव गेलुगुं सामन्त-सङ्क्रन्दनम् ॥
 सुर-भूजावाळ पण्तुदेय्दे नयदि घात्री-तळक्केम्बिनम् ।
 निरुतं दान-विनोदि कीर्शि-निळयं बैरीभ-पञ्चाननम् ।
 स्मर-रूपं करेदीवनाग्नवधिकं तानाद नाल्वत्त-नाळ् - ।
 वर-गण्डं कल्ल-वेचि-देवनधिकं सामन्त-सङ्क्रन्दनम् ॥

सामन्तं सुर-बेनुवित्तु तणिपळ् विश्वम्मरा-भागमम् ।
 सामन्तं रिपु-सैन्यमं तस्यिला-प्रत्यक्ष-वीरावर्जुनम् ।
 सामन्तं शरणेन्दवङ्गे दयेपि गन्भीर-रत्नाकरम् ।
 सामन्तं कलि-वाचियाम्नावधिकं बैरीम-पञ्चाननम् ॥
 मरुगरे-नाडाळ्वं गुण- । देरेयं सामन्त-वाचियदळ् रामम् ।
 मरुगरे-नाडोळगे हे- । ररिकेय कय्दाळदळि धम्मोन्नतियम् ॥

आ—कय्दाळद िळासार्पदवदेन्तेन्दोडे ।

तुरुगिद मामरदिं बेळेद् । एरपिद सौगन्धि-शाळियिं पू-गोळदिं ।
 केरेयिं देवाळयदिं । नेरे सोगय्स तोक्खुं लीलेयिं कयालम् ॥
 विविषालङ्कृत-देव-सौध-तळदिं वेश्याङ्गना-बाटदिम् ।
 कवि-राज-प्रवरकर्कळि सुळिव नाना-गोय-चातुर्यदिम् ।
 नव-देशीय-विळासदि सुबगिनि कय्दाळमोप्पिप्पुदा- ।
 दिविजेन्द्रोन्नत-लोकमं नगुवबोल् तन्नुदध-सौन्दर्यदिम् ॥
 घनदनुमनिळिप परदरि ।
 मनुगळनिळिप मुनिगळि बगेवागळ् ।
 मनसिजननिलिप विटरिम् ।
 बनितेयरि नाडे सोगयिक्कुं कय्दाळम् ॥

(दूसरा पाषाण) ।

अन्तनेक-विळासकावासम् सकल-लक्ष्मी-निवासमुमेनिसि सोगायिसुव
 कय्दाळदोळ् ।

कन्द ॥ उद्धरिसि जैन-भवनमन् । उद्धरिसि सि(शि)बालयङ्गळं मुददिन्दन् ।
 उद्धरिसि विष्णु-गोहमन् । उद्धरिसिदनस्ते बाचि जसदुन्नतियम् ॥
 सोगयिप कामधेनु च्चिन्-शासन-लक्ष्मिगे करुप मूरुहम् ।
 मृगधर-भूषणागम-तपस्विगे सिध-रस-प्रवाहमेम् ।
 नेगेदुद् बुद्ध-कोटिमेने च्चिन्तिसदीव महाशु-रत्नवा- ।

नगधरनागमहरिगमेन्दोडे बाचियिदेम् कृताहर्यनो ॥
 घरेगेसेव नालकु-समेपद । सिरि कल्यावनिरुहं बुध-जनकेम् ।
 दोरवेत्त पेण्णि-न्द । पिरियं धर्मावितार गङ्गन पुत्रम् ॥
 श्री-लीलायतनके ताने नेत्तेयाय्तेम्बोन्दु संसेव्यदिम् ।
 नीलग्रीव-पदान्ज-भृङ्गनधिकं श्री-बाचि-देवं यश- ।
 लोलं वीर-गुणाम्बुरासि मुददि कय्दाळदोळ चेल्वनिम् ।
 कैलासककेणयागि माडिसिदनी गङ्गेश्वरावासमम् ॥
 श्री-नारायण-गृहम् । श्री-नारी-रमणनदळ-वंश-कुलाम्बर- ।
 भानुवोर्नसिद् बाचिय- । नूनं माडिसिदनलुते तोडर्द डोळ्ळि ॥
 चलावरिवेश्वरम् गुण- । जलधि जय-श्रीगधिपं बुध-जनकं तां ।
 बलियेनिप बाचि-देवं । कुल-नगमं मिगुव पेम्पनि माडिसिदम् ॥
 श्री-महिमं गुण निळयं । भीम-पराक्रमनु बाचि-देवं मुददिम् ।
 रामेश्वर-सदनमना- । हेमाद्रिगे मिर्गिलदेम्बनं माडळ्ळसिदम् ॥
 भारतदोळ्ळादुदीग सुरशैळिविदेम्ब मनोनुरागादिम् ।
 घरे पोगळन्नु सन्ददळ-वंश-शिखामणि बाचि-देव ताम् ।
 वर-जिन-मन्दिरङ्गळने माडिसि लोकदोळ्ळोल्दु कीर्तिगा- ।
 भ(भा)रतनो गुत्तनो शिवियो खेचरनो बलि चारुदत्तनो ॥
 रामन बाणदिन्दे लघुवाडुदु नोर्ण्ड मत्त-वानरर् ।
 प्रेमदे पर्वत-प्रतितियिदमे कट्टिद सिन्धु तन्ननी- ।
 भीम-पराक्रम मुडदे कट्टिसिदोळ्ळिपन पेम्पनिन्दे ताम् ।
 भीम-समुद्रवेळिपु [दु] बाधिय गुण्णिन पण्णिनेल्गेयम् ॥
 उदधिय, गुण्णगस्त्य-मुनि-पुङ्गवनिन्दमे निन्दुदागियुम् ।
 मदनहर-प्रताप रघु-रामन रामन बाण-वातदिन्द ॥
 उरिदुदरेबुदेन्दु सुमटाग्रणि बाय पेण्णिनन्ददिन्द ।
 अदळसमुद्रवेळिपुदु तन्न महत्वादिनम्बुराशिय ॥
 दिव्बूरं वेप्राळिगे । सन्वैश-पदारविन्दनदळर रामम् ।

दोर्-बळ-विभासि बाचम् । सन्नाबाधं परिहारवेनिसिये कोट्ट ॥

इन्तु चतुस्-समय-धम्मोद्धार-घोरेयं श्रीमन्-महा-सामन्त-गूलि-**बाचि-देव**ननेक-
देवालय-वसदि-विष्णु-गृहङ्गळं माडिसियुं महा-तटाकङ्गळं कट्टिसियुं स [श]
क-घर्ष १०७२ डेनेय प्रमोद-संघन्तरद फाल्गुन-मासदमास्ये-
यादिवार-सूर्यग्रहण-व्यतीपातदन्धु तम्मय्य सामन्त-गंगैयगे परोक्ष-
विनेयवागि श्रीगङ्गेश्वर-देव...यन पेसरलु देगुल माडिसि देवर प्रतिष्ठे माडिया-
गङ्गेश्वर-देवरङ्ग-भोगकमष्ट-विधार्चने-तपोधनराहार-दानकं देगुलद खण्ड-स्फुट-
जीर्णोद्धारकं हिरिय-केरेय वेळगे बिट्ट गद्दे सलगे ३ मानियलु बिट्ट गद्दे
सलगे ३ बेहले सलगे १ मन्नवायङ्गे दिव्वूरं परोक्ष-विनेयवागि स-ब्राह्मणरिगे
सन्नाबाधा-परिहारवागि धारा-पूर्वकं माडि भूमि-दानवं कोट्टं मत्तं श्री-केशव-देव-
रङ्ग-भोगकमष्ट-विधार्चनेगं ब्राह्मणराहार-दानकं देगुलद खण्ड-स्फुट-जीर्णोद्धारकं
दिव्वूरं केरेय केळगे किट्ट गद्दे सलगे १० आगद्देय वळिय तोण्ट बेहलेयुदं सलु-
बुदु मत्तं तम्म मुत्तय्यं सामन्तं चलवरिवङ्गे परोक्ष-विनेयवागि किन्नगळियलु
चलबेरेश्वरमेन्दाय(त)न पेसरलु देगुलवं माडिसि आ-चलबेरेश्वर-देवरङ्ग-भोगकं
अष्टविधार्चनेगं तपोधनराहार-दानकं देगुलद खण्ड-स्फुट-जीर्णोद्धारकमा-
किन्नगळिय केरय वेळगे बिट्ट गद्दे सलगे ३ बेहले सलगे १ मत्तं तन्न मगळ
कुमारि चेल्लवे-नायकित्तिगे परोक्ष-विनेयवागि श्री-रामेश्वर देवर देवालयमं
माडिसि आ-देवरङ्ग-भोगकमष्ट-विधार्चनेगं तपोधनराहार दानकं देगुलद
खण्ड-स्फुट-जीर्णोद्धारकं हिरिय-केरेय केळगेयुम् गद्दे सलगे ३ मानियलु गद्दे
सलगे ३ बेहले सलगे १ मत्तं **रामेश्वर-देवर** नन्दा-दिविगेगे सर्व-बाधा-
परिहारवागि बिट्ट येत्तु-माण १ मत्तं सामन्त-**बाचि-देवन** मनस्-सरोवरालंकार
राजहंसिनि ॥

कन्द ॥ भूमिगे सरि पेम्पिन्द । कामाङ्गनेगधिकवेसेव शौचोन्नतियिम् ।

भीमले एन्दतिमुददिन्द । ई-महि बणिणुदु **बाचि-देवन** सतियं ॥

चिन-पतिदेय्य तन्दे कलि योद्दे-नाकनोल्पनान्त तब्-।

बननि चिन्ते चिम्बले महासति गूळिय-**बाचि-देव** सज्-।

जन-नुत वीर तन्न पतियन्दोडे पोख्वरार् घरित्रियोळ् ।

वनितेय.....भीमलेयोळ्बित्त-पुण्य-गुणाभिगमेशोळ् ॥

रतिगं गोमिनगं पा- नैतिगं मिगिलु सुबगिनिं सम्बददिं तान् ।

अतिशय-रूपोन्नतियिं । क्षितियोळे ले बाचियरमि भीमले-नारि ॥

इन्तु नेगई महा-सौभाग्य-शील-सौन्दर्य-सम्बन्नेयपं परिवार-सुगमि **भीमवे-नाय-**
 कितियगें परोक्ष-वनेयवागि श्रीमन्महा-सामन्त-**वाचि-देव भीम-जिनालयमेन्दु**
 बसदिंयं माडिसियुं **भीमसमुद्र**मेन्दु कन्ने-गेरेयं काट्टासियुमा-केरेय केळगे भीम-
 जिनालयद श्री-**चक्ष-पाख-देव**ङ्ग-भोगक्षमष्ट-विधानार्चनेगं श्रुषियराहार-दानकर्क
 बसादय खण्ड-स्फुट-बाणोंद्वारकं कोट्टु बिट्टु गहें सलगे ८ मत्तमा-भीमसमुद्रद होल-
 दल्लु बेईले स-गे २ मत्तं सम्यक्त्व-चूडामणियेनिमद **सेनबोव-मारमय्यं**
 सामन्त-गूलि-**वाचिदेवन** कैयल्लु भूमियं पडेदु **मुदुगेरे-गळद** बागिनोळ्
मारसमुद्रमेन्दु कन्ने-गेरयं काट्टासि आ-केरयं भीम-जिनालयद शू-चक्ष-पार्श्व-
 देवरङ्ग-भागक्षमष्ट-विधानार्चनेगं श्रुपियराहार-दानकर्क बसादय खण्ड स्फुट-बाणोंद्वारकं
 कोट्टु बिट्टुगिन्ता-मारसमुद्रमादियागि समस्त देवालय-विष्णु-गृह-बसदिगे बिट्टु-भूमियं
 कुरुक्षेत्र **बाणरा(रणा)सि-प्रयागे-अर्घ्यतीथमेन्दु** प्रतिपालिसुबुदु ॥

मत्त ॥ परमानन्ददे **वाचि-देव**नमयं दिव्दू-लै-गण्डुगम् ।

दोरबेत्तगद गहें-बेईलयनन्ता-तोण्ट-सद्-गेहमं ।

स्थिर-तेजं कुर्डालन्तुदात्त-पडेदं चातुर्य-चन्द्रैश्वरम् ।

वर-विद्या-निधि **वाचि-राज**विबुधं चन्द्रार्कळ्छन्नेगम् ॥

सुरगिरिमुळिळनं जलाधिमुळिळन तारनगेन्द्रमुळिळनम् ।

सुरनादिमुळिळनं शिरियुमुळिळनवगद सूर्यरुळ्छनम् ।

सुर-समेमुळिळनं वरदे भारतियु.....तारमुळिळनम् ।

धरे शाशिमुळिळनं निळुके गूलिय-वाचिय धर्मे-शासनम् ॥

(वही अन्तिम श्लोक) ।

[जिस समय, द्वारावतीपुरवराधीश्वर, यदुकुलाम्बरलुमणि, तलकाडु कोङ्कु
 नङ्गलि गङ्गवाडि नोलम्बवाडि बनवसे हानुङ्गल्ल हर्लासने बेल्कोळ और उच्चंगि

पर कन्वा करने वाले भुजबल-वीर-गङ्ग विष्णुवर्द्धन नारसिंह-देव, शान्ति से राज्य करते हुए, दोरसमुद्र के निवासस्थल पर थे:—

तत्पादपद्मोपक्षीवी मान्यरवेडपुरवराधीश्वर, अदल लोगोंके लिये सूर्य, मरुगरे-नाड्का अधिपति सामन्त गूळि-बाचि था। उसकी प्रशंसायें, गङ्ग-पुत्रके रूप में उसका वर्णन। उसका पुत्र गुडुद गङ्ग था। उसके कुलमें नायक वसव हुआ। उसका पुत्र गङ्ग था, जिसने गुत्तको हराया था। उसका पुत्र बसवेय था। उसका पुत्र चलवरिव था। उसका पुत्र गङ्ग था, जिसकी स्त्री बेनवान्त्रिके थी, और उनका पुत्र मान्यरवेड-पुरका अधीश बाचय या वाचि था उसकी विस्तार-पूर्वक प्रशंसा।

मरुगरे-नाड्का अधीश, अदल-राम, सामन्त-बाचि मरुगरे-नाड् के कय्दाल (कैदाल) में अतीव उच्च धर्मका पालन कर रहा था। कय्दालकी शोभा का वर्णन। वहाँ उसने जिन मन्दिर, शिव मन्दिर और विष्णु मन्दिर सभी को सहारा दिया। और वहाँ उसने यह गङ्गेश्वर मन्दिर, एक नारायण मन्दिर, एक चलवरिवेश्वर मन्दिर, एक रामेश्वर मन्दिर, और जिन मन्दिर बनवाये। तथा उसने भीमसमुद्र और अडल समुद्र नाम के तालाब बनवाये। तथा दिग्बैर ब्राह्मणोंको दिया।

इस प्रकार चार मतोंके धर्मको बढ़ाते हुए, सामन्त गूळि-बाचि-देवने, बहुत-से मन्दिर, बसदि, और विष्णु-मन्दिर, तथा बड़े-बड़े तालाब बनवा कर,—(उक्त मितिको), सूर्य-ग्रहणके समय, अपने पिता सामन्त गङ्गैयकी मृत्युके स्मारकमें, उनके नामसे एक मन्दिर बनवाकर उसमें गङ्गेश्वर-देवको स्थापना की, और मन्दिरकी मरम्मत, पूजा-विधि, तथा मुनियोंके आहारके लिये (उक्त) हिरिय-केरेकी ज़मीन दी।

इस तरह केशव-देव, चलवरिवेश्वर-देव, रामेश्वर-देवके लिये भी भूमियाँ प्रदान कीं। तथा अपनी पत्नी भीमलेके नामपर,—जिसका देव जिनपति था, पिता यादरे-नाक और माता चिम्बले थी,—भीम जिनालय नामकी बसदि बन-

बायी, भीम समुद्र नामका पवित्र (Virgin) तालाब बनवाया और उस तालाबकी सारी जमीन चन्न-पारिदय देवके लिये प्रदान कर दी ।

तथा सेनबोव मासमयने, साभन्त गूळि-बाचि-देवसे भूमि प्राप्त करके, मार-समुद्र नामका पवित्र तालाब बनवाकर भीम जिनालयके पार्श्व-देवके नाम कर दिया ।

इन विभिन्न दानोंको बाणार(राण)सी, प्रयाग इत्यादि पवित्र तीर्थोंके समान समझा जाय । ये सब दान विद्या-निधि मा (बा) चि-रजके अधीन किये गये थे । शासन हमेशा कायम रहे, इसकी कामना ।]

[Ec, XII. Tumkur Tl., No. 9.]

३३४

बामणी;—संस्कृत और कन्नड ।

[शक १०७३—१११० ई०]

१. स्वस्ति ॥ जयत्यमल्ल-नानातर्ह-प्रतिपत्ति-प्रदर्शकम् । अर्हतः पुर [,] दे [व]-
२. स्य शासनं मोह-शासनम् ॥ श्री-शीलहार-वंशे जतिगो नाम [लि]-
३. तीशस्समवातस्तत्पुत्रौ गोङ्कल गूवलौ । तत्र गोङ्कलस्य स [नु]-
४. स्मरिसिंहदेवस्तदपत्यं गण्डरादित्यदेव-तस्य नन्दनः । समधिग-
५. तपञ्चमहाशब्द-महामण्डलेश्वरः । नगर-पुर-
६. वराधेश्वरः । श्री शीलहार-वंश-स (न) रेन्द्रः । जीमूतवाहनान्वय-
७. प्रसूतः । सुवर्ण-रुद्र-ध्वजः । मरुवक्-सर्पः । अयनसिध-
८. गः । रिपु-मण्डलिक-भैरवः । विद्विष्ट- [ग] ज-कण्ठीरवः । इहुवरादित्यः ।
९. कलियुग-विक्रमादित्यः । रूप-नारायणः । गिरि-दुर्मा-लघनः । श-
१०. निवार-सिद्धिः । श्री-महालक्ष्मी-लब्ध-वरप्रसाद इत्यादि-नामावलि-विराजमानः ।
११. श्रीमद्-विजयादित्यदेवः । वल्लवाड-स्थिर-शिबिरं सुख-संकथा-वि-
१२. नोदेन विजय-राज्यं कुर्वन् । शक-वर्षेषु त्रिसप्तत्युत्तरसह-

१३. का-प्रमितेष्वतीतेषु अङ्कतोऽपि १०७३ प्रवर्त्तमान-प्रमोद-संव[त्स]-

१४. र माद्रपद-पूर्णमासी-शुक्रवारे सोमग्रहण-पूर्व-निमित्तं-

१५. णवु [क] गेगोला नुगत-मडलूर-ग्रामे सणगमय्य-चं [ध]-

१६. खयोः पुत्रेण । पुन्नकब्बायाः पत्या जेतगावुण्ड-हेम्म-

१७. गावुण्डयोः पित्रा चोघारे-कामगावुण्डेन कारितायाः ।

१८. श्री पार्श्वनाथवसतेह्वानामष्टवि [ध] त्त्वन-नामित्तं । वसतेः ख-

१९. ण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारार्थं । तत्रस्थित-यतीनामहा-

२०. र-दानार्थं च तस्मिन्नेवग्रामे कुण्डिदेश-दण्डेन निव-

२१. त्तन-चतुर्थ-भाग-प्रमित-क्षेत्रम् । तन्नैव दण्डेन त्रि-

२२. शस्तम्म-प्रमाण पुष्पवाटी । द्वादशहस्तप्रमाण-

२३. गृह-निवेशनं च स राजा निज-मातुल-लक्ष्मण-सामन्त-विज्ञा-

२४. पनेन तस्यैव गोत्रदानार्थं श्री-मूलसंघ-देशीयग-

२५. ण-पुस्तकगच्छ-कुल्लकपुर-आ-रूपनारायण-चैत्याल[य]-

२६. स्याचार्यः ॥ भा-माघनन्विसिद्धान्तदेवो विश्व-मही-

२७. स्तुतः । कुलचन्द्रमुनः शिष्यः कुन्दकुन्दान्वयां—

२८. शुमान् ॥ आप च ॥ रोदो-मण्डलमङ्ग किं स्व-त्रुषा

२९. व्याप्नोति शक्रद्विपः किं क्षाराम्बुधरावृणोति भुवनं गङ्गाम्बु

३०. किं वेष्टते । स्यानाऽयं प्रिय-सुस्थिरः समरुचत् किं सान्द्र-चन्द्रात-

३१. पो यत्कीर्त्येथमनूद्धतक्कणमसौ आ-माघनन्दी बयेत् ॥ त-

३२. न्मुनीन्द्रस्यान्तेवासिनामहर्हन्दि सिद्धान्तदेवानां यादौ

३३. प्रक्षाल्य धारा-पूर्वकं सव्व-नमस्यं सव्व-बाधा-परिहारमाच-

३४. न्नाकर्त्तारं स-शा [स] नं दत्तवान् ॥ @ ॥ स्वदत्तां परदत्तां वा यो
हरेत बसु-

३५. ग्वरां । षष्टि वर्षसहस्राणि विष्टायां जायते कृमिः ॥ न विषं विषमि-

३६. त्याहुवर्द्धस्व विषमुच्यते । विषमेकाकिनं हन्ति दैतस्वंपु-

३७. त्र-पौत्रकम् । अपि च ॥ सक्तां कपिलां शस्त्र्या हत्वास्या
 ३८. मांस-शोणिते । गङ्गायां सोऽस्ति यो गृण्हात्यमुं धर्मोऽवरां
 ३९. नरः ॥ तत्पातकफलेनासौ यावच्चन्द्रदिवाकरं । तावद्दोरतरं दुःख-
 ४०. मश्नुते नरकावनौ ॥ अन्यच्च ॥ @ ॥ मातुस्तार्द्र-कपालेन सोऽस्ति मा-
 ४१. तम-वेश्जसु [।] श्व-मांसं भिक्षया लब्धं गये (?) यो धर्ममूढः ॥ @ ॥
 ४२. भद्रमस्तु जिनशासनाय ॥ सम्पद्यतां प्रतिविधानहेतवे । अन्य-
 ४३. वादि-मदहस्ति-मस्तक-स्फाटनाय घटने पटीयसे ॥ @ ॥ अक्कसाले ब-
 ४४. म्म्योजन पुत्र । अमिनन्ददेवर गुडु गोव्योजन खड्गणे ॥ @ @ @ ॥

सारांश

[यह शिलालेख एक पत्थर पर उत्कीर्ण है । यह पत्थर बामणी गांवके जैनमन्दिरके दरवाजे पर अवस्थित है । बामणी गाँव कामल शहरसे दक्षिण-पश्चिम ५ मील पर है । कामल कोल्हापुर रियासतका एक मुख्य शहर है ।

इस शिलालेखमें शीलहार वंशके महामण्डलेस्वर विजयदित्यदेव के एक दूसरे दानका उल्लेख है । २-१० की पंक्तियोंमें दाताकी वही वंशावली और वर्णन है जो नं० ३२० के कोल्हापुरके शिलालेखमें है, सिर्फ इसमें दूरके अपने ६ सम्बन्धियों (कीर्तिराज, चन्द्रादित्य, गूवल द्वितीय, गङ्गदेव, बल्लालदेव और भोबदेव) तथा नौ अपने कम महत्त्वके विषदों (पदों) को छोड़ दिया है । पंक्ति ११-३४ में उल्लेख है कि अपने निवासस्थान बळवाइ में रहकर ही शासन करनेवाले विजयादित्य देव ने अपने मामा सामन्त लक्ष्मणके कहनेसे तथा अपने गोत्रदानके लिये, जब कि प्रमोद वर्ष चालू था, अर्थात् १०७३ शक वर्षके व्यतीत होने पर, भाद्रपद महानेकी पूर्णिमा तिथिके शुक्रवारको चन्द्रग्रहणके निमित्तसे—एक भूमिका दान किया । यह भूमि कुण्डिके नापसे नापमें चौथाई निवर्तन थी । साथमें तोस स्तम्भ (खम्भे) प्रमाण पुष्पवाटिका, १२ हाथका एक मकान भी थे । यह सब भूमि बगैरः... जडु [क] गेगोल्ल जिलेके मडलुर गाँवकी थी । इस दानका प्रयोजन यह था कि

इससे चौथीरे कामगाकुण्ड के बनवाये हुए उखी गांवके मन्दिर की पार्श्वग्रन्थ भगवानकी अष्टविध पूजन होती रहे, जो कुछ मन्दिरके मकानका बिगाड़ हो वह सुधरता रहे तथा वहां रहनेवाले मुनिबनोंके लिये उससे उनके उपहारका प्रबन्ध होता रहे। यह दान शिलालेख नं० ३२० में वर्णित श्री माघनन्दि सिद्धान्तदेव के ही एक और शिष्य श्री अर्हन्दि सिद्धान्तदेवके पैरोंका प्रक्षालन करके किया गया था। इस शिलालेखमें, नं० ३२० के कोल्हापुर वाले शिलालेखमें न मिलनेवाली एक नई बात श्री माघनन्दि सिद्धान्तदेव के विषयमें यह है कि उन्हें यहाँ कुल चन्द्रमुनिका शिष्य तथा 'कुन्दकुन्दके अन्वय का एक सर्व' बताया है। अन्तमें पंक्ति ४३-४४ में पुरानी कबड़में यह बताया है कि इस लेखको सुनार बम्बोके पुत्र तथा अभिनन्दनदेवके शिष्य गोळोजने खोदा था।]

[EI, III, No. 28, T. R. A.]

३३५

कोन्नूर-संस्कृत ।

—[बिना काक-निर्देशका, पर १२ वीं शताब्दिका मध्य (कीकहार्न) ।]—

५६. मिथ्याभाव-भवातिदर्य-पर-तदुदुषशासनोच्छेदकम् प्राज्ञाज्ञा-वशवर्त्तमा-

६०. न-जनता-सत्सौख्यसम्पादकम् [।] नानारूप-विशिष्ट-वस्तु-परम-स्याद्वाद-लक्ष्मी-पदम् जेबीयाजिन-राजशासनमिदं स्वाचार-सार-प्रदम् ॥ [४४]

६१. सिद्धान्तामृत-वार्द्धि-नारकपतिस्तर्काम्बुबाहर्षतिः शब्दो-द्यानवनामृतैक-परणि-
श्र्योगीन्द्र-चूडामणिः [।] त्रैविद्यापर-सात्त्य-

६२. नाम-विभवः प्रोदभूत-चेतोभवः^१ बीयादन्यमता-वनीभृदशनिः श्री-मेघचन्द्रो
मुनिः ॥ [४५] इदे हंसी-बृद्ध-मीम्बल्लगोदपुदु

६३. चकोरी-चयम् चञ्चुविन्दं कर्दुकल्सार्हपुदीशं जडेयो-ळिरिसलेन्दिर्हपं सेज्जेगौर-
ल्पदेदर्यं कृष्णनेम्बन्तेसेदु बिस-लत्त-कन्दली-कं-

१. 'भवो' पढ़ो ।

६४. द-कान्तम् पुदिदत्तो मेघचन्द्र-त्र (व) तितितळक-जगद्वर्त्ति-कीर्त्ति प्रकाशम् ॥
 [४६] वैदग्ध्य-श्री-वधूदो-पतिरखिल-गुणालंकृतिर्भेद्य-
 ६५. द्र-त्रैविद्यस्यात्मजातो मदन-महिभृतो भेदने वज्रपातः [।] सैद्धांतान्यु-
 (व्यू) ह-चूडामणिरनुपल (म)-चिन्तामणि-
 ६६. भूर् (भूर्) बनानाम् योऽभूत् सौजन्य-रुद्र-भियमवति महौ वीरनन्दी
 मुनीन्द्रः ॥ [४७] यशब्दज्ञ-नभस्थली-दिनमणिः काव्यज्ञ-चूडाम-
 ६७. णिर्यस्तर्कस्थिति-कौमुदी-हिमकरस्तूर्यत्रयाब्जाकरः [।] यस्सिद्धान्त-विचार-
 सार-धिषणो रत्न-त्रयो-भूषणः स्ये-
 ६८. यादुद्धत-वादि-भूभृदराणिः श्री-वीरनन्दि-मुनिः ॥ [४८] यन्मूर्त्तिर्जगतां
 जनस्य नयने कर्पूरपूरायते यद्वृत्तिर्विदुषां त-
 ६९. तेश्चरणयोर्भाणिक्यभूषायते [।] यत्कीर्त्तिः ककुभां श्रियः कचमरे मल्लोल-
 तांतायते जेजीयाद् भुवि वीरनन्दि-मुनिपस्सै-
 ७०. ज्ञात-चक्राधिपः ॥ [४९] * श्री-कोण्डकुन्दाव्याम्बर-शुभणि विद्वज्जन-
 शिरोमणि समस्तानवद्य-विद्याविलासिनी-विलास-मूर्त्ति श्री-वीरनन्दि-सै [द्रा]-
 ७१. न्तिक-चक्रवर्त्तिः श्रीमन्-महास्थानं कोळनूर महाप्रभु-हुलियमरसतुं मूह-
 पुर-पञ्च-मठ-स्थानङ्गलुं ताम्र-शासन [मं]
 ७२. नोडि बरेयिसिमेनल्का शासनदोळेन्तिदुर्दन्ती शिलाशासनमं बरेयि [स्]
 दरु [॥] मङ्गळ महा-श्री श्री श्री नमो १ [॥]

[इस लेखमें (जो मूल लेख की पं० ५६-७२ तकमें है), जैनधर्म तथा मेघचन्द्र-त्रैविद्य और उनके पुत्र वीरनन्दी इन दो मुनियोंकी प्रशंसाके बाद, बताया गया है कि कोळनूरके 'महाप्रभु' हुलियमरस तथा और लोगोंकी प्रार्थनापर वीरनन्दीने एक ताम्र-शासनको फिरसे यहाँपर शिला-शासनके रूपमें लिखवाया । इस ताम्र-शासनको इन लोगोंने स्वयं उनके पास देखा था ।

१. यहाँपर कुछ अक्षर (कमसे-कम छः) किस गये हैं ।

श्रवण-बेलगोलके एक शिलालेखसे हम जानते हैं कि माघचन्द्र-त्रैविद्यका स्वर्गारोहण बृहस्पतिवार, २ दिसम्बर १११५ ई० को हुआ था; और श्री पाठकके द्वारा प्रकाशित एक सूचनाके अनुसार, वीरनन्दीने अपने 'आचारसार' ग्रंथकी समाप्ति उस तिथिको की है जिसे एफ़ कीलहार्नने यूरोपियन कलैण्डर के अनुसार सोमवार, २५ मई ११५३ ई० नियत की है। उपर्युक्त लेखके कथनानुसार इस लेखके पूर्वभाग (पंक्ति १-५६) की जब नकल की गई थी और जब यह शिलालेख उत्कीर्ण किया गया था वह काल, उक्त दोनों मुनियोंके काल निर्णयके प्रकाश में, करीब-करीब १२ वीं शताब्दिका मध्य ठहरता है।

[EI, VI, no 4 (II part; line 59-72).] T L Tr.

३३६

लण्डन (हॉर्निमन म्यूज़ियम) संस्कृत ।

सं० १२०८ = १११२ ई०

[जिन मिस्टर हॉर्निमन (Mr. Horniman) के म्यूज़ियम में यह मूर्ति-लेख मिला है उसकी मूर्ति उन्होंने म्यूज़ियम के ब्यूरेटर (Curator) मि० क्विक (Mr. Quick) के कथनानुसार, सन् १८६५ में लण्डन में खरीदी थी :—Rh. D.]

५ मूर्ति जैनोंके बयालीसवें तीर्थङ्कर नेमिनाथ की है। चरण-पाषाणपर बहुत ही सुरक्षित तीन पंक्तियोंका एक लेख है। लेख नागरी अक्षरों और व्याकरण की अशुद्धियों से भरी हुई संस्कृत में है। लेख और अनुवाद निम्न है :—

१. देखो Ind. Art. Vol. XIV. p. 14. श्री पाठकने जो सिद्धि दी है वह यह है 'अंक १०७६, श्रीमुख संवत्सर, सोमवार, द्वितीय ज्येष्ठ सुदी प्रतिपदा ।'

लेख

१. ॐ संवत् १२०८ वैशाख वदि ५ गुरौ ॥ मण्डिल पुरात् ग्रहपत्यन्वे (नव्ये)
श्रेष्ठि-माहुल तस्य सुत श्रेष्ठि-श्री-महीपति भ्रातु बाल्ह्ये महीपति-सुत पापे
कूके साल्ह्ये देवू [आल्हू ?]
२. विवीके सवपते सर्व्वे नित्यं
३. प्रणमांत (मंति) स [ह] ॥

अनुवाद :—ॐ ? संवत् १२०८, वैशाख वदी ५, गुरुवारको । मण्डिलपुर (बुन्देलखण्डका एक नगर) से, ग्रहपति वंशके श्रेष्ठी माहुल; उसके पुत्र श्रेष्ठी महीपति; उसके भाई बाल्ह; और महीपतिके पुत्र पापे, कूके, साल्हू, देवू, [आल्हू ?], विवीके और सवपते—ये सब मिलकर नित्य (रोज़) इस प्रतिमा-की वन्दना करते हैं ।

[J R A S, 1898, p. 101-102] T. L. Tr.

३३७

महोबा;—संस्कृत ।

[सं० १२११ = ११२४ ई०]

श्रीमान् मदनवर्मादेव राज्ये,
सं० १२११, आषाढ़ सुदि ३, सनौ,
देवश्री नेमिनाथ—रूपाकार स्तूपखण ।

इस शिलालेखमें २ पंक्तियाँ हैं, जिसमेंकी नीचेकी केवल एक पंक्ति ही ऊपरके लेखमें आयी है । मूर्तिके चरण तल पर शंखका चिह्न है, जिससे जाना जाता है कि यह श्री नेमिनाथकी मूर्ति है ।

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 73, T.]

३२८

होललकरे;—संस्कृत ।

वर्ष श्रीमुख [११५३ ई० (ल राइल) ।]

[होललकरेमें, सेट्टर नागप्पसे प्राप्त एक ताम्र पत्र पर]

श्रीमत्-पञ्च-कल्याण-वैभवाय नमः ॥

श्रीमत्परम-गम्भीर-इत्यादि ॥

स्वस्ति श्री यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यान-मौनानुष्ठान-जप-तप-समाधि-शील-गुण-सम्पन्नरुमप्प ओ.....कडियाण-परिग्रहादित्यं मध्याह्न-कल्प-वृक्षरुमप्प पारिश्च (पार्श्व) सेन-भट्टारक-स्वामियवर । होललकरेय श्री-शांतिनाथ-देवर बीर्णालयमं...द्वारमं माडिसिदर ॥ श्री-मूल-संघद् चोदण्ण-गौड-मुन्तादवर माडिसिद घर्म्मंउ विघ्नवागिरलु आ-गौडर सत्-पुत्रराद सोमण्ण-गौड शान्तण्ण-गौड आदण्ण-गौड-मुन्तादवर । प्रताप-नायकरिगे नूर-गद्याणवनिक्कि बेडिकोण्डुदु हिरिय-करेय हिन्दण-तोय्मुं गहेयुमं बेहलमं नम्मवर मनेय-काणिकेयुमं सर्व-बाचा-परिहारवागि श्री-अमृत-पडिगे गुरुगळ आहार-दानक्के शुक्र-वर्ष १०७६ नेय श्रीमुख संघत्सरद माघ-शुद्ध १० शुक्रवार विट्ट दत्ति ॥ यिदक्के देक्ता-महोत्सवद विवर । भाव-नाम-संघत्सरद वैशाख-शुद्ध-तदिगे-सोम-वार विमान-शुधि (द्वि) वास्तु-विधि नान्दी-मङ्गल ध्वजारोहण भेरी-ताडन अङ्कुरार्पण बृहच्छान्तिक मन्त्र-न्यास अङ्ग-न्यास केवल-ज्ञानद महा-होम । महा-रूपनाभिषेक्के अम्रोदक-प्रभावने-यन्नु कलश-प्रभावने-यन्नु माडिसि पुण्योपाज्जने-यन्नु माडिसिकोण्डर । वर्षं प्रति अक्षय-तदि [गे] यल्लि नडेयुव महोत्सव-प्रभावनेगे...अष्टाद्विक-पूर्वपाळिगे श्रवण-पौर्णमी-शुत्सवक्के भाद्रपद-शुद्ध-चतुर्दशि-अनन्त-तोहि-कलश-प्रभावने महा-आराधने-मुन्तादक्के । कार्तिक-मासदल्लि कृत्ति-कोत्सवक्के माघ-ब-चतुर्दशियल्लि जिनरात्रे-महोत्सवक्के । चतुस्-सीमे-विवर । तोटक्के मूडलु हिरे-करे । तेङ्गलु हेदारि । पडुवलु नेट्ट-कल्लु । बडगलु हुट्टरे । गहेगळ चतुस्-सीमेगे नाल्लु-दिक्किगु नाल्लु-मुक्कोडे सह नाल्लु-नेट्ट कल्लु । बेदलु-भूमिगु

इदे-गुरित् । सुजनरु यी-बर्मव नडेसिकोण्डु बरुवड् । (वे ही अन्तिम श्लोक)
शासनके मद्र भूयाद् वर्द्धतां चिन शासनम् ॥

[पाँच कल्याण-वैभव जिसके होते हैं उसके लिये नमस्कार ।]

चिन शासनकी प्रशंसा ।

स्वस्ति । साधुके गुणोंसे युक्त पारिखसेन-भट्टारक-स्वामीने होळलकेरेके शान्तिनाथ-देवके ध्वस्त मन्दिरको फिरसे सुधरवाया था । श्री मूलसंवके बोद्धण-गौड और दूसरे लोगोंके द्वारा दिया गया दान जो रुक गया था उसके लिये उस गौडके पुत्रों (जिनके नाम दिये हैं) और अन्य लोगोंने १०० गद्याण सहित प्रताप-नायकको भेंट में देते हुए प्रार्थना-पत्र दिया, तब पारिखसेन-भट्टारक-स्वामीने हिरिय-केरेके पीछेकी जमीन और लोगोंके घरोंसे मिली हुई भेंट, सर्वकरोसे मुक्त करके, देवकी पूजा और गुरुओंके आहार-प्रबन्धके लिये (उक्त दिन) दानमें दे दीं । इसके बाद देवता-महोत्सवकी एक सूची और भूमिकी सीमाएँ आती हैं । वे ही अन्तिम श्लोक ।]

[EC, XI, Holalere tl., no. 1]

३३६

हेरगू—संस्कृत तथा कन्नड ।

—[शक १०७७-११४६ ई०]—

[हेरगू (आलुर परगना), जैन-वस्तिके सामनेके पाषाणपर]

श्रीमत्पवित्रमकलंकमनन्तकल्पं

स्वायम्भुवं सकलमंगलमादि-तीर्थम् ।

नित्योत्सवं मणिमयं नियतं जनानाम्

त्रैलोक्य-भूषणमहं शरणं प्रपद्ये ॥

श्री-वीतराग ॥

श्रीमत्परमगम्भीरस्थाद्रादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्य-नाथस्य शासनं चिन-शासनम् ॥

स्वस्ति सम्पत्तिगत-पञ्च-महा-शब्द महामण्डलेश्वरं द्वायावती-पुरवराधीश्वरं यादव
वंशोद्भव कोङ्क-नङ्कलि-गंगवाडि-नोणम्बवाडि- बनवसे-हानुंगल्लु- हल्लिगे-गोण्ड
मुख-बलवीर-गंग बगदेकमल्ल होयसल-वीर-नारसिंह-देवक श्रीमद्राजधानी-
दोरसमुद्रव नेलवीडिनलु दुष्ट-निग्रह शिष्ट-प्रतिपालनव माडि सुख-संकथा-
विनोददि पृथ्वीराज्यं गेयुत्तमिरे तत्पादपद्माराधकं पर-वळ-साधक-नामादि-समस्त-
प्रशस्ति सहितं श्रीभन्महाप्रधानं हिरिय-हडवळं चाविमय्यन नेगत्तैयेन्तेन्दडे ।

इननं तेजदोळ् इन्द्रनं विभवदोळ् चाणक्यनं नीतियोळ् ।

मनुवं चारु-चरित्रदोळ् जळधियं गाम्भीर्यदोळ् धैर्यदोळ् ।

कनकाद्रीन्द्रमनेयदे पोल्बनदटि त्रैलोक्यमं मेच्चिद-

ज्जुननं श्री-पडवल्ल-चामनेनलिन्नेवणिपं बणिपं ॥

वर-वनिता-बनङ्गळ मनं कुसुमास्त्र-शारकके सव्दुधो-

त्कर-कर-पङ्कजं बहु-सुवर्ण-चयकविनाथ-मन्दिरम् ।

स्थिरतर-राज्य-लक्ष्मिगेडैयादवु रूप-विलासदेळ्गेयिम ।

निरुपम-दानदिं पति-हितोन्नतियि पडवळ्ळ चामन ॥

अनुपममप्य बन्धु-निवहं निब-पक्ष्मनर्ध-रत्न-म- ।

इन-तति पञ्च-वर्णमखिलोन्न-मुनासिये चवु दुष्ट-दु-

ज्जन-रिपु-भूमुबभुजगरागे नेगत्तैयनांत बिट्टि-दे- ।

बन गरुडं समन्तेसेदनी-धरेपोळ् पडवल्ल-चामणम् ॥

इन्नु पोगत्तैंग नेगत्तैंग नेलेयाद हिरिय- । हडवल्ल-चाविम्य् ।

यन सर्वांग-लक्ष्मी हिरिय-हडवळिति जक्कळेयिर नेगत्तैय् एन्तेन्दडे ।

निरुतं पूजिर देवमोप्पुव जिनं सिद्धान्त-चक्रेश्वरम् ।

गुरु मत्ता-नयकीर्ति-देव-यति ताय् आचम्बे बम्मय्यनुं ।

.....प्रेमद तन्दे मिक्क सुभदिं लोकैक-रत्ना-क्षमम् ।

पुरुषं श्री-पडवल्ल-चामनेनलिं जक्कळेयि धन्यरार् ॥

रतियन्नळु रूपिं भा- । रतियन्नळु वाक्विलासदिं सौष्टवदिं ।

क्षितियन्नळु पेम्मेगरुन्- । क्षतियुन्नळु जक्कळेयि कान्ता-स्तम् ।

क्रोमळवागि ताने शुभ-लक्षण-युक्तमेनिप मूर्त्तियिम् ।
व्योममनेये पन्वि दिगु-दन्ति-वरं निमिदिहं कीर्त्तियिम् ।
श्री-मुखदिन्दमुद्गविप सत्यद मेल-नुडियिन्दे गोत्र-चि- ।
न्तामणि जक्किचव्वे सले रञ्जिसिदळ् साचि-देवियन्ददिम् ॥
चन्देरेये वन्दि-जनमा- । नन्ददिना-क्षणदे कल्य-कुब्जदारवेयी- ।
वन्ददिनीवळ् बेळ् पुड- । नेन्दुं जक्कव्वे-देवि जगती-तळदोळ् ॥
तक्कळ् मिक्क सोर्मुडिय वृत्त-कुर्वगळ्नो - ।
उक्कलारम्बिवेम्ब नगे-गङ्गळ् रोकमेनिप होत्र-व- ।
णक्के विशेषमप्पघर-कान्तिय जक्कल-नारियोन्दु भा- ।
वक्के गुणक्के वाग्बिभवदुन्नतिगार् दोरे पेण्डिरुक्खियोळ् ॥
जिन-राजाङ्घ्रियनोप्पुवर्चनेगळि सद्भक्तियिन्दन्चिपळ ।
विनयं गुन्दडे-लोक-पूज्यरेनिसिध्पाचार्यं प्रीतिय-
प्प नवाज्यामृतदन्नदिं तणिपुवळ् श्री-जैन-गोहङ्गळम् ।
मनदुत्साहदे माळ्पाळी-धरणियोळ् जक्कव्वेयिन्तप्परार् ॥
तळदोळशोकेयोप्पुव तळिर्मुल्ल-पङ्कजदोळ् सरोजवा-
सुळि-गुडळोलियोळ् मधुप-संकुलमोळ् नुडिगळ्गे मिक्क-को-
किळ-मरिं यानदोळ् गज-समुच्चयमुद्ग-पयोधरक्के पो- ।
ङ्गळशमेनिपिवेन्दोरेये जक्कले-नारिय रूपिनेळ्गेयोळ् ॥
रव अक्कम् (अवरक्कम्) ।

जिन-राजननतिमुददिन्द ।

अनेकवेनिपर्चनङ्गळिन्दन्चिसि सज् ।

जनरोळु मिगिलेने नेगळ्दा- ।

विनयद कणि पद्मियक्कनेने मेच्चदरार् ॥

अवर गुरुगळ् ।

सकळ-ध्याकरणार्थ-शास्त्र-चयदोळ् काव्यङ्गळोळ् मिक्कना-

टिकदोळ् वस्तु-कवित्वदोळ् नेगळ्द सिद्धान्तङ्गळोळ् पारमा- ।

ल्लिकदोळ् • किकदोळ् समस्त-कळेयोळ् पाक्किन नडेय्-

चिकनाद नयकीर्त्ति-देव-यतिपं सिद्धान्त-चक्रेश्वरम् ॥

हेरगोळिल्लतेन्देल्लं । निरुतं बिन्नविसे केळदु बसदियनत्या- ।

दरदिन्दे माडि बक्कले । घरेयं धर्मवके कोट्टु बसमं पडेदळ् ॥

अदेन्तेन्दे शाक-वर्षं १०७७ नेय युव-संवत्सरद पुण्यदमाषास्ये
आदिवारुत्तरावण-संक्रान्तियन्दु श्रीमन्महाप्रधानं हिरिय-हडवळं चाविमय्यन
सर्वाङ्ग-लक्ष्मी हिरिय-हडवळति श्री-मूल-संग (घ) द देशिय-गणद पुस्तक-गच्छद
कोण्ड कुन्दान्वयदाचार्यक श्री-नय-कीर्त्ति-सिद्धान्त-चक्रवर्तिगळ गुड्डि बक्कलेयक
महोत्साहदिं तावु हेरगिनलु प्रतिष्ठेयं माडिसिद श्री-चेन्न-पार्श्वनाथ-स्वामिगळ श्री-
पाद-पद्माष्ट-विषाचूर्वनककं उत्तुंग-चैत्यालयद खण्ड-स्फुटित-जीणोंद्वारणककं रिषिय-
राहार-दानकवेन्दु श्रीमत्तु हेरगिन प्रभुगळ-रोडेय-सोमनाथिमय्य बूविमय्य सिङ्ग-
गावुण्डनोळगाद समस्त-प्रभुगळ समस्त-प्रधानर सन्नियानदलु श्रीमन्महापण्डितेश्वर-
नारसिंह-देवगं बिन्नहं गेयदु हिरिय-केरेंय कीलेरियल्लि कल्ल-तुम्बिन समीपदलु
बिडिसिद गदें सलगेययदु वेदलेयल्लि स्थलवोन्दु ।

[जिस समय (अपने सर्वपदों सहित) होयसल वीर-नारसिंह-देव अपने वास-
स्थल शाही नगर दोरतमुद्रमें रहते थे और शान्ति एवं बुद्धिमत्तासे अपने राज्यका
शासन कर रहे थे :—

उनके पादपद्मका उपबीवी पुराने सेनापति चाविमय्य थे, जिनकी प्रशंसामें
कहा गया है कि वे बिट्टिदेवके गहड़ थे । उनकी पत्नीका नाम बक्कले था ।
उसकी बड़ी बहिन (उसकी प्रशंसा) पद्मिमय्यक थी । दोनोंके गुरु सिद्धान्त-चक्रेश्वर
नयकीर्त्ति-देव-यतिप थे ।

हेरगू की अच्छा स्थान होनेकी सबसे प्रशंसा सुनकर, बक्कलेने इच्छापूर्वक
एक मन्दिर वहाँ बनवाया, और इसे भूमिदान भी दिया । इससे उसकी बहुत
प्रसिद्धि हुई ।

(निर्दिष्ट मिलिके) महाप्रधान, पुराने सेनापति चाविमय्यकी पत्नी, श्रीमूल-
संग, देशिय-गण, पुस्तक गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके आचार्य नयकीर्त्ति-सिद्धान्त-

चक्रवर्ती की शिष्या (भ्रातृक), जककवेने, बहुत हर्षके साथ मगवान् चेन्न-
पार्थनायकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करवाके, —अष्टविध पूजनको चालू रखने, उसके
ऊँचे मन्दिरकी मरम्मत आदिके लिये, और भूषियोंको आहार-दान देनेके लिये,
हेरगूके सरदारोंकी उपस्थितिमें, महामण्डलेश्वर नारसिंह-देवसे प्रार्थना करके,
(निर्दिष्ट) भूमिका दान दिया ।]

[EC, V, Hassan TL, No. 57.]

३४०

खजुराहो—संस्कृत ।

[सं० १२१२ = ११५५ ई०]

[इस शिलालेखके भी लेखका पता नहीं है । श्री वीरनाथ (महावीर
स्वामी) की प्रतिमाके चरण-पाषाणमें यह लेख अङ्कित है । शिल्पीका नाम
कुमार सिंह (या सिनहा) लिखा हुआ है ।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 68, P. A.]

३४१

महोबा—संस्कृत ।

[सं० १२१३ = ११५६ ई०]

“संवत् १२१३, माघ सुदि ५ गुरु (गुरो) ।”

इस प्रतिमा पर चक्रोरका चिह्न है, इससे यह प्रतिमा सुमतिनायकी है । लेख
एक ही लम्बी पंक्तिका है । सबसे पहले उक्त कालका उल्लेख है । इसमें किसी
राजाका नाम नहीं दिया हुआ है, और इसके अन्तमें शिल्पी रुकार (रूपकार)
काखनका नाम आता है ।

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 73, A.]

इति करनके कैषिडियोलादुदु तन्न जसं जगक्के कैयू ।
 गन्नडियादुदेन्देसेदनो जगदोळ् जगदेव-भूभुजम् ॥
 समदारात्यङ्गना-मङ्गळ-फटक-हटित्-कर्ण-पण्णीपहं वि- ।
 क्रमवी-काळेय-दोषापहं...मळ-चरित्रं...विशिष्टे- ।
 इ-मनस्-तापापहं तन्नतुळ-वितरणोद्यागवेन्दे लोको- ।
 तमनादं **खिङ्गि-देव**ं जग-विरुदरळेवं समग्र-प्रभावम् ॥
 अवरोहने पुट्टिदळु भू- ।
 भुवनं वित्तरिसु वत्तिमब्बेयो पेळेम्- ।
 बबोलेसदळळिया दे- ।
चि विद्युद्धाचारदिं विनिर्मळ-गुणदिम् ॥
 रवर-पुरदोळ् नेरे सेनुव- ।
 पुरदोळ् माडिसिदळेसेव चिन-भवनमनन्त ।
 एरडमळिया-देवियवो- ।
 लरसियार् पुण्यवति [य] री-वसुमतियोळ् ॥
 सले शोभाकरबागे सेतुविनोळत्युत्साहदिं भव्य-मण्- ।
 डळि बाप्पेम्बिन वोन्दे कण्ठदोळे सम्यग्दर्शन-ज्ञान-निर्-
 मल-चारित्र-गुण-प्रयुक्ते चिन-राजागारमं भक्तियम् ।
 अळिया-देवि समन्तु माडिसिदळुर्वी-स्तुत्यमं नित्यमम् ॥
 चतुरे चतुर्विच-दानो- ।
 जतियोळ् चिन-राज-भवनमं माडिसि भू- ।
 नुत-कीर्त्ति **होम्नेबरसन** ।
 सति **अळिया-देवि** नेगळ्दळवनी-तळदोळ् ॥
 भुज-जल-भीम भीम-सम-विक्रम कोङ्कण-रत्नपाल वि- ।
 श्व-जन-विनूत निर्मल-कदम्ब-कुळोव्वळ गङ्ग-तुङ्ग-वं-
 शज-नृप-होन्न **पोन्न-महिपालन** मम्मं जिनेन्द्र-पाद-पङ्- ।
 कष-मद-भुङ्ग निन्नोरेगे वण्णुवनावनिळा-तळाम्पदोळ् ॥

यी-दीरेय होब-नृपतिगव ।
 आ-दुरित-विदूरे अळिय-देविगवोगेदम् ।
 मेदिनि बणिगलखिळ-गु- ।
 णोदधि जयकेशि-देवनेम्ब कुमारम् ॥
 नेगळदा-श्री-जयकेशि-देवनमरी-सन्दोह-संभोग-कां- ।
 ज्ञेगे मेय्दन्दडे पेत्त-तायळिय-देबी-कान्ते मोहार्थदिन्- ।
 दे गुणाम्मोनिधिगा-मगङ्गे विपुल-श्रेयो-निमित्तं बगम् ।
 पोणळल् सेतुविनोळु विनिर्मिसिदळुद्ध-श्री-बिनागारमम् ॥

स्वस्ति समस्त...प्रख्यात-सीतेयुं बिज्जल-देव तनूजातेयुमप्प अळिया-देवि-
 यरु शक-चर्ष १०८१ नेय प्रमाथि-संवत्सरद् पुण्य-शुद्ध-चतुर्दशी-शुक्ल-
 चारवन्दु । उत्तरायण-संक्रान्तिय-पुण्य-दिनदोळु... गुळिलळिया-
 देवियरु होन्नेयरसहं तम्म धर्मक्के बिट्ट भूमियाबुदेन्दडे (यहाँ दानकी विशेष
 चर्चा आती है) मूल-संघद काणूर-भाणद तन्निणि-गच्छद बन्दणिकेय तीर्त्थ-
 दाचार्य्यर् भालुकीर्ति-सिद्धान्त-देवर कालं कर्चि धारा-पूर्वकं माडि चार-
 पूजा-निमित्तं कोट्टर (हमेशाका अन्तिम श्लोक) ।

[जिन शासनकी प्रशंसा] ।

जिस समय (स्वाभाविक चालुक्य पदो सहित) त्रिभुवन मल्लदेवका विजयी
 राज्य प्रवर्द्धमान था :—

तत्पादपद्मोवजीवी, पट्टि-पोम्बुच्चपुरवराधीश्वर, दक्षिण-मधुराका अधिनायक
 राय-तैलह (प)-देव शान्तलिगे हबार पर शासन कर रहा था । राजा तैल-
 शान्तरकी प्रशंसा । उसकी पत्नी अक्स्वा-देवी थी, जो नन्नि शान्तरकी छोटी
 बहिन भी । और उसके तीन पुत्र थे,—काम, सिंह, और अम्मण । सबसे बड़े
 कामकी प्रशंसा । उसकी पत्नी बिज्जल देवी थी । इनके पुत्र बगदेव और सिङ्गि-
 देव थे । उनकी प्रशंसायें । उनकी बहिन अळिया-देवी थी । उन्होंने सेतुमें एक
 ब्रह्मिया जिन मन्दिर बनवाया था । वह होन्नेयरसकी पत्नी थी । यह होन्नेयरस

(अपर नाम होब पोब) कदम्ब-कुलका प्रकाश, तथा गङ्ग-वंशमें उत्पन्न हुआ था । उस और अलिया-देवीसे जयकेशी-देव उत्पन्न हुये थे और उन्होंने सेतुमें जिन मन्दिर बनवाया था । तथा विज्जल देवीकी पुत्री अलिया-देवीने, (उक्त मितिको), होन्नेयरसके साथ, इस मन्दिरके लिये (उक्त) भूमियोंका दान दिया । यह दान दो “सिवने” का था । यह दान उन्होंने मूलसंघ, काणूर्-गण तथा तिन्निणि-गच्छके भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवके, जो बन्दनिके तीर्थके आचार्य थे, पाद-प्रक्षालनपूर्वक किया गया था । हमेशाका अन्तिम श्लोक ।]

[EC. VIII, Sagar Tl., No. 150-]

३५०

पालनपुर—संस्कृत तथा गुजराती ।

[सं० १२१७ = ११६० ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख ।

[EI, II, No. V, No. 10 (P. 28), T. L, A.]

३५१

कबलो;—संस्कृत तथा कन्नड ।

शक १०८२=११६० ई०

[कबली (सक्रेपट्ण परगना) में पुराने गांवकी जगह पर एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्थाद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जोयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द-महामण्डलेश्वरम् द्वारावतीपुरवराधीश्वरम् ।
शशाङ्कपुर-नि [वास]-वासन्तिका-देवी-सम्ब-

वर-प्रसादनुम् । निवासि-दण्ड-खण्डित-प्रचण्ड-दायादनुम् ।

श्वेतावतपत्र-शीतकिरण-विकसित-सफ़ल-जन-नयन-कुवलयनुं-

निज-भुज-भुजंगराज-सन्धारित-वसुन्धरा-वळयनुम् ।

यदु-कुल-कमल-कमलिनी-कमनीय-तरुण-तरणियुम् ।

सम्यक्त्व-चूडामणियुं । कनक-धारा-वर्ष-परिपूरित-सकल-याचक-चातक-चक्रवाल-
वञ्छननुं । शार्दूल-लाञ्छननुम् । हर-हसित-विशद-क्रीत्ति-वर्त्तित-ब्रह्माण्डनुं ।
मलेपरोळ् गण्डनुं । मद-मुदित-मधुकर-निकुरम्ब-चुम्बित-कट-तट-विराजमान-साम्ब-
समाजनुम् । मले-राज-राजनुम् । लक्ष्मीरमण-रमणीय-चरण-सरसिह-संचरण-चतुर-
षट्चरणनुम् । निज-विजय-राज्य-राज-लक्ष्मी-मणिमयाभरणनुम् । सु-कवि-शुक्ति
संकथाकर्णनोदीर्ण-पुलक-दन्तुरित-कपोलकळकनुम् । नीसि-नितम्बिनी-ललाट-तिळक-
नुम् । सु-रुचिर-चरण-नरवर-मणि-दर्पण-प्रतिफलित-विनत-रिपु-नृपोत्तमांगनुब् ।
अन्तु पोगळ्तेगं नेगळ्तेगं जन्म-भूमियागि ।

मददिं मेलेत्तिदा-माळवन पदकमं कोण्डवं चक्रकूटम् ।

बेदरल् बेङ्कोण्डु सोमेश्वरन् करिगळं कोण्डवं माण्वने पेळ् ।

दुदनेम्बो गेयुदिल्लेन्ददिगननुरे बेङ्कोण्डु कोण्डं जय-श्री-।

सदनं तद्देशं तत्-तळवन-पुरमं विष्णु-विष्णु-क्षितीशम् ॥

तळकाडोल् सुळिदाडि तुङ्ग-नगवप्प उच्चंगियं सार्दना-।

कुळ-चित्तं बनवासेयागे नडेदापिं बेळ्वलं गोन्डु निश-।

चलितं पेद्दारेगेम् स-तोषदोसेदा-हानुक्कलोदत्तु होय्-।

सळ-भूपालन शौर्य-सिंहवसुहृद्-भूपर् भयङ्कोळिवनं ॥

अन्तेनिसिदाश्वर्य-शौर्यदिं कोङ्कु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोणम्बवाडि-बनवासे-हानुं-
गल्लु-हलसिगे-बेळ्वलवोळगागि कञ्जियादि-यागि हेङ्गोरे-पर्यन्तवाद स.....सङ्गळं
दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपाळनं माडि भुज-बल वीर-गङ्ग त्रिभुवनमल्ल होय्सळ-
विणवर्द्धन-देव.....राजधानि-दोर-समुद्रदोळ सुख-संकथा-विनोददि
राष्यं गेयुत्तमिरे तत्पादपञ्चोपजीवि ।

सरसति निनगिनिनु कळा-। परिणते नेगळ्दजितसेन-भट्टारकरिम् ।

दोरेवेत्तु देवियादिर-। पिरियतनं निजदत्तुदवर महत्वम् ॥

सल्ले सन्दा-योन्वतेय-अगलिसिद् दुद्धर-तपो-विभूतिय पेन्विम् ।
 कलि-युग-गणधररेम्बुदु । नेळनेळ्ळं मल्लिषेण-मल्लधारिणळम् ॥
 आवनविषयमो पटु-त-। क्कविळ-बहु-भंगि-संगतश्रीपाल-।
 त्रैविद्य-गद्य-पद्य-व-। चो-विन्यासं निसर्ग-विजय-विळासं ॥
 आळापं बेड माण् मार्-मलेयदिरेले नीं वाडि बन्दिर्दपं भू-।
 पाळोद्यद्-मौळि-माला-विळसित [.....] पदाम्भोज-युग्मम् ।
 चोळ-क्षत्रादि-भूभृत्-सभेयोळ् पलरं गेल्लु वेङ्कोण्डनी-श्री-
 पाल-त्रैविद्य-देव पर-मत-कुधरानीक-दम्भोळि-दण्डम् ॥
 जिन-धर्माम्बर-तिग्म- रोचि सु-चरित्रं भव्य-नीरेज-नन्-।
 दन-मित्रं मद-मान-माय-विजितं चन्द्रप्रभेन्द्रात्मजम् ।
 विनयाम्मोनिधि-वर्द्धनं जन-नुतं तानेन्दु संवर्णिंसळ् ।
 मुनि-नार्थं सळे वासुपूज्यनेसेदं सिद्धान्त-रत्नाकरम् ॥

श्री-भूतबलि-पुण्यदन्त-भट्टारकरि । समन्तभद्र-स्वामिगळि-न्दकलंक-
 देवरिम् । वक्रप्रोवाचार्य्यरिम् । वज्रणन्दि-भट्टारकरि कनकसेन-वादि-
 राज-देवरि । श्री-विजय-भट्टारकरि । दयापाल-भट्टारकरि । श्री-वादिराज-
 देवरिन्द । अजितसेन-भट्टारकरि । मल्लिषेण-मल्लधारि-स्वामिगळि ।
 श्रीपाल-त्रैविद्य-देवरिम् । श्री-वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवरिम् । उत्तरोत्तरमागि
 बन्द श्रीमद्रविळ - संघदरुङ्गळान्वयद गुडुरप्प भीमतु-नारसिंघ-होय्सळ-
 गावुण्डम् ॥

पदनरिदासे दप्पिसदे बेळ्पर बेळ्पुदनिचु सद्गुणा- ।
 स्पदनेनिसल्के निन्न पेसरम् गळ होय्सळ-गौण्डनेम्बुदे ।
 [..] शिबियेम्बुदे रवचर-नायकनेम्बुदे चारुदत्तनेम्-।
 बुदे बलियेम्बुदे रवितनूभवनेम्बुदे गुत्तनेम्बुदे ॥
 जिनपति-भक्तियान्त पति-भक्तिबुदारते शक्ति सज्जन-।
 [..] कृत-युक्तियय्दे गुणवय्दे-गुणङ्गळनावगं पोग-।
 ल्दनवरतं निमिच्चुतिरे होय्सळ-गौण्डिन चित्त-वार्धिवर्-।

इन-कर-चन्द्र-लक्ष्मियेने बणिमलोप्यदे केळलेगौण्डियम् ॥
 कुल-बात्रीधर-धैर्यनन्वि-वर-गाम्भीर्य समस्तावनी- ।
 वल्लभ-व्यापित-चारु-कीर्त्ति वनिता-कामं गुण-स्तोमनुब्-
 जल्ल-वाणी-स्तन-हारनर्घ्यतिशयाधारं करं पेम्पनिन्त् ।
 एळ्योळ् ताळिददतो जगन्नुत-गुणं श्री-कदम्ब-शेटिट्-प्रभु ॥
 आतन चित्त-प्रिये वि- । ख्यातियनान्ताद्रिमुतेगम्भुधि-मुतेगम् ।
 सीता-वधुगं रतिगव- । देतेरदि चट्टियक्कनगळवेनिपळ् ॥
 रतिगवकन्धतिगं सर- । सतिगं रेवतिगमेसेव पार्व्वतिगं श्री-
 सतिगं समनेनिसि महा- । सति चट्टियक्क तोळगि बेळगि-दळिळ्येयम् ॥

भावकनेन्दु सच्चरित्रनेन्दु समुन्नतनेन्दु सत्पुरुषनेन्दु समुज्ज्वल-कीर्त्तियेन्दु सर्वाविनि
 सन्ततं सले पोगळबुदु नन्नि-शेटिट्थम् । लोक-गावुण्डं माकवे-गावुण्डिगं
 हुट्टिद मगळु चट्टवे-गावुण्डिय मगं होयसळ-गावुण्डं तम्मल्लवेगे परोक्षवा-
 गि बसदिगं माडिसिदम् । होयसळ-गावुण्डनुं ऊर समस्त-प्रजे-गावुण्डगुळुबिदुं बस-
 दिगं देवालयक्कं भूमि समानवागि बसादिगे उत्तरायण-संक्रमण-व्यतीपातदन्दु
 अहोबल-पण्डित रिगे कालं कच्चि धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट गद्दे सलगे नाल्कु
 वेदले मत्तर नाल्कु माने येरडु कळनोन्दु केरेय केळगण तोण्ट ओन्दु गाण ओन्दु ॥
 १०८२ नेय प्रमादि-संवत्सरद पौष्य-मास-उत्तरायण-संक्रान्ति-व्यती-
 पातदन्दु-नारसिंह-होयसळ-देवर कय्यलु धारा-पूर्व्वकं माडिसि-कोण्डु बसादिगे
 भूमियं बिट्टर ॥ (आगेकी चार पंक्तियोंमें हमेशाके अन्तिम श्लोक हैं) कन्बळिय
 भूमि-पुत्रकरप गौडु-गळ पेसरं पेळवे (कुछ नामोंके बाद) समस्त-प्रजे-येल्लविदुं
 बसादिगे धारा-पूर्व्वकम्माडिदर । इन्तिवकम्भ्यानुमतदि बरेद नेल्लुदरेय-ऊरोडेय
 कलि-देवु माणि-चोज ॥

[बिन शासनकी प्रशंसाके बाद, विष्णुवर्द्धनके अनेक पद और उपाधियाँ ।
 उसने मालवका केन्द्रीय नगर हस्तगत कर लिया; चक्रकूटको डराकर उसने सोमे-
 श्वरके हाथियोंका पीछाकर उन्हें पकड़ लिया । अदिगका पीछा करके उसके देश
 तथा राजधानी तळवनपुरको अधिकृत कर लिया । इस राजाने तळकाडु, उच्चंगि,

बनवासे, बेळबल, पेहोरे और हानुजल सभी पर अधिकार जमाकर शत्रु-राजाओंमें भय उत्पन्न कर दिया ।

जब, भुज-बल वीर-गङ्गा त्रिभुवन मल्ल होयसल विष्णुवर्द्धन-देव राजधानी दोर-समुद्रमें बैठकर शान्ति और बुद्धिमत्तासे राज चला रहा था :—

तत्पादपद्मोपजीवी,—अजितसेन-भट्टारक, मल्लिषेण-मलधारी (कलियुगी गणवर), श्रीपाल-त्रैविद्य-देव और चन्द्रप्रभके पुत्र मुनिनाथ वासुपूज्य-सिद्धान्त-देव थे ।

प्रमिल-संघके अरुङ्गलान्वयका एक गृहस्थ-शिष्य नारसिंह-होयसल-गावुण्ड था । (उसकी प्रशंसा) । उसकी पत्नी कैल्ले-गौण्ड थी । कदम्ब-सेट्टि-की प्रशंसा, जिसकी पत्नी चट्टियक्क थी । नग्नि-सेट्टि की प्रशंसा ।

लोक-गावुण्ड और माकवे-गावुण्ड की पुत्री चट्टवे-गावुण्ड की पुत्र होयसल-गावुण्ड-ने, अपनी माताकी स्मृतिमें, एक बसदि खड़ी की, और उस नगरके समस्त प्रजा तथा किसानोंके सामने, (उक्त) कुछ भूमि बराबर-बराबर बसदि और मन्दिरको बाँट दी । यह सब अहोबल-पण्डितके पाद-प्रक्षालनपूर्वक किया । और (उक्त मितिको) बसदिको वह सब भूमि दे दी जो उसे नारसिंह-होयसल-देवसे मिली थी ।

यह दोनों पार्टियोंकी सम्मतिसे नेल्लुदरेके प्रधान, कलिदेव-माणिवोच्च-ने लिखा,]

[EC, VI, Kadur, Tl., No., 69.]

३५२

पण्डितरहसिः—संस्कृत तथा कन्नड ।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग ११६० ई० का]

[पण्डितरहसि (करडगोरे परगना) में, मन्दुरगिरि-बस्ति के प्राङ्गणमें एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

नमो वीतरागाय ।

श्रीयं श्री-वत्सदोळ सुस्थिरमेनिसि जगं बणिंसल तालिद वीर- ।

श्रीयं दो-इण्डदोळ सा (शा) स्वत (श्वत) मेने तळेदी-लोक-संस्तुत्य-वाणि- ।

श्रीयं वक्त्राब्बदोळ वाग्-वरनेने मेरेदं यादवाम्नाय-राज्य- ।

श्रीयं स्वाङ्गीकृतं माडिद नृप-तिळकं नारसिंह-क्षितीशम् ॥

स्वस्ति समाधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेस्वरं **द्वारावती पुर**-वराधीश्वरं
यावव-कुलाम्बर-धुमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलपरोळु-गण्डायनेक-नामावली-समा-
लंकृतारूप श्रीमत्मल्ल तलकाडुकोङ्कु-नङ्गलि-वनबसे-उच्चक्षि-हानुङ्गल् गोण्ड
भुजबल वीर-गंग होयसळ **नारसिंह-देव** श्रीमद्-राजधानि-**होरसमुद्र** नेले-
वीडिनोळ सुख-संकथा-विनोददि राज्यं गेयुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ॥

स्फुरदुरु-दीधिति-प्रकटितोग्र-भुज-विळासि-दुर्-

घरतर-विक्रम-क्रमदोळादतिवर्त्तियेनलके सन्दनी- ।

धरे पोगळलके रुढिये-चमूपति-रत्नना-नृपे- ।

श्वरन नेगळते-वेत्त मनेगं मोनेगं नेगळदेक-मुख्यदिम् ॥

एरगदराति-रायपरजोङ्केयप्पिनम् ।

किरिपि भुजासियं जसमनेण्-देसेयानेय-गोम्बिनोळ् ।

निरिसि समग्र-साहसमनी-धरेयोळ मेरेयुत्तमिर्ष हेर्- ।

अरिकेय **दण्डनाथनेरेयङ्ग**नेनल् नेगलदं धरित्रियोळ् ॥

[स] वस्ति श्रीमन्महा-प्रधानं सर्वोधिकारि सेनापति-दण्डनायक एरेयङ्गमथ्यङ्गळ
पाद पद्मोपजीवि ॥

स्थिरमेने गोत्र-मित्र-विबुधाश्रय-मं निमिर्च्चि बन्- ।

धुर-महिमोन्नतिकेगेडेयागिकरं चेलुवागि भूभूद्-उद्- ।

धुर-लकुमी-प्रधाननेसेदिहंभिमान-मन्दरम् ।

पिरिदेनिर्दिनोश्चर-चमूपति मन्दरदि निरन्तरम् ॥

मन्निपनेन्न निन्न-नेगलिदम्मडि-दण्डनाथनोल्द ।

एन्नेय भाव नान् निनगे भावनेनेन्तुमवश्य-पोष्य- ॥

••नदे सन्द विक्रमदळुक्कैयगुर्विनोळाळ्दनीश्वरम् ।
 तन्नदटिन्दवादं परेयङ्ग-चमूपन चित्त-वृत्तियम् ॥
 मत्तमा-प्रधान-चूडारत्नन विषयाधिकारि••नेगल्लेय पोगल्लेयं पेळ्व्बे ।
 करेवबु कामधेनुवेने धेनु पोलं सले पञ्चि धान्यमम् ।
 नेरदळ्दर्धमुमळ्त्तेयुं पिरिदादुददेन्नु नोळपडम् ।
 तेरे विपरीतविह्व नुडियोळ्तोर्दाळ्लेनल ••श्वरम् ।
 मङ्गल-मण्णे-तेङ्गरे-नेगळ्त्तेय-कल्लवळियेम्ब नाळ्गळम् ॥
 कन्दिरे भुं चिरन्तनर जीर्ण-जिनालयं मोदल्-
 गोण्डु निरन्तरं मेरेये माडिसि रुद्धियनीतनन्ते कम्-
 कोण्डवनावनीश्वरने धर्म-गुणोन्नतनातानर्द्द मू-
 मण्डलमावगं स-फलमादुदेवं द्विज-वंश-मण्डनम् ॥

आ-महानुभावन सति ।

लावण्याम्भोधिय वे-। ला-वन-वन-लते-सुधावि-संभव-लक्ष्मी-।
 देवतेयेनिसुवल् ईश्वर-। देवन वधु माचियक्कनबळाभत्तम् ॥

आ-पुण्यवर्तित्यन्वय-प्रभावमेन्तेन्दे ॥

श्रीगे निवासवागि पेसर-वेत्तनेगळ्त्तेय नाकि-सेट्टिगम्
 नागवेगं तन्भवनगुर्विनसोहणि बिट्टिगाङ्गना-।
 भोग-पुरन्दरङ्गे सति चन्द्रवे तत्सुते माचियक्कनेन्द ।
 आगळुमक्करिं विबुध-मण्डलि बणिसलोप्पि तोरिदळ् ॥
 निरुपम-कीर्त्तियं तळेदु मेम्मेगे ताय्-मनेयागि सत्-कळा-।
 बर-मुखियाद चन्द्रदेगे पेर-म्मगळागि समस्त-लोकमम् ।
 पोरेदनमोघनीश्वरनोळिर्देनुतुं तरुणी-विलासमम् ।
 चरियिसि पुट्टिदळ् लकुर्म-देविये माचवेयेम्ब नामदिम् ॥
 द्विगुणिसुतिप्पुंदाद दर-हास-विळास-नवीन-चन्द्रिका- ।
 प्रगुण-गुणङ्गळि कुवळयक्के विळासमनेन्दोद्धुद्ध-ली- ।
 लीगे नेलेयाद माचलेयन्न-लसद्-वदनेन्दु••रु- ।

दिगे नेगळिदन्तु-मण्डलदोळिदं कळङ्कमनीगलागुमे ॥

कळिंसलोरे.....। जल्पर मातिरखि पोलरीश्वरनेम्बी-

कळर-महीजमनपिद । कल्प-लता-ललिते...**माचिपक**.....॥

परमान्तं जिननासनिन्तु जनकं श्री-विट्ठिगाङ्गं गुणो-

द्वुर तन्नम्रिके **चन्दिकब्बे** येनिसिदी-**माचियकङ्गे** सद्-

गुरुगळ् पोस्तक-गच्छ-देशिय-गण-श्रीकोण्डकुन्दान्वयो-

द्वरणर् **गण्डविमुक्त-देव-मुनिवर** श्री-मूल-सङ्घोत्तमर् ॥

अन्तन्त-गुण-रत्न-मण्डनेमुं चातुर-वर्ण-समुदयैक-शरणेयुमेनिसि नेगळ्द श्रीमत्-
पेर्-गडिति **माचियककं** श्री-**मय्दवोळल** दिव्य-तीर्थदोळ् सत्-घर्मापंचेयिम् ।

नोडलिदु शित-विमानदे । नाडेयु मिगिलेनिसि नेगळ्द जिन-मन्दिरमं ।

कूडे घरे पोगळे माचवे । माडिसिदलगण्य-पुण्य-युवती-रत्न ॥

अन्तु माडिमि ॥

श्री-बधु-**माचवे** सले प-। द्वावतिगेरेयेम्ब केरेय कट्टिसि कोट्टल् ।

माविसे बसदिगे तन्न य-। शो-वधु दिग्-वधुगळोडने नलिदाडुविनम् ॥

मत्तमा-तीर्थद बसदिय देवगिगे मुज नडेव वृत्तिय सीमा-सम्बन्धमेन्तेन्दडे (यहाँ
दानकी विशेष विगत आती है) मङ्गल महा श्री । (वही अन्तिम श्लोक).....

[जिन-शासनकी प्रशंसा ।

जब भुजबल वीर-गङ्ग होयसळ नारसिंह-देव, शान्ति और बुद्धिमत्तासे शासन करते हुए, राजधानी दोरसमुद्रमें विराजमान थे :—तत्पादपञ्चोपजीवी,—(प्रशंसा सहित) दण्डनाथ-एरेयङ्ग था । दण्डनायक-एरेयङ्गमय्यका पादोपजीवी ईश्वर-चम्पति था । वे दोनों आपसमें श्वसुर और दामाद थे । (उनकी प्रशंसायें), और उसने जिनालयकी मरम्मत करवायी थी । उसकी (ईश्वर-चम्पतकी) पत्नी माचियक थी, जो नाकि-सेट्टि और नागवेके पुत्र साहणि-विट्ठिके चन्दवेकी ज्येष्ठ पुत्री थी; उसकी प्रशंसायें । जिनपति उसके इष्टदेव, पिता विट्ठग, माँ चन्दिकब्बे थीं । माचियकके गुरु पुस्तक-गच्छ, देशिय-गण, कोण्डकुन्दान्वय तथा मूलसंघके गण्डविमुक्त-देव-मुनिप थे ।

३६७

अङ्गडि—कवच भग्न ।

वर्ष तारण [= ११६४ ई० (ख० राइख) ।]

[अङ्गडि (गोणीवीडु परगना) में, पाँचवें पाषाणपर]

..... श्री स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभं
 महाराजाधिराजं परमेश्वरं परम-भट्टारकं यादवकुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि
 मलेराज-राज मलेपरोळु गण्ड गण्ड-भरुण्ड कदन-प्रचण्डनसहाय-शूर सनिवार-सिद्धि
 गिरि-दुर्ग-मल्ल चलदक्काम.....वीर-विजय नारसिंह-
 देवनुम् ॥ तारण-संवत्सरद चैत्र-सुख.....अन्दु सोसेवूर
 पट्टणसामि नागि-शेट्टिय.....मय्यनुं.....
 माडिद बसदि इदके कोट्ट.....बट्ट दत्ति ।

[(अपनी उपाधियों सहित) वीर-विजय-नरसिंह-देवर्षि (उक्त मितिको)
 उस 'बसदि' के लिये जिसे सोसेवूर के 'पट्टण-सामि' नाग शेट्टि [के पुत्र].....
 मय्यने बनवायी थी, दान दिया ।]

[EC, VI, Mudgere tl., no 15.]

३६८

गिरनार—संस्कृत ।

—[शक १२९२-११६५ ई०]—

यह लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका मालूम पड़ता है ।

[Revised Lists art. rem. Bombay (ASI, XVI),
 p. 359, no 27, t. and tr.]

३६६

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १२२३ = ११६६ ई०]

नं० ३६८ के अन्तका लेख है । उसीका अन्तिम भाग है ।

[op. cit. p. 369, no 30, t and tr.]

३७०

बवागञ्ज (माकवा);—संस्कृत ।

[सं० १२२३ = ११६६ ई०]

मन्दिरके पूर्वकी ओर

यस्य स्वब्जतुषारकुन्दविशदा कीर्तिगुणानां निधिः

श्रीभान् भूपतिवृन्दवन्दितपदः श्रीरामचन्द्रो मुनिः ।

विश्वक्षमाभृदखर्वशेखरशिखा सञ्चारिणी हारिणी

उर्व्यां शत्रुञ्जितो जिनस्य भवनव्याजेन विस्फूर्जति ॥१॥

रामचन्द्रमुनेः कीर्तिः सङ्कीर्णं भुवनं किल ।

अनेकलोकसङ्घर्षाद् गता सवितुरन्तिकं ॥

संघत् १२२३ वर्षे भाद्रपदवदि १४ शुक्रवार ।

लेख स्पष्ट है ।

[JASB, XVIII, p. 950-952, no 1. t and tr.]

३७१

बवागञ्ज माकवा; संस्कृत ।

[सं० १२२३ = ११६६ ई०]

मन्दिरके दक्षिणकी ओर ।

ॐ नमो वीतरागाय ॥

आसीद्यः कलिकालकल्मषकरिध्वंसैककंठीरवो
 वेनक्षमापतिमौलिचुम्बितपदः यो **शोकनन्दो मुनिः**
 शिष्यस्तस्य ससर्वसङ्घतिलकः **श्रीदेवनन्दो मुनिः**
 धर्मशानतपोनिधिर्यतिगुणग्रामः सुवाचां निधिः ॥१॥
 वंशे तस्मिन् विपुलतपसां सम्मतः सर्वनिष्ठो
 वृत्तिं पापां बिमलमनसा त्यज्यविद्याविवेकः ।
 रम्यं हर्म्यं सुरपतिचितः कारितं येन विद्या
 शेषा कीर्त्तिर्भ्रमति भुवने **रामचन्द्रः** स एषः ॥

संवत् १२२३ वर्षे ।

स्पष्ट है ।

[JASB, XVIII, p. 951-952, no 2, t. and tr.]

३७२

कम्बदहल्लि—कन्नड । •

[शक १०८६=१११७ ई०]

[कम्बदहल्लि (बिण्डिगनबले प्रदेश) में, जैन बस्तिके रङ्ग-मण्डपमें]
 स्वस्ति श्रीयुतमूलसंघमदु तां शङ्घं गणं देसियम् ।
 पोस्थञ् गच्छुमदन्वयं बेळे समं तां कोण्डकुन्दान्वयम् ।
 भू-स्तुत्यं **हनसोगे**-दिव्य-मुनिगं पादार्चनकं कळा-
 भ्यस्तरणं **मन्न-दंशकर्गमिदु** तां श्री-**पार्श्व**-दान-स्थळम् ॥
 घरे तन्नं बणिसल्लु बिण्डिगनबिलेयोळ् आ-**नेम-दण्डेश**-दिक्-कुञ्-
 ज्ञनरय्यं पेट्ट-ताय् **मुहरसि** विमळ-गङ्गान्वय-ख्यातेयागल् ।
 दोरेवेत्ती-**पार्श्व-देव**-प्रभु कलि-युग-भोमार्ह-नोहादि-जीणो-
 द्दरणं गेय्दावगं सोमिसे सोधे-वेसनं गौर्यसदं पुण्य-पुञ्जं ॥
 सले देव-ज्ञेयदोळ् **बिण्डिगनबिलेयोळि**र्पत्तु-नाल्-कण्डुगं नीर्-
 ण्णेलनन्तव्यत्तरं बेहलेयनति-ग्रळं नेम-मन्वीश-पुत्रम् ।

कुलकं तां पारर्व-देवं सले कलि-युग-भोमार्ह-सत्-पूजेगोह्दी-
ये लसद्वंश्यङ्गे दिव्य-व्रति-समितिगे विद्यार्थिगुत्साहदत्तम् ॥

शक-वर्ष १०८६ सेनेय सर्व्वजितु-संवत्सरद् माघ व० ५ शुक्रवार-
वन्दु पारर्व-देव चतुर्विध-दानके विट्ट दत्ति ॥

[यही स्थान है जो पारर्वने श्री मूलसंघ देशिय-गण, पोस्तक-गच्छ और
कोण्डकुन्दान्वयके हनसोरोके दिव्य मुनिके चरणोंकी पूजाके लिये, विद्वानोंके लिये
तथा निजवंशजोंके लिये दिया था ।

पारर्वदेव-प्रभुने,—बिनके पिता नेम-दण्डेश ये और माता मुद्गरसि थीं जो
विमल गङ्ग वंशमें प्रख्यात थीं,—विण्डगनविलेके जैन मन्दिरको सुधरवाया, और
उसके लिये कुछ जमीन अपने वंशजोंके लिये, दिव्य व्रतियोंके लिये, और विद्या-
र्थियोंके उपयोगके लिये दी ।]

[EC, IV, Nagmangala TI. No. 20]

३७३

बन्दूर—संस्कृत और कन्नड़

[शक १०६० = ११६८ ई०]

[बन्दूर (जावगवखु परगने) में, जैन-वस्तिके स्थलपर एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ॥

जयति सफळविद्यादेवतारत्नपीठं

हृदयमनुपलेपं यस्य दीर्घं स देवः ।

जयति तदनु शास्त्रं तस्य यत् सर्व-मिथ्या-

समय-तिमिर-हारि ज्योतिरेकं नराणाम् ॥

श्री-कान्तपर्य्यदु-कुल-र

रत्नाकरदोळ् कौस्तुभादिगळ-बोल् पलहं ।

लोकोपकार-परिणत- ।
 रेकीकृत-सकल-राज-गुणरूपिनेगम् ।
 सल्लनेम्बनागे यादव- ।
 कुल्लदीळ् पुलि पाथे कण्डु मुनि पुलियं पोय् ।
 सल्ल एने पोय्दुदरिं पोय् ।
 सल्ल-वेसरवनिन्दवागे तद्वंशजरोळ् ॥
 विनयं प्रतापमेम्बी- ।
 जननाथोचित-चरित्र-युगदिं जगमं ।
 जन-नयनबेनिसि नेगळ्दं ।
विनयादित्यं समस्त-भुवन-स्तुत्यम् ॥
 आतङ्गति-महिमं हिम- ।
 सेतु-समाख्यात-कीर्त्तिं सन्मूर्त्ति-मनो-
 ज्ञातं मर्दित-रिपु-नृप- ॥
 ज्ञातं तनुजातनाटनेरेयङ्ग-नृपम् ।
 बल्लिलदरवनीपतिगळो- ।
 छेल्लं धम्मार्थ-काम-सिद्धि-बोलवनी- ।
 वल्लभरातन तनयर् ।
बल्लळं बिद्धि-देवमुदयादित्यम् ॥
 मूवरसुगळोळं तां ।
 भाविसे मध्यमनदागियुं नृप-गुण-सद्- ।
 भावदिनुत्तमनादम् ।
 भावि-भवद्-भूत-जिष्णु विष्णु नृपालम् ॥
 मल्लेयं साधिसि माण्डने तळवनं काञ्ची-पुरं कोयत्तर् ।
 मल्ले-नाडा-तुळु नाडु नीलगिरिया-कोळालवा-कोङ्क-नं ।
 गलियुच्चंगि-विराट-राज-नगरं बल्लूरिवेल्लं भुजा- ।
 बलदिं लीलेये साध्यवादुदेणेयार् विष्णु-ब्रह्मापाळनोळ् ॥

अन्तेतिसिद् विष्णु-मही- ।
 कान्तन तनयं नयानुरूपोपायम् ।
 सन्तत-भुज-प्रतापा- ।
 क्रान्त-परं नारसिंहनाहव-सिंहम् ॥
 आ-नारसिंह-नृपतिप ।
 मानस-कळ-हंसे पट्ट-माडेविगे-घा- ।
 त्री-नुतेगेचल-देविगे ।
 नाना-गुण-माणद कणिगे चिन्तामाणबोल् ॥
 सकळ-कळा-परिपूर्ण ।
 सकळोर्वी-नयन-सुख-दन-कळङ्कं तान् ।
 अ-कुठिलनपूर्व-नव-सा- ।
 त्करं बल्लाळ-देवनुदयं गेयदम् ॥
 विनय-श्री-निधियं विवेक-निधियं ब्रह्मप्यनं पूर्ण-पु- ।
 प्यननुदाम-यशोर्त्थियं जित-जगत्-प्रत्यर्त्थियं सर्व-सज्- ।
 जन-संस्तुत्यननुद्भवद्-वितरण-श्री-विक्रमादित्यनं ।
 मनुजेशर् मलेराज-राजननदे-बल्लाळनं पोल्वरे ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं । द्वारावतोपुरचराधीश्वरम् ।
 यादवा-न्वय-सुधा-वार्धि-वर्द्धन-माकर-सान्द्र-चन्द्रम् । विभवाषरीकृतामरेन्द्रम् ।
 वासन्तिका-देवी-लब्ध-वर-प्रसादम् । विरचित-वीर-वितरण-विनोदम् । रिपु-राज-
 कदली-षण्ड-खण्डन-प्रचण्ड-मद्-वेदण्ड । मलपरोल्-गण्ड-मण्डलिक-गिरि-वज्र-दण्ड ।
 गण्ड-भेरुण्ड । रण-ंग-धीर । जगदेक-वीरक-नामादि-समस्त-प्रशस्ति-सहितम् ।
 तळकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गावाडि-नोळम्बवाडि-हुळिगेरे-हलसिगे-वनवसे-हातुङ्गल्
 गोण्ड भुज-बल वीर-गङ्ग-प्रताप होयसळ-बल्लाळ-देवं दोरसमुद्रद नेलेवीडिनोळ्
 सुख-संकथा-विनोददिं राक्ष्यं गेयुत्तमिरे तदन्वय-गुरु-कुळ-क्रममदेन्तेने ।

श्रीमद्-द्रुमिळ-सुखेऽस्मिन्निदं संवेऽस्त्यवकाळः ।

-अन्वयो भाति योऽशेष-शास्त्र-वारासि-पारगैः ॥

श्री-वर्द्धमान-स्वामिगळ धम्मतीर्थं प्रवर्त्तिसुवर्द्धि गणकरंनिसिदः । गौतम-स्वामि-
गळिन्दं । भद्रबाहु-भट्टारकरिन्दं भूतबलि-पुष्पदत्त-स्वामिगळिन्दम् एक-
खन्धि-सुमति-भट्टारकरिन्दम् । समन्तभद्रस्वामिगळिन्दम् । भट्टाकलंक-
देवरिन्दम् । चक्रग्रीवाचार्यरिन्दं । वज्रणन्दि-भट्टारकरिन्दम् । सिंह-
ण्ड्याचार्यरिन्दम् । पर-वादिमल्ल-श्रीपाल-देवरिन्दम् । कनकसेन-श्री-
वादिराजरिन्दम् । श्री-विजय-देवरिन्दम् । श्री-वादिराज-देवरिन्दम् ।
अजितसेन-पण्डितदेवरिन्दम् । मल्लिषेण-मल्लधारि-स्वामिगळिन्दनन्तरम् ।

तमगाशा-वशमादुदुञ्जत-महीभृत्-कोटि तम्मिन्दे विष्णु ।

अमर्दत्ती-धरेगेयदे तम्म मुखदोळ् पट्-तक्क-वाराशि-वि ।

भ्रममापोषण-मात्रमादुदेनलिं मातेनगत्थ-प्रभा- ।

वमुमं कीळपाडसित्तु पेम्पिनेसकं श्रीपाल-योगोन्द्रं ॥

अवरग्र-शिष्यरू ॥

श्रीपाल-त्रैविद्य-विद्या-पति-पद-कमलाराधना-लब्ध-बुद्धिः ।

सिद्धान्ताम्भोनिधान-प्रविसरदमृतास्वाद-पुष्ट-प्रमोदः ।

दीक्षा-शिक्षा-सुरक्षा-क्रम-कृति-निपुणः सन्ततं भव्य-सेव्यः ।

सोऽयं दाक्षिण्य-मूर्त्तिर्ज्जगाति विजयते वासुपूज्य-व्रतीन्द्रः ॥

अवर गुहङ्गुळ् रत्न-त्रय-समन्ति-तर् ब... देवनातन वधु सावियकम् ॥

अवगो तनूभवं जित-मनोभव-रूप-नपार-पौरुषम् ।

विविध-कळा-विलास-भवनं प्रभु बेळिळय-दासि-सेट्टि भू- ।

भुवनमनेयदे रत्नसुव दानद-धम्मद पेम्पिनि सुधा- ।

ण्वदेणेयप्प कीर्त्तियनुपाब्जिसदं विलुपैक-बान्धवम् ॥

पडेवं सद्-धम्म-मय्यदियोळे परदु-गेय्दर्थमं न्यायदिन्दम् ।

पडेदर्थं देवता-पूजेगे बसदिगे शिष्टेष्ट-दानकके निच्चम् ।

कुडे मत्तं तन्न भाग्यं तव-निधियेने नीळदुष्णि कैगण्णे पेम्पम् ।

पडेदं देसं वियन्मण्डप-कळित-यशः-कल्पवल्ली-विलासम् ॥

आतन सति बोक्कियक ॥ अवर सोदरळियन्दिर् हेगडे माडिराजनुं संकर-
सेट्टियं ॥ आ-बेळ्लिय-दासि-सेट्टि दोरसमुद्रदल् माडिसिद होयसळ-जिनालयक्के
बिट्ट बन्दूरदलि माडिराजनुं सङ्कर-सेट्टियुं माडिसिद पारर्च-देवगो बसदियं
पुष्पसेन-देवर्माडिसिदरादेवरष्ट-विधार्चनेगं ऋषिगळाहारदानक्कं बीणोद्वार-
क्कवागि वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवर् अवर शिष्य पुष्पसेन-देवर् माडि-
राजनुं संकर-सेट्टियुं समस्त-प्रजे-गावुण्डुगळुं सरागदिन्दा-चन्द्रार्क नडेवन्तागि
शक-वर्ष १०९० तोन्दनेय स-र्धधारि-र-वत्सरदुत्तरायण-संक्रमण-ग्रहण-व्यतीपातदन्दु
धारा-पूर्वर्कं बिट्ट तळ-वृत्ति ॥ (आगे की ६ पंक्तियोंमें दानकी विशेष चर्चा है)
मुक्कद हेगडेगळ् बिट्ट नन्दा-दीविगेगे कै-गाण वोन्दु इन्तु वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवर्त्तम्म
शिष्य वृषभनाथ-पण्डितर्गिनितुवं धारा-पूर्वर्कं कोट्टर् (वे ही अन्तिम वाक्या-
वयव और श्लोक)

त्रैविद्य-देव-शिष्यम् ।

देवार्चन-दान-धर्म-निरतं सततम् ।

देवव्रत-परिशुद्धम् ।

भू-विदितं पुष्पसेन मुनि-जन-विनुतम् ॥

[सर्व प्रथम जिन शासनकी प्रशंसामें दो श्लोक हैं । पहलेकी ही तरह
होयसल राजाओंकी उन्नतिकी वर्णन । विष्णुके विषयमें कहा गया है,—मलेको
अधीन करके क्या वह चुप रहा ? तळवन, काञ्चीपुर, कोयटूर, मलेनाड्, उळु-
नाड्, नीलगिरि, कोळाळ, कोङ्गु, नङ्गलि, उच्चंगि, विराट्-राजा का नगर,
वल्लूर,—इन सबको अपने भुजाबलसे, लीलामात्रमें जीत लिया ।

जिस समय (अपनी सर्व उपाधियों सहित), होयसल बल्लाल-देव दोरसमुद्रमें
निवास कर रहे थे:—उसके 'गुरुकुल' की परम्परा निम्नर्भाति थी:—

द्रमिलसंधान्तर्गत नन्दिसंघमें एक अरुङ्गळ-अन्वय है, उसमें बड़े-बड़े शास्त्र-
पारग विद्वान् आचार्य हो गये हैं । वर्द्धमान स्वामीके तीर्थमें क्रमसे इन लोगोके
द्वारा धर्मतीर्थका विकास हुआ,—गणधर गौतम स्वामी, भद्रवाहु-भट्टारक, भूतबलि

और पुष्पदन्त-स्वामी, एकसन्धि सुमति-भट्टारक, समन्तमूर्ध स्वामी, भट्टकलंक-देव, कर्णवीर-चार्य, वज्रनन्दि-भट्टारक, सिंहनन्दाचार्य, परवादि-मल्ल श्रीपाल-देव, कमलसेन श्री-बादिराज, श्री-विजय-देव, श्री-बादिराज-देव, अजितसेन-पण्डित-देव, और मल्लिवेण-मल्लघारि-स्वामिः तदनन्तर श्रीपाल-योगीन्द्र हुए (इनकी प्रशंसा) ! इनके मुख्य शिष्य वासुपूज्य-व्रतीन्द्र हुए (इनकी प्रशंसा) ।

इनके गृहस्थ-शिष्य, रत्नत्रयके समान, ब...देव, उसकी पत्नी सावियक, और इनका पुत्र (प्रशंसा पूर्वक) वेत्तिमें दासि-सेट्टि थे । इसकी पत्नी बोक्कियक थी । इन दोनोंकी बहिनके लड़के हेग्गड़े मादिराज तथा संकर-सेट्टि थे ।

बन्दबुरमें मादिराज और संकर-सेट्टिने पार्श्व-देवके लिये एक मन्दिरका निर्माण कराया, और पुष्पसेन-देवने पार्श्व-देवकी मूर्ति बनवायी । उन देवकी अष्टविध पूजनके लिये, मुनियोंको आहार देनेके लिये, तथा मन्दिरकी मरम्मतके लिये,— वासुपूज्य सिद्धान्ति-देव, उनके शिष्य पुष्पसेन देव, मादिराज, संकर-सेट्टि, तथा सभी प्रजा और किसानोंने (उक्त मिति को) ग्रहणके समय, ३३ बिलस्तके एक ढण्डेसे नापकर भूमि-दान किया (भूमिका वर्णन) । 'मुक्क' (या चुङ्गी) के हेग्गडेने हमेशा जलनेके लिये एक हाथकी तेलकी चक्की दी ।

इस तरह यह सब वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवने अपने शिष्य वृषभनाथ-पण्डितको सौंप दिया । हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक । पुष्पसेन-मुनिकी प्रशंसा ।]

[EC. V, Arsikere Tl., No. 1.]

३७४

बिओली;—संस्कृत ।

[सं० १२२६ = ११०० ई०]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदाय का मालूम होता है ।

[JASB, LV, p. 27-32, Tr ; p. 40-46, t.]

३७५

मूढहसिके;—संस्कृत तथा गुजराती ।

[कालनिर्देश नहीं, पर सम्भवतः लगभग ११०० ई० (ख. राहस)]

[मूढहसि (हृदिवास प्रवेश) में, बस-केन्द्रके मन्दिरकी दीवार-स्तम्भके ऊपर]

... .. अति पूजित-यति वर्द्धमान अपश्चिम-तीर्थनाथ भगवान्मा
दिश... ..पततं... ..

श्रीमदमिल-संघेऽस्मिन्नन्दि-संघेऽस्त्युक्तलः ।

अन्वयो भाति निरशेष-शास्त्र-वाराशि-पातैः ॥

(दूसरी तरफ)... .. अजितसेन-देव-मुनिपो ह्याचार्यतां प्राप्तवान् ।

[इस लेखमें द्रमिलसंघान्तर्गत नन्दिसंघके अरुक्तल अन्वयकी तारीफ है । इस
अन्वयमें प्रायः सभी आचार्य या मुनि 'निरशेष-शास्त्र-वाराशि-पात' थे ।... ..
अजितसेन-देव मुनिने आचार्य पदवी प्राप्त की ।]

[EC, III, Nanjangud Tl., No. 138.]

३७६

हुल्लीगेरी—संस्कृत

[बिना काल-निर्देशक, पर संभवतः लगभग ११०० ई० (!)]

[हुल्लीगेरीपुर (कुवरेगुम्मी तालुक) में, बस मन्दिर के सामनेके स्तम्भ पर]

श्रीम... ..सर्व्व ने... ..रं सायया मनेय मण्डुद्या... ..नित्य पूजा... ..ण

आसीत् संयमिना पृथ्वां होमेनान्यन्महातपः ।

तच्छंशिना शील-स्तम्भो जिनचन्द्रेण निर्मितः ॥

[इस पृथ्वी पर पशु-यज्ञके सिवाय संयमीके द्वारा प्रत्येक महातप विद्यमान था;
इसी बातको सर्वविदित करानेके लिये जिनचन्द्रने यह पाषाण-स्तम्भ खड़ा
किया था ।]

[EC, III, Mandya., Tl., No. 34.]

३७७

तेवरतेप्य—संस्कृत तथा कण्व ।

११७१ ई०

[तेवरतेप्यमें, वीरभद्र मन्दिरके सामनेके पाकानपर]

श्रीमत्परमगम्भीर स्याद्वादामोघलाङ्कनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

सागर-वारि-वेष्टित-समस्त-धरा-रमणी-घन-स्तना- ।

भोग विदेम्बिनं विदित-विस्तृत-सारताराग्रहारदिम् ।

नागरखण्ड-पत्र-परिवेष्टिन्दिम् जन-नेत्र-पुत्रिका- ।

रागमनित्तु माण्डुदे मनस्-सुख-दं बनवासि-मण्डलम् ॥

बळसिद नन्दनावळिगळिं शुक्-सङ्कुळदिं पिकाळियिम् ।

बळेदेरिगिर्दं शाळि-वनदिं भ्रमराळियिनिन्दु-वाटियिम् ॥

तिळेगोळदिं लता-भवनदिं कमळाकरदिं कुमुद्वती- ।

कुळदिनिदेम् मनङ्गोळिपुदो सततं बनवासि-मण्डलम् ॥

अदनाळ्वनखिळ-रिपु-नृप- ।

मद-मद्देननरियगर्थमं पदेदीवम् ।

पद-नत-रक्षा-दक्षम् ।

विदित-यशं सोवि-देव-भूतलनाथ ॥

आ-कादम्ब-कुळ-तिळकन विक्रम-प्रक्रमवेन्तेन्दे ॥

अदट्ठमैय्यिकके वीरव्विहदनुळिदु कुम्बिकके विद्धिष्ठ-भूपर ।

म्मदवं बिदिकके शेषाक्षतमनोसेवरोतिकके सर्वस्वमं व- ।

ल्लिदहं तन्दिकके मारान्तवनिप-सतियर् कण्ण-नीरिक्के पूण्डि-

विकदना-वक्काळ्व-धात्रीपतिगे निगळवं सोवि-देव-क्षितीशं ॥

(क) ॥ मदवदरातिथं तविसलगळ-गण्ण कडम्ब-रुप्पेनेम्- ।

बुदे पेसरुग्र-मण्डलिक-गण्डर दावणियेम्बुदे दिट्ठक ।
अदिरदराति- मण्डलिक-भैरवनेम्बुदे सोवि-देवनेम्- ।
बुदे निगळकमल्ल-नृपनेम्बुदे सत्त्व-पताकनेम्बुदे ॥

क ॥ पर-नृप-बन्धकने गण्- ।
डर दावणि कलिये मण्डलिक-भैरवनेम् ।
स्थिर-सत्य-वाक्यने हुसि- ।
वर शूलं सोवि-देवननुपम-भावम् ॥
नागरखण्डं बनवसेग् ।
आगिककुं भूषण-त्रालन्तदरोळगिम्- ।
बागि सले तेवरतेप्पम् ।
नाग-लता-पूग-वर्नादिनसदळवेसेगुम् ॥
आ-तेवरतेप्पदधिपति ।
भूतळपति सोवि-देव-पद-युगळ-सरो- ।
जात-मद-मधुक वि- ।
ख्यात-यशं बोप्प-गौण्डनाहव-शौण्ड ॥

वृत्त ॥ अमरेज्यं मन्त्रदोळ् शौचदोळमरनदीजं प्रबा-पाळन-प्र- ।
क्रमदोळ् धर्मात्मजं सप्रभुतेयोळमळाब्जेक्षणं निश्चयं ता-
ने महो-लोकाग्रदोळ् गावण-कुळ-तिलकं बोप्प-गावुण्डनेन्देन्- ।
दु मनस्-सम्प्रीतियि बणिपुदखिळ-धरा-चक्रवानन्ददिन्दं ॥
आ-तेवरतेप्पदधिप- ।
ख्यातियि नानेननेननभिवर्णिमुवेम् ।
भूतळमे ताने बणिपुद् ।
ईतने गुणियेन्दु बोप्प-गौण्डनननिशम् ॥
आ-विभुविन सति लक्ष्मी- ।
देविगे सौभाग्य-भाग्य-लक्षण-गुण-सद्- ।
भावाकृतियिन्दं मेल् ।

सिद्धान्ताम्भोनिषान-प्रविसरदमृतास्वादपुष्ट प्रमोदः ।
 दीक्षा-शिक्षा-सुरक्षाक्रमकृतिनिपुणस्सन्तर्त भव्य-सेव्यः
 सोऽयं दाक्षिण्य-मूर्त्तिर्जगति विजयते वासुपूज्य-अतीन्द्रः ॥
 भीमद-बल्लणदि-देवर शिष्यर मुगुब्धिर पारश्व-देवर वधिरोग्रारि-संव-
 स्सरह माद्रपद-व १३ व्र ॥... ..

लेख स्पष्ट है ।

[EC. V, Harsam TL., No. 128.]

३८१

वेङ्कटः—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १०६५ = ११७३ ई०]

[जै. ज्ञि. सं०, प्र. भा.]

३८२

दोहदः—संस्कृत-भग्न

[श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख]

[IA, X, p. 158, t.]

३८३

करडालु;—कन्नड ।

[कन्नड निर्देश रहित, पर ११७४ ई० ? (लू. राइस) ।]

[करडालुमें, ज्वस्त वस्तिमें एक सम्मेलपर]

अनुपम-पुण्य-भाजने जिनेन्द्र-पदान्ब-विलीन-चित्ते पा- ।

वन-सु-चरित्रे ह्यर्च्यले-महासति तन्नवसान-कालदोळ ।

मनुज-मनोबनं करेदु ब्रूय-नायक केम्मगेन नीम् ।
 क्नसिनोळप्पडं नेनेयदिनेने सास्वतमप्प धम्ममम् ॥
 धम्ममनागळुं मुददे माल्पुदु माडिदोडप्पुदावुदा- ।
 धम्मदिनेम्बेयप्पोडे सुरेन्द्र-नरेन्द्र-फणीन्द्र-राज्यमन्- ।
 तोरूम्पोदलप्पुदागि कडेयोळ् वर-मुक्तियनीवुदन्तरिम् ।
 धम्मं दनागु सत्य-निधि ब्रूय-नायक बेडिकोण्डे नाम् ॥
 एनगनुमोदन-पुण्यम् ।
 निनगं निस्सीममप्प पुण्यं सार्थम् ।
 मनमोसेदु माडिसोन्दम् ।
 जिन-गृहमं ब्रूयि-देव धर्म-धुरीणा ॥
 एन्देन्दलेन देवर- ।
 नेण्टङ्गं नीने पूबिसि चिक्कयनम् ।
 कुन्दि करिगन्द दन्ता- ।
 नन्ददे रच्चिपुदुपेच्चे गेय्दडे दोषम् ॥
 तदनन्तरमभिषवम् ।
 मुडदिं जिन-पतिगे माडि गन्धोदकमम् ।
 सदमळ-चरित्रे कोण्डळ् ।
 बैदरिपेनघ-ब्रलमनेम्बी-मनहुत्सवदिम् ॥
 तोरेदु बिनेन्द्र-चन्द्र-पद-सन्निधियोळ् पद-पञ्चकङ्कळम् ।
 मरेयदे भोरेनुच्चरिसुतुं नेरे सुत्तिद मोह-पाशमम् ।
 परिदु बगज्जनं पोगळे हृदयले नारि समन्तु सैय्पु कण्- ।
 दरेदबोलेम् समाधि-विधियिन्दिरदेय्दिदळिन्द्र-लोकमम् ॥
 बरवं केळ्दमरावती-पुरद-देवी-सङ्कुळं बन्दु नू- ।
 पुरमम्मुत्तिन हारमं कटकमं केयूरमं वज्रदुङ्- ।
 गुरमं माणिकदोलैयं तुडिसि बेगं देवि नीनेर रा- ।
 ग-रसं...मिगली-विमानमनेनुत्तं तन्दवर् स्सार्चिदर ॥

नतियिन्द्रिजेयि मदेम-वटेयि सैन्याळि सन्-मार्गं... ।

... काव्य-निबन्धमेन्तेसगुमेन्ती-लोकदोळ लोक-स्त- ।

स्तुत चन्दायण-देवरिन्दैसेगुवी-श्री-कौण्डकुन्दान्वयम् ॥

एरेव बुधाळिगाभित-जनकनुरागदोळित्त मुत्तवा- ।

दरिसुव दानदिन्दै सुर-भूजमनेळिपळेन्दै बणिक्कुम् ।

परम्-जिनेन्द्र-पाद-कमळाच्चर्वन-निमर-भक्ति-युक्तेयम् ।

हरिहर-देवियं नेगळ्द शासन-देवियनी-बरा-तळम् ॥

वर-बय-(सं) वत्सरं विनुत-जेष्ठ-युतं सित-पद्ममष्टमी- ।

परिगतमिन्दुवारदोळनिन्दित-पञ्च-पदङ्गळं सुखोत्- ।

कर-निळथङ्गळं नेरेये तन्नोळे... सुतुं समाधिथिम् ।

हरिहर-देवि-विश्व-विबुध-स्तुतेयेयिददळिन्द्र-लोकमम् ॥

निरुपमेयं चरित्र-युतेयं वनिता-जन-रत्नेयं मनो- ।

हर-जिन-मार्ग-बारिनिधि-चन्द्रिकेयं सुकृतैक-पुञ्जयेम् ।

पर-हित-चित्तेयं वगेयदन्तकनेम्ब दुरात्मनोय्दन्मी- ।

हरिहर-देवियं विबुध-वन्दितेयं भुवनाभिरामेयम् ॥

जिनेश्वर नमो वीतरागाय शान्तये नमोऽस्तु ॥

[कौण्डकुन्दान्वयके चन्दायण-देवकी प्रशंसा,—जिनकी गृहस्थ-शिष्या हरिहर-देवी थी । उसकी भक्तिकी प्रशंसा । (उक्त सालमें), पञ्च-नमस्कार मन्त्रका उच्चारण करते हुए, समाधिके द्वारा, उसने इन्द्रलोक प्राप्त किया । जिनेश्वर, वीतराग और शान्तके लिये नमस्कार हो ।]

[EC, XII, Tiptur, Tl, No. 94.]

३८५

हेरगु—संस्कृत तथा कन्नड ।

वचं जय [११०२ ई० ! (जु० राईख)]

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं धारावतीपुरवराधीश्वरं कोङ्कु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-
 नोणम्बवाडि-वनवसे-शानुङ्गलु-नोण्ड मुचबल वीरगङ्गनसहायशूर निरशङ्क-प्रताप
 होय्स्स-श्रीवज्जाल-देवम् प्रोरसमुद्रद राजधानीयस्ति सुख-सङ्कथा-विनोददिं
 पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिरे जयसंवत्सरद पुण्यदमावासे-मंगळवार-व्यतीपात-
 उत्तराषाढा-नक्षत्रदन्दु हेरगिन वसदिगे मोदल्लु गद्यान १ वक्कं बळि-सहित्वागि
 गद्याणविष्पत्त-नाल्लकक्कं भूमियं धारापूर्वकं माडि बिट्ट स्थल हिरिय-केरैय किन्व-
 यल्लु बिट्टिग-गट्टोन्दु ऊरिन्द हड्डवण होलदक्षि बेदले नाल्लवत्तेरड्डु गेण गळ्ळेयल्लु
 कम्म ३२३ बिट्ट दत्ति ॥

गतलीलं लालनाळम्बित-बहळ-भयोम-श्वरं गुज्जवं सन्- ।
 धृतशूलं गौळनङ्गीकृत-कृशतर-सम्पल्लवं पल्लवं चू- ।
 णिण्त-चूळं चोळनादं कदन-वदनदोळ् भेरियं पोय्सेवीरा- ।
 हित-भूभृज्जाल-काळानळनतुलबलं वीर-वज्जाल-देवम् ।
 मनमोल्दुद्ययशश्रीपति नेले मोदलागल् सत्त्वन्तेरळ्-पोन्- ।
 ननपारौदार्यं-पय्युंभतनुमुदधिपुं मेरवा-चन्द्रनुं निल्- ।
 विनक्युत्साहदिन्दं पेरगिन विनगेहक्के बिट्टं पुरम्भो- ।
 कन-लीलानङ्ग-रूपं मयन-वय-भुवं वीर-वज्जाल-देवम् ।
 अतिशोभाकरमम्-विष्णुविन वत्तस्थानदोळ् लक्ष्मियुन्- ।
 नति वेत्तिर्पण्णैलिकके कीर्त्ति-युतनोळ् श्री-चामनोळ् कूडि सं- ।
 गत-सत्त्वन्वड्डु-पुत्रं पडेपुतं जङ्गल्ले चन्द्राक्कदं ।
 क्षितियुं मेर-नगेन्द्रमुळ्ळिनेगमि मद्रं धुमं मङ्गळम् ॥
 इवनीयन्ददिनेन्दे पालिसिद्धविगिहात्यं-संघिदि सं- ।

भविर्कुं कोण्डछिदङ्गे गङ्गे गये केदारं कुरुक्षेत्रमेवम् ।
इवरोळ् पेसदे पार्वरं गोरवरं गो-बृन्दमं पेण्डिरम् ।
तवे कोन्दिक्किद पापमेयुगुमर्वं बीळगुं निगोदङ्गलोल्ल ॥

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्वराम् ।

षष्टि-वर्ष-सहस्राणि विष्टायां बायते कृमिः ॥

[इस लेखमें बताया गया है कि जब (अपनी उपाधियों सहित) होयसल बल्लाल-देव शाही नगर दोरसमुद्रमें था, और शान्ति से राज्य कर रहा था— (उक्त मितिकी) हेरगूँकी बसदिके लिये (उपर्युक्त) भूमि-दान किया । (उसकी प्रशंसा, जिनमेंसे एक यह भी है) जब वह प्रयाण करता था, तो लाङ्ग, गुण्जर, गौल (इ), पल्लव, और चोल राजाओंकी भयका सञ्चार हो जाता था ।]

[EC, V, Hassan, Tl., No. 58.]

३८६

विजोली—संस्कृत

[सं० १२३२ = ११०५ ई०]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका मालूम होता है ।

[JRAS, 1906, p. 700-701.]

३८७

क्यातनहलि—कन्नड ।

मम्मथवर्ष [११०२ ई० (ख० शक)]

[क्यातनहलि (क्यातनहलि तालुके) में, कोदण्डराम मन्दिरके पत्थर-पर]

श्रीमत्परमगम्भीर-स्याद्वादामोघलाङ्कनम् ।

बीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं खिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमम्महामण्णेश्वर तळकाडु-गङ्गावादि-नोणम्बवादि -

गोण्ड भुज-वल वीर-गङ्गा असहाय्यर निःशङ्कप्रताप होयसल-वीर-बल्लालदेव भीमद-राजधानी दोरसमुद्रद नेलवादिनलु सुक (ख)-संकथा-विचोददि राज्यं गेवुत्तिई(रे) मन्मथ-संकत्सरद मन्मर्गसिर-सु १ आदिचारदनु श्रीबादव-नारायण-चतुर्वेदि-मङ्गलदलु श्रीकरणद कलियणन कोडगोयोलु अय्यत्तु-कोळग गद्देयं साहिर-कोळग वेदलेयं श्रीकरणद हेमाडे...ळयणन कय्यलु बल्लाल-दे...गे कय्यद होब कोट्टु सर्व-बाधा-परिहारवागि कोडेहाळ-बसदिगे चन्द्रावर्क-तारम्बर सल्वन्तामि धारापूर्वकं माडि येरेंयण बिट्ट दत्ति ।

[जिस समय होयसल वीर-बल्लाल-देव राजधानी दोरसमुद्रमें रहते हुए शासन कर रहे थे, उस समय कोडेहाल-बसदिके लिये कुछ जमीन यादव-नारायण अग्रहारमें खरीदी गयी थी और वह बिना किरायेके दी गयी थी ।]

[EC, III, Srirangapatana TL., No. 146]

३८८

अवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १०२६ = ११७६ ई० (कीलहौन)]

[जै० शि० सं०, प्र० आ०]

३८९

एलेवाल;—कन्नड-भग्न

[शक १०२६ = ११२७ ई०]

[मण्डेवाकमें, बल्ल-देव मन्दिरके पासके पाषाणपर]

... .. सेतु ॥ सोकदिन्दं नल्लसिदुदु
... .. मागवलि-कुलदि बम्बीरदिन्दं ण्डं वनियिसे नन्दन-
वनदिन्दन् प्पनी-वनप मागव-वाण्डद

..... बरिसि चन्दाद्रित्यरुद्धल्लनेगं चिर-समनं बरे-पट्ट लि
 धारिणियोळु च्चोयमेनलु कडम्ब धिपति सोयि-देव-भूपति-तिळकं
 जन-नुत-कदम्ब-वंश स तिकुर् विरुद्व विरुदं विट्टु मेयिक्कुतिक्कु
 कदनविक्रम ल्लं यिदे पुल्लं कर्चि नीरं पुगुतरलु मेण्णागि
 पुत्तेरुगुं यि-देव-प्रतापम् ॥

अदयर बेर कित्तु सुभयोत्तमरं बेदरू ।

..... णनेम्बुद- ।

ल्लदे रण-रङ्ग-शूद्रकन साहस-भीमन सोयि ।

..... नं सले विश्व-धात्रियोळ् ॥

बनवसे-नाडधिकारं । जन-नुत- ।

..... लन्तामान् । तनदन्दं-पडेद विक्रमादित्य-नृपम् ॥

वीरारातिग ।

..... सले शील्लु नुङ्गि नोणेगुं दोर्-इण्ड-चण्डासियिम् ।

भोरेन्दा ।

धीरोदात्तन वणिक्कुं बुध-जन श्री-विक्रमादित्य ॥

..... निट्टदे हय्ये कोङ्कणम् ।

बेडगिन गङ्गबाडि तुळनाडे ।

..... बेसनेन्नद भूयुज्जराव कप्पमम् ।

कुडदवनीशरू त्रियोळ् ॥

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्रीमन्-महा-म से पत्तिन्की-
 तिरमनाळुत्तुं सुख-सङ्कथा-विनोददि राष्यं ॥

..... ।

..... ।

..... एलोवल्लि कौङ्गु नारङ्ग-फलम् ।

रागदेळ ।

... सत्-पङ्केच-धण्डङ्गलि कुवलयदि नाग-पुष्पागदिन्दम् ।

बल ।

विच्छ-भी-चम्पकामोददिनेसगु सदा भागवलि-विलासम् ।

... .. माल्य-लक्ष्मी-निवासम् ॥

गावणिग-कुलदे पुट्टिद ।

भाविसे केरेय ।

... .. य पोगळे पुट्टिद ।

केवलमे देकि-सेट्टि बुध-सुत-भूष ॥

सङ्क-ग ।

... .. सेट्टि कृतार्थम् ।

विङ्क-देळ-म्बळिळ्योळम् ।

भोङ्केने जिन-गृहमम् माडि कीर्त्तिय ॥

... .. ति गुरुवी-भानुकीर्त्ति-वतीन्द्रम् ।

... .. ति गुरुवी-भानुकीर्त्ति-वतीन्द्रम् ।

जननि प्रख्यातेयादी दम् ।

तनगन्ता-पत्ति गङ्गास्त्रिके जन-नुत-नी-शङ्क-गावुण्ड मावं ।

जन-वन्धं दे लक्ष्मी-विळासम् ॥

केरेयम-सेट्टिय सुतरेम् ।

किर-कुळरे केतमल्ल ।

... .. कल्प महीजम् ।

नेरेयेसेगं देकि-सेट्टि यनुवर घरेयोळ् ।

... .. पाद-सरोष-भृङ्गनम् ।

सु-कवि-जन-स्तुतं विबुध-कल्प-महीजन बणिकुं स ।

... .. शा-करि-दन्तव मुट्टे पव्गुम् ।

विकसित-भव्य-पङ्कज-दिवाकरनेन् ॥

... .. न-पद-पङ्कज-भृङ्गम् ।

बिन-महिमोत्तुंग विश्व-लक्ष्मी-सङ्गम् ।

बिन-महिम ।

... .. देकि-सेट्टि कीर्त्ति-विळासम् ॥

बिन-समय-वार्धि-हिमकर ।

बिन-मत-ल ।

... .. नम-निदानं तनगेने ।

बन-नुत-नी-देकि-सेट्टि धारिणिगेसेदम् ॥

अवर गुरु दडे ॥

कुन्तळ-गौड़-माळव-बजाहुति-दोहळि पोट्टियाण या ।

... .. विदर्भणदिन्दे बन्दु सै- ।

द्वान्तिक-पद्मणन्दि-सुतनी-मुनिचन्द्रनोलेयदे ... ।

... .. यिन्तु हरेदत्तु समस्त-घरा-तळाप्रदोळ ॥

अतितीव्रानल-काळकूट बिननुज्जिदुद्- ।

घतनं माणदे ... नाडिसुव कन्दर्प बरत्कम्मने ।

... .. वयलुगे वी- ।

रत्तप-श्री-मुनिचन्द्र-देव-मुनियङ्गकुं पेरङ्गकौमे ॥

आरैवडे भेच्चङ्कम् ।

बारह गणित-स्थिति तत्- ।

सारतर-सुद्धम-तत्त्व-वि- ।

चारं मुनिचन्द्र-यतिगे हस्तामळकम् ॥

अवर तेन्दडे ॥

श्रीमन्मूल-पदादि-सङ्घ-तिलके श्री-कोण्डकुन्दान्वये ।

कानूर् नाम-गणो तिन्त्रिणीकाहये ।

शिष्यः श्री-मुनिचन्द्र-देव-यमिनः सैद्धान्त-पारङ्गमो ।

बीयाद् श्री-भानुकीर्त्तिर्मुनिः ॥

उरगोग्र-ग्रह-शाकिनी-विहग-भूत-प्रेत ... ग-भी- ।

कर-मेता गणं भू-चक्रदोळ् तोरलु- ।

झरिसित्तन्तदे यन्त्र ओदुदुदे मन्त्रं कोट्टु बेर् तन्त्रव- ।

झरि सैद्धा नि नाथोग्राशे सामान्यमे ॥

स्वस्ति श्रीमत्-स (श) क-नृप-कालातोत-संवत्सर-सतंग भस्सेनेय
१०६६ नेय श्रीमत्-कळचुय्ये-भुज-बळ-चक्रवर्त्ति राय नेय हेमळम्बिक-
संवत्सरद ज्येष्ठ-सुद्ध-३शमियादिवारदन्दु ण-सङ्क्रान्ति-व्वती
थियोळु श्रीमद्-एळम्बल्लिय देकि-सेट्टि तन्न माडिसिद शान्तिनाथ
उदिय खण्ड-स्फुटित यर-जीयराहार-दानकं चातुर्व्वर्ण-श्रवण-संघककेन्दु
श्रीमन्मूल-संघद काणूर्-गग गच्छद कोण्डकुन्दान्धयद नुज-वंशद
वीर-बळ-माळातिश्य (शय)-त्रयोत्कृष्टानादि-संसिद्ध पुराधिनाथ-श्री-
शान्तिनाथ-षट्कारयानद मण्डळाचार्य्यारूप श्री-भानुकीर्त्ति-सि कालं
कर्त्तिव धारा-पूर्व्वकं माडि गोळिकेरेय बयललु (यहाँ पर धानकी विगत दी है)
अन्ता-स्थानमं तम्म शिष्यरूप मंत्रवादि-मकरध्वज श्रुत रिगे कोट्टु ॥
(हमेशाके अन्तिम श्लोक और वाक्यावयव) ।

[(शिलालेखका अधिकांश मिटा हुआ है) ।

नागवल्लि-कुल और नागरखण्डका वणन । कदम्ब राजा सोयि देवकी प्रशंसा ।
बनवसे-नाडका शासन विक्रमादित्यको मिला था, जिससे हर्षवे, कोंकण, प्रसिद्ध
गङ्गावाडि, और तुळु के राजा आकर भेंट देते थे ।

जिस समय, अपने समस्त पदों सहित, महा-म [ण्डलेश्वर] बनवसे
१२००० पर शासन कर रहे थे :—नागवल्लिके आकर्षणोंका वर्णन । गावणिंग
कुलमें उत्पन्न हुआ केरेय [म-सेट्टि] था, जिसका पुत्र देकि-सेट्टि था । सङ्क-
गबुण्डने देकि-सेट्टिके साथ मिलकर एलम्बळिळमें एक जिनमन्दिर बनवाया । उसके
(सङ्क-गबुण्डके) भानुकीर्त्ति-व्रतीन्द्र गुरु थे, माँ प्रसिद्ध, पत्नी गङ्गाम्बिके

और उसका श्वसुर विश्व-विख्यात था । केरेयम-सेट्टिके नेत्रमल्ल और देकि-सेट्टि पुत्रोंमेंसे देकि-सेट्टिकी जैनधर्मके महान् संपुष्टिदाताके रूपमें प्रशंसा ।

मूलसंघ, कोण्डकुन्दान्वय, काणूर-गण, तथा तिन्त्रिणिक-गण्डके मुनिचन्द्र-देवके शिष्य भानुकीर्त्ति-मुनिकी प्रशंसा (जैसा कि क्रमाङ्क ३७७ वें शिला-लेखमें है ।

(उक्त मितिको), एलम्बळिळ देकि-सेट्टिने, अपने द्वारा बनायी हुई शान्ति-नाथ-बसदिकी मरम्मतके लिये, बीयस् तथा श्रवणोंकी चारों जातियोंके भोजन-प्रबन्ध (या आहार-दान) के लिये, शान्तिनाथ-घटिका-स्थान-मण्डळाचार्य्य भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवके पाद-प्रक्षालन-पूर्वक, — (उक्त) भूमिका दान दिया । और वह 'स्थान' उसने अपने शिष्य मन्त्रवादी मकरध्वजको अर्पण कर दिया ।
हमेशाके अन्तिम श्लोक ।]

[EC, VIII, Sorab, Th., No. 384.]

३६०

हेरगू;—संस्कृत तथा कन्नड ।

वर्ष दुर्मुखी [११७७ ई० (ख० राहस्य)]

स्वस्ति श्रीमत-दुर्मुखि-संवत्सरद चैत्र-सुद्ध-दसमी-सोमवार-दन्दु हेरगिन चेन्न-पारिश्व-देवर नन्दा-दीविगेगे श्रीमत सुद्ध हेरगडे हेरगिन बाचरस-गट्टियरस-बम्म-देव-बल्लय्यङ्गळ सुद्धं बिट्टर एत्तु-गाण ओन्दकं आ-नेल्लिगर मने-देरे ओन्दुवं ऊरोडेय-नारसिगण मार-गवुण्ड सेनबोव-सोमय्यनोळगाद समस्त-प्रजे-गळिदूर्दु बिट्ट बम्म ॥

[(उक्त मितिको) चुङ्गीके अभ्युद (नाम दिया है) ने हेरगूके भगवान चेन्न-पारिश्व (पार्श्व) के हमेशा बलनेवाले दीपके लिये चुङ्गीके दाम छोड़ दिये । और चौकीदार (Headman) सेनबोव (जिन दोनोंके नाम दिये हैं)

और समस्त प्रजा एक बैलके कोल्हूका कर तथा एक तेलीके घरका कर देती थी (१) ।]

[EC, V, Hassan, Tl., No. 69.]

३९१

अजमेर;—प्राकृत ।

[सं० १२३४ = ११७७ ई०]

संवत् १२३४ जेठ सुद १३ बुधदिने साधुबुल्हा पुत्रवान हालू पार्श्व (र्व) नाम बेवपाल प्रणमतिमिहा ।

अर्थ स्पष्ट है ।

[JASB, VII, p. 52, No. 3, t.]

३९२

खजुराहो;—संस्कृत ।

[सं० १२३४ = ११७७ ई०]

[यह लेख किसी जैन प्रतिमाके अधः पाषाणपर उत्कीर्ण है और खजुराहोमें पाये जानेवाले जैन-शिला-लेखोंमें सबसे पीछेके (उत्तरवर्ती) कालका है ।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, p. 69, 5, a.]

३९३

अवधबेल्लोला;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[वर्ष हेवणन्दि = ११७७ ई० ? (ख० राइस)]

[ले. हि. सं., प्र. भा.]

३५६ ३१५

इट्ण—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक ११०० = ११७८ ई०]

[इट्ण (नेल्लीकेरी परगना) में, वीरभद्र मन्दिरके पास एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

कीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीपति-जन्मदिन्देसेव यादव-वंशदोळाद दक्षिणोर्-
व्वीपतियप्पनोर्व्वं सळनेम्ब नृपं सळैयिन्दे कोपन- ।

द्वीपियनोन्दनोर्व्वं मुनि पोय्सळ येन्दडे पोय्दु गेल्दु दिग्-
व्यापि-यशं नेगळ्ते-ब्रडेदं गड पोय्सळनेम्ब नामदिं ॥

स्वस्ति श्रीजन्मगेहं विधृत-निरुपमोदात्त-तेजो-महौर्व्वम् ।

विस्तारान्तः-कृतोर्व्वी-तळमवनत-भूभृत्-कुल-त्राण-दक्षम् ।

वस्तु-ब्रातोद्भव-स्थानकममलयशश्चन्द्रसम्भूतिधाम-

प्रस्तुत्यं नित्यमम्भोनिधि-निभमेसेगुं पोय्सळोर्व्वीश-वंशम् ॥

अदरोळ् कौस्तुभदोन्दनर्ध्य-गुणमं देवेभदुद्दाम-स-

त्त्वदगुर्व्वं हिमरश्मियुज्वलकलासम्पत्तियं पारिजा-

तदुदारत्वद पेम्पनोर्व्वने नितान्तं ताळिद् तानल्ले पु-

ट्टिदनुद्भूत-तामो-विभेदि विनयादित्यावनीपालकम् ॥

कन् ॥ विनयं बुधरं रञ्जिते । घन-तेजं वैरि-बलमनञ्जिते नेगळ्दं ।

विनयादित्य-नृपालकन् । अनुगत-नामार्थनमल-कीर्त्ति-समर्थं ॥

बुध-निधि विनयादित्यन् । वल्लु केळेयम्बरसियेम्बोळात्मास्यविभा-

विधुरित-विधु परिजन-का- । मधेनु नेगळ्दळ् सुशीलगुणगणधामं ॥

आ-दम्पतिगे तन्भुवनार्दं तनगेरंगदरि-नृपाळरनं भो-

०० द वोळेरंगिपोनाहव- । मेदिनियोळे नेगल्दनेदैयनेळेगेरयक्कम् ॥

वृ ॥ आतं चालुक्य-चक्रेशन बलद भुजा-दण्डमुदण्ड-भूप-

मय्यादिनेन्दोडे चतुस्समुद्रपर्यन्तं वरं नडवन्ताणि १२० नूरिप्पत्तेत्तुकत्ते-कोण-मण्डि-
 मैत्र-दोणि-दुग्गि-गळ-पयमत्रेयळ् नडेवडं सुङ्क-परिहारवाणि कोट्टर् मत्तं शासन-
 परिहारिणरेवदे वोक्कल लोन्दु पणवं बिट्टर् ॥ यिन्ती केयि-मने-तोट-मुख्य-समस्त
 आय-दायवेक्कमं सर्वबाचापरिहारवाणि धारा-पूर्वकं माडि बिट्टर् ॥ स्वस्ति श्रीमत्-
 कोण्डकुन्दाचार्या-न्वयद श्री-मूल-संघद देशीय-गणद पोस्तक-गच्छुद श्री-
 कोण्णापुरद निम्ब-देव-सावन्त मडिसिद श्री-रूपनारायण-देवर बसदिय प्रति-
 बद्धमप्प तेरिदाळद गोङ्क-जिनेन्द्र-मन्दिरक्के कोण्णापुरदगस्स्येश्वरद कणगिलेश्वरद
 महात्तम्मो-देविय गोकागेय महालिङ्ग-देवर यिन्ती घटिक-स्थानदाचार्य्यं मुख्य-
 एळ्-कोटि-पुव-संख्यात-गणगळ् महामण्डलियाणि तेरिदाळद मूल-स्थानद
 कलिदेव-स्वामिगे प्रतिबद्धं माडि आ नेमिनाथ-स्वामिय प्रतिष्ठाकालदला
 गोङ्क-जिनालयदाचार्य्यरप्प प्रभाचन्द्र-पण्डित-देवरिगिदेम्म जोग-वट्टिगेय
 स्थानमेन्दु जोगवट्टिगेय निक्किदर ॥ बसदिय मेले शूद्रकन सिंहद चक्रद चिह्ममेम्बिवं
 तिसुद्ध घण्टेयं परेय नागदेनिप्पवनेळ्-कोटि-तापसग्गे महा-विरोचि-यवनीश्वर-
 वैरियेनुत्तविकिदम्मिसुगुव जोग-वट्टिगेयना मुनि-संकेय कोटि-तापसर् ॥

[IA, XIV, p. 14-26, (line 56-68)] t. and. tr.

४०३

अवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक ११०४ = ११८१ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०४

अवणबेलगोला—कन्नड ।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०५

अवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड ।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०६-४०७

अवणबेलगोला—कन्नड-भग्न ।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०८

चिक्क-मागडि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक [१] १०४ = ११८२ ई०]

[चि । गडिमें, बसवण्ण मन्दिरके प्राङ्गणमें एक रत्न पर]

अ मत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

बीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीराजिप्पुदु धर्म्मदिं नियत-धर्म्मं शान्तिरिं शान्ति-वि- !

स्तारं कुन्धु ।

.... यकर् विनुत-धर्म्मं शान्ति सत्-कुन्धुवेम्ब- ।

ई-रत्नत्रय-देवरुजितमेनल् दीर्घायुमं श्रीयुमम् ॥

प्रकटं व्यास खरूपं नित्य-भावं विकर्- ।

त्रिक्रमावेष्टित-मारुत-त्रितयवा-षट्-द्रव्य-सम्पन्न-व- ।

र्त्तकमोप्पिर्दुदु नोडे नाडेयुवघो-मेध्योर्ध्व-लोक ... ।

... लोककैसेदिर्पुदन्तुमय-कम्मोद्योग-निर्म्माण-सत्- ।

लीलं द्वीप-समुद्र-वर्गं-बळयीभूत-प्रभूत-स्थळी- ।
 माळाळ ... भूरमणं जगदितनी-महच्चक्केनक्केम् ।
 णडुवोप्पं बेत्तुदो तां लवण-बलधि रत्नम्मणल् लक्ष्मि नीर्- ।
 वेण्णोडरिप्पा-करूप-दत्त-प्रसव ... देवेळ्वेनोळ्पम् ॥

कं ॥ वार्-बळय-निकरबेम्वा- ।

नीर्वेलिय नडुवे नेरदु जम्बू-चिहम् ।

सार्विनवीप्सित-फळमम् ।

पार्विनवेळेगिम्बिदाय्तु जम्बू-द्वीपम् ॥

इदु जम्बू-द्वीप ... निदु सुरोर्वीरुहौदार्यदिन्दित् ।

इदु राजद्वैर्यदिन्दित्तिदु जनित-बिन-स्थान-भोग्योपयोगा- ।

भ्युदय-श्री-लीलेयि राचरसन तेरदिन्दुन्नतत्वक्के पक्का- ।

दुदेवेनुत्तं चन्द्र-सूर्या ... राराजितिकुम् ॥

दोरेवेत्ता-मेरुविन् तेङ्कण-देशोळदेनोळ्पुवेत्तिदुडो श्री- ।

भरत क्षेत्रं करं तुम्बिगळ् मधुर-मन्द्र-स्वरोद्गीतदि मे- ।

ल्ले-रलिगळ्ळाडुवेल्लेल्लेल्लेम ... पुण्यङ्गळि हण्ण-गोञ्चल्- ।

वेरगिन्दं चूतवल्ली-विततिगळेसेदा-लास्य-सारस्यदिन्दम् ॥

कं ॥ श्रीमजनदिं सुमनो- । धामतेयिं भ्रमर-शोभेयिं कर्णाट- ।

सीमेयना-भरत-श्री- । ... तोर्पु ... नाडे कुन्तळ-देशम् ॥

वचन ॥ मत्तमल्लि जनद कोण्टेयुं गुणद व्यवहारमुं विनदद व्यवसायमुं रसद तोरे-
 गणिनेसेव कैळी-वनङ्गळुं बिरयिगळ् कामनयिकके ... रेयं गोण्डिर्प्यं ठीळेयिं नेरेद-
 कमळिनिगळुं वसन्तकेळिगे समेद पोण्डोणिगळ-गोण्डळमुं धम्मक्के नेम्ममुं
 भोगक्कागरसुमाद घटिका-स्थानमुं रत्न-समृद्धिगे सोल्लु स ... मगळ्
 गोण्डुदेनिप परिलेयिं राजमण्डलसमाजमेनिप कामिनीयर मुख-कमळ-निकरमुं ग्राम-
 नगर-खेड-खव्दण-महम्ब-द्रोणामुख-पुर-पत्तन-राबधाविगळ बन ... मेळि
 नोळ्वडवळि मेरेदु नव-विषमागि तोर्पु कुन्तळ-देसक्के ॥

क ॥ क्रमदि विक्रमदि दा- । न-मनोहर-वृत्तिरि चाळक्य-नृपाळो- ।
 तमरात्म-कीर्त्तिया-भू- । रमणिगे मुत्तुगळ तोडवेनल् प्रियरादर् ॥
 चाळक्य-भूभुजर्दिवि- । केळियोळिरे पेरगे नेरेये काम्पुवोर्दिर् ।
 भू-वधुगे रट्टखरं । सोवुत्तं तैल्लनाल्दिदं नेरे वरेयम् ॥
 अवर्दा-तैल्लजे सत्याश्रयने मगनवङ्गात्मचं विक्रमन् तान् ।
 अवनिन्द न्तव्यर्णं तां किरियने जयसिंहाङ्कनुं तम्मनन्ता- ।
 हचमङ्गं तत्सुतं तत्-तनयनेसव सोमेश्वरं तन्महीशं- ।
 गे सळ पेर्मडि-देवं मगनवन मगं ताने भूलोकमल्लम् ॥
 समनिसितवङ्गे जगदे- ।
 कमल्लनेनिसिर्द पुत्र-रूपदे तेजो- ।
 रमणीयतेयवननुजम् ।
 रमणं मेरेदं जगवके नूर्मडि-तैलम् ॥
 बळिकं नलविं साईल् । चाळक्य-राज्य-रामे बिज्जळोर्बोपतिर्यं ।
 कळचूरि-तिळकननेम् पेड् । गळ चित्तं होसतनरसुतिर्पुदु होसते ॥

व ॥ दाडेगळुण्टवङ्गे रणदोळ् सले मूडुववेरिदानेयोळ् ।

कोडुगळुण्टु मत्तेरडवङ्कुसदन्न ग ।
 डोळवन्तवन्य-नृप-रक्त-विसिञ्चनवेन्दराति ... ।
 दोडदे निर्व्वनावनेनुतिर्पुदु बिज्जलनं जगजनम् ॥
 असि लते कूडे गण्डु मगुळ्दत्तहितावनिपाळ-भूमि-पेण् ।
 मसगिदुदञ्जदान्तवरोळा-सुर-कान्तेयर्गान्त-बेटवु- ।
 व्वलवेनिसिच्चु कादिदेडे नेत्तर-जौगिने केसोरन्तेयम् ।
 पसरिसितेन्दु बन्दु शरणेम्बुदु बिज्जलनं द्विषजनम् ॥
 बळेदन्ता-बिज्जळ्जेनददेसेदुदो पेळ् सिंहलाधीश्वरं बे- ।
 तळिगं नेपाळकं घट्टवळनडपदाळ् केरळं गुज्जरं कं- ।
 मळिगं मत्ता-तुरुष्कं कुदुरे वेसदवं लाल्लनादच्चुळ्यत्तं ।

हेळेयं पाण्ड्यं कळिङ्ग करि-रिचरनागाळवेसेङ्गये निच्चं ॥
 जगमं सम्प्रीतिथिं बिज्जल-नृपतिथ तम्मं भुजा-गर्वदिं मै- ।
 ठुगि-देवं पाळिसुत्तं मेरेद बळिक्रवा-बिज्जळोर्वीश-पौत्रम् ।
 त्रिगुणभूत-प्रतापं तळेदनेळेय ... कन्दार-क्षोणिपं तज्- ।
 जगती-नाथानुतातं बळिक्रमवनिथं ताळिद्दं सवेवि-देवम् ॥
 क्रमदिं कर्णाटं कुन्तळमनोलविनिं तीळिद तळकय्स रम्यां- ।
 गमनिम्बिम्बिम्बिपोळ्पं पडेदु पृथुल-खाटक्के काञ्चीप्रदेश- ।
 कके मनम्बेत्तेय्दे रागं बुद्धिद-कर-प्ररोजातमं नीडिया-रा- ।
 यमुरारि-क्षोणिपं मेदिनियनिनिसु वन्देक-भोग्यक्के दन्दम् ॥
 आतन तम्मन्जित-गुणं विभु-मैलुगि-देवनाळिद्दम् ।
 भू-तळमं बळिक्रमवनिं किरियातनेनिप्पनादोडम् ।
 ख्यातिथिनामवल्ते हिरियातनेनल् धरे शङ्कमोर्वीप- ।
 ब्रात-नुतं घरा-बळयमं परिरक्षिसुतिर्दंनोळ्मेयिम् ॥

कं ॥ शङ्कन कीर्त्ति-प्रमेयिन्- ।

दं कामिनि भमि गौर-रुचियिन्देसेदेम् ।

शङ्कनियादळो गीता- ।

लङ्कृत-नाना-विनोद-विळसित-गतिथिम् ॥

वृ ॥ सवनार् चिश्शङ्कमल्ल-क्षितिपतिगे तच्चक्रियिन्दं बळिष्का- ।

ह्वमल्लं राय-नारायणनधिक-गुणं शङ्क-भूपानुजं भू- ।

भुवनाराध्यं घरा-मण्डलमनतुळ-दोर्दण्डदिन ताळिद्दं नोळ- ।

पवर्गेक-च्छत्रमं मेय्तिरि मेरेविनेगं प्राज्य-साम्राज्यदिन्दं ॥

क्रमदिन्दा-बिज्जळोर्वीपतिगे पडेदु सप्तांग-सम्पत्तियं म- ।

त्तमदं तच्चक्रियिन्दित्तलुमोदविद राजावळी-ळीलेगं तन्- ।

दुमिदे सप्ताङ्गमं काणिसिदनेने-बगं मन्त्रदिं तन्त्रदिं वि- ।

क्रमदिं श्रीयि सदाचारदिनोसेदेसेदं रेचि-दण्डाधिनाथम् ॥

कळचूर्य-क्षितिपाळ-राज्य-लते पर्वल् तत्र दोष-शाखेयं ।

विळसन्मन्दर सानुगं विबुध-सेव्यं विस्तृत-च्छापन- ।
 स्वळितौदार्य-विळास-भासि सुमनस्-संपूर्णनुद्ययशः- ।
 फळदिं रेचण-दण्डनाथनेसेदं लोकैक-कल्प-द्रुमम् ॥
 जिननं तन्न मनमं मनः-प्रकृतियं सद्-विद्येया-विद्येयम् ।
 तनुवन्ता-तनुवं विळासवदनुषल्-लक्ष्मिया-लक्ष्मियम् ।
 विमुतौदार्यवदं जगं जगमनिम्बो-कीर्त्तियालिङ्गिसल् ।
 जन-वन्द्यं विभु-रेचिराजनेसेदं चारित्र-रत्नाकरम् ॥
 कवि-तति ब्रह्मेगोलगिसे कामिनियर् सोबगिङ्गे सोशे बेळ- ।
 पवर्गलुदार-वृत्तिगोलवि नर-शासनवागे राज्यमुद्- ।
 भवदिनोडर्चि जैन-समयाम्बुधि कीर्त्ति-सुधांशुवि पोदळ- ।
 के वडेये रेचिराजनेसेदं जसदि वसुधैक-बान्धवम् ॥
 नडेद-नेलं रणोव्वरंयोळन्तनितुं तनगज-पुजरिम् ।
 पडेद-नेलन्दलेम्बनसिगन्य-नृपाळरनिक्कदुन्ते किळ- ।
 तडे कडु-दोसवेम्बनसहं मिगे बेङ्गुडे पट्टे ताने बेळ- ।
 गुडुववोलेम्बनेनदटनो कलि-रेचण-दण्डनाथकम् ॥
 अनुपम-दान-शौर्य-रण-शौर्यमने-वांगळ्दप्पेनाम् द्विषज- ।
 जनपरोळोन्दुवच्चरसियर्गो सयम्बरवागे सगदोळ- ।
 जनिधिसिन्ध-भूरुहके तोरणदिन्तविलेम्बुदेय्दे मे- ।
 दिनि वसुधैक-बान्धव-चमूपति रेचणनेम् कृतार्थनो ॥
 पेडे-वणि शेषनोळ् सरसिजोदरनम्बुधियोळ् मृगाङ्कवन्द- ।
 उडुपनोळ्द्रिजार्द्धवभवाङ्गदोळा-मद-लुब्ध-भृङ्गविर- ।
 पेडे दिगि-भङ्गलोळ् कुरूपु दोर्पिनेगं जगमं मुसुङ्कितिङ् - ।
 गडलेने कीर्त्ति रेचनेसेदं जसदि वसुधैक-बान्धवम् ॥
 श्रीवच्छं सिरियिं समृद्धनेसेवा-नागाम्बिका-सूनु-भो- ।
 गावासं वसुधैक-बान्धवनुदारं स्तुत्य-गौरी-सुख- ।
 भी-विष्टं वृषभध्वज-प्रियतमं नारायणात्मोद्भवम् ।

भावं बेत्तिरे चेत्त्वनेन्देनिसिदं श्री-देवि-दृष्ट्याधिपम् ॥
 तरदि देशङ्गलुं श्री-कळचूरि-कुळ-चक्रेशरिं पेत्तुदी-ना- ।
 गर-खण्डकस्थिवट्टा-नृपरोळ् पडेदिम्बिन्दबाळिङ्गर्पना- रे- ।
 चरसं तानेन्दोडे-वण्णिपुदो निसदवी-देशदिन्दोळ्मेयं बि- ।
 त्तरदि पङ्केज-रूपं बनवसेयादरोळ् श्रीय-वोलिप्पुदेम्बेम् ॥
 कुसुम-रत्नं रसावळि तळिर् सोव डाडुव कीर-जाळवेम् ।
 एसकदे चल्तुवेरिद-नेलं नेले-वेर्च्चिद पूगोळम्बिसुर- ।
 प्पेसगद-नुण्-बिसल् सुळिव कम्मेलगीत्तिसे हच्चनोप्पुवा- ।
 गसवेसेयल्के नाडेसवुदेन्नु बसन्तद सृष्टियेम्बिनम् ॥

कं ॥ आ-नागर-खण्डमना- ।

ल्पा-नृप-विनुत-कदम्बरन्ता-नृप-स- ।

न्तानाम्बुजदोळे सकल-क- ।

ळा-निळयं ब्रह्म भूभुजं बनियिसिदं ॥

आ-विभुविङ्गं चट्टल- ।

देविगवुदायिसिदनखिळ-नीति-क्रम-सं- ।

भावित-राजाचार- ।

श्री-वधुगेसेयल्के शौर्यदोषं बोप्पम् ॥

मेदिनिगे बोप्प-देवनित् ।

आदुदु हगे हुगद बाळ बाळ्वेलियवङ्ग ।

आदळ्-वल्ममे विनुत- ।

श्री-देवियवर्गो पुट्टिदं सोम-नृपम् ॥

वृ ॥ नुडिगललन्दे म्ददु-नुडि सत्थ-पताकनेनिप्पुदोप्पिद- ।

ट्टिदि निगळंक-मल्लनेने राबिपुदोजे कडम्ब-रुद्रनेम्ब- ।

ओडेत्तनवं नेगळिचदुदु गण्डर-डावणियेम्ब-नाममम् ।

पडेदुदु सोम भमिपन शौर्य-गुणावलियेम् कृतार्थनो ॥

निनगन्ता-काममीगळ् केळेयनेनिपुदं तोप्पुवोलेम्मनेच्च- ।

च्चु नितान्तं निज पादककेरगिपनेनुतं कान्तेयग्जोले काळ्ङ्गा- ।
 नन-काश्मोर-द्रवं पट्टिद निगळ्द चाङ्गाळ्घनङ्गके सेवा- ।
 बनितारागम्बोळागळ् मेरेबुदनुदिनं सोम-भूमीश-पादम् ॥
 मुनिदोडे-सोम-भूपनमगिप्येडेया-बनवासेयन्तदन्तु ।
 अनितुमदीगळातन भुजासि-लता-वृत्तवायु पोक्कुसिल्- ।
 किनोळिरे पोळ्देन्दधितरोडि समुद्रद वेळेगण्डु तावु ।
 अनुमसि बेळेगोण्डु सुखमिर्परिदेनदाटङ्गे नोन्तनो ॥
 बिरुदर् भ्मीतोर्विपाळर् म्मदन-परवशीभूतेयर् विद्येयुळ्ळर् ।
 शशरणेन्दर् स्सेवकर् ब्वेळ्पवर्गोल्दीवनी-सोम-भूमी- ।
 श्वरनेन्दुं रागदिं सङ्गतमनभयमं बेटवं दुष्टियं सयत्- ।
 इरवं सम्प्रीतियं बेळ्पुदनेने जनवौदार्यदि वर्यनादम् ॥
 तोळ तोडपुं मच्चिपेडे-वत्तुगे चुम्बिसुविम्बु सोम-भू- ।
 पाळनोळेक-भोग्यवेनिसल् तनगागिरला-स्थळङ्गळम् ।
 पाळिप कापु बीर-सिरि लक्ष्मि सरस्वतियेन्दे सैरिपळ् ।
 मेळिसलीवळे पेररनेन्देने लखल-देवियोणुवळ् ॥
 एनिपा-दम्पतियोल्मेगगळिसलोप्यं प्राज्य-साम्राज्य-का- ।
 मिनि माडल् बिगयप्पनेय्तरे परोर्वीपाळरि कप्पवित्तु ।
 इनिसुं माडदिरल्के दुष्ट-तति तप्पं पुट्टिदं बोप्पनेम्बु ॥
 इनेगं बोप्प-नृपाळनप्रतिम-पुण्यं राबिसित्तुव्वियोळ् ॥
 कं ॥ ई-बोर्प्यं देवकिगाद्- । आ-बोर्प्यं तप्पदप्पनरिदेम् कीर्त्ति- ।
 श्री-बाय्-देरेदोडे काणल्क् ।
 ई-बन्दुदे भुवन-निकरवेने पेसवडेदम् ॥
 ॥ नगेयल्लेयेमे यिक्कतिर्द-इदिनेण्ट्-अहोहिणी-सेनेगन्द् ।
 उगुरि सत्त हिरण्यकाक्तकनेनिप्पङ्गन्ददेम् बिट्ट-कङ्ग ।
 अञ्जिदन्ता-भयदिन्दे बेन्द मदनङ्गन्दा-महाभागरण्- ।
 मुगेयेन्दी विभु-बोप्प-देवनलोवं सत्त्वाधिकान्यौघमम् ॥
 १३

कदन-क्रीडेयोळुळ्ळ मिन्न दयेयेकिन्तोम्मैयुं तोरदी- ।
 मदन-क्रीडेयोळुत्तुदं मरेदडं नीरू-चोक्कडं नाण पुत्त- ।
 उदलोन्दिहंङ्गिचोडं तलेयने सम्प्रीतियं तोरेयेन्द् ।
 ओदविं मेळिने कान्तेयर् म्मेरेवनी-भ्री-बोण्य-भूपाळकम् ॥

क ॥ तिरियिन्दोप्पुव बान्धव- ।

पुरवातन राजधानियन्ता-पुरदोळ ।

सुर-खचरोरग-मणि-मकु- ।

ट-रचित-पद-कान्ति शान्तिनाथं मेरेवम् ॥

वृ ॥ पाळभिषेकवन्तेनितदादड्वास्त्यदृश्यमप्य पू- ।

माले पदके जानुवरविक्रिदोडं निमिर्बुण्ण-तोयदिम् ।

लीलेयि मज्जनकरेये वामदे शीतळवागि बर्प्पवेम् ।

सालवे शान्तिनाथन महा-महिमत्वमनोलुडु बर्णसल ॥

कं ॥ एनिपास्थानाचार्यम् ।

मुनि विनुतं भान्नुकीर्त्ति-सिद्धान्ति जगज्- ।

जन-वन्द्यं निच-गुरु-कुळ- ।

वनज-विकाशमनोउच्चुयं तपदिन्दम् ॥

अलर्दुददेन्तेनला-गुरु- ।

कुळवा-गौतमनेनिप्प गणधरनिन्दित्- ।

तलनेक-भूखसंधा- ।

विळ-यति-पतियाद कोण्डकुन्दान्वयदोळ ॥

श्री-रावणन्दि-सिद्धा- ।

न्ताराव-खरोवरके तोडवेनिप वाक्- ।

श्री-रम्य-पद्मणन्दि-त- ।

पो-रमे पिडिदिहं पद्ममेने तन्निष्प्यम् ॥

तन्मुनि-नाथन शिष्यं ।

मन्मथ-सह वल्लदङ्गना-रति सुखमम् ।

सन्मुनि-सदगुरु-कुवळय- ।

भूमति पोसतेनिसि नेगळ्दना-मुनिचन्द्रम् ॥

वृ ॥ लोकमनावगं बेळगिदं बसदिं मुनिचन्द्र-देवन- ।

प्राकृत-जैन-योग-निलयं प्रकटीकृत-[त]त्त्व-निर्णयम् ।

स्वीकृत-शब्द-शास्त्रनुरीकृत-तर्क-कळा-कळापनू -

रीकृत-काव्य-नाटकनघःकृत-मीनपताक-विक्रमम् ॥

कं ॥ तच्छिष्यं प्रकटीकृत-कीर-

त्ति-च्छत्रं भानुकोर्त्ति काणूर-गण-भू- ।

मि-च्छत्र तिन्त्रिणोक-सु- ।

गच्छं श्री-नुष-वंशनेसेदं जगदोळ् ॥

वृ ॥ शान्त-रसीत्य-मूर्त्ति दिगिभ-ब्रज-मस्तक-वर्ति-कीर्त्ति सैद्- ।

घान्तिक-चक्रवर्त्ति जिन-पाद-निधान-मु-दीप-वर्त्ति चै- ।

रन्तन-जैन-योगिसम-वर्त्तियेनल् मुनि-भानुकोर्त्ति पेम् -

पं तळेदं स्व-मन्त्रि-गति-धूर्त्त-जनक-तिवर्त्तियेम्बिनम् ॥

नियतं तन्मुनिनाथ-शिष्यनेसेदं सन्मार्ग-सम्पत्तियिम् ।

नयकीर्त्ति-व्रति-नायकं विबुध-वाङ्मना-दायकं जैन-त- ।

त्व-यथार्थागम-कायकं कृत-यशस-संस्नायकं ध्वंसिता- ।

भय-निस्थन्दित-पुष्पसायकनुदग्रौढार्य-सन्दायकम् ॥

कन्द ॥ अन्तेसेदाचार्यावळिय- ।

इं तिळिदागमङ्गळं जिन-समयोच- ।

चिन्तामणि सं(शं)कर-सा- ।

मन्तं शान्तियने माडि शङ्करनेनिपम् ॥

विदित-भराक्रमनेनिपा- ।

कदम्ब-नृप-तिलक बोप्य-देवन राज्या- ।

भ्युदयके ताने मोदलेनि- ।

सिदना-सामन्त-शङ्कर नयदिन्दम् ॥

सामन्त-शङ्करनिन्दुद्- ।

दामते-बडेदिर्द नण्डु-वंशद सिरि मुन्- ।

ए-माल्केयेम्बोडन्वय- ।

रामेगे तोडवादनमळ-सङ्गं सिङ्गम् ॥

सिङ्गल कान्तेयहते सिरियातन केसर-माळेयम्ब चेल्- ।

बिक्केडेगोण्डु माळनवर्गादनवङ्गेणयागे माणियक्क- ।

अ गुण-युक्ति-कान्तेयवर्गिम्बने पुट्टिदनेक्कनेक्के-गौ- ।

डङ्गनुबातना-केरेयमं मेरेदं स्तुति-जीवनोदयम् ॥

कं ॥ अनुदिनमवरिच्छा-जनि- ।

त-फलं बळये तन्न काल्गळनाश्र- ।

य्सि नितान्तं केरेयमना- ।

दनदं रेसव्वे नल्लळाटळु नलविम् ॥

वृ ॥ अवरिर्वर्गशुदात्तनप्पनेनिसिर्दा-बोप्पगावुण्डनु-

दम्भवसुं तानु-बुदात्त-वृत्तियुमन्नौदार्यसुं पेम्मेयो- ।

प्पशुदागरे पुट्टि कीत्ति-पडेदं तन्नच्चेवोळ् चाकि-गौ- ।

ढि विमृताङ्गल-वाडियोळ् पडेये सत्-पुण्याङ्कनं सङ्कनम् ॥

वर-वनिता-वशङ्करनराति-नृपाल-भयङ्करं जिने- ।

श्वर-यति-किङ्करं स्वपति-चित्त-मदंकरनिष्ठवर्ग-शं- ।

करनखिलार्थ-शास्त्र-सु-ददंकरनात्म-सुखंकरं मनो- ।

हरनेने शंकरं पडेदनोप्पे चरित्रदोळं सियम् ॥

दिनमेळ् दान-केळि-समयमे तनगेन्देम्बिनं नीतियेळ्ळम् ।

तनेगेन्दागिर्दवेन्देम्बिनबरि-कुळवेळ् स्व-खङ्गाहतं-शा- ।

किनियगेन्दादुदेन्देम्बिन बोडमेयदल्लं जगत्-पोषणकेम्- ।

बिनवा-सामन्त-सुखं नेगळ्दनेळेगवातङ्कवागल्के तन्नम् ॥

पयिकङ्किष्टाङ्के शिष्टंगघनेनेनिपवङ्गात्ति-यादङ्के नित्या ।

लिथिगाळ्गन्यङ्के मान्यङ्कवनिबेळेय ह-मोट्टङ्के भार- ।

अथितङ्गेन्तेभ्वङ्गेनेनुतेनुदिसिदङ्गाभौवोस्तिदत्तु दौस्थ्य- ।
व्यथेयं माणिप्पनेम् मान्तनद कणियो सामन्तरोळ् संकराङ्कम् ॥
पति-मन्त्र-प्रौढिसेवक-तति निरहङ्कारम् मान्यरोळ्पम् ।
क्षिति-सन् मर्यादेयं बन्धुगळनुदिन-सन्-मानवं धार्मिकर् सन्-
मतिथं कान्ताभनं मेध्वळियनखिळ-वन्दि-ब्रजं धा- ।
... .. बणिक्कुं पुण्यद तवरो दिटं नोडे सामन्त-शङ्कम् ॥

कं ॥ करेयेनिप सुरभिगेलेगळ ।
मरेयेनिसिद कळप-वृच्च-फळ-ततिगेजेये ।
करेव दारते ।
मेरेबुदु सामन्त-शङ्करनोळनवरतम् ॥

वृ ॥ विनेय-रसङ्गळि तणिपि याचकरं मनेगोय्दु सन्ततं ।
कनकद बाडनित्तु मिगे सोक्किसि सेव्यर ।
... .. आ मारुगोण्डवर नालेगेयं प्रभु-शंकरं यशो- ।
घननेनिसिर्दन्नल्लदोडे मारुवरे रसना-निकायमम् ॥

कं ॥ एनिसिद शङ्कर-साम- ।
न्तन कान्तेय यिन्दुणे सस्या- ।
वनि अक्कणव्वेयुं का- ।
मन सिरि कं-देरदळेम्बिने सोगेयिसिदर् ॥
शान्तेय सन्नु शङ्कर-ननुद्भवनुद्ध-कदम्ब-रुद्र सा- ।
मन्त समय प्रणुतं वसुधैक-ब्रान्धवङ्ग ।
अन्तेसेदास-मन्त्रि विभु-बोप्पनो उब्बिदमोळ्मेगोप्पमम् ।
शान्तते दानवप्पु चरितं सिरि कोमळ-रूपवोप्पिरल् ॥
... .. न देवतेयेन्द् ।
एने नेगळ्दा-अक्कणव्वे-तनुविं मनदिं ।
मनसिबनुं जिननुं तन् ।

इनियङ्गुभय-भव-सुखवदेने करवेसेदळ् ॥
 बिन-समय-भक्तिपि स- ।
 ... सुपुत्रविर्वरिनेणे शा- ।
 सन-देविगे वल्लभन- ।
 त्यनुवशानी-जक्कणव्वे-गिदुवे विशेषम् ॥
 आ-जक्कणव्वेयम्-त- ।
 नूजं मेरेदं जगके सुजन-मनोजम् ।
 पूजि ... ।
 ... सकळ-गुण-निकर-धामं सोमम् ॥

वृत्त ॥ तनु पुण्योदय-शोभितं निर्मिदंतोळोदार्य-रम्यं मुखम् ।
 जन-सम्मोहन-सत्य-वृत्त वलगन् दाक्षिण्य-दीर्घा ... ।
 ... ति रूपके यथा रूपं तथा शीलवेन्दु ।
 एने सामन्त-ललाम-सोमनेसेदं सौन्दर्य-चातुर्यदिम् ॥
 करदिन्दं तेगेयलू सशक्ति नी ... बन्दा ... ।
 र-पुत्र-नुत-जक्कणव्वेय मगं कण्ठीरवारोहरण- ।
 करेधं सोम-सहोदरं शिशुतेयोळ् मुद्दय्य मुद्दय्यना- ।
 दरदि कळप-कुजतमं पडेवनेन्दा-चूतमं वड्ढिपम् ॥

कं ॥ अन्तेनिसल् शङ्कर-सा- ।

मन्तं सकळत्र-पुत्र-बान्धव-मित्रा- ।
 नन्त-वयनेसेदं निश- ।
 चिन्तं धर्मार्थ-काम-वर्ग-सुमार्गम् ॥
 अनुपमिताश्चर्य्य शा- ।
 न्तिनाथनेन्दा-स्थळानुबन्धदिनिम्बिम् ।
 बिन-एहमं मागुडियोळ् ।
 विनुतं सामन्य(त)-शङ्करम्माडिसिदम् ॥

- वृ ॥ प्रतिविम्बं पद-यातमं कळेपुदा-रङ्गके कम्मके इद्- ।
 गतमं माळपुदु शालभञ्जिकेगळं चित्रिपुदा-मिति-सन्- ।
 ततियं बङ्गम-चित्रदिन्देने वनं सामन्य-शङ्कं बगन्- ।
 नुतमं माडिसिर्दं जिनेन्द्र-ग्रहमं **मागुण्डियोळ्** रागदिम् ॥
 आ-भुवनैक-मण्डन-बिनालयमं नलोविन्दे नोडि सू-
र्याभरणाहयं बलिपुरि-त्रिपुरान्तक-सूरि-संस्तुतम् ।
 शोभिसुतिर्दुर्दो-बसदि तीर्थकरसूशिव-सत् पदस्थरेन्द ।
 [आ-भुवनैक-मण्डन-बिनालयमं नलोविन्दे नोडि सू - ।
 र्याभरणाहयं बलिपुरि-त्रिपुरान्तक-सूरि-संस्तुतम् ।
 शोभिसुतिर्दुर्दो-बसदि तीर्थकरसूशिव-सहस्रदस्थरेन्द । ?]
 आ-भव-भावदिम्मुनिवरं स्थळ-वृत्तियनित्तनुत्तमम् ॥
- कं ॥ स्थिरवागिरित्तनडकेय । मरनयूकळळ-तोणवा-पूडोणम् ।
 बेरसुं सुभूमिय मत्तर । व्वरे गृह्येदोन्दु-गाणवेन्दिन्तिनितम् ॥
- वृ ॥ अन्ता-वर्म-निकायमं सुळिसुतं न्यायाजित-द्रव्यदिन्द ।
 अन्तीवुत्तखिळाशेयं सदुपभोगानीकमं भोगिसुत्त ।
 अन्ता-**शङ्कम-देव-चक्रि** नडेदं **बल्लाळ-भूपाळनम् ।**
 सन्तं तन्न पदाब्ज-सेवेगे-दरलू शौट्याण्णर्वं घूर्णिणसलू ।
- कं ॥ नडेदातन लक्ष्मिय कय्- ।
 पिडिदोडगोण्डखिळ-दण्डनाथ-समेतम् ।
 नडेतन्दु **ताणगुन्दव ।**
 नडे-वीडिनोळ् इहंनर्त्तियि पल-देवसम् ॥
 इरे रेखण-**खण्डाघी- ।**
श्वरं जिनेश्वर-पदामिवन्दने पन्दोप्प- ।
 इरे कन्दं **मागुडिगा- ।**
 दरदि श्री-बोप्प-भू **शङ्कर-सहितम् ॥**

(चौथी बाजू)

स्वपरमतविकासश्रीसुतेः कण्ठपाशो

नमितमुनिगणेशः भव्यबोधोपदेशः ।

श्रुत-परम-निवेशश्शुद्धमुक्त्यङ्गनेशः

जयति वर-मुनीशस्सूरिचन्द्रप्रमेशः ॥

समयदिवाकरदेवो तच्छिष्यः परम-तार्किकाम्बुज-मित्रः

चन्द्रप्रभमुनिनाथो कृत्वा सल्लेखनं शुभतनुत्यागम् ॥

शाके सायक-खेन्दु-भूमि-गणिते-संवत्सरे शोभकृन्-

नाम्नोष्टे कुजवार-शुद्ध-दशमी-प्राप्तोत्तराषाढके ।

मासे भाद्रपदे प्रभातसमये चन्द्रप्रभाख्यो मुनि-

स्सन्यसने समाधिना सुमरणं से ... गणी द्वागभूत् ॥

यस्यार्यस्य गुरुस्सतां गुणगुरुस्त्रैविद्यविद्यानिधिः

ख्यातोऽसौ समये दिवाकर इति स्यादीक्ष्या शिष्यकैः ।

तैर्दत्तं सकलं ... त श्रुतगुणं रत्नत्रयाख्यं क्रमाद्

आराध ... त्य-समाधि ... पातिश्चन्द्रप्रभाख्योऽभवत् ॥

य ... प ... दशविधो धर्मं क्षमा ...

कर गणागमे परिणतिस्साहित्य ...

भ्राजन्ते स भवान् समाधि-विधिना ... चार्यो दिवं

यातो ध्यानबलान्वितः ... रागद्वेषमोहास्थिरः ॥

यस्तत्त्वो ... वर्द्धन-विधुः कामेभ-कण्ठीरवः

भीमद्-द्राविडसंघभूषणमणिस्सद्ज्ञानचिन्तामणिः ।

धृत्वा चारुतपश्चरित्रममलं स्मृत्वा जिनाडिद्भयं

कृत्वा सन्यसनं जिनालयगतो तन्द्रप्रभस्सन्मुनिः ॥

लोके दुष्टजनाकुले हतकुले लोभातुरे निष्ठुरे

सालङ्कारपरे मनोहरतरे साहित्य-लीलाधरे ।

भद्रे देवि सरस्वती गुणनिधिः काले कलौ साम्प्रतं

कं यास्यस्यभिमानरत्ननिष्ठयं चन्द्रप्रभास्यं विना ॥
साहित्योन्नतपादपं क्षितितले दुष्कर्मणा पातितं ।
वाग्देवी-पृथु-वद्ध-मण्डनमहो सञ्जिह्वय निर्नासितं ।
सर्वज्ञागम-सार-भूषणमिदं दूषेण निलोठितं ।
श्रीचन्द्रप्रमदेव-देव-भरणे शास्त्रार्णवं शोषितम् ॥

नमोऽस्तु

[इस लेखमें द्रमिल-संघगत नन्दि-संघके अरुङ्गल-अन्वयकी समन्तभद्र-मुनी-श्वरसे लेकर चन्द्रप्रभ-मुनिनाथ तककी पट्टावली या शिष्य परम्परा दी हुई है। वह क्रमसे इस प्रकार है :—

१. **समन्तभद्र** मुनीश्वर—वारणासी (वाराणसी = बनारस) में राजाके सामने विपक्षियोंको हराया ।

२. **कुमारसेन**—दक्षिणमें आकरके उनकी मृत्यु हुई, परन्तु मृत्युके बाद भी उनका कीर्ति सारे भारतमें सूर्यकी तरह प्रकाशित हो रही थी ।

३. **गुरु चिन्तामणि**—चिन्तामणि काव्यकी रचना की थी । जिनभक्तोंके लिये वास्तवमें ही 'चिन्तामणि' थे ।

४. **चूड़ामणि**—चूड़ामणि काव्यकी रचना की थी, जिसमें काव्यगत अलङ्कारोंका वर्णन था । वे वास्तवमें विद्वच्चूड़ामणि थे ।

५. **मुनीश्वर महेश्वर**—इन्होंने महान् सत्तर ७० शास्त्रार्थोंमें विजय पायी थी । उनके पैर ब्रह्म-राक्षस भी पूजते थे ।

६. **शान्तिदेव** मुनीश्वर—दिशाओंके अन्ततक तपसे समुद्भूत उनकी कीर्ति फैली हुई थी । वे बहुत शान्तमूर्ति थे ।

७. **अकलङ्कदेव**—उनकी कीर्तिका वर्णन कौन कर सकता है । इनके प्रबल विजयी शास्त्रार्थों से बौद्ध पण्डितोंको मृत्युतकका आलिङ्गन कराया गया था ।

८. **पुष्पसेन** मुनि—यह अकलङ्कदेवके साथी (सधर्मा) थे ।

६. दिगम्बर विमलचन्द्र—ये बड़े भारी तार्किक पण्डित थे। शैव, पाशुपत, तथागत (बौद्ध) कापालिक और कापिल मतोंका बुरी तरह खण्डन करते थे। अपने घरके द्वारपर उनके लिये चैलेख लिखकर टाँग दिया था।

१०. इन्द्रबन्धि मुनीन्द्र—इन्होंने 'प्रतिष्ठा-कल्प' और 'ज्वालिनी-कल्प' ग्रन्थोंकी रचना की थी।

११. परवादिमल्ल—इन्होंने कृष्णराजके समक्ष अपने नामका निर्वचन इस तरहसे किया था :—यहीतपस्से इतर 'पर' है, उसका जो प्रतिपादन करते हैं वे 'परवादि' हैं, उनका जो खण्डन करता है वह 'परवादि-मल्ल' है; यही नाम मेरा नाम है, ऐसा लोग कहते हैं।

१२. इससे आगेका शिलालेखका बहुत-सा अंश घिसा हुआ है : मल्लधारि और द्रमिलसंघ के नाम मिलते हैं।

१३. तत्पश्चात् अजितसेन-पण्डित और चन्द्रप्रभ, जिनके शिष्य अजितसेन-देव थे, की प्रशंसा आती है। इसके बाद, समय-समयमें दिवाकर-सूर्यके समान समयदिवाकरके शिष्य सूरि चन्द्रप्रभकी प्रशंसा आती है।

१४. चन्द्रप्रभ-मुनिनाथने सल्लेखना व्रत धारणकर शकवर्ष ११०५, शोभ-कृद्धर्ष, मंगलवार, माद्रपद शुक्ला १०, उत्तराषाढा नक्षत्रमें, प्रभातसमयमें देहोत्सर्ग किया।]

[EC, III, Tirumakudlu Narasipur tl., no 105.]

४११

अळेसन्द्र—संस्कृत और कन्नड।

[शक ११०५=११८३ ई०]

[अळेसन्द्र (जिल्हेशिरी प्रदेश) में, गाँव के मुख्य प्रवेशद्वार के दक्षिण की तरफ पड़े हुए पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।

बोयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

वीतराग । स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वरं द्वारावतीपुरवराधीश्वरं
यादवकुलाम्बरद्युमणि सम्यक्त्वचूडामणि वासन्तिकादेवीलम्बवरप्रसाद मलेपरोळु
गण्डाद्यनेकनामावलीसमलङ्कृतरूप श्रीमन्त्रिभुवनमल्ल विनेयादित्यहोयसळं कोङ्क-
णदाळवखेडद बयलनाड तळेकाड साविमलेयिनोळगाद भूमियेत्तमं दुष्ट-
निग्रह-शिष्टप्रतिपाळनेयि ।

सळनेम्बनागे यादव- । कुलदोळु पुलि पाये कण्डु मुनि पुलियम्पोय् ।

सळ येने पोय्दुर्दि पोय्- । सळ वेसरवनिन्दवागे तड्दशबरोळ् ॥

कन्द ॥ सळ-नृपनि बळियं यदु- । कुळ-बीरपल्लबरोगेदरवर अन्वयदोळ् ।

बळवद्विरोधिभूभृत्- । कुलिशं जिनियिसिदनेसेये विनेयादित्यं ॥

बलिदडे मलेदडे मलेपर । तलेयोळु बाळिदुवनुदित-मव्य-रसवसदि ।

बलिपद मलेयद मलेपर । तलेयोळु कैयिदुवनोडने विनेयादित्यम् ॥

आ मण्डलेश्वरन मनोनयनवह्लेभे ।

परिजनकं पुर-जनकं परमात्यं ताने पुण्य-देवतेयेनलेम् ।

घरेयोळु नेगळ्दळो केळेयब्- । बरसि बनाराथ्ये भुवन-वनितारत्नम् ॥

अन्त-रिर्व्वरं सुखसङ्कयाविनोददि सोसवूर नेलेवीडिनोळु राज्यं गेप्युत्तमिर्द्दी-
केळेयल-देवियर मरियाने-दण्डनायकनं तन्न तम्मनेन्दु रक्षिसि विनेयादित्य-
पोय्सल देववं तानुमिर्द्दु मरियाने-दण्डनायकके देकवे-दण्डनायकितियं
कन्यादानं माडि आसन्दि-नाड सिन्दगेरेंयं प्रभुत्वसहितं नेलेयागि शक-वर्ष
९६७ नेय सर्व्वजित् संवत्सरद फाल्गुण-सुख-तदिगे सोमवारदन्दु
कन्या-दानमुं भूमि-दानमुमं धारा-पूर्व्वकं कोट्टु स्व-धर्मदि रक्षिमुत्तमिरे ।

वरणिगे नेगळ्दा-पोय्सळ- । नरपतिग कमनकम्बुकन्धरे केळेयब्-

बरसिगमुदियिति नेगर्द । बरित्रियोळु वोर-गङ्गनेरेंयङ्गनृपम् ॥

आ-विभुगं नेगळ्द्वेखल- । देविगमुदियिसिदरदटरेने बल्लाळ- ।

दमा-वल्लभ विष्णु-घरि- । श्री-वल्लभ सुभट्टुदितनुदेयादित्यम् ॥

एनितित्तडमेनितिरिदिडम् । अनितोप्पुं कूर्पुमप्पुवे पेर्गङ्गुकेम्-

मने नोड दिटरे बल्लाळ- । ल-नृपाळने चागि बल्लु-देवने बीरं ॥

अन्तुं सुख-संकथा-विनोददि श्रीमद्राजधानी बेलुहुर-बीडिनोळु राज्यं गेय्युत्तं
इदं मरियाने-दण्डनायकन द्वितियलक्ष्मी-समानेयरप्प चामवे-दण्डनायकतिगं
पुट्टिद पडुमल-देवि चामल-देवि बोप्पा-देविपरिन्ती-मूवुं शास्त्रगीत-नृत्यदल
प्रभुडेयं मूर्ध-राय-कटक-पात्र-जस-दळेयरेनेसि बळेयला-मूवर कन्यकेयरनोन्दे-इसे-
योळ् बल्लाळ-देवं विवाहमाडि सक-वर्षं १०२५ नेय सुभाजु-संवत्सरव
कार्तिक-शुद्धदशमि-बृह(स्पति)वारवन्दु मोलेवाज-रिणवके मरियाने-दण्ड-
नायकङ्गे सिन्दगरेय एरडनेय-पर्यायदल प्रभुत्व-सहितं नेलेयागि पुनर्द्वारापूर्वकं कोट्टु
सलिसुत्तमिरे ।

तुळु-देशं (चक्र) चक्रगोहं तळवनपुर उच्चंगि कोळाल एळुं-

मले वल्लककञ्चि कङ्गुविस्व हडिय-घटं बयल नाडु नीला ।

चळ-दुर्गा रायरायोत्तम-पुर तेरेयूक्योयतूर्गोण्डवाडि-

स्थलवं अ-भङ्गदि गेल्लदतुळ-भुज-नळातांपदि विष्णु-भूप ॥

अरि नृपरं तडङ्गडिदु बेलियनिक्कि पट्टु प्रतापपुर-

म्बिरे तळकाड बीडु-गडिदल्लुरे सुट्टु तुङ्गदञ्चि-सज-

चरणदिनुल वीर-रसदि हदनाडे कूडे वित्तिदम् ।

सु-चरि-बीर्त्तियं नृप-सिखामणि साहस-गङ्ग-बोयसलम् ॥

स्वस्ति श्रीमतु काञ्च-गोण्ड विक्रम-गङ्ग विष्णुवर्द्धनदेवं दोरसमुद्रद नेलेवी-
डिनोळु पृथ्वी-नाथं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीविगल्लण हिरिय-मरियाने-दण्डनायकन
मय्दुननप्प गङ्गराजदण्डाधीशम् ।

मत्तिन-मातवत्तिरलि बीर्ण-विनालय-कोटियं क्रम-

बेट्टिरे मुञ्जिनन्ते पल-वर्गळुम नेरे माडिसुत्तवत्-

युत्तम-पात्र-दानदोषं मेरेवुत्तिरे गङ्गवाडि-तोम्-
 मट्टरं-तायिरं क्रीपणवादुदु गङ्गण-दण्डनाथनिम् ॥
 तत्तनय ॥ कदनदोळान्तरं गेळुवडेम् गळ निन्न पेलर्जितारियेम्-
 बुदे बुध-बन्धुवेम्बुदे बनावणियेम्बुदे बोण्य-देवनेम्-
 बुदे कलियेचि-राब-विभुवेम्बुदे गङ्गन गन्ध-हस्तिथेम्-
 बुदे रण-रङ्ग-पाण्डु-सुतनेम्बुदे वैरि-घरट्टनेम्बुदे ॥
 आतन मट्टुनर संस्त (समस्त) राज्यभरनिरूपितमहामात्यपदवीप्रख्यातरुमभि-
 जातरुं श्रीमदहर्त्परमेश्वरपदपयोबध्त्चरणरुं । रत्नत्रयाळङ्कतरुमण्ण श्रीमग्महाप्रधानं
 मरियाने-दण्डनाथकुतुं श्रीमदादि-भरतेश्वर नेनिप भरतेश्वर-दण्डना-
 थकुतुं तम्पोळभेद-भावदिं गुणि-गुण-स्वरूपरागि ।
 उन्नतवंशानुत्सव-कुलोत्तम भद्र-गुणान्वितं जगत्-
 सन्नुतदानयुक्तविभवं मरियाने रिपु-प्रभेदनोत्-
 पन्न-जयाभिरामनेनगीतने नच्चिन पट्टदानेयेन्दु ।
 एम् नेरें नच्चि माडिदनो त्रिष्णु-नृपं ध्वनिनी-पतित्वमम् ॥
 जिनपति देव्यवात्म-जनकं-प्रभु पेगंडे देचि-राज्जनाळ्-
 पिन कणि तन्न ताय् नेगळ्द नागल-देवि चमूपन्वक्त्र-चन्-
 दन-तिळकं [...] मरियाने-चमूपति नाथनिन्नु सज्-
 जन-विनुतान्वयोन्नतिये जङ्गल-देविये घन्ये घात्रियोळ् ॥
 तोळतोळगि बेळगि कीर्त्ति- । वळयदिनळवट्ट विष्ण-भूपन राज्य-
 स्तळके मिषुपेसेव-हेमद । कळस केवळमे भरत-दण्डाधीशं ॥
 कान्तं श्रीभव्यचूडामणि भरतचमूनाथनाट्यन्तिक-श्री-
 कान्तं त्रैलोक्यनाथं परम-जिनने देवं समम्पस्त-सद्-सिद्-
 धान्तं श्रीमाघनन्दिन्नतिपति गुरुगळ् तन्दे मारैयन् एन्दन्द ।
 एन्तुं तां धन्येयेन्दी-हरियल्लेयेने भूमण्डलं बिच्चळिककुम् ॥
 एणिकेय लोकद-नाणिकेयर् । एणयण्णर नोडे चिक-हरियळे गारुम् ।
 गुणदोळु शासन-देवियर् । एणयण्णर भरत-राजन्नर्द्धाङ्गनेजम् ॥

इन्तु पोगळ्तेगे नेलेयाद् कौण्डिल्य-गोत्रद् डाकरस-दण्डनायकन् एखव-
दण्णायकितिय मकळु नाकण-दण्डनायकतुं मरियाने-दण्डनायकतुं
अवर मकळु प्राखण दण्डनायकनातन सति हम्मवे दण्णायकितियुं डाक-
रस-दण्डनायक आतन-सति दुग्गब्बे-दण्णायकिति अवर मकळु मरियाने-
दण्डनायकन् भरतिम्मेय-दण्डनायकनुमवर तङ्गे ।

बिन-पद-पद्म-भक्ते सुचरित्र-नियुक्ते विनीते माचि-रा-
बन सुते काव-राजन मनः प्रिये चाकलेसद्वधूचना-
नन-विळसल्लामे मरियानेय सद्भरतेश-दण्डना-
यन किरि-दङ्गे मन्मथन विक्रम-लद्धिमयोलादमोप्पुवळ् ॥

श्रीमत्काञ्चि-गोण्ड विक्रम-गङ्ग विष्णुवर्द्धन-देवनन्वयद् मरियाने-दण्डनायकनुं
भरतण-दण्डनायकनुं सर्वोधिकारिगळुं माणिकभण्डारिगळुं प्राणाधिकारिगळुं
आगि सुखदिं सलुत्तमिरे । विष्णुवर्द्धनदेव श्रीमद्राजधानि-दोरसमुद्रद् नेले-
वीडिनोळु पृथ्वी-राज्यं गेयुत्तमिरे उत्तरायण-संकमानटोळ...नदोळु तम्म मगनं
बिट्ठि-देवन हेसरनिट्ठु १००० होन्नं पाद-पूजेयं कोट्ठु आसन्दि-नाड
सिन्दगेरैयुमं बाय-वेण्णेगे बग्गवळ्ळियुमं कलिकणि-नाड दिण्डिगनकेरैय
प्रमुखमुमं बिट्ठि-देवन स्वहस्तदिं धारा-पूर्वकं हड्डु सुखदिनिरे ।

जनियिसिदं विष्णु-मही- । शन वधु लक्ष्मा-देविगनुपम-नारसिंघा- ।

वनिपं नतरिपुभूपा- । ल-निकाय-ललाट-तटाघट्टित-चरणम् ॥

श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर नारसिंघ-देवरा राज्यं गेयुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीविगळु
महाप्रधान मरियाने-दण्डनायकं भरतिम्मेय-दण्डनायकं तम्मन्वयद् सिन्दगेरैय
बग्गवळ्ळिय दडिगनकेरैय प्रमुखके ५०० होन्नं पाद-पूजेयं कोट्ठु नारसिंघ-देवरा
कैयल पुनर्दत्तियागि हड्डु सुखदिनिरे ।

काल-निभ-प्रतापि नरसिंघ-महीपतिगं मदेम-ली-

लालस-याने कम्बुनिभकन्धरे एखल-देविगं जय- ।

भी-ललनेशनीतनेने पुट्टिदन्तूज्ज्वल-पुण्य-मूर्ति बल-

लल-नृपाळकं समदवैरिमहीभुजदर्पमञ्जनम् ॥

कलिकालक्षत्रपुत्रप्रबळतरदुराचारसन्दोहदिन्दम् ।

पोले पोहूल् पेसि बेसत्तळवळिद मही-कान्तेयं रक्षिसल्का-

बलबाह्वं ताने बन्दित्ववतरिसिदवोला-वीर-बल्लाल-देवम् ।

कुलजात्याचारसारं नृपवरनुदय-गेयदनाश्रयसौम्यम् ॥

श्रीमन्महामण्डलेश्वरन् असहायशूर निरंशङ्कप्रताप होय्छ-वीर-बल्लाल-देवर
तत्पादपद्मोपजीविगळप्प श्रीमन्महामघानं भरतम्मय्य-दण्डनायकवं श्रीमन्म-
हाप्रधान बाहुबलि-दण्डनायकवं सर्वोधिकारिगळु माणिक-भण्डारिगळुं प्राणा-
धिकारिगळुमाणि सुखादिं सलुत्तमिरे ।

भरतचमूपतिगमुचितान्वय-चारु-चरितदोषुवा-

हरियले-दण्डनायकितिगं गुणरत्नपथोधि पुट्टिदम् ।

परिचित-नीति-शास्त्र निखिल्लास्त्र-विशारदनिष्ठ-विशिष्ट-भा-

सुर-निधि बिट्टि-देवनखिल्लावनि-मण्डन-मौलि-मण्डनम् ॥

सेनापति मर्रियानेगे । भानुगे कानोननादत्रोल् सुतनादम् ।

भानु-सम-द्युति विबुध-नि- । घानं गुणस्तराशियप्पं बोप्यम् ॥

मर्रियाने-दण्डनायकृरिंविन कर्णियेनिसि पुट्टिदं जन-विनुतम् ।

करंमर्रियिल्लद बसदि । नेरेंदं जित-वीर-धैरि हेग्गडे-देवम् ॥

भरत-चमूपन पुत्रं । पुरुषार्थम्बोधि मान-कनक-नागेन्द्रम् ।

पु...खचर मनु-मुनि- । चरितं मर्रियाने-देवनदटर गोवम् ॥

अनुपम-दण्डनाय-भरतात्मजे मू-नुत- ... नेचि-राबनड-

गने विभु-राय-देव मर्रियानेगळ्म्बिके सिन्दु-घट्टदोळ् ।

घनतर-कूट-कोटि-युत-पाश्र्व-बिनेश्वर-गोहमं बमब-

बन-नुतमागे माडिसिद श्रान्तल-देवि कृतायें घात्रियोळ् ॥

बिन-बननिगेणेये बम्भवे । बननि गड तण्डे नेगळ्द हेग्गडे-पाश्र्वं ।

अनुनयदे पुत्रनादं । दिन-पतिगे ... निप-तेबदातं श्रान्तं ॥

तक्केयव हेमल-देवि कुग्गिल-देविथव ।

भरत-चमूपनि पिरियना-मरियाने-चमूपना-मू- ।

वर...गं महाप्रभु महागुणि वीर्यद धैर्यदागरं ।

भरत-चमूपनङ्गभव-रूपनपास्त-रवि-प्रतापनुद्-

धराळवि विक्रम-क्रम-विनिर्जित-शत्रु-पराक्रमाक्रमम् ।

अन्तेनिप भरतसेना- । कान्तन कडु-होत्र कान्ते बूचले भू-च- ।

क्रान्त-स्थापित-शशि-मणि- । कान्ति-लसत्-कीर्त्ति-मूर्त्ति सति रति-यत्नळ् ॥

भरत-चमूपगो तम्पं । स्थिर-गुणनभिमतनेने बाहुबलि-दण्डेशम् ।

पुरुषार्थ-सार्थ-तीर्थ- । पर-हित-विद्याधरेन्द्रनिन्द्रेण्य-निभम् ॥

आ-विभुविन सति नागल- । देवि जगत्ख्याते सीते पत्ति-हितदिन्दम् ।

भावमवाङ्मने रूपि । भाविसे तां बान्मेयिन्द लक्ष्म्येनिपळ् ॥

ओदवद-रूपिनिन्दे नयदिन्द...नोडुव कण्ण बे...तां ।

पदेदनुरागदिन्द चमूपति भरतनेम्भ महा-गजेन्द्रमम् ।

पुडिदळु तन्न यौव्वनद कम्बदे (आ-) बाचले-नारि... ।

पदे जिनभक्ते पुण्यवति दान-विनोदे पतिव्रता-गुणि ॥

बेसनं बल्लाल-भूपम्बेससे भरत-दण्डाधिप रानादि वा- ।

यु-सुतं रामाशेयिन्दं नडव-तेरंदे बीळकोण्डु सामग्रियिन्दम् ।

अमुददेशङ्गळं केसुरिगे वेरेंये बिट्टन्ते निष्कण्टकं भू- ।

प्रसरं तानात्तपीशङ्गेनिसि पगोय चिन्तिल्लदन्तागे कोण्डम् ॥

ताङ्गदे युद्ध-रङ्गदोळिदिच्चुवने गब्बदिम् ।

... मलेवन्दडवर्न ओन्दे थट्टि वीररम् ।

तुङ्ग-भुब्बासियं तबिसि विक्रम-लक्ष्मीगे गण्डनाद पेम्-

पिङ्गे जगज्जनं पोगळ्बुदी-भरतेश्वर-दण्डनाथन ॥

कुदुरेंयनेरंल्लुवणिगळिप्रयनोय्यने नीडे वैरिमळ् ।

कदन-पराङ्मुखर्परिदु बेट्टमनेरिंदळ्बुदिविकदम् ।

नदिगळोळ्हरङ्गळिगळं नेरें कच्चिदरेन्दे हुत्तने-

रिदरिदु दण्डनाथ भरतात्मज बाहुबलि इयं ॥

नाभि-सुत-सुतर तेरेंदे स- । नाभिगळ् आदि-प्रभाव-चरितप्रभवर् ।

शोभित-शुभ-मति-युतर- । सोभितरी-भरत-बाहुबलि-दण्डेशर् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं तळकाडु-कोङ्क-नङ्गलि-वनवसे-उच्चङ्गि-हानुङ्गलु-
गोण्ड भुजवळ वीरगङ्गन् असहाय-शूर शनिवार-सिद्धि गिरि-दुर्ग-मल्ल चलदङ्कराम
निशंकप्रताप होयसळ-वीर-बल्लाळ-देवर श्रीमद्राजधानि-दोरसमुद्रद नेलेवीडि-
नोळ सुख-सङ्कथाविनोददि पृथ्वी-राज्यं गेयुत्तमिरे शक-वर्ष ११०५ नेय शुभ-
कृतसंवत्सरद मार्गशिर-शुद्ध-पाडिच-सोमवारदन्दु कुमार-वीरना-
सिध-देव जन्मोत्सव-महा-दानदोळ तम्मन्वयद सिन्दगेरेंय बळळबळिळय
कलुर्काण-नाड दडिगणकेरेंय अणुवसमुद्रद प्रभुत्वनुमं अणुवसमुद्रदलु कन्ने-
बसदियागि माडिसि आ-वसदिगं चाकेयनदळिळय बसदिगं देवपूजे आहारदानं
नडवन्ताणि सेसेयं तेत्त अणुवसमुद्रद सिद्धायद मोदल होबोळगे इप्पत्तु-होन्नं
बळिसहित नात्त्वत्तु-होन्नं ग्वाण-सहित गळिहि श्रीमन्महाप्रधान भरतिमय्य
दण्डनायक श्रीमन्महाप्रधान बाहुबलि-दण्डनायक बळ्ळाळ देवन श्री-
हस्तदलु धारा-पूर्वकं हडदु श्रीमूलसंघ देशियगण पोस्तक-गच्छ कोण्ड-
कुन्दान्वय इङ्गळेश्वरद बळि कोल्लपुरद सावन्तन-बसदिय प्रतिबद्ध
श्रीमाघनन्दि-सिद्धांत-देवर शिष्यर श्रीगंधविमुक्त-सिद्धांत-देवर अवर
शिष्यर श्री-देवकीर्तिपण्डितदेवर अवर शिष्यरप श्री-देवचंद्र-पण्डित-
देवगे शक वर्ष ११०६ नेय शोभकृतसंवत्सरद पुष्प-शुद्ध-वसन्तो-
सोमवारद उत्तरायण-संक्रमण-महादानदलु धारा-पूर्वकं माडि काट्ट दत्तिगळ
वृत्ति ॥ (आगेकी ६ पंक्तियोंमें दानकी विशेष चर्चा और हमेशाकी तरह अन्तिम
वाक्यावली तथा श्लोक है)

[इस लेखमें सबसे पहले बिनशासनकी प्रशंसा है । वीतराग । (अपने
पदों सहित) त्रिभुवनमल्ल बिनैयादित्य-होयसळने कोङ्कण, आळवलेड, वयल्-
नाड, तलेकाड और साविमलेसे घिरी हुई तमाम भूमिमें दुष्टनिग्रह-शिष्ट प्रति-
पालन किया था ।

यादव दंशमें सल्ल हुआ था। एक चीतेको किसीपर शिकार करनेके लिये उल्ललते हुए देखकर और किसी मुनिके यह कहनेपर कि “मारो (पोय्) सल्ल ?” सल्लने इसे मारकर ‘पोय्सल्ल’ नाम प्राप्त किया था और यह नाम आगे चलकर उसके तमाम वंशका द्योतक हुआ। यदुदंशमें सल्लके बाद बहुत-से प्रबल राजा हुए, उन्हींमें एक विनेयादित्य हुआ। उसकी रानीका नाम केलेयम्बरसि था।

जिस समयमें दोनों (विनेयादित्य और केलेयम्बरसि) सोसवोरुमें रहते हुए सुख और बुद्धिमत्तासे राज्य कर रहे थे शक सं० ६६७ में केलेयल-देवीने मरियाने दण्डनायकसे देकवे-दण्डनायकितिको व्याह दिया और भेंटमें आसन्दिनाड्के सिन्दगेरीको उसे दिया।

विनेयादित्य पोय्सल्ल और रानी केलेयम्बसे राजा वीर-गङ्ग-एरेंयङ्ग उत्पन्न हुआ। वीर-गङ्ग एरेंयङ्ग और एचल-देवीसे बल्लाल, विष्णु और उदयादित्य उत्पन्न हुए थे। बल्लाल या बल्लु-देवकी प्रशंसा।

जिस समय बल्लालदेव अपनी राजधानी बेलुहूरुमें रहकर सुख-शान्तिसे राज्य कर रहे थे, मरियाने-दण्डनायककी दूसरी पत्नी चामवे दण्डनायकितिके पदुमलदेवी, चामलदेवी और बोप्पदेवी उत्पन्न हुई थीं। बल्लालदेवने इन तीनों कन्याओंका विवाह एक ही मण्डपमें शक सं० १०२५ में विभिन्न तीन राजाओंकी राजधानियोंमें कर दिया और उनकी दूध पिलाई (wet nursing) की तनखाके रूपमें द्वितीय पीढ़ीके मरियाने-दण्डनायकको पुनः सिन्दगेरीका स्वामित्व दे दिया।

राजा विष्णुने तुलु देश, चक्रगोट्ट, तळवनपुर, उच्चंगि, कोळाल, सप्तमले, बल्लूर, कञ्जि, कोङ्गु, हडिय-घट्ट, बयल्-नाड, नीलाचल-दुर्ग, रायरायपुर, तेरेपूर कोयत्तूर और गौण्डवाडि-स्थल,—इन सब प्रदेशोंको जीता था। साहस-गङ्ग-होय्सन्नने विरोधी राजाओंका नाश करके तलकाड्को (खादके लिये) बलाकर घोड़ोंके खुरोंसे उसे जोतकर अपने वीरस्सक्की नदीसे उसे सींचकर अपने यशके अच्छे बीजसे इसे बोया।

जीर्णोद्धारके देवरष्ट्रविधान्चने... ..ब्राह्मण... ..
कोन्द पापके... ..(हमेशा की तरह
 अन्तिम श्लोक) स्वस्ति श्री समस्त-कोटि-जिनालय भद्रमस्तु जिनशासनाय ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा ।

जिस समय, (अपने पदों सहित), होयसळ वीर-बल्लाल-देव हेडुरे (कृष्णा नदी) तक उत्तरकी ओर पृथ्वीको स्वाधीन करके सुख और शान्तिसे राज्य करते हुए अपने निवासस्थान दोरसमुद्रमें थे:—तत्पादपद्मोपजीवी होरलाधिकुलाग्रणी एक गोरव-गुण्ड थे । उन्होंने तिप्पूरमें एक जिनालय बनवाया । वह मन्दिर द्रमिलसंघ, नन्दिसंघके आरुङ्गल अन्वयका था । जिनालयकी मरम्मत तथा पूजाके प्रबन्धके लिये उसने मदहल्लि गाँव का, बसदिके उत्तरकी ओरकी जमीन सहित, दान किया था ।]

[EC, IV, Guudlupet, tl., No. 27.]

४२६

हलेबीड—कच्छ ।

वर्ष नल [शक १११८= ११६६ (कीलहान)]

[पार्श्वनाथ बस्तिके प्रवेशद्वारके पासके एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथरूप शासनं जिनशासनम् ॥

श्री-मूलसंघ-क्रमज्ञाकर-राजहंसो

देशीय-सद्-गणि... ..रावतंसः ।

जीवाजिनेन्द्रसमयार्णव-तूर्ण-चन्द्रः

श्री-वक्र-गच्छ-तिलको मुनि-बालचन्द्रः ॥

स्वस्ति श्रीमद्-मुञ्जबल-चक्रवर्ति यादव-नारायण-वीर-बल्लाल-देवर् सुख-संकथा-
 विनोददि राज्यं गेयुत्तमिरे। नलसंवत्सरद् कार्तिक-शुद्ध-पडिव-बृहस्पतिवा-

रक्षन्तु श्रीमन्महा-बहु-व्यवहारि कवडमय्यन देवि-सेट्टियर माडिसिद श्री-
शान्तिनाथ-देवर बसदियूर कोरडुकेरेय कालुहक्कि माचियहल्लिय बमतिगट्टव
इट्टोय मल्लरसव्यंगण मकळु अप्पय्य-गोपय्य-बाचय्यकळु आ-शान्तिनाथ-देवर
बसदिय परिसुन्नदोळ्ळण तम्म माडिसिद पट्टशालेय श्री-मल्लिनाथ...वरष्ट-विषा-
न्चनेगं खण्ड-स्फुटित-बीणोद्धारकं शृण्विक्कळाहार-दानक्कं पव्वदिनपूजेगं श्रीमन्म-
हामण्डलाचार्य्यमाण्डविय बालचन्द्र-सिद्धान्तदेवर शिष्यर रामचन्द्र-देवय्यो
अरुवत्तु-गद्याण होन्नं क्रयवागि कोट्टु कोण्डरा-बम्मतिगट्टद सीमा-सम्बन्धवेत्तेने
(आगेकी ३ पंक्तियोंमें सीमाकी चर्चा है) आ-केरेयनिप्पत्तु-होन्नं कोट्टु कट्टिसिदर
देवर नित्य-पूजा-क्रममेत्तेने ॥ (आगेकी ६ पंक्तियोंमें दानकी चर्चा है) इत्ति
नितुमं सर्व्व-बाधा-परिहारवागि श्री-शान्तिनाथ-देवर वसदिय-आचार्य्यरारोव्वरिहिरि-
द्वरं कोरडुकेरेय गौडुगळु ऊरुवत्तोक्कलुं अरुवण्णवोळ्ळगाद अन्यायवेनु कन्दडं
तावे तेत्तु सलिसुवर ई-वम्मवं नरवरंगळारैय्दु प्रतिपाळिसुवर ॥ (हमेशाका अन्तिम
श्लोक) मंगल महा श्री ॥

[इस लेखमें सबसे पहले मुनि बालचन्द्रकी प्रशंसा है । वे मूलसंघ, देशिय-
गण और वक्क-गच्छके थे । जिस समय यादव-नारायण वीर-बल्लालदेव शान्ति और
बुद्धिमत्तासे राज्य कर रहे थे :—(उक्त मितिको) बहुत पुराने व्यापारी कवडमय्य
और देवि-सेट्टिने शान्तिनाथ-देवकी बसदिके लिए कोरडुकेरेके एक छोटे गांव
माचियहल्लिके बम्मतिगट्टको बनाया और इट्टो मल्लरसव्यके पुत्र अप्पय्य, गोपय्य
और बाचय्यने, शान्तिनाथ-बसदिके घेरेके अन्दर अपने द्वारा बनाये गये पट्टशाले
के मल्लिनाथ-देवकी अष्टविध पूजाके लिये, महामण्डलाचार्य्य माण्डवि बालचन्द्र-
सिद्धान्त-देवके शिष्य रामचन्द्रदेवको ५० होन्नु देकर उस बम्मतिगट्ट (उसकी
सीमायें) खरीदकर भेंट कर दिया; और २० होन्नु देकरके एक तालाब बनवा
दिया । इस दानकी रत्ना शान्तिनाथ बसदिके आचार्य्य, कोरडुकेरेके किसान,
और गांवके ६० कुटुम्ब करेंगे ।]

४२७

चिकक-मागडि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[संभवतः लगभग १२१२ (?) ई०]

[चिकमागडि में, बसवण्ण मन्दिर के प्राङ्गणमें एक खम्भे पर]

(पूर्व मुख) स्वस्ति श्रीमत-प्रताप-चक्रवर्त्ति यादव-नारायण होयसल-वीर-
बल्लाल-देव-वर्षद २३ नेय ॥

दोरेवेत्ताङ्गिर...त्सरं नेगळद-मास श्रवण शुद्ध-वा- ।

समळ् देरिसि शुक्रवारमु...पुष्य-वस-सा- ।

ध्यु...सु...बहयाषाढ...परं वि...सत्-

करणं तैतिलमि...न्दिद विभातं कूढे पु...यिम् ॥

बिन-वाक्यामृत-सेवयि मनद मिथ्यात्वामयं पिङ्गे द- ।

शान-संशुद्धते-वेत्त चित्तदोदविन्दन्तर्मही...प्ति...

अनितुं तन्नविकल्लवेम्...बगेवं बिट्ट कुश-...त्प-शु- ।

द्व-नयं तन्न...देव ताळिद गुणमं जल्लवे निश्च्युतम् ॥

मति-बिन-पाद-पङ्कजदोळ् अन्वितमावुदु दृष्टि नासिका- ।

प्रतेयोळे निन्दुवागम-पदङ्गलनालिसुतिर्दुवागळुम् ।

श्रुति-युगळं...दृष्टि-युत-सन्यसनं नेरेदोप्पे नाक-सं- ।

गति-वडेदळ् समाधि-विधिधि वरे जल्लवे कृतार्थेयो ॥

सले...भानु-ज्योतिरिन्दं विकचिसियदरोळ् देव-देवेशनं निशु- ।

श्रल्लमागिर्द...सन्तोषदोळे बिनपनं बानिसुत्ता-सता-को- ।

मळे बिट्टळ् बक्षियर्कं तनुवनुळिदराप्पोळ्वरेम्कनु तलम् ॥

क्षयमं मिथ्यात्व-कर्मकमर्दं गुणद सम्यक्व-स...सम्भु- ।

द्वियुमं मुम्पण्डि देश-श्रुतमननितुमं कोण्डु निर्मोहै तात्-तन्- ।

देयुमं बिट्टन्दे सन्यासमनमल्लिनवं पुन्दु जैनेन्द्र-पाद- ।

क्षयमं चित्तयि बल्लवे दलेसे...अ... ॥

...त-दर्शने विस्तारित-सु.....र-कळेवर बकले-नामिकाङ्क.....
ति.....नेनेयुत बकले तनुवं विट्ठागवन्ते सुकुम...सुबाशन-पूज्य-
समवशरणमननाकुळं पोक्कु जिननभिवन्दिसुव.....

(दक्षिण ओर)

श्रीमत्पुण्य-फलादभूद् भुवि सुता सामन्त-मुख्यस्य या
सा सर्वज्ञ-पदारविन्दमसकृत् सम्पूज्य भक्त्यादिशत् ।
शुद्ध-ध्यान-विशोधि-बोधित-मनःपूर्वं समाधि-क्रमैस्
साश्चर्यं त्यजति स्व-देहमणुवच्छ्री-जङ्गलाम्बा सती ।
चित्तं विस्तार्य पुण्याश्रव-करण-विधौ सर्व-कर्मणि नाशी- ।
कर्तुं त्यक्त्वा विमोहं समयमुपशमं प्राप्य चात्मोपयोगम् ।
सुद्ध-ध्यानामृताम्भः-स्तुत-म...जिनेन्द्रस्य पादारविन्दम्
प्रस्थाप्यालोक्य देहं त्यजति तृणमिव श्रीमती जङ्गलाम्बा ॥
नित्यानन्द-सुखामृताम्बुधि-पयः-पूर्वावगाहोत्सुका
स्वात्मानुष्ठित-सम्यमाच-विळसत्-सम्यक्त्व-पोतेन या ।
संसारार्णव-पारमाशु तरणोद्योगं समुत्पादिनी
चित्रं देव-गतिं प्रति त्यजति किं देहं तु जङ्गलाम्बिका ॥
निखिल-वनज-वल्ली-पुष्प-माला-कदम्बैः
धृत-दधि-वर-दुग्धैराभिषिच्यार्च्य तीर्थान् ।
न भजति हृदि तृप्तिं जङ्गलाम्बा स्व-देहात्
समवशरण-नाथं द्रष्टुकामा प्रयाति ॥
दानान्वितेति गुण-रत्न-विभूषितेति
शान्तेति सर्व-जनतासु दया-परेति ।
जैनागमोक्त-चरितानुगतेति भव्यः
के न स्तुवन्ति भुवि जङ्गल-योषितं ते ॥

(पश्चिम ओर)

श्री-विष्णुचेन्द्र-वन्दित-जिनेन्द्र-महा-महिमार्चवना-राची- ।

देवियेनिप **अक्कल**-महा-सतियुद्ध-चरित्रमं कला- ।
 श्री-विमवक्कळं विविच-दानमनात्त-जिनेन्द्र-भक्ति-सं- ।
 भावित-सत्-समाधि-मृतिरिं सुकृतार्थिगळारो कीर्त्तिसर् ॥
 वनिता-भूषणे सच्-चरित्रवति ताय् **लच्छुब्बे** सामन्त-भण्- ।
ऊन-मुहं जनकं विनूत-भरतं कान्तं सुतस्वोपदे- ।
 शनना-श्रीमद्वनन्तकीर्त्ति-मुनिपं पूज्यं जिन-स्वामियेन्द ।
 एने जक्क.....वंश-शील.....सम्यक्त्वं जगत्-पावन ॥
डिगे जिनाग.....जिनमतं मतिगा-जिन-सू.....सत्पदम् ।
 नडेगोडनाडियात्तेने जिनोक्तियनोदि तदागमार्थमम् ।
 नडे तिळ्ळिदन्ते मुक्तिगिरदेय्दिप शील-गुण-व्रताध्वदोळ् ।
 नडेदेडेगेय्दवाल्के गड **अक्कले** नारि महेन्द्र-कल्पदोळ् ॥
 नेरेये मुनीन्द्रहं पोगळ्दणं तले दुगे परिग्रहङ्गळम् ।
 तोरेदु गृहीत-सन्यसनदिं निच-ब्रान्धव-मोह-पाशमम् ।
 परिदु सुवृत्ते **अक्कले** महा-सति चित्तमनाप्त-तत्त्वदोळ् ।
 नरिसि समाधिरिं नेरेये साधिसिदळ् सुर-लोक-सौख्यमम् ॥
 तळ्ळिंदिरदेक-पाश्वर्-नियम-स्थिति दृष्टि सु-नासिकाग्रदिम् ।
 कळिवेडे बलपु बळिकरदे मेय् मिडुकाडदे जैन-भक्ति सज्- ।
 चळिसदे माणदुच्चरिसि पञ्च-पदङ्गळगनात्म-तत्त्वदोळ् ।
 नेलसिद सत्-समाधि-विधि **अक्कले**-नारिगिदेक-लावणम् ॥

(उत्तरकी ओर) श्री-जिनेन्द्र ॥

त्यक्त्वा देहं विमोहाद् व्रत-गुण-चरित-श्रेणि-निश्रेणि-मार्गाद्
 आरुह्य स्वर्ग-दुर्गं निच-भजन-बलादेव यत् तद् गृहीत्वा ।
 याहं **अक्कल**म्बिकास्मिन् दिवि दिविचवारोऽभूवमात्म-प्रसादाद्
 इत्थं तुष्टाव गत्वा समवसरण-भूस्थं नतेन्द्रं जिनेन्द्रम् ॥
 जिन नाथाभिषवक्कळिं जिन-गुण-स्तोत्रङ्गळिन्दं जिनार्- ।

चर्चनेयिन्दं जिन-भक्ति-यिं जिन-मुनीन्द्राहार-दान-कृष्णम् ।
 जिन-वाक्यार्थ-विचारदिन्दलेदु मिथ्या-मार्ग-तत्त्व-भा-
 वनेयिं पेटुमरत्वदिन्देरगिदळ् जङ्गल-जैनाङ्गि-योळ् ॥
 तत्त्वमना-जिनेन्द्र-मतदिं तिळिदुष्पञ्चलमाद शुद्ध-ह-
 ष्टित्व-गुणार्कनिन्दलरे शील-गुण-व्रत-वारिजाळि मि-
 थ्यात्व-तमस्-तमं परेये सत्य-वर्तिनियागि शुद्ध-सं-
 कित्तिदिनेय्दिदळ् नेगळ्द बकले नारि सुरेन्द्र-लोकमम् ॥
 ललित-पतिव्रताचरण-चारु-नदी-सलिल-प्रवाहदिम् ।
 कलि-मलमं कळलिच निज-निर्मळ-कीर्त्ति-लता-वितानमम् ।
 बळेयिसि-शील-शालि-वनमं परिवर्द्धिसि पुण्य-नन्दनङ् -
 गळने निमिळि जङ्गल-बलं पडेदळ् सुमनो-विभूतियम् ॥
 परिकिसि सद्-बुधर्-पोगळे तन्न चरित्र-गुणाङ्क-मालेयम् ।
 विश्वचिसि सुप्रबन्धमने दिक्-कुळ-भित्तिगळोळ् तेरळिच मुं-
 बरेदुदनीगळा-दिबिज-लोकदळोपुव लेख-जाळदोळ् ।
 बरेयिपनेन्दु जङ्गल-महा-सतियेरिदळल्ले सगमम् ॥
 पुगेयवसर्पणं भरतदार्येयोळन्वितमाद भोग-भू-
 मिगळ विरामदोळ् सुकृत-दुष्कृत-वर्तनेयागि सन्द का-
 ल-नात-च...तु ... लन्त्यदोळे पञ्चम-कालदोळेन्दिदन्द...
 महात्मरोळ् गुणमे जङ्गल-नारियोळुत्तरोत्तरम् ॥

[प्रताप-चक्रवर्ति-यादव-नारायण होयसल वीर-बल्लाल-देवके २३वें वर्षमें उक्त मितिको जिसका बहुत विस्तृत वर्णन है, परन्तु जो बहुत घिस गया है ।

जङ्गल (जङ्गल)-ने समाधिमरण धारणकर स्वर्ग प्राप्त किया ।

(सम्पूर्ण लेख उसकी भक्ति और तपकी प्रशंसासे भरा हुआ है, कुछ भाग संस्कृत में है और कुछ कन्नड़में है) । उसकी माता लक्ष्मणे, पिता मण्डनमुद,

पति विख्यात भरत, तप-साम्प्रक उपदेष्टा (गुरु) अनन्तकीर्त्ति-मुनिपः । उसने अपना जीवन, शील और उपाधियाँ पद्यमें गुप्तित करा लीं थीं ।]

[EC, VII, Shikarpur, tl., No. 196,]

४२८

अवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १११८ = १११६ ई०]

[जै० शि० सं० प्र० भा०]

४२९-४३०

अवणबेलगोला—कन्नड ।

[बिना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं० प्र० भा०]

४३१

अत्रि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १११६ = १११७ ई०]

[अत्रिमें, बन-शङ्करी मन्दिरके सामनेके पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराजं परमेश्वरं परम-महार्कं यादव-कुळाम्बर-
द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मल्लोराज-राज मल्लपरोळ् गण्ड कदन-प्रचण्डनेकाङ्क-
वीरनसहाय-शूर शनिवार-सिद्धि गिरिदुर्गा-मल्ल चलदङ्क-राम निरशंक-प्रताप चक्रवर्त्ति
होयसळ-वीर-बल्लाल-देवर राज्यमुत्तरोत्तराभिहृदि-प्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्क-तारम्बरं
सलत्तमिरे ॥

भुवनं भू-चक्र-चक्रायुधनेने नेगळदं **वीर-बल्लाळनुर्वी-** ।
 स्तवनीय-प्रांशु-मत्स्य-च्छवि सुचरित-कूर्मोदयं सार-सूकर- ।
 य विळासं विक्रम-श्री-नरहरि-परमं त्रिकर्म राम रामो- ।
 त्सव-रामानन्दि विद्या-सुगतमति-कलि-प्राभव-प्रौढ-तेजम् ॥
 बळवद्-बल्लाळनुग्राहव-पटह-रयं कर्णवन्ताये विद्युत् (विद्धिट्)-
 कुळ-कान्ता-कर्ण-पुत्रं केडवुदणकवल्तोन्दे केळ् विस्मयं कर्ण-
 मलरिं बाष्पांशु कथ्यि कडगवडिगळि नूपुरं वक्त्रदिं सुयू ।
 तले-कट्टिं माले-वूवाकेगळ गळकदिं बिळवुदुत्तार-हारम् ॥
 जित-घात्री-चक्र चक्राधिप नृप-वर **बल्लाळ** केळ् निनु ओळान्तु- ।
 द्रत-वीराराति-यूथं विगत-विभवंमागिर्दंडं रज्जिकुं वि- ।
 श्रुत-नाना-वाहिनी-सङ्कुळ-परिगत-शोभानुकूल्यं सदा-से- ।
 वित-राजद्राज-वंशं सवळ-कवि-निकाय-स्वनाकीर्ण-कर्णम् ॥
 एनसुं तीव्र-प्रतापकगिदु दिनकरं मित्रनागिर्दपं ने- ।
 हने राजं राज-नामं तनगे पगेयेनिप्पुम्मळं पेच्चि कन्दिर- ॥
 प्पनवं मत्तावनप्पं मेरेवनदटनि तोर्पनावं महोग्रा- ।
 रि-नृपाळं विश्व-भू-चक्रदोळेले चलदिं **वीरबल्लाळ** निन्नोळ् ॥
 आनोलविन्द बणिंसदडेम् गळ दक्षिण-चक्रि युद्धदोळ् ।
 तानसहाय-शूरनोनपुत्रातियं रिपु-राय-**सेवुणा-** ।
 नून-गज्जश्व-सद्भट-बळङ्गळनळ्कुरदोन्दे-मेय्योळोन्द- ।
 दानेयोळोक्किलिक्किद पराक्रमदुन्नति ताने हेळदे ॥

- वा) अन्ता-प्रताप-चक्रवर्त्तियेनिसिद घीरं **वीर-बल्लाळ-देवं** निज-
 भुज-बळदिन्दुण्डगे साध्यं माडि चलदिन्दाळ्द पलवुं देशङ्गळोळ् ॥
- ब॥ पलवुं पूर्ण-तटाकदिं बलेद-नाना-शालि-केदारदोळ् ।
 पोलदिं वारिज-षण्डदिं परिमळ-भ्रान्ताळि-माळोद्व-पु- ।
 प्ललता-सङ्कुळदिं फलोन्नमित-चूतादि-ब्रमाजङ्गळिम् ।

नेलेयागिर्प्पदु मम्मथाङ्गे **वनवासी-देशवेत्तेत्तलुम् ॥**

क॥ एने नेगळ्दा-वनवासी- ।

वनिता-मुख-तिळकवेनिप **अिङ्कुल्लिगेयना- ।**

नृपाळ-प्रकरद शौ- ।

र्य-निघान-स्थानमेसेकु**खुरेय-पुरम् ॥**

व॥ अदेन्तेन्दडे ॥

सरसिक्क-वक्कदिं कुमुद-लोचनदिं विळल्लताङ्गदिम् ।

सुरचिर- पल्लवाधरदिना-शुक-भावण्डदिन्दे मल्लिका- ।

परिमलदिं मदाळि-कुळ-कुन्तळदिं वन-लक्ष्मि-रूपनुद्- ।

धरेय पुरोपकण्ठ-वनदोळ् पडेदोप्पुवळावळाव-कालमुम् ॥

मत्तमल्लि ॥

सले तत्-पुराधिनाथर् ।

पलक्कं मुन्नेगळ्दरवरोळ्ळुळित्त-शौर्यम् ।

चलदत्थि-गण्डनेनिपोळ्- ।

गलि बट्टीगनिरिव **बिट्ठिगं** पेसर्-वडेदम् ॥

परियिट्ठु वरि-भूपा- ।

ळर पुरवं सुट्ठु हरिव कञ्चिगनादम् ॥

बिरुदि तन्वप-तनयम् ।

धरेयोळ् जयदुत्तरंगनपगत-भङ्गम् ॥

गङ्ग-कुळोत्तमं मरेयनेरिद मेयूगलि **मारसिंग-भू- ।**

पंगे तनूभवं नेगळ्द **कीर्त्ति-नृपाळकना-नृपङ्गे पु- ।**

त्रं गड **मारसिंग**नवनग्र-तनूभवमेन्दोडानदा- ।

वङ्गेणे माळ्पेनप्रतिम-रूपन**नेककल-देव-भूपनम् ॥**

आ-नेगळ्दे**ककल-देव-म- ।**

हि-नायन तङ्गे **दसवमरसन** सति घा- ।

त्री-नुते **चट्टल-देवि** क ।

ळा-निचि पडेदळ् पवित्र-पुष-त्रयमम् ॥
 पर-भूपाळ-पुर-त्रिनेत्रनेरग-दमापाळकं वैरि-दुर्- ।
 घर-दैत्य-प्रकर-प्रताप-हरणोद्यत्केशवं केशवम् ।
 सरसोदार-कवित्व-तत्त्व-चतुरास्यं सिंगदेवं महा- ।
 पुरुष-त्रै-पुरुषत्वमं तळेदरन्ता-मूवर्धं भूवरर् ॥

अवरोळ् पिरियनेनिसि ॥

मरेदुं पर-सतिगर- ।
 करोलच्युतनल्लदन्य-दैव्यर्क्षार्पम् ।
 मरेयिप निज-घन-लोभक ।
 एरगनेरगनेरग-नृपनेने नेगळ्दम् ॥
 एने नेगळ्देरग-नृपाळकन्- ।
 अनुजं कोळाळ-पुर-वराधीशं पा- ।
 वनतर नञिय-गङ्गम् ।
 विनुत-गुणोत्रुंगनवनी-पति नरसिंगम् ॥
 आ-विभुविन सति लक्ष्मा- ।
 देवि मुकुन्दङ्गे लक्ष्मि परमेष्ठिगे वा- ।
 णी-वधु रुद्रङ्गद्विजे ।
 देवेन्द्राङ्गसेव-सचियेनल्पेसर्-वडेदळ् ॥
 आ-रमणी-विशाळ-विनुतोदार-पद्यादोळ्बगभनन्त् ।
 आभरमणी-निबामलिन-गर्भ-पयोधियोळिन्दु रागदिन्दु ।
 आ-रमणी-लसज्-छठर-बाह्वियोळ् सुरसिन्धु-जं स-वि- ।
 स्तारदे पुट्टुवन्दोळे पुट्टिदनेक्कल-भूमिपाळकम् ॥

अदेन्तेन्दोदे ॥ स्वस्ति समाधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरम् कोळाळपुर
 वराधीश्वरं गङ्ग-कुल-कमल-मार्त्तण्डं विरुद-मण्डलिक-शरभ-भेरुण्डं जयदुत्तरंगं
 नञिय-गङ्गं विराचित-मयूर-पिञ्जुध्वजं भूप-रूप-मकरध्वजं श्रीमदन्युत-चरणालिप्त-

चन्दनचर्चिताङ्गं विप्राशीर्वाद्-सत-सहस्र-सम्भृत-शेषाक्षत-पवित्रीकृतोत्तमाङ्ग भूमि-
कन्या-स्वर्णाञ्ज-दान-विनोदं सकल-जन-मनोह्लादमेनिसि देवकल-देवन प्रतापमं
पेळवडे ॥

ज्वनं जक्कुलिपं कडङ्गि सिङ्गिलं माक्कोळवनामीळ-का- ।
ळ-विषोग्राहियनेत्ति मारिडुवनौर्व-ज्वळेयं मेगिपम् ।
तविपं तीव्र-निषाट्दगळिकेयं तानेन्दोडिन्दुकिक्किनि- ।
क्कुवमारान्तपरेक्कल-क्षितिपनं संग्राम-रङ्गाग्रदोळ् ॥
दवरूपं रिपु-काननक्के पवि-रूपं शत्रु-शैलक्के बा- ।
डव-रूपं [द] विषदर्णवक्के निज-तीव्रात्तयुग्र-क्रोप-प्ररू- ।
पवेनल् पोङ्गि कडङ्गि निन्दतुळ-बाहा-गर्बदिन्दाम्परार् ।
अवनीपाळकरेक्कल-क्षितिपनं संग्राम-रङ्गाग्रदोळ् ॥
इं बेसेगोळ्बुदेनो सुभयोत्तमनेक्कल-देवनिष्टरोळ् ।
नम्बुगे दप्पिदन्दु पर-कान्तेयोळोळ् [द] ओडगूडिदन्दु लो- ।
बम्बिडिदर्थदत्तळिपिदन्दिदिरान्तडे कोल्लदन्दु केळ् ।
अम्बुधि मेरेयिं तोलगुगुं तळगुं नेळेयिं सुराचळम् ॥
तक्कतनक्के मिक्क पर-कामिनियक्कळ्तेम्म तङ्गेयेम्म्- ।
अक्कनेनुत्ते नम्बे मोरेगोण्डोडगूडुव साधु-गळ्ळरे- ।
तक्कुपायोग्यवा-महीपरेम् गळ पोल्वरे शौचदेळोयिन्द ।
एक्कल-भूपनं पर-वधू-विनुतोदार-पद्म-गर्भनम् ॥
गति-भावं चारि सूत्रं निरिस्सळवि बळं काङ्के बल्योजे काय्पु-
न्ति गाढं लागु बेगं तेरपु पसरवारैके तेरक्के कूर्पङ्- ।
कितवाकारं तडै किच्चडेविनिप भृगु-प्रौढियिं कोल्वनुग्रा- ।
हितनं मारङ्कवं माम्मलेदडे चलदिन्देक्कल-क्षोणिपाळम् ।

आ-नृपाळनन्वयागत-प्रधानरोळ् ॥

स्तुति-वेत्तं विश्व-लोकोज्जत-वितरण-शीलं रिपु-क्षोणिपाळ- ।
प्रतति-प्रख्यात-दण्डाधिप-कुळ-विजयोदग्र-काळं मही-वन-

दित-भास्वत्-सञ्चरित्र-व्रत-युत-गुण-लोळं जगत्-सेव्य-भव्य-
प्रतिपाळं स्वीकृत-प्राकट-वर-बुध-बाळं चमूनाथ-माळम् ॥

आ-विभ्रुविङ्ग सति-मा- ।

देविगमोगेदं प्रताप-निधि वैरि-जय- ।

श्री-वरनहित-वनोद्यद्- ।

दावानळनप्प बोप्प-देव-चमूपम् ॥

एरेदत्थार्थि-चयक्के कळप्-कुजविप्पन्तिप्पनं बोप्पनम् ।

वर-वंशाम्बुधि-वर्द्धनक्के शशियिप्पन्तिप्पनं बोप्पनम् ।

आ-सेनापति-सति-जिन- ।

शासन-देवते समस्त-चतुर्कोटि कळोद्- ।

भासित-पद्मावति जग- ।

ती-संस्तुतेयेनिप बोप्पियक्कं नेगळ्दळ् ॥

आ-दिव्य-सतियेनिप बो- ।

प्पा-देविगममळ-कीर्त्ति-बोप्पङ्गं पुण्- ।

योदयादनोगेदनमृत-म- ।

होदधियोळ् सोमनेगेव-तेरदिं सोमम् ॥

धरे बणिण्पुदु मन्त्रि-बोप्पन तनूबारामनं प्रेमदिम् ।

निरवद्यामळ-नामनं प्रणुत-विद्ध [त्]-स्तोमनं प्रोल्लसद्- ।

वर-नारी-ज-कामनं विनय लक्ष्मी-धामनं भव्य-वन- ।

धुर-धर्म-व्रत-नेमनं बहु-कळा-निस्सीमनं सोमनं ॥

सूरि-चकोर-सोमननवद्य-कळागम-सोमनुद्धतो- ।

गारि-सरोज-सोमनति-निम्मळ-वंश-पयोध-सोमना- ।

चार-वन-प्रवर्द्धन-वसन्तक-सोमनशेष-भव्य-द्वत्- ।

कैरव-सोमनन्दनिप सोम-चमूपनिदेनुदात्तनो ॥

आ-महिमास्पदनैनि-सिद्- ।

सोम-चमूपङ्के पात-हितास्त्विति सु- ।

प्रेमान्विते सतिथादळ् ।

सोवल-मादेवि ससिगे ससि-लेखेयवोल् ॥

पडेमातेम् विळसत्कळा-परिणतं विद्या-गुणोद्भासि हेम् ।

गडे-सोमं पति सामि-वञ्चकर गण्डं दण्डनाथं जसक् ।

ओडेयं श्री-**महादेव**नात्म-सुतनेन्दिन्दु मत्तन्यरार् ।

प्पडेदर् **सोमल-देवि**यन्ते सतियर् स्तौभाग्यमं भाग्यमम् ॥

एने नेगळद मंत्रि-सोमन ।

वनितेगे पति-हितेगे सत्-कुल-प्रभवेगे सज्- ।

जन-नुते-सोवल-देविगे ।

तनयर् **महादेव-राम-केशव**रोगेदर् ॥

आ-मूवरोळं मध्यमन् ।

ई-महियोळु ताने पलरोळुत्तमनेनिपम् ।

रामं यशोभिरामम् ।

सोमात्मजनमळ-धर्म-कर्म-प्रेमम् ।

पर-सेना-जय-विक्रमोज्जितियोळार्द भीमनुं रामनुं ।

घरणी-स्तुत्य-कळा-विळासदोदविन्दा-सोमनुं रामनुम् ।

वर-नारी-जन-मोहनाकृतियोळुद्यत्-कामनुं रामनुम् ।

सरियेन्दी-जगवेय्दे बणिणपुदु कीर्त्ति प्रेमनं रामनम् ॥

श्री-रामननुजनेनिसिदन् ।

आ-राम-चमूपननुबनुरु-लक्ष्मण-वि-

स्तार-मुमित्राधिक-पुण्-

यारामं केशवं जगजन-विनुतम् ॥

एरेदन्दागळे माणिपं बुध-विपत्-संकलेशवं केशवम् ।

बिरुदिन्दान्तरनेदिपं स्फुरदरण्योद्देशवं केशवम् ।

शरणागेन्दे नीडुवं बहळ-बाहा-पाशवं केशवम् ।

- १४ सरसी-सन्दोहदिम् सारसोन्मद-भृङ्गि - पिक-कोक-केकि-शुङ्क-संधानीक-शाकुन्त-
नाददिनेत्तम् गणिका-विनोद-कृत-वीणा-नाददिदोष्पुगुम् ॥ व ॥ अन्तपरि-
मित-के-
- १५ दार-भूमियुमपारज्जलाश्रयाभिरामसुं बहुजनाकीर्ण-मुममेय-गणिका-निवासमुमग-
णितवणिज्जनाश्रयमुमेनिसि शोभानिवासमागे ॥
- १६ वृ ॥ अवतरिसिर्द्धनस्ति रज्जताचलदि गिरिजा-समेतमुत्सवदोळे सोमनाथनखिला
मरमौलिबिनद्धरत्नसंभवकिरणप्रभापटलपुङ्गुपरागपदाब्जन्तस्थियन्द-
- १७ वनत-भाक्तिकाभिमतसिद्धिफलोदयकल्पभूरुहम् ॥ क ॥ आ सोमनाथपुर-संवासि-
तरोळ् ब्रह्मपुरिगळोळ् विप्ररोळा व्यास-शुक-वामदेव-पराशर-कपि-
लादि-सदृशनो-
- १८ बर्ब्बन्नेगळ्दम् ॥ क ॥ श्रीवत्स-गोत्रनुर्बोदेवनुतं निखिलवेदवेदाङ्गविदं पावन-
चरित्रगुणसद्भावं पुरुषोत्तमं द्विजोत्तमनेनिपम् ॥ क ॥ आ विप्रन सति सीता-
देविगवा [स] त्य-
- १९ तपन-सतिगं गुण-सद्भावदे पद्माश्रितके सले पावन-सुचरित्रे पतिहित-व्रतेये-
निपळ् ॥ आ दम्यतिगळ् पलकालवनपत्यरागिर्होन्दु देवसं नापुत्रस्य लोकोस्ति
येम्ब वेदवाक्यमम् ति-
- २० [छिदु] ॥ क ॥ पुत्रार्थवागि सत्यपवित्राचरणं नेगळ्दपुरुषोत्तमनापत्त्राणनी-
शनेन्दु कलत्रान्वितनागि शम्भुवं पूजिसिदन् ॥ व ॥ अम्नेगमित दिविज-दनुज-
वृन्द-वन्दित-पादारविन्द-
- २१ [नप्प] महेश्वरं कैलास-पर्वतद रम्यभूमियोळ् केशव-वासवाब्जभवरोलगि-
सलसंख्यातगणपरिष्ठितनुमासहितं वोङ्गोलगदोळ् सुखसंकया-
- २२ विनोददिन्दमिरे नारदनेम्ब गणेश्वरनिन्तेन्द ॥ वृ ॥ ओहिल दास चेन्न-
सिरियाळ् हलायुष बाणनुद्भट्टदेहदोळोन्दि बन्द मलयेश्वर केशवराजरा-
दिया गैहि-

- २३ क-सौख्यं विमुक्तसंख्यगणं निबवाद भक्ति-सद्गोहदोळिस्त्रिस्तु समयमुत्कटवादुष्टु
(दु) जैन-बोद्धरोळ् ॥ एम्बुदुं महेश्वरं दर-इसित-वदनारविं-
- २४ दनागि वीरभद्रनं नीं मनुष्य-लोकदोळु निन्नंशदोळोर्बणं पुट्टिसि पर-समयगळं
नियामिसेम्बुदुं वीरभद्रनुं पुरुषो-
- २५ तम-भट्टमो स्वप्नदोळ्तापस-रूपदिं बन्दु पुत्रं पर-समय-नियामकं निमो
पुट्टुगुमेन्दु मत्तमिन्तेत्तेन्द ॥ श्लोक ॥ जैनमार्गेषु ये या-
- २६ ता बहवो दक्षिणापथे ते । दूषिता भवन्तु सर्वे रामेण तव सूनुना ॥ व॥ एन्दु
व (प) रम-प्रसादं-माडि पोपुदुं पुरुषोत्तम-भट्टरु
- २७ कि (कृ) तात्पर्यागि सन्तः-वट्टु मगनं पडेदु जातकर्मादि-क्रियेगळं माडि
देवतोदेशदिं रामनेन्दु पेसरनिट्टरातनुं तन्न दिव्य-बन्मानुरूपमा-
- २८ गो शिव-योग-युक्तनागि निस्पृह त्रि (वृ) त्तिथि चरियिसुनुम् ॥ कन्द ॥
एकाम्र-भक्ति-योगदिनेकाक्रियेनल्के सन्दु शिवनं पिरिदप्पेकान्तदोळाराधि-
- २९ सियेकान्तद-रामनेम्ब पेसरं पडदम् ॥ वृ ॥ सततं सन्दु शिवागमोक्त-विविध
क्षेत्रज्ञोळु शाम्भवायतनानेक-नदी-नद-प्रकरदोळु गौरि (री) वराभिद्व^१
- ३० याश्रित-वाक्कायमनोनुगं चरियिसुत्तुं बन्दु कण्डं सुरार्चितनं दक्षिण-सोमनाथ-
ननघौघ-त्रासिथं प्रीतियिम् ॥ व ॥ अन्तु बन्दनवर-
- ३१ त-विनमदमर-वर-मौळि-मणि-किरण - मञ्जरी - रञ्जिताङ्घ्रियुग्मनप्प हुलिगेरेय
सोमनाथननाराचि-सुत्तमिप्पुदुमा परमेश्वरं प्रत्यक्षवागि ॥
- ३२ अत्र श्लोकद्वयम् ॥ अब्बळूरु-वर-ग्रामं गत्वा राम ममाज्ञया [।] तत्र
वासं कुरु स्वस्थं यज मां भक्ति-योगतः ॥ जैनैः सह विवादं च शङ्कां
हित्वा कु-
- ३३ रुष्यथ । स्वशिरोपि पणं कि (कृ) त्वा पुत्र त्वं विजयी भव ॥ एन्दु सोम-

नाथ-देवबेससिदडे कान्तद-रामय्यनव्वळूर ब्रह्मेश्वर-स्थानदोळु निसृहवृत्तियिन्द-
मिरे ॥ क । (॥)

३४ यु (३) लिदड्ठि-वन्दु जैनपलरन्ता सङ्क-गोण्ड-सहितं पिरिदुं चलदिं
कैथारिसिदत्तोलगदे बिन दैवनेन्दु शिव-संघियोळु ॥ व ॥ आदं केळ्दे-
कान्तद-रामय्य-

३५ नति-क्रुद्धनागि शिव-संघियोळु न्य-देवता-स्तवनं माडलागदेपदडदं माणदे
नुडियुत्तिरलित्तेन्दम् ॥ वृ ॥ जगमं माडुवनावनावनावनदना-

३६ पत्का [ल] दोळ्कावनिं मिगे कोपं तनगागे संहारिसलावं दत्तणा शम्भु सव्वं-
गनिर्हन्ते गत-प्रभाव-वैभाव संसारदोळु, त्रिदुदु दंदुगदोळु, बर्दुदु तपक्के सादुदु

३७ सुखमं पोर्दिर्पनुं देवने ॥ क ॥ हरनन्तिरीवने निम्मरुहं मुं-कोट्टियावुदावुदु
मुन्नं हरनोळु पडदनेकव्वरमं बाण-दिनिशाळ-भक्त-गणङ्गळु ॥ क ॥ एने जै-

३८ नरेङ्ग नीं मुम्भिन हितरं हेळलेके निम्भय सि (शि) रमं बनमरियलरिदु
कोट्टातनोळि पडे नाने भक्कनातने देवम् ॥ क ॥ एनलेकान्तद-रामं
मनसिच-रिपुगित्त तलेय

३९ नाम् पडेदडे नीवेनगीव पणमदेनेने मुनिदेन्दर्जिनन किन्तु शिवनं निलिपेवु
॥ क ॥ एने कुडुवुदोलेयं नीवेनगेन्दित्तोले गोण्डु शिरमं तां भोङ्केनवरिदु
कुडुव पदो-

४० लु शिवनं सान्निध्यमाडि रामं नुडिगुं ॥ वृ ॥ उडुगदे शंभु नीने शरणे-
ददं मनमन्यवा (भा) वदोळोडदडमी कि (कृ) पाणमुखदिं तले पोगदे
निल्लकदत्तादि-

४१ इंदे शिव निम्भ मुल्लडिगुयळुगेनुतं कलि रामनादुदुं केयिडदरिदिकलारयि-
सिदं शिरमं शिवनड्ठि-पुग्गदीळु ॥ वृ ॥ अरे-गाय्-गोण्डने किन्तु नोडिदने
कूर्पङ्ग-

४२ लुकि मेपि (मेय) गाय्दने सेरगं पाईने बाळगे भक्करेनुतं बल्लाळ रामं

स्व-कन्धरमं चक्केने हुल्लं कट्टनरिवन्तकेशदिन्दागळत्तरिदीशाङ्घ्रियोळि
[कि शंकर-] गणकानन्द-

४३ वं माडिदम् ॥ क ॥ अरिद तलेयेळु-देवसं बरेगं मेरदिं बळिक्कवित्तं हरना-
दरदिं तले कलेयिळ्ळे तिरवाहुदु लोकवळि (रि) ये रामं पडेदं
॥ क ॥ बेर-

४४ गागि जैनरेल्लं मरिगि जिन-प्रळे (ल) यवेम्मुदं माडिदिस्नेडेरगि काळ्वि-
डिये माणदे बरसिडिळ्ळन्तेरागि जिनन तलेयं मुरिदम् ॥ वृ ॥ बडिगोण्डोर्बने
सोक्कि बाळे-

४५ वनमं काडाने पोक्कन्तिरलु कडगलु कापीन बोररं तुरुगमं सामन्तरं तूळ्दु
मार्षडेगळु जैनर मारि बन्दुदेतुतुं बेङ्गोट्टु पोगलु जिनं कडेवंनं बडि-
दल्ल कैको-

४६ ठिसिदं श्री-वीर-सोमेशनं ॥ वृ ॥ अदनेल्लं नेरे पोगि बिज्जण-महीपाळ्ळे
जैनककळक्किवदिं पेल्लु विरोधवागे पिरिटुं दूरत्तिरलु कोप-दुर्मदना
बिज्जण भूभुबं मुनिसिनिम्

४७ रामय्यनं कण्डु नीनिदनन्यायमनेके माडिदेयेनल्कोट्टोलेयं तोरिदम् ॥ क ॥
अवरित्त योलेयिदे नीनवधरिसुवुदिककु निम्न भण्डारदोळिम्-

४८ नवरोडुविरलियिन्नोड्डुवुदार्पडे निम्न मुन्दे बिनरं पलरम् ॥ [व] ॥ अन्त-
प्पडी तलेयनरिदवर कैयोळ्ळेड्डुवेनवरदं सुट्टिम्बळिक्कां पड्डुवेनेनगाने-
सेज्जेय-बस-

४९ दि मुख्यवागियेन्नुस्व (एन्तु-नुकं-) बसदिय जिनरं पलरनोड्डुवुदेने बिज्जण
रायं नामी कौतुकमं नोड्डुवेनेदु बसदिगळ पण्डितरुमं जैनरुमं करदु
नीमप्पडे

५० बसदिगळं पणं-माडि ओलेयं कुडिवेन्दडवरावी-मुजोडद बसदिय दूरल्
बन्देवल्लदिनोड्डि जिन-प्रलयं-माडलु बन्दवरल्लदेने बिज्जण-नायं नक्कु
नीविम्नुसि-

- ५१ रदे पोगि 'सुखदिनिरिवेन्दवरं कळिपि **रामय्यगळिगे**ह्वरिये जयपत्रमं कोट्टम् ॥ वृ ॥ अरि-राय-क्षितिभृ-नगारियरिरायाम्मोधि-कुम्भोद्ग-
- ५२ वं अरि-रायेन्धन-तीव्र-वह्नि अरि-रायानङ्ग-भावेक्षणं अरि-नायोम-भुजङ्ग-मूरि गरुडं श्री-**विज्जणं** वैरि-राज-रमाकर्षण-दोलितासि-सुहृदं कीर्त्यङ्गनावस्तमं ॥
- ५३ **खोखन**निकिक्क **लालनन**घक्करिसि स्थिति-हीन-माडि **नेपाळनन**धनं गुळिदु **गुज्जरनं** सेरेयिट्टु **चेदि**-भूपाळन मैमेयं मुरिदु **वङ्गन** बीसिसि कादि कोन्दु बं-
- ५४ **गाल**-कलिंग-मागध-पटस्वर-**माळव**-भूमिपाळरं पालिसिदं घरा-वळवमं कलि **विज्जणराय**-भूभुजम् ॥ क ॥ कोडदोळगे पुट्टि कडलं कुडिदं घटयोनि पुट्टि **कलचूर्य**-
- ५५ **रोळ्ळेगडिसदे** च (चा) लुक्करन्वय-गडलं कुडिदुक्कु सज्जनं **विज्जणनोळु** ॥ व ॥ स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द-महामण्डलेश्वरं । **कालखर**-पुरवराधीश्वरं [।] सुवर्ण-वृष-
- ५६ भ-ध्वजम् । डमरुग-नूर्य-निर्घोषणम् । **कलचूर्य**-कुल-कमल-मात्तण्डम् । कदन-प्रचण्डम् । मोने-मुट्टे-गण्डम् । सुभट्टादित्यम् । कलिगळङ्कुशम् । गज-सा-
- ५७ मन्त-शरणागत-वज्र-पञ्जरम् । प्रताप-लङ्केश्वरम् । पर-नारी-सहोद,म् । स (श) निवार-सिद्धि । गिरि-दुर्गा-महाम् । चलदङ्क-रामम् । निस्त (शश) ङ्क-मल्ल-नित्यखिल-नामादि-स-
- ५८ मस्त-प्रशस्ति-सहितम् । श्रीमत्तु **विज्जणदेवं** **रामय्यङ्गळु** माडिद परम-साहसकम् निरतिशयवप्प मा (म) हैश्वर-भक्तिगं मेच्चि वीर-सोमनाथ-देवर देगुल-
- ५९ द माट-कूठ-प्राकार^१-खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारकं देवरंगभोग-नैवेद्यकं **बन-वसे**-पञ्चिर्वासिद कम्पणं **सत्तुल्लिगेय्** एप्पत्तर मन्नेय **चट्टरसत्तुमा** (मन्) कम्पणदग्रायित-प्र-

१ यहाँ भी सदाकी भाँति 'प्रासाद' पाठ होगा ।

६०. भु-गौण्डगळुमं मुण्डिटु भीमदु-बिज्जनदेवं सप्तकिनेष्यत्तरोळगे मळु-
गुन्दर्वि तेङ्गण गोगावेयेम्ब ग्राममं प्रसिद्ध-सीमा-सहितं त्रिभोगमुमं
६१. श्रीमदेकान्तद-रामय्यकळ कालं कच्चि घारापूर्वकं माडि कोट्टु प्रति-
पालिसिदम् ॥ ओम् ॥ श्री-नुत-कीर्ति-विक्रमदोळ्येन्दिद सोम-कुलैकभूषणं
तानेनिपी ।
६२. च्लुक्य-नृपरन्वयदोळु वसुधाधिनाथराख्यान-पराक्रमकळिये घात्रिपरा-
द्धतेयागे तैलपं ताने च्लुक्य-घात्रि-कुलशैलनेनल्ल मुददिन्दे ताळिदं ॥
६३. अन्ता तैलपदेवङ्गे सत्याश्रयदेवनेम्ब मगं पुट्टिदं तचनं
विक्रमदेवं तदनुजं दशवर्म्मदेवनातन मगं जयसिंगराय-नातन
मगनाहव-
६४. मल्लनातन मगं त्रिभुवनमल्ल-पेर्म्माडिरायनातन मगं भूलोकमल्ल-
सोमेश्वरदेवनातन मगं प्रतापचक्रवर्ति जगदेकमल्लनातन तम्मं त्रैलो-
६५. क्यमल्ल-नूर्म्मडि-तैलपनातन मगं त्रिभुवनमल्ल-सोमेश्वरदेवनातन
पराक्रम-प्रभावमेन्तेन्दे ॥ वृ ॥ कोडुळ्ळुप्र-मदेमबोन्देरडेनल्लकेम्बत्तुमोडु-
गिरल्लकोडि-
६६. ट्टानदे तल्लु कादिं गेल्लदं (लदं) कोडिळ्ळदोन्दानेयि नाडं बीडनिमङ्गळं
तुरगमं सोमेश्वरं बिल्लमं नोडल्ला कळचू(चु) र्य्य-वंशमनदं निमूळवं
माडिदं ॥ वृ ॥ द (घ)—
६७. रे निस्सापल्यवागल्लु सिरि निजवस (श) दिं सन्दुदारक्के तानागरवागल्लु
कीर्त्ति दिग्गळक-निकर-मुख-आदेशवागल्लु जया-सौन्दरि निच्चन्तोळ बाळं
सेरे-विडिदिरे साम्राज्यमं ताळिदं दु-
६८. डर-शौर्य्य वीर-सोमेश्वरनहित-वधू-नेत्र-नीरेजलोमं ॥ अन्धतमवैनिप
कळचुर्य्य-आन्धं मसुळल्लके तम्म जेतदे धरेगनुबन्धं तम्नोळ
सले सम्म-

६६. धिसे बालुक्य-राय-सोम नेगल्दम् ॥ व ॥ अन्ता त्रिभुवनमल्ल-
सोमेश्वरदेवं सकल-चमूनाय-शिरोमणियुं चालुक्य-राय्य-प्रतिष्ठापक-
नप्प कु-

७०. मार-बम्मम्बनुं तानुं सेलेयहळ्ळिय-कोप्पवोळु सुखसंकथा-विनोद-
दिनिहोन्दु देवसं चर्म-गोष्टि (ष्टि) योलिदुं पुरातन-नूतनरप्प
शिवभक्तर गु-

७१. ण-स्तवर्न-माहुचमिदं कान्तद-रामय्यकळव्वलूर-लिदल्लि जैनरेल्लं नेरदु
बन्दु महाविवादम्माडि नीं तलेयनरिदु-कोण्डु शिवन कैयोळ्पड
देयप्पडे चिन-

७२. ननोडेदु शिवनं प्रतिष्ठे-माहुवेन्दोडुमनोडुयोलेयं कोट्टेवव कोट्टोलेयं कोण्डु
तन्न तलेयनरिदु-कोण्डु शिवङ्गे पूजे माडि बळिका तळेयं येळु-

७३. देवसकै मुन्निनन्ते तलेयं^१ पो (१)ले-वीळवन्तु पडेदु बिज्जण-देवन कैयलु
जय-पत्रवं पूजे-सहितं कोण्डुदुमं चिनननोडेदु बसदियल्लिदु विदु-

७४. दु नेलनं खाडिसि^२ वीर-सोमनाय-देवरं प्रतिष्ठेमाडि शिवागमोक्तवागे
पर्वत-प्रमाणद देगुलमं त्रिकूटवागे माडिसिदरेम्बुदं केळ्दु त्रिभुवन-
मज्ज-सो-

७५. मेश्वरदेवं विस्मयं-वि (व) ट्टु नोडुवर्त्थियं विन्नवत्तलेयं वरयिसि
बरिसियवरनिडिर्-गोण्डु तन्नं^३ मनेगोड-गोण्डु पोगि पिरिदुं सत्कारदिं पूषि-

७६. सि श्रीमद-वीर-सोमनाय-देवर देगुलद माट-कूटप्राकार-खण्ड-स्फुटित-जीणों-
द्धारकं देवर अज्जभोग रज्जभोग-नैवेद्यकं चैत्र-

१ इस शब्दकी अनावश्यक पुनरावृत्ति मालूम पड़ती है ।

२ शायद 'मिदिसि ।'

३ 'तन्न' या 'तन्नाय' पढ़ो ।

७७. पवित्र-वसन्तोत्सवादि-पर्वगळिगवज्रदान-विद्यादानकं **वनवास-पञ्चिञ्चासिरद**
कम्पणम् **नागरखण्ड**-वेपपत्तरोळगण अन्वलूरना देवर्गी वृगाग-
७८. तु-बेळकुवेन्दु परमभक्तियिन्दा कम्पणद मन्नेय **मल्लदेवनं** मुन्दिट्टा वृ
मेलाळिके-मन्नेय-सुक्क दण्डदोष-निधनिचैप-सहितवागि **एकान्त-**
७९. **द-रामय्यकळ** कालं कर्चिच पूर्व-प्रसिद्ध-सीमा-सहितं त्रिभोग-सहितं चारा-
पूर्वकम्माडि परमेश्वर-दत्तियागे (गि) तात्र (ताम्र)-शासनमं कोट्टानेयनेळि
(रि) सि मे-
८०. रयिसि परम-भक्तियि प्रतिपाळिसिदम् [॥] ॐ [॥] श्रीकण्ठ-पदाम्बुजमन-
नाकुल-चित्तदोळे पुत्रिपं शिव-समय-प्राकारनेळ (नि) सि सले नेगळ्-
देकान्तद-राम-नीश-
८१. भक्ति-प्रेमम् ॥ ॐ [॥] श्रियं दीर्घायुवं क्रीर्तियननुदिनवुं माळ्के गीर्वाण-
वृन्द-ज्यायं श्री-वीर-सोमं विप्रि (धृ) त-हिमकरं **कामदेवजुदार-श्री-युक्तं—**
८२. गद्विबा-सम्मित-सित-तरळालोल- विस्तार- लीला-नेय (त्र) आळ्केकोद-
(१) त-श्री-ललित-रति-काळा-लास्य-शैलूष-वेषं ॥ स्वस्ति समधिगतपञ्च-
महाशब्द-महामं-
८३. डलेश्वरं **वनवासि-पुरवराधीश्वरं जयन्तो-मधुकेश्वर-देव-लम्ब-वर-प्रसादं**
विद्वज्जनाह्लादकं **मयूरवर्मकुलभूषण कदम्ब-कण्ठीरवं कदन-**
प्रचण्डं साह-
८४. सोत्तुङ्गं कलिगळकुशं सत्य-राधेयं शस्त्रागत-वज्र-पञ्जरं याचक-कामधेनुकृत्य-
लिळ-नामावळि-सहितनप्प श्रीमन्महामण्डलेश्वरं **कामदेवरस-**
८५. पर्पानुङ्गल्यनूरं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालनदिनाळुत्तमिर्द-**अन्तूर** वीर-सोमनाथ-
देवरं बन्दु कण्डु **रामय्यकळ** शिवागवा (म)-विधा-
८६. नदि माळिसिद पर्वतोपमानमप्य देगुलमं कण्डवक माळिस साहसमं स-विस्त-
केळ्दु मेचि परम-प्रीतियिन्दोढ-गोण्डु पोगि

८७. पानुक्क नेलेवीडिनोळ् प्रधानं तातुं मनुकेय-मण्डलिक-सहितं सुख-
सङ्कथा-विनोददि कुञ्जिदुर्दु परम-भक्तिं वीर-सोमनाथ—

८८. देवर्गे पानुक्क-अय्नूरुळगण कम्पणं होसनोड् प्पट्टरोळगे मुण्ड-
गोड समीपद ओगेसरवि बडगण मल्लवळिळयेम्ब ग्राममं प्रसिद्ध-सी-

८९. मा-सहितवागि त्रिभोगाभ्यन्तरं नमस्यमाडिया देवर देगुलद खण्ड-स्फुटित-
जीर्णोद्धारकं देव-रङ्गभोग-रङ्गभोग-नैवेद्य [कम्] चैत्र-

९०. पवित्र-वसन्तोत्सवादि-पर्वगळ्गमनदानकवेन्दु रामय्यङ्कळ कालं कर्चि
धारा-पूध्वर्क-माडि-परम-भक्तिं कोट्टु धर्ममं प्रतिपालिसिदम् । (॥)
स्वस्त्यस्तु ओम् ॥

९१. इन्ती धर्मङ्गळं प्रतिपालिसिदवर श्री-वारणासि प्रयागे कुरुक्षेत्र अर्घ्यतीर्थ
श्रीपर्वतादि-पुण्य-क्षेत्रदक्षि सायिर कविलेगळ कोडुं

९२. कोळगुवं होन्नोळकट्टिसि चतुर्वेद-पारगरप्प सु-ब्राह्मणभो सूर्यग्रहण-सोमग्रहण-
व्यतीपात-संक्रमणादि-पुण्य-कालदोळ्विषि-युक्तवागे कौट्टु

९३. प (फ) लवं पडेवर ई धर्मवनळिदवरा गङ्गे वारणासि कुरुक्षेत्र-प्रयागादि-
पुण्य-क्षेत्रङ्गळोळा कविलेगळुवं ब्राह्मणरुवं कोन्द पापमं पडेवरीयर्थ सं-

९४. देह विस्तेम्बुदं मुन्नं मनु-वाक्कङ्कळु (लं) पेळ्गुं ॥

श्लोक ॥ बहुभिर्वसुधा भुक्ता रात्रिभिः सगरादिभिः ।

यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ॥

गण्यन्ते पांसवो

९५. भूमेर्गण्यन्ते वृष्टिबिन्दवः ।

न गण्यन्ते विषात्राणि धर्म-संरक्षणे फलम् ॥

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुधराम् ।

षष्टि-वर्ष-सहस्राणि विष्ठायां वा-

६६.

यते कृमिः ॥

कर्मणा मनसा वाचा यः समर्थोऽप्युपेक्षते ।
सम्यस्तथैव चाण्डालः सर्व्व-धर्म-बहिष्कृतः ॥
कुलानि तारयेत् कर्त्ता सप्त सप्त च सप्त च ॥
अधोवपा—

६७

तयेद्धर्त्ता सप्त सप्त च सप्त च ॥

श्लोक ॥ अपि गङ्गादितीर्थेषु हन्तुगामयवा द्विजम् (१)
निष्कृति (:) स्यान्न देवस्व-ब्रह्मस्व-हरणे नृणाम् ॥
सामान्योयं धर्म-सेतु—

६८.

नृपाणाम्

काले-काले पालनीयो भवद्भिः (१)
सर्व्वानेतान् भाविनः पार्थिवेन्द्रान्
भूयो भूयो याचते रामचन्द्रः ॥

स्वस्त्यस्तु मंगलं च । श्रीश्च ॥ ओम्

६९. ओम् [॥] हरनोळ्त्तवनिधियन्ताम् दरबुरविस्तेनिसि पडेदु देगुलवं पुरहरन
कैळासदन्तिरे वीरचिसिदं शम्भु-भक्ति-धामं **रामम्** ॥ वृ ॥ देगुलकेन्दु भक्त-

१००. जनवादरदिन्दिदिरेद् कोट्टड (दं) हागवनादडं कळदुकोळ्ळदे बेडदे नाडे
द्वे (दै) न्यदि पोणि नृपाळरं शिवननुग्रहवक्ष्यवागे माडिदं देगुल [व] म्
हराद्विगेणे-

१०१. यागिरे **रामनिदेम्** क्रि (कृ) तार्थनो ॥ क ॥ **केशवराज**चमूपं शासनवं
पेळ्दनन्तदं तिर्दि निरायासने बरदनीशन दासं शिव-चरणकमल-शरणं
सरणम् ॥ ॐ [॥]

१०२. स्वस्ति श्रीमदु-हर-धरणी-प्रसूत-**मुक्ककण-कादम्ब-** [वंश] वं **वनवासि-**
पुरवरावीश्वरं श्री-मदु (धु) कनाथदेवर दिव्य-श्री-पाद-

१०३. पद्माराधकं मङ्गिदेवरायकं नागरखण्डेयं
रिगे-नाडुमं.....

१०४.कोट्ट ॥

[इस प्रकाशित अभिलेखकी कहानीका संक्षेप इस प्रकार है:—

कुन्तल देशके आलन्दे (या आलन्द) नामक नगरका निवासी श्रीवत्स गोत्रका पुरुषोत्तमभट्ट नामका एक शैव ब्राह्मण था । उसके राम नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ । कालान्तरमें, शिवकी अधिक भक्ति करनेके कारण, इसका नाम 'एकान्तद-रामय्य' पड़ गया । उसने बहुत-से शैव तीर्थस्थानोंकी यात्रा की । और अन्तमें वह हुळिगेरे (लक्ष्मेश्वर) आया जहाँकि 'दक्षिणका सोमनाथ' इस नामसे प्रसिद्ध एक शैव मन्दिर था, इसके बाद अब्बूर जहाँ कि, जैनधर्मके एक मज़बूत गढ़ होनेके सिवाय, ब्रह्मेश्वरके मन्दिरमें एक महत्त्वपूर्ण और प्रभाव-शाली शैव केन्द्र भी था । अब्बूरमें वह जैनोके साथ विवादमें फँस गया । जैनोंने वहाँ शङ्कषौण्ड नामके ग्रामणीके अधिनायकत्वमें उसकी भक्तिका अन्त कर दिया । कुछ शर्त रखी गई और यह एक ताड़-पत्र पर लिख दी गई । शर्त यह थी कि हारनेपर जैन लोग अपने जिन देवकी जगह शिवकी प्रतिमा स्थापित कर देंगे । एकान्तद-रामय्य शर्तमें विजयी हुआ । इस पर जैनोंने उपर्युक्त शर्त-नामेकी शर्तोंका पालन करनेसे इन्कार कर दिया । तब जैनोके रक्षक, घुड़सवार, सरदार, तथा उनके सैनिकोंके विरोधमें होते हुए भी, उस अकेलेने बिनको उठाकर (फेंककर) वेदीको ध्वस्त कर दिया, और, जैसाकि आगेके लेखसे प्रकट होता है, उसकी जगहपर पर्वत सरीखा एक 'वीर-सोमनाथ' नामसे शिवालय खड़ा कर दिया । इसपर जैन लोग बिज्जलके पास गये और उससे एकान्तद-रामय्यकी शिकायत की । राजाने एकान्तद-रामय्यको बुलवाया और उससे प्रश्न किया कि उसने जैनोका यह भयंकर नुकसान क्यों किया । इसपर एकान्तद-रामय्यने वही ताड़-पत्र वाला शर्तनाम्ना पेश कर दिया, और बिज्जलसे उसे अपने खजानेमें जमा कर देनेको कहा तथा यह बात भी कही कि अगर जैन लोग अपने

८०० मन्दिरोंको जिनमें आनेसेज्येयवसदि भी शामिल रहेगी, शर्तपर लगादे तो वह फिरसे वही चमत्कार^१ (feat) दिखलायेगा जिसे कि उसने अभी ही दिखलाया था। इस दृश्यको देखनेकी इच्छासे बिजलने जैन मन्दिरोंके बितने विद्वान् थे उन सबको बुलाया और उसी शर्तनामेकी शर्तको दुहरानेके लिए अपने तमाम मन्दिरोंकी शर्तपर रख देनेके लिये कहा। जैनोंने यह कहते हुए कि वे अपनी शिकायतकी क्षतिकों मिटानेके लिये उसके पास आये हैं न कि उस क्षतिको और बढ़ानेके लिये, दूसरे बारकी इस परीक्षाको माननेसे इन्कार कर दिया। इसपर बिजलने उनका उपहास किया और यह शिद्दा देते हुए कि इसके बाद तुम लोगोंको अपने पड़ोसियोंके साथ शान्तिसे रहना चाहिये, उन्हें बर-खास्त कर दिया, और एकान्तद-रामय्यको खुली समामें बयपत्र दिया। तथा, जिस अद्वितीय साहससे एकान्तद-रामय्यने अपनी शिवभक्ति प्रकट की थी उससे प्रसन्न होकर, उसने उसके पैर धोये और वीर-सोमनाथके मन्दिरको गोगाव नामका गाँव, जो बनवासी १२००० में सत्तलिंगे-सत्तरके मठगुण्डके दक्षिणमें है, दानमें दिया।

इसके बाद लेख कहता है कि जिस समय पञ्चिमी चालुक्य राजा सोमेश्वर चतुर्थ और उनके सेनापति ब्रह्म शैलेयहळिळ्यकोप्पमें थे, एक आमसभा की गई जिसमें पुराने और नये शैव-सन्तोंके गुणोंका वाचन किया गया था। जब एकान्तद-रामय्यका किस्सा उससे कहा गया तो सोमेश्वर चतुर्थने एक पत्र लिखकर एकान्तद-रामय्यको अपने पास अपने राजमहलमें आनेके लिये कहा। वहाँ उसने उसके पैर धोये और उसी मन्दिरको स्वयं अन्तूर ग्राम ही भेंट किया। यह अन्तूर-ग्राम नागरखण्ड-सत्तरमें है जो वनवासी बारह हज़ारमें है। और अन्तमें, महामण्डलेश्वर कामदेवने उस मन्दिरको बाकर देखा, सब कहानी सुनी,

१. यह चमत्कार और कुछ नहीं सिर्फ कटे हुए सिरको जोड़ देना है। एकान्तद-रामय्यने अपना सिर काट दिया था और फिर शिवकी कृपासे उसे पुनः जोड़ दिया था।

एकान्तद-रामय्यको हान्गल बुलाया, और वहाँ उसके पैर धोये और मल्लवल्ली नामका गाँव मन्दिरको दानमें दिया। यह मल्लवल्ली गाँव पानुङ्गल-पाँच सौ में होसनाङ्क-सत्तरमें मुण्डगोडके पास बोगेसरके दक्षिणमें है।]

[EI, V, No. 25, E.]

४३६

अण्डुर—कन्नड ।

[जिना काळ निर्देशका]

१. श्री-ब्रह्मेश्वर-देवरक्षि एकान्तद-रामय्य बसदिय जिननोडुवागि तलेयनरिदु हडेद टावु ॥ संक-गावुण्ड बसदिय नोडेयलीयवे (दे) आळुं कुदुरेय् ...
२. नोडुरलु एकान्तद-रामय्य कादि गेल्लु जिनननोडेदु लि [ज्जमं प्रतिष्ठे-माडिदम् ॥]

अनुवाद :—ब्रह्मेश्वर भगवान्‌के पवित्र मन्दिरमें, जब कि एक मन्दिरके 'जिन' शर्त (दाव) पर रख दिये गये थे, एकान्तद-रामय्यने अपना सिर काट डाला और इसको फिरसे प्राप्त कर लिया। जब सङ्कगावुण्डने उसे (एकान्तद-रामय्यको) मन्दिर या वेदीको ध्वस्त नहीं करने दिया और अपने आदमियों तथा घुड़सवारोंको (उस वेदीकी रक्षाके लिये) एकान्तद-रामय्यने लड़ाई लड़ी और उसमें विजय प्राप्त की तथा 'जिन'को भग्न करके 'लिङ्ग' की प्रतिष्ठा की।

[EI, V, No. 25, F.]

४३७

कम्बेनहस्ति;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[जिना काळ निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४६८

बन्दलिके:—संस्कृत तथा कन्नड ।

[बिना काक निर्देशका, पर संभवतः लगभग १२०० ई०]

[शास्त्रीरवर बस्तिके रत्नमण्डपके दक्षिण-पश्चिम कोने पर]

(पश्चिम-मुख) स्वस्ति श्रीमतु अभयचन्द्र-सिद्धान्ति-देवरागल् शिष्यर
... कन अदर मुरारि-देव-दान-प्रतिपालक-वंशोद्भवर चारुकीर्ति-पण्डित-देवर
हिरिय-महल्लिगेय पञ्च-वस्तिर बीणोंद्वारव माडिदर । आ-स्थानकके अरसिन्दल्ल
नाडिन्दल्ल बिडिसिकोण्ड वृत्ति आ-ताळगुप्पेय बस्तिगे पूर्व तोडगि सन्दु बहुदु ।
बलेयगार । बाळेयहल्लि । तगुडवस्तिगे यी-मूख-ऊर सर्वमान्य अरसियकेरेय
केळगे ताळगुप्पेय गऊडुगल्लु बिट्टु ४ हाद । मुरवत्तूर गौडुगल्लु वीर
गौण्डन केरेय केळगे बिट्टु ४ हाद । विदळ २ सासव हेरबडे १० येत्तु
हदिनेण्डु कम्पण-दल्लु सल्लुऊदु । बत्तियकेरी सर्वमान्य । बलेयगारलि गुडगल्लु बिट्टु
भूमि अल्लिय मूलस्थानके ४ हाद । हन्चड २० मान्य येत्तु हन्चड सर्वमान्य
समेय-समुच्चयद भोगवट्टिगेय पञ्च-वस्ति यी-धर्मकके रुदरुखन हदिनेण्डु
समेबलु कर्त्तव ॥ श्री श्री

[स्वस्ति । मुरारि-देवके दानके प्रतिपालक वंशमें उत्पन्न, अभयचन्द्र-सिद्धान्ती
देवके शिष्य चारुकीर्ति-पण्डित-देवने हिरिय-महल्लिगेकी पञ्च-वस्तिको सुचार ।
राजा और नाडसे जो दान पहले ताळगुप्पेकी बस्तिके लिये मिला था, अर्थात्
बलेयगार, बाळेयहल्लि और तगुडवस्तिगे,—ये तीन गाँव, सब करोसे मुक्त, उस
मन्दिरके लिये भी लागू हो सकते हैं । (उक्त) कुछ भूमि भी दानमें दी थी ।

इस गुणी कार्यके लिये १८ बातियाँ प्रबन्धक हैं ।]

[EC, VII, Shikarpur, tl, No. 227.]

४३९

निसूर;—कछव ।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग १२०० ई० का]

[निसूर (गुब्बि परगना) में, आदीश्वर बस्तिनी उत्तरीय दीवालमें
एक पाषाण पर]

श्री-मूल-संघ-देशिय-गण-पुस्तक-गच्छ-कोण्डकुन्दान्वयद श्री (य्) अभयचन्द्र-
सिद्धान्तिक-चक्रवर्त्तिगळ प्रिय-शिष्यरागमाम्बुनिधिगळुं सवळ-गुणाकळितरुमप्प
बालचन्द्र-पण्डित-देवर प्रिय-गुडियर ॥

विनय-निधि माळियक्क । अनुपम-गुणमन्ते बामि-सेट्टिगळं ताम् ।
जिन-भक्तियन्दे पडेदळु । जिन-भक्तर्पडेव पडवुयोगळलळुम्बम् ॥
शौळान्विने चौडलेगं । माळवेय तनूज मल्लि-सेट्टिगे सुतेया- ।
व्याळ-गब-गमने पद्दले । बालक-माळियक्क मल्ल-माळात्मजम् ॥
मल्लिदु बवं माळवेयुमन् । उळिहदे सोसे चौडियक्कनं माडिपलु स्त्री- ।
कुळ-साहस-षड्-गुणदोन्- । अळव समाधियोळे मेरेदु मुडिप्पिरलुते ॥

माळवेयुं चौडियक्कनुमेम्बिळ्वर निधिधि ॥

[श्री-मूलसंघ, देशिय-गण, पुस्तक-गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके अभयचन्द्र-
सिद्धान्तिक-चक्रवर्त्तिके शिष्य बालचन्द्र-पण्डित-देवकी प्रिय गृहस्थ-शिष्या,—
माळियक्के थी ।

चौडले और माळवेके पुत्र मल्लि-सेट्टिकी पद्दले और मल्लम दो पुत्रियाँ
उत्पन्न हुई थीं । जब यम (मृत्यु) ने क्रुद्ध होकर, मालवेको न बचाकर, उसकी
पुत्रवधू चौडियक्कको भी मारा वह समाधिको प्राप्त हुई, और स्त्रियोचित भक्तिके
६ गुणोंको प्रदर्शित कर दिवंगत हुई । यह स्मारक (निधिधि) माळवे और
चौडियक्क दोनोंका है ।]

[E C, XII, Gubbi tl., No 5]

४४०

नित्तरु;—कषड ।

[बिना काळ-निर्देशका, पर संभवतः १२०० ई० का ?]

[नित्तरु (गुब्बि परगना) में, आदीश्वर बस्तिकी उत्तरीय दीवालमें एक पाषाणके बायी ओर की तरफ]

माळब्बेय मग बामि-सेट्टिय मदवळिगे बूचब्बेय निषिधि ॥

[माळब्बेयके पुत्र बामि-सेट्टिकी पत्नी बूचब्बेकी निषिधि (स्मारक) यह है ।]

[E C, XII, Gubbi tl., No 6]

४४१

नित्तरु;—कषड ।

[बिना काळ निर्देशका पर संभवतः १२०० ई० ? का]

[नित्तरु (गुब्बि परगना) में, आदीश्वर बस्तिकी उत्तरीय दीवालमें एक पाषाणके दाहिनी ओर]

माळब्बेय मळिळ-सेट्टिय तन्दे गुणद बेडङ्ग मळि-सेट्टियुमातन प्रिय-पुत्र मळिच्च्यनुमेन्दु इर्बंर निषिधि ॥

[माळब्बेके पिता मळिसेट्टि, और मळि-सेट्टिके प्रिय पुत्र माळय्य दोनोंकी स्मारक यह है ।]

[E.C., XII, Gubbi, tl., No. 7]

४४२

कडकोल;—कव्व ।

वर्ष खर [= १२वीं या १३वीं ई० (फ़ीड) ।]

- [१] श्रीमत्-खर-संवत्सरदन्दु
 [२] कत्तेय-ऐचि-सोटि [ट्] य म-
 [४] ग च्चन्दन निषिन्धेय क-
 [५] ल् [ल्] उ ॥

अनुवाद—श्रीवाले खर संवत्सरमें,—(व्यापारी) कत्तेय-ऐचिसेट्टि के पुत्र चन्दयके निषिन्धेय का पाषाण ।

[IA, XII, P. 101, No 3] t. and tr.

४४३

सिग्गाम्बे (जिळा चारवाड) ;—कव्व ।

वर्ष व्यय [= १२वीं या १३वीं शताब्दि ई० (फ़ीड) ।]

[चारवाड जिलेमें बड्ढापुर तालुकाका तालुका स्टेशन सिग्गाम्बे है । यहाँके कलमेश्वर मन्दिरके सामनेके स्मारक पाषाण पर यह अभिलेख है ।]

- [१] स्वस्ति श्रीमत्-व्यय-संवत्सरद मार्ग-
 [२] सि (शि) र व ११ सु (शु) । देसी (शी) य-गणद बाळचं-
 [३] ब्रत्रैविद्यदेवर गु [ड्] ड सव (?) रसिगि-से [ट्] टि
 [४] यव स्वर्ग-प्राप्तनादनु ॥

अनुवाद स्वस्ति ? देशीयगणके बाळचन्द्रत्रैविद्यदेवके गुड (शिष्य या अनुयायी) (व्यापारी) (?) सबरसिङ्गिसेट्टिने, शोमनीक व्यय संवत्सरके मार्गशिर (महीने) के कृष्ण पक्षकी एकादशी, शुक्रवारको स्वर्ग प्राप्त किया ।

[IA, XII, P. 102, No, 5.] t. and tr.

४४४

एहोले—कन्न

[बिना काकनिर्देशका; १२वीं या १३वीं ई० सताब्दि (फ़ीड).]

[१] श्री-मूलसङ्ग-बलो (ला) त्कारगणद कुमुदन्दुगळ गुडु ऐचि-सेट्टि

[२] यर मग येरम्बरगे-नाड सेट्टियुत्त रामि-सेट्टियर निषीधि ॥

अनुवाद रामिसेट्टि बोकि एरम्बरगे^१ बिलेका सेट्टिगुत्त या—श्रीमूलसङ्गके बलो (ला) त्कारगणके कुमुदन्दु का गुडु (शिष्य) या; और ऐचिसेट्टि (व्यापारी) का पुत्र या, उसकी यह निषीधि (निषधा) है ।

[इ ए०, १२, पृ० ६६]

४४५

गिरनार—संस्कृत भग्न ।

[बिना काक—निर्देशका]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका है

[Revised list and Rem. Bombay (ASI, XVI),
p. 351-352, No 8, t. and tr.]

४४६

रायबाग;—संस्कृत ।

[शक ११२४ = १२०१ ई०]

[एक लेखका भव पता नहीं है ।]

इस शिलालेखका प्रारम्भ उस राजा कृष्णके वर्णनसे शुरू होता है, जिससे रट्टवंश यशस्वी हुआ था । तदनन्तर राजा सेनका वर्णन है, जो रट्ट राजाओंकी सूची में 'सेन'-नामधारी राजाओं में द्वितीय संख्याका सेन है । इसके बाद

१. यह नाम 'एरम्बरगे' भी लिखा जा सकता है ।

वंशावली (Genealogy) कार्तवीर्य चतुर्थ और मल्लिकार्जुन तककी दी हुई है । कार्तवीर्य चतुर्थका समकालीन एक राजा यादववंशी रेव^१ नामका था । इसके बाद लेख में कुछ दोनोंका उल्लेख आता है जो 'दुर्मति संवत्सर' शक ११२४ में किये गये थे । दान करने का दिन वैशाख शुदी पूर्णिमा, शुक्रवार 'व्यतीपात' का समय था । ये दान राजा कार्तवीर्यदेवने अपनी माता चन्द्रिका-महादेवीके द्वारा बनाये गये रट्टोंके जैन मन्दिरके लिये तत्कालीन गुरु शुभचन्द्र भट्टारक देवके लिये थे । सीमाओंके निर्धारण में बहुतसे गाँवों और शहरोंके नाम आये हैं ।

[J.B. X, P. 183, No 9, a.]

४४७

रोहो—संस्कृत तथा गुजराती

[सं० १२५१=१२०२ ई०]

लेख भग्न है और श्वेताम्बर सम्प्रदायका मालूम पड़ता है ।

[EI, II, No. 5, No 12 (P. 28-29) t, and tr.]

४४८

बन्दलिके:—संस्कृत तथा कन्नड ।

—[शक ११२५=१२०३ ई०]—

[बन्दलिकेमें, ज्ञातीश्वर नस्तिके सामनेके पाषाण पर]

कवि-निवह-स्तुतं नेगळ्द रेव-चमूपतिथि बळकमान

भुवनदोलित्तनन्त-बिन-धर्मबधुरिपद-रेचनम् ।

सुविदितमागे बाम्भव-पुराधिप शान्ति-जिनेश-तीर्थमम् ।

कचडेय बोप्पनुदरिसिदं यदु-वक्कम-राज्य-भूवणम् ॥

१—कहो की के छिकाखेखमें भी 'रेव' नाम आया है । पर वहाँका रेव उस रेवसे भिन्न है (जे. एफ्. फ्रीड) ।

मङ्गिडलेन्देम् धनम् ।
 पडेवने नाळ्-देरद दानम् माडलुकेन्-।
 दोडमेयनर्जिपनारिम् ।
 कडु-जाणं भव्यरोळगे कवडेय वोप्पम् ॥
 श्रीमत्परमर्गभीरस्याद्वादामोवलाञ्छनम् ।
 बीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
 वसुधा-कान्तेय कुन्तलोपममेनिष्पी-कन्तल-क्षोणियम् ।
 पेसवेंत्ता-नव-नन्द-गुप्त-कल-मौर्य-दमापरळ्दर् छसब्- ।
 जसदाण्मर् कलि-रट्टराळ्दर्वरिं चालुक्यरळ्दर् वळिक् ।
 एसेदिर्दा-कळचूय्य वंशबरोळाळ्दं बिज्जल-क्षोणियम् ॥
 अक्षि बळिके धरेयोळ् ।
 बक्षिदरं तरिदु निन्न-भुजासिथिनदट् ।
 बळळाळ-नृपं धरेयं ।
 सत्तलीलेथिनाळ्दनरिवळ-देशं पोगळल् ॥

आतन वंशावतारमेत्तेने ॥

वृत्तम् ॥ कृष्णन नाभि-पङ्कजचनप्यजनिं वोगेदत्रियत्रिबम् ।
 विष्णुवदाभाषिं ससि पुट्टिदनातन वंश-सम्भवम् ।
 बिष्णु-पराक्रमं पुरु पुरुरवना-नहुषं ययाति रा-।
 बिष्णु यदुत्तमं क्रमदे तत्तदपत्यरेनल्के पुट्टिदर् ॥
 सळनादं यदु-वंशदोळ् मुडदवं वासन्तिका-दैविया ।
 चळनाराचनेयं प्रोणर्चि शशकोषद्-ग्रामदोळ् पायदोडा-।
 गळे तां पेट्-बुलि पोप्सळेन्दु सेळेयं जैन-ब्रतीन्द्रं जपत्-।
 तिळकं कोट्टोडे पोय्ये होयसळ-त्रैसर् तानाडुडी- धात्रियोळ् ॥
 सेळे सिन्दद कावागिरे ।
 मुळिसिन्द पाय्द पुलिये पुलियागिरे ताम् ।

तोळतोळ तळदपुदु यदु-तृप-।
 बळदोळ् पुलियेसेव-सिन्दवन्दिन्दित्तल् ॥
 सळनिन्दं बळिकं नृपाळवरनेकर् य्यादवेशर् म्मही-।
 तळमं पाळिसिंदर् ब्वळिके विनयादित्यङ्गे पुत्रं जगत्-।
 तिळकं नुञ्जेरेयङ्गनादनेरेयङ्गङ्गोप्पे बल्लाळनुम् ।
 विळसद्-विष्णुवुमर्क-तेजनुदयादित्याङ्कतुं पुट्टिदर् ॥
 अवरोळ् रक्षिप विष्ण-बर्द्धन-नृपङ्गादं सुतं मेदिनी-।
 धवनप्पा-नरसिंह-भूपनदट् सन्नारसिंहङ्गमुत्-।
 सवदिन्देचळ-देविगं यदु-कुल-प्रोत्तंसनादं सुतम् ।
 भुवनानन्दन-मूर्ति कीर्त्ति-निळयं बल्लाळ-भूपालकम् ॥
 निरिदिदिरान्तवरं निज- ।
 चरणक्केरगिदरनोसेदु रत्तिसि धरेयम् ।
 परिपाळिसुतं सुखदिन्द ।
 इरे विजयसमुद्रदाक्षिया- बल्लाळम् ॥ *
 धरणी-कान्तेय सुखदन्त् ।
 इरे बन्नवसे-नाडु रक्षिसुवुददरोळ् ना- ।
 गर-खण्डं तिळकदवोल् ।
 परिशोमिपुदाव-काळसुं सिरिषोदविम् ॥
 ऊरुन्नन्दनदि लता-भवनदिन्दूरुत्तंटाकङ्गळिन्द ।
 ऊरुत्तळत्तेले-बळिळयिं कोळगळिन्दूरुर् प्पळोर्बोर्बजदिन्द ।
 ऊरुर् कन्निन तोष्टदिं कळवेयिन्दूरुर् प्रजा-वातदिन्द ।
 ऊरुर् देव-ग्रहङ्गळि विभुधरिन्दूरुर् करं रक्षिकुम् ॥
 परलोळ् परसं घेनूत्- ।
 करदोळ् सुर-घेनु नन्दनदोळमर-कुजम् ॥
 करमेसेवन्तिरे सले ना- ।
 गर-खण्डदोळ् सेवुदेसेव बान्धव-नागरम् ॥

वृ ॥ अदु बळसिद् नन्दनदिनम्बुष-षण्ढदिनोळ-गवुंगिनिम् ।
 पुडिदेले-वळ्ळियि बेळद-शाळियिनोप्पुव कोण्टेयि समन्त ।
 ओदविद-लक्ष्मियि विभवदि षिळसज्जनदि सु-देव-गे ।
 हद कडु-चेत्तिनिन्दमळका-पुरमं नगुतिर्पुदोम्मैयुम् ॥
 अदनाळ्वं प्रजे मेच्चे गण्डनदटं कादम्ब-बंशोद्भवम् ।
 मुडदि सोम-सृपात्मजातनेनिसिर्दा-बोप्य-देवङ्गे पुट्ट ।
 हद सत्पुत्रननून-शौर्य-निळयं कन्दर्प-सन्-मूर्त्तिय- ।
 भ्युदयालङ्कृतनात्त-कीर्त्ति-रमणं श्री-ब्रह्म-भूषाळकम् ॥

आ- बन्दुणिकेय शान्तिनाय-देवर मण्टपमं माडिसि कवडेय बोप्यि-सेट्टियरु
 सर्व्व-नमस्यमं माडिदम् ॥

नागर-खण्डदोळ् हरन वक्त्रदवोल् नेगळदग्रहारमय् ।
 आगळमोप्पुगुं निखिळ-वेद-पुराण-सुनीति-शास्त्र-तर्क- ।
 आगम-काव्य-नाटक-कथा-स्मृति-यज्ञ-विधानमं मनो- ।
 रागदिनोदुवोटिसुवशेष-महाजनदोन्दु-प्पोषदि ॥
 प्रत्येक-वृहस्पतिगळ् ।
 नित्यानुष्ठान-चारु-चारित्र-परर् ।
 स्तत्य-युतर् तेजदोळा- ।
 दित्य-सट्टशरक्लियिर्प माजनवेळ् ॥
 केरेयूर शम्भु-देवनेय् ।
 अरितर्क सकळ-विदेगळ्गं सले कण्- ।
 दरवीयेनिसिप्पेनवनम् ।

नेरे पोललु नेरेयनबनुमा-भारतियुम् ॥
 उरदे बणञ्जु-धम्मर्दोळ्गं नयदि नडेयुत्तमिर्परम् ।
 तरिदु सु-धम्मर्दि नडेवरं प्रतिपाळिप सेट्टिकञ्जेयक्- ।
 क्कानि-सुतङ्गे पुण्य-निधि शंकर-सेट्टिगे सेट्टि-गुत्तरार् ।
 प्पेररेणे सत्यदि विभवदि नुत-शौर्यदिनुदय-धैर्यदिम् ॥

तनगरयं **शङ्करं** तज्जननि नेगळ्द् **अकळवे**पात्तं जिनं सन्-।
 मुनि-वन्धं **मानुकीर्षि-प्रति-पति** गुण **बल्लाळ**नाळ्द् विनेपर ।
 तनगिष्टर् कान्ते **लच्छाम्बिके** सति सति-नुते **अकळवे-मल्लवे**गळ् नन्-
 दनेयर् **बल्लाळ-देव** सुतनेनेयेसेदं वीर- **सामन्त-मुद्दम्** ॥

कविगळ मुद्दनाभितर मुद्दनाथर मुद्दनिष्ठनप्प-।
 अवर्गळ मुद्दन्तिगळ मुद्दनेडर्-न्नेले-गोण्ड शिष्ट-बान्-
 बवरेसेवोन्दु-मुद्दनेनसुं परिकाद मुद्दनङ्गना-।
 निवहद मुद्दनेय्दे सलियं प्रभु-मुद्दनिळा-तळाप्रदोळ् ॥
 स्वच्छतर-कीर्त्तियिन्दम् ।

कच्छवियूरडेय विट्ठियारसं जगमम् ।

प्रच्छादिशिदनवङ्गति-।
 तुच्छरेनिप्पूरडेयरदेम् पेळेणेये ॥
 सागर-वळयित-धरणी-।
 भागदोळ्त्पुन्नतिकेयिं बल्लिप सत्-।
 त्यागदिनरि चेन्देणेये ।

बेगूर प्रभुगे माल-गौडङ्गन्यर् ॥

सोगयिप्प **कण्णसोगेय** ।
 नेगळिद्देरकाटि-गौडनरितवनार्पम् ।
 मृग-रिपु-विक्रममं नेरे ।
 योगळल्का-बलबभवनुमेनार्त्तं (पं) पने ॥

मळबल्लि येरह-गौडङ्ग ।

एळेयोळ् समनप्परुण्टे सत्यदिनरिक्किम् ।
 वीळसत्-त्यागदिनत्युब्-।
 ज्वळ-कीर्त्तियिनचिक-शौर्य्यदिं सद्-गुणदिम्
 चलद नेले चागदागरं ।
 अलधु-गुळङ्गळ निधानमरितद तवरङ्ग-।

ज्वल-कीर्तिय करुवेनिपम् ।
 सले हलरि दम्बळर सोम-गवुण्डम् ।
 मुददे मुनिचन्द्र-सिद्धान्त-
 त-देवरळ्-कणि-शिष्यरनुपम-विद्यार्
 म्मद-रहितर् स्तलेनेगळ्दम् ।
 विवदित-गुणर् जलितकीर्ति-सिद्धान्तेशर् ॥
 अवरानन्दन-नन्दनन् ।
 अवनी-संस्तुत्यमेनिप काणूर्माण-कै-
 रव-चन्द्रेनेनिसि नेगळ्दम् ।
 विवेकि शुभचन्द्र-विनुत-पण्डित-देवम् ।
 मलिनते इल्लद कुन्दम् ।
 तळेयद सले राहु-पीडे यैदद दोषा-
 वळियोळ् परिचिसदस्ता-
 चळकेळसद चन्द्रेनेनिषुर्व शुभचन्द्रम् ॥
 बन्दणिकेय तीर्थवना-
 नन्दाचार्यरवोलुद्धरिसिदं जगदा-
 नन्दकर-ललितकीर्तिय ।
 नन्दन शुभचन्द्र-विनुत-पण्डित-देवम् ।
 कुसुम-व्रातदोळम्बुजं बळधियोळ् दुग्धाधि ताराळियोळ् ।
 ससि चिन्तामणि कल्गळोळ् तरुगळोळ् कल्योर्द्धिपं रत्नदोळ् ।
 मिशुपा-कौस्तुभमोप्पुवन्ते बिन-योगि-व्रातदोळ् रञ्जिरम् ।
 जसदाप्पे शुभचन्द्र-देव-मुनिपं कानूर्माणोद्धारकम् ॥
 इन्तिदु चित्रमेम्बिनेगमेरदे मोसर प्योरस्से पाल्गळोर्-
 अन्तिरे पुत्तिनोळ् पुगे बल्लातिशयं नव-पुष्प-मालिका-
 सन्ततिविन्दमादतिशयं-वेरसोप्पुव शान्तिनाथ-सीर्-
 स्थान्तर-पारिपत्यदेसेवं शुभचन्द्र-मुनीन्द्रनोर्म्मैसुम् ॥

भीमद्-बल्लालभूपाळकन विनुत-सन्-मंत्रि विप्रान्वयान्-।
 स्तोमोद्यद्-मानु नारायण-पद-कमल-इन्द्र-भृङ्गं यशश्-भी-।
 धार्म साहित्य-विद्याधरनखिल-गुणालंकृतं मान्तन-प्रो-।
 दामं श्री-मल्लनी-बन्दगिकेयनोलविं पालिसुत्तिर्पनोळिपं ॥
 कडिवं मारान्तरं बेगदे करगिसुवं शत्रु-सैन्यङ्गळं सङ्-।
 गडकेल्लं घैर्य-वर्ण-क्रम...णसेये तां तोरुवं कीर्त्तियल्दम् ।
 कडु-चेत्वप्पन्तिरब्धोत्तुनखिल-दिशा-दन्ति-दत्तङ्गळोळ् नोळ्-।
 पडे सत्तं कम्मट्कत्तोडेयेनेनिसुवं मल्ल-वण्णाधिनाथम् ॥

आ-कम्मट्द श्री-मल्लन प्रधाननेनिप ॥

वृ ॥ अलरे विरोचि-सन्तमसमळिकरेयाटविकोद्ध-कैरवम् ।

सल्ले पोडल्देय्दे सज्जन-विसं प्रविका।समनेय्दे रागमग्-।

गळिसिरे मित्र-चक्र-चयदोळ् बेळेंयं नुत-विश्व-धात्रियम् ।

सललित-मूर्त्ति कीर्त्ति-निधि सूर्य्य-चमूपति सूर्य्यनन्ददिम् ॥

अन्तु पोगळ्ते-वडेदधिकारि मल्लि-सेट्टियं द्विज-वंश-कमळ-सूर्य्य-नप्प सूर्य्य-
 देवतुं यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यान-धारण-मौनानुष्ठान-वप-समाधि-शील-सम्पन्नरप्प
 नागरखण्डदय्यग्रहारदशेष-महाजनङ्गळुं सकळ-साहित्य-विद्या - विलासिनी - विलास-
 मूर्त्तियेनिप केरेयूर यूरडेयं शम्भुदेवतुं स्वच्छाच्छ-गाङ्गाम्भ-सदृश-कीर्त्ति-वक्त्रभ-
 नेनिप कच्छावियूरडेय विट्टियरसतुं वणञ्जु-वर्म-वार्द्धि-वर्द्धन-चन्द्र-लेखेयेनिप
 त्रिभुवनमल्ल-सेट्टिकब्बेयुं तदपत्यं शौर्य्य-निधाननप्प शङ्कर-सेट्टि, सकळ-
 याचक-जन-मनोमिलषित - फळ-प्रदामर-कुल - सदृक्षनप्य शङ्कर-सामन्वानन्दन-
 नन्दनं भव्य - जन - बान्धवनप्प नाळ् - प्रभु सामन्त - सुहृद्व्यतुं रत्नत्रया-
 मरण-भूषितनप्य बेगूर माळ गौडतुं देव-द्विज-गुरु भक्तनप्प कण्णसोगेय
 परकाटि-गौडतुं निखिल-गुणालंकृतनप्प मळवल्लि-परह-गौडतुं विनेय-
 गुण-निधाननप्पबल्लूर सोम-गौडनुमिन्तिनिब्रं मुख्यवागि नागर-खण्डवेपत्तर
 समस्त प्रभु-गावुण्डुगळेकस्समिद्धुं . सक-वर्ष ११२५ सल्ले रुधिरोग्गारि-
 संवत्सरदुत्तरायण - संक्रमण - निमित्तवागि बन्दगिकेय भी - शान्ति

नाथ-देव - रघुविकाष्ट - विचार्वने - पूषा - विधानोचित-त्रयकं अस्त्रिय पात्र-
पावुळकं खण्ड-स्फुटित-बीर्णोद्धारकं चालुर्वर्णदाहार-दानकमेन्दस्त्रिय तीर्थाचार्य
शुभचन्द्र-पण्डित-देवर कालं कर्त्तुं सन्वाबाध-परिहारवागि तम्पनितरं चारा-
पूर्वकं माडि बिट्ट दति येन्तेददे दण्डियहस्त्रियुं बावळियुं गङ्गळळियुं स्थळवृत्तियुं
ऊरुलु नन्दादीविगेगे नालकु-पणमं मुद्देय-सावन्तं चिक्क-मागुण्डिय वडगणोणियि
पडुवळ ५०० मरद अडके-दोयमुं इन्तिनितुमं बिट्टर धम्मदिं प्रतिपाळिमुवन्तप्पवर
गङ्गेय तडियलु सहस्र-कविलेयं नवरत्न-भूषणं माडि सहस्र-ब्राह्मणरिगे दानं माडिद
फल-वीधम्मकळिवनन्नयमं मनडोळ चिन्तिसिदनावोनातननिदु-कविलेयुमननिदु-
ब्राह्मणरुमं गङ्गेय तडियोळळिड पाप ॥ (हमेशाके अन्तिम श्लोक) ।

[विख्यात रेच-चमूपति; उसके बाद यदुवक्त्रभराज्यभूषण, बान्धव-पुराधिप
कडवे बोप्पने शान्ति-बिन तीर्थ (बन्दलिके) की उन्नति की ।]

बिनशासन की प्रशंसा ।

कुन्तल-देश नव नन्दो, गुप्त-कुल मौर्य राजाओं; इसके बाद पराक्रमी रहो;
इसके बाद चालुक्यो; तदनु कलचूरि-वंशके राजा बिजल द्वारा शासन किया
गया । तत्पश्चात् इस देशपर राजा बल्लालने शासन किया ।

उसके वंशका अवतार (परम्परा) :—होयसल राजाओंका उदय और
बल्लाल तककी वंशावली ही वर्णित है जो पिल्लले कई शिलालेखोंमें जा
चुकी है ।

पृथ्वी रूपी स्त्रीका बनवसे-नाड् चेहरा था, जिसमें नागर खण्ड तिलकके
समान मालूम पड़ता था । इसके कुञ्जों, बगीचों और तालाबों इत्यादिका वर्णन ।
नागरखण्डमें उत्तम बान्धव-नगर चमक रहा था । इसके आकर्षणोंका वर्णन ।
इसके शासक कदम्ब-वंशके थे; वे सोम-राजाके पुत्र बोध-देव थे । उनका

१. यह सब शासनके पूरे लिखे जानेके बाद जोड़ा गया मालूम पड़ता है ।

ब्रह्मभूपालक नामका लड़का था। कवडेय बोध-सेट्टिने उस बन्दिषिकेके शान्तिनाथ-देवके लिये एक मण्डप खड़ा किया और विधिपूर्वक यह उसे समर्पण कर दिया।

नागरखण्डमें, हरके मुखोंके समान, पाँच अग्रहार थे, जिनसे ब्राह्मणोंके वेद आदि विद्याओंके पढ़ने-पढ़ानेकी ध्वनि निकलती थी। वहाँके ब्राह्मणोंकी प्रशंसा। केरेयूर शम्भु-देवकी समस्त विद्याओंमें अद्वितीय निपुणता। सेट्टिकव्वेके पुत्र बनञ्जु-धर्म-निवासी संकर-सेट्टिकी; सामन्त-मुद्दकी, जिसके पिता शंकर, मां बक्कव्वे मित्र बिन, गुरु भानुकीर्त्ति-व्रतिपति थे, शासक बल्लाल, पत्नी लच्चाम्बिके, पुत्रियां बक्कव्वे और मल्लव्वे, पुत्र बल्लाल-देव था; कच्छवियूरके मालिक बिट्टि-यरसकी; बेगूरके प्रभु-माळ-गौडकी; कण्णलोगेके एरकाटि-गौडकी; मळवळ्ळिके एरह-गौडकी; तथा अन्तूरके सोम-गौडकी प्रशंसामें श्लोक।

मुनिचन्द्र-सिद्धान्त-देवके प्रिय शिष्य ललित कीर्त्ति-सिद्धान्ती थे। उनके पुत्र, काणूर-गण समुद्रके चन्द्रमा, शुभचन्द्र-पण्डित-देव थे। उन्होंने शान्तिनाथ-तीर्थ (बन्दलिके) का प्रबन्ध अपने हाथमें लिया।

राजा बल्लालका प्रसिद्ध मंत्री मल्ल या कम्मट मल्ल-दण्डाधिनाथ था। उसने बन्दलिकेकी बहुत प्रेमके साथ रक्षा की थी। उसके पराक्रमकी प्रशंसा। उसका मंत्री सूर्य-चमूपति था।

नागरखण्ड सत्तरके इन सब मुख्य-मुख्य व्यक्तियोंने, प्रजाने और किसानोंने (उक्त भित्तिको) तीर्थके पुरोहित शुभचन्द्र-पण्डित-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक (उक्त) दान दिया।]

[EC VII Shikarpur tl No 225]

Ms. No. 1125 19th. 1203

४४९

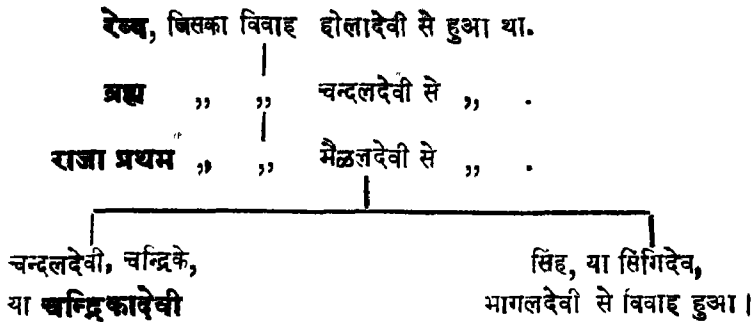
कलहोली;—कथन

[शक ११२७=१२०४ ई०]

लेख-परिचय

यह लेख कलहोलीके एक पुराने मन्दिर—जो कि अब एक लिङ्ग-मन्दिरके रूपमें, जैसा कि इस भागके सभी जैन मन्दिरोंका हुआ है, परिवर्तित है—के पाषाण-तलसे लिया हुआ है। कलहोली बेलगाँव जिलेके गोकाक तालुकामें है। इसका पुराना नाम **कलपोडे** है। हम देखते हैं कि स्ट्रोंकी राजधानी इस समय **वेणुग्राम**, आधुनिक **बेलगाँव** थी। सबसे पहले राजा **सेन**का वर्णन आया है, जो शि० ले० नं० १३० में द्वितीय क्रमपर वर्णित है। इन दोनोंके इस ऐक्यका कथन आगेके किसी भी अन्य आधुनिक शिलालेखमें नहीं दिया गया है, लेकिन कालोंकी तुलना इस निष्कर्ष पर पहुँचाती है। दूसरे, शि० ले० नं० १३० की ३८वीं पंक्तिका 'बृहद्गण्ड' विशेषण इस शिलालेखकी चतुर्थ पंक्तिमें सेनके लिये दिये गये प्रथम विशेषणसे मिलता-जुलता है। इसमें सेनके बादसे तीसरी पीढ़ी तकका उल्लेख है। और अन्तमें कुछ दान आते हैं, जो शक ११२७ (ई० १२०५, ६) में, कार्तवीर्य चतुर्थकी आज्ञासे **सिन्दन-कलपोडे**में बने हुए जैनमन्दिरकी ओरसे किये गये थे। यह गाँव उन गाँवोंमें से एक था जो **कुरुम्बेट्ट** 'कम्पण' के नामसे विख्यात थे। यह कुरुम्बेट्ट कुण्डी-तीन हजार जिलेमें शामिल था। लेखसे पता चलता है कि कार्तवीर्य चतुर्थको अपने शासनमें अपने छोटे भाई 'युवराज' **मल्लिकार्जुन**से सहायता मिलती थी। प्रसंगवश लेखमें एक यादव सरदारोंके **कुटुम्ब**का भी उल्लेख आता है जो उस समय **हगरट्टणे** जिले पर शासन कर रहे थे। आजकल यह किस जिले

या स्थानका नाम है, इसका पता नहीं चलता। यादव कुटुम्बकी वंशावली यों दी है:—



|

राजा द्वि०, चन्दलदेवी, और लक्ष्मीदेवीसे विवाह.

राजा प्रथमकी पुत्री **चन्द्रिकादेवी** रट्ट सरदार लक्ष्मण या लक्ष्मीदेव प्रथमकी पत्नी हुई, तथा कार्त्तवीर्य चतुर्थ और मल्लिकार्जुनकी माता हुई। उल्लेखित दान-प्रदत्त जैनमन्दिरको राज द्वितीयने बनवाया था। मन्दिरके गुरु मूल कुन्दकुन्दा-म्नायकी इनलोगे शाखाके थे; उनमेंसे तीनके नाम यहां दिये हैं:—मलघारी, उनके शिष्य सैद्धान्तिकनेमिचन्द्र, उनके शिष्य शुभचन्द्र थे।

ओं नमः सिद्धेभ्यः [॥] श्रीमत्परमगम्भीर स्याद्वादामोघलाञ्छनं [॥] जीयात्रै (व्रै) लोक्यनाथस्य शासनं विनशासनं [॥] श्री जन्मभूमि वरसुरभूजं क्षीरा-म्बुराशि (शी) यन्ते गभीरं श्री जैन शासनं सले राक्षसुतिकर्मठ राजपूजित-महिमं ॥ विवृणोति विपुलामृत गोकुलदिदं सकलस्य संपददि निर्मलवर्णं दिन्दे विधु मण्डितरे कूण्डिमण्डलं कण्णोल्लिङ्गं ॥ अदनाब्धं सेनं साइस भीमसेनन सकृद्विद्या विवृणोति ना ज्ञानरि प्रियवक्त्रं प्रयुसभं तीर्त्तां (वां) सुतेक्ष्मप्रभं नाना-दानि कीर्तगने **कार्त्तवीर्य**नखिलोर्व्वीचक्रमं चक्र्यातरे दोर्दण्डदोळान्तनच्युतगुणं श्रीरट्टनारायणं मेरुनभस्तलं **बल्ल**धि मु (म) त्पतियं नति सम्महत्वं (चव) गम्भीरगुणकं मन्त्रिपुत्रेन्द मराट्टियनिकं मेट्टिषा नीरदमार्गं पुट्टिडु वारिचियं

मिमेदाण्ट कीर्तिया शारभण्यो बंणिपुदु प्रंपिन लंपिने काचंवीर्यन अजिततेबनिचित-
यशं परितर्जितराष्ट्रकंठकं निर्जितदुर्जयारिनिवहं कमळाधिपन्तते दानि नागाज्जुननन्ते
रावणविदारण कारण्यरामनन्ते मिहज्जुननन्ते रंषिपनिष्ठेश शिखामणि मल्लिका-
जुनं ॥ श्रीचक्रवर्चित्तनुजे कळाचतुरे विशाललोळलोचने येनिस्त्रिदं चक्षुदेवि
सतीत्वलोचने येने कार्चवीर्यवधू पेसबंडदेळ् ॥ स्वस्ति समधिगत पंच महाशब्द
महामण्डलेश्वरं **सत्तनूपुर**वराधि ईश्वरं त्रिवळीर्यनिग्नोषणं रटकुळभूषणं
सिन्दूरलाञ्छनं सफळीकृतविद्वज्जनाभिवाञ्छनं वीरकषाकर्णनञातरोमांचं साहित्य-
विद्याविरिचं सुवर्णगरुडध्वजं सहजमकरध्वजं संग्राम कौतूहलीकृतगदादण्डं
कदनप्रचंडं सिन्धुरारातिबन्धुरकबन्धनर्तनसूत्रधारं वैरिमण्डलिकराण्डतलप्रहारं परवधू-
नंदनं विभवसंक्रन्दनं साहसोत्तुंगं समाराधितमहासिंग निदु मोदलादनेकनामा-
वळिविराजितं श्री **कार्तवीर्यदेवं** निजानुज युवराज वीर **मल्लिकाज्जुनदेवं**
बेरसु **वेणुग्राम** स्कन्धावारदोळ् सुखदिं साम्राज्यलक्ष्मीयननुभविसुत्तमिरे ॥ श्रीकवि
विबुध श्रीरत्नाकळितं बळघियंददि यदुकुल लक्ष्मीकान्तं श्रितकमळानीकं हगरट्यो
नाडु जगदोळ्योसेगुं ॥ आ नाडनाळ्वं यदुवंशं श्रित राजहंस मेसेदिककुं व्योमदन्त-
स्त्रियभ्युदयं बेत्त करात्तमृतनुस्तेजं कीर्तिभाजं समुद्यदिल्लेज्यं सुमनस्प्रपूज्यनमळ-
स्वान्तं जितध्वान्तन्तेपिदनादं कमलाधिप प्रभुतेयि श्रीरेव्वनुर्वीश्वरं ॥ आ रेव्व-
प्रभुविगमग्रधु हीलादेविगं स्वान्वयोद्धारं धीरनुदारनुद्गुणसारं शुभदंभोविगम्भीरं
वाग्वनितास्नन स्थगितहारं सौख्यसंपादककाचारं ब्रह्मनवोलतक्यमहिमं ब्रह्माङ्गं
पुट्टिदं ॥ बळघिगभीरभृतभूमळय ब्रह्मणं मुचितबेलोपम **चन्द्रलक्ष्मी**गमागेदं मण्डल-
नाथं राजनन्ददिं राजरसं । पुदिदिरे रागदिं सकळमण्डलमप्रतिमप्रसाद संपदमखिळा-
शेषनेळये पुरिप्ति जैनमतामृताण्णवं पडेदभिबृद्धियं तळेये तब पेसर्गुनरूप मागेकभ्यु-
दयमनेयिन्दं विमळवृत्त विराजित राजभूभुजं ॥ क्षितिपतिराजराजन मनोरमे
मैल्ललक्ष्मि ता यशस्वति नुतियोग्य भाम्यवति दानदयावति सत्कळासरस्वति य-
भिरूप रूपमळभावति जैनपदाम्बुजार्चनावति पुरुपुण्य पुत्रवति रंजिसुवळ् सुविद्या-
ळ शीळदिं ॥ कुलविस्तारक राज राज बिभुगं भीरोहिणी मूर्ति **मैल्ललक्ष्मिदेवी** गमा-
स्मजर्पतिहित श्री **चन्द्रिकादेवी** निर्मळवक्त्रचन्द्रिकेयन्ते सिंहमहिर्पं साम्यम्बो-

लादम्प्रीहीतळपूज्यर् विबुधेज्यरुज्जळगुण श्रीकान्त रात्यन्तिकं ॥ अनुपमशौर्यशाली
यदुवंश शिरोमणि राबराजनन्दने विबुधाभिर्नन्दने घटोदरसुस्थित सप्यर्दप्यं भुजने
पतिचिन्तरचने बर्गनुत जैनमतामृताभिवर्धनकरचारुचंद्रिके महासति चन्द्रिके
धन्ये धात्रियोळ् ॥ श्रीपति लक्ष्मीदेवमहीवल्लभवल्लभे कार्त्तवीर्ये बात्रीपति मल्लि-
कार्जुन महाश्वर मातृ महासतीत्व सीतोपमे जैनपूजनसुरेन्द्रवधूपमे रूपकेतु-
कान्तोपमे रंजिपळ् नेगळ्द खन्दळदेवि समस्तधात्रियोळ् ।

स्फुरितानर्घ्यमणि-प्रणूतकटित प्रख्यातदानेन्द्र भूमि -।

रहोर्वीतिळधारितुंगशिखर श्रीमदमुखादण्डमं-॥

दरदिं वैरि बळाग्निधयं मयियिसुत्तुद्यजय श्री वधू -।

वरनादं यदुवंशमाळतिळकं सिंहावनीपाळकं ॥

सबळं गोष्ठु समग्रसिंहमहिपं मेलपातिसल्पा जिमं ।

सबळं वैरिबलं जवंगे कबळं बेताळजावकके कोट्ट् ॥

पिरि ओणि बळारिगित्त बडिनं हादिई हईंगे नेदुई ।

मृककेत्तिदबुत्तियेदोड हितम्मेव्योलि महाम्परे ॥

जनपति सिंगिदेवन मनःप्रिये भागलदेवी भाग्यमेदिनि गुणयूथनाथ
मुनिदान विनोदिनि संभिताक्षिमेदिनि विबुधप्रमोदिनि कळागममेदिनी
नित्यसत्यवादिनि दुरितापनोदिनि पतिव्रते पूजितरूपे रंजिपळ् ॥ भोगपुरन्दर-
प्रतिम सिंहामहीपतिगं बिनाचर्चनोद्योग सचेचरित्रवति भागलदेवीगनाद
नात्मजं रागसमागमप्रद सुमूर्ति जयंत नतिप्रसिद्ध जैनागमवार्द्धिवर्धनकळा-
निधि राबराजं समजसं ॥ जिनपूजाविबुधाधिपं विपुळतेजं प्राप्तचर्मप्रभावनाय पुण्य-
जनोत्सवं गुणगणाभोरासि वैरीप्रभंजननर्वाचनदं महाश्वरनेनिष्पी पेपिनि लोक-
पाळनिळं राचिरसं जगद्वल्लभं पाळिप्पु देनोप्पुदे । क्षिति सले कृत्तुं कीर्तिपदु मूर्ति
मनोभक्ताजनं समर्पितबिनराजनं यदुकुळामृत वारिचिराजनं समुज्जतिगिरिराजनं
गुणविराजितनूबसिंहभूषति सुतराजनं विषमवाचि मुशिच्छणवत्सराजनं ॥ पिंगदवार्थ-
शौर्षमसुहृन्सलोक जगद्वल्लभं राबराजे जगत्प्रमोदजनकाम्युदयं यदुवंश संभवोत्तुंग-
गुणाच्युतंगे विजयप्रियवृत्तिनृपाळ सिंह जातंगे पराक्रम पोसते बणिगुबन्दु समस्त-

वात्रियोळ् ॥ श्रुतमृगपि मांसगणिकापरदारखळप्रसंग चौर्याशुद्धमल्लमेवखगमुद्र-
निषिद्ध विनोदनोद्यतधर्मूतळ नाथरप्परवु माण्डु बिनस्तवनार्च्यनाम होख्यातमुनीन्द्र-
दानरतप्परे राजनृपाळ निनबोळ् ॥ सति चन्द्रदेवि पतिव्रते लक्ष्मीदेवि-
मेम्बरीवैरू मवनीपति राजनृपन राणियरतिशयगुणयुतयरेनिसि नेगळ्दज्जंगदोळ् ॥
स्वस्ति समस्तप्रशस्ति सहित श्रीमन्महामण्डलेश्वरं कुपणपुरवरावीश्वरं यदुकु-
ळावरद्युमणि बुधबनचिन्तामणि निजभुजासिनिर्द्विछितरिपुनृपकंठकदळं नरलोक-
जगदळं अनवरत बिनसवनसुरभि मलिलपवित्रीकृतोत्तमाङ्गं धर्मकथाप्रसङ्गं
बिनसमयमुषाण्वसुधाकरं सम्यक्त्वरत्नाकरनेनिसि नेगळ्द क्षत्रियमस्तकामर-
णराजनृपं विभुसिंहसूनरत्नं त्रयमूर्तिं निर्मलिन धर्ममेतुत्तदनोल्हु पेळ्ववो-
ल् घात्रिगे मिक्क कल्पोळेयोळेत्तिसिदं जिनशासतिगेहमं नेत्रविचित्रमं महिते
(ति) रीट मनप्रतिकूटमं ॥ अन्तनन्तसुख ीकान्त (तं) शान्तिनाथ
समुत्तुंग भृत्य निधानमं कनककळश मकरतोरण मानस्तंभविराजमाननं राजरसं
सिदनकल्पोळेयल्लि माडिसि तन्न गुरुगळुं जगद्गुरुगळुवोनिसिद शुभचन्द्रभट्टारक-
देवर्गो कोटनवर गुरुकुळक्रममेंतेने ॥ ज्यनिळय कुण्डकुन्दान्वय विभ्रुत मूलसंघदेशि
पूर्णोदय पुस्तक गच्छदोळतिशयमेने हनसोगेयेम्ब बळि ब्योगोळिकुं । गुरुकुळतिळक-
प्पविन चरितर्मुणभरितरल्लि नेगळ्दव्वीजितस्मृ मल्लधारि मुनीन्द्रचरणांभुजगत-
नरेन्द्ररपगतन्द्र ॥ पदनखसंकुळं विषमबाणविषाहिमहाविषापहारद मणि नाम-
दक्करमे मोहपटुग्रहभेदिमंत्रमंगद भटभाजमंजवरुबाहरणौषधमेन्दोडेननेम्बुदो मळ-
धारि मुनिपोत्तम प्रभावतपःप्रभावमं ॥ शान्तरसावतार मळधारिमुनीश्वरप्रशिष्य
सैद्धान्तिक नेमिचन्द्रगुरुधर्मरथ श्रुतवाङ्मि नेमिचन्द्रं तममं निवारिप कळागुणभद्र-
नमानुषामृतत्वान्त समन्तभद्रनेने बणिसरारकळंकमृतनं । आ सैद्धान्तिक नेमिचन्द्र-
यतिवर्वाचार्य शिष्यगुणावास श्रीशुभचन्द्रभासुर यशोमहाराक वीरवाघात्रि संपू-
जित शीलधारकरुदग्रानंगसंहारकर् श्रीसद्दर्शन बोधमृत्त(धामृत पदवीविस्तार निस्तार-
कर ॥ शुभचन्द्रं स्वगुणोल्लसत्कुवळयं श्रीचन्द्रिकाशुद्धवृत्तिभवप्रभावदि दिग्गङ्गाश्रीवृद्धिं
मण्डळप्रसूतपूजितपादनुषळ गुणाढ्यं शान्तरूपं कळाविभवत्युन्नतभुत्तनभ्युदयसुखं
माळ्पदेनोपदे ॥ मारमदापहारिपरमोग्रतपश्शुभचन्द्रदेव भट्टारकशिष्यरी ललित-

कोटि सभुजतनामवेय भट्टारकरिन्दु सल्ललित कीर्तिगळन्वित शान्तमार्तिगळ् सार-
 चतुष्टयार्त्तचयवेदिगळ् उत्तम सत्यवादिगळ् ॥ स्वस्ति समस्त गुण संपन्नं भव्यप्रसन्नं
 चान्द्रेन्द्रदेविबन्धित पदारबिन्दुं निजालम्भावनाभिस्पण्ड (द)कं श्रीराजनृपाळ सुप्रतिष्ठित
 शान्तिनाथदेवर बसदियाचार्यकं मण्डळाचार्यरुमप्य शुभचन्द्र भट्टारकदेवभौ श्री-
 कार्तवीर्य देवं आ शान्तिनाथदेवरंगभोगवकं रंगभोगकृमा बसादिय खण्डस्फुटित
 बीर्णोद्धारणकमस्तिर्ष्य मुनिबनगळाहाराभयमैषज्यशास्त्रदानकं शकवर्ष ११२७ नेच
 रत्नाक्षिसंबत्सरद् पौष्य शुद्ध बिदिगे शनिबारदन्दुत्तरायणसंक्रमणदक्षि कृष्णिद-
 मूरुसासिरद बळिय कुलबेद्वृगंपणदोळगण सिंदनकलोळेयक्षिय कळगडियर सिन्द-
 गमऊण्ड मुख्यवागि हनीवर्ष भाऊण्डुगल्लेये हन्नेरु तपडिय कुचुम्मेह गोलिदेर-
 डु सहस्र कंब केय्य धारापूर्वकं सर्वसमस्यवागि कोट्टन्त केय्य सीमे [१] ऊरि बडणल्
 कंकणनूर हेदारियि मूडलविलहल्लद मुक्कविनक्षि नैरुय कोणल्नेट्ट कल्लि बडगमुखं
 बिळियबावियि मूडलाग पडुवणसीमे नडियल्लकं भोरडियक्षि वायव्यद कोणल्नेट्ट
 कल्लल्लि मूडमुखं बडगण सीमे नडियलीशान्यद कोणल्नेट्ट कल्लल्लि तैक्मुखं
 पंचवसदिय मान्यदि पडुवळागि मूडणसीमे मडियल् नविलहल्लदल्लि आग्नेयको-
 णल्नेट्ट कल्लि पडुमुखं तैक्णसीमे नविलहल्ल [१] आ बसदियि संमन्यद
 मनेय निवेशनविमोळनुं गेणु [१] बाचेयविडिय राबहस्तदला वसदियि बडगळ्
 राजवीथियि मूडल् वडुवणे क्केय हस्तं नाल्वत्तु सिरिवागिल कल्लि मूडळ्
 पंचवसदिय केरियक्षिगे बडगणेक्केय हस्तविपत्तार आ केरियि पडुवण भागं
 बिडिडु मूडणेक्केय हस्त नाल्वत्तु तैक्णेक्केय हस्त ऐवत्तेरडा मान्य दोळगणंगडि नल्लु
 गाणवोन्दा बसदिय वणवेय निवेशनवम्हु [१] ऊरि पडुवळ् हूदोडद कंबं मूवत्तु
 [११] मत्तमा ऊर सन्तेय माडल् वेडिचे ळगले मुख्यवागि नल्लुपट्टणद सेट्टियरं
 महानाडागि नेरेदिहक्षि आ शान्तिनाथदेवर नित्याभिषेककमष्टविधान्चनेगं
 सव्वंवाधापरिहारवागि बिट्ट एत्तु कत्ते कोण मोदळादवरवत्तु ६० ॥ मत्तुमेळुवरे
 हनोन्दुवरेय समस्त मुंयुरिदण्डं मुख्यवागि नाडुगळ् विट्टायद क्रममेन्तेन्दोडे [१]
 सकळधान्यमाउडु वन्दडं हेरैगोमनं [१] भंडिगे बळ्ळवेरडु [१] हसरकडके औडु
 [१] हेवैगेले नूर [१] होचळकैयत्तु हाडकं सोल्लिगे एण्णे उलेय होरे मारितक्के

ओन्दु कट्टोले[.] किङ्कुलमेनु मारिदहं सट्टुगायं हिडिवत्ति [1] बण्णगे मडिके वन्दु।
 ओबन्मायत मूर्ति तीर्थमहिमाविस्तारि घात्रीस्फुरत् ।
 तेजश्चक्रधरं जगन्नुतयश तन्नन्ददिन्दु रा -॥
 राबिप्पी जिन शान्तिनाथ नवनीनाथप्रणूतोदयं ।
 राबद्धमापतिमीगे बेळप बरवं चन्द्रार्कचारांबरं ॥
 ललितपदार्थाळंकृतिगळिनोसर्व रसंगळिदे बुधरोळ् पुळकावळि सस्यमोगेये
 कविकुलतिलकं शासनमनोल्दु पेळ्दं पार्श्वं ॥

बहुभिन्वसुधा दत्ता राबभिसगरादिभिः [1] यस्य यस्य यदा भूमिह (मिस्त) स्य
 तस्य तदा फलम् ॥ गण्यन्ते पांसवो भूमेर्गण्यन्ते वृष्टिबिन्दवः [1] न रां (रा) ण्यते
 विधात्रापि धर्मसंरक्षणे फलं ॥ स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुधरां [1] षष्टिर्वर्ष
 सहस्राणि विष्टायां जायते कृमिः ॥ सामान्योयं धर्मतेतुष्टपाणां काले काले पालनीयो
 भवद्भिः । सम्बा (व्वी) नेतान्माविनः पार्थिवेन्द्रान्भूयो भूयो याचते रामचन्द्रः ॥
 मद्रंशबाः परमहीपतिवंशबा वा पापादपेतमनसा भुवि भूमिपालाः । ये पालयन्ति
 मम धर्ममिमं समग्रं तेभ्यो मया विरचितां बलिरेष मूर्ध्नि । मंगळमहा भी श्री [1]
 अहंते नमः ।

[JB, X, p. 173-175, a.; p. 220-228, t.;
 p. 229-239, tr. (ins. No. 5).]

४५०

पुरले;—कम्बद—भग्न ।

वर्ष रक्ताब्द [१२०४ ई० (ल. राइस) ।]

[वीर सोमेश्वर मन्दिरमें, किङ्गके आसन-पाषाणपर]

रक्ताक्षि-संवत्सरव भाद्रपद-शुद्ध १३ आ स्वस्ति श्री वीर-बळ्ळाळ-
 देव [.....] समुद्रद नेलेवीडिनलु सुखदि राजवं गेय्युत्तिरे श्रीमल्ल-महा
 प्रधान हिरिय-हेडेव-असवर मारय्यङ्गळ सन्निधानदलु.....दण्णायक
 विषु.....हेम-गालुण्ड हडवळकाळय्य गङ्ग-गालुण्ड त्रप्प-गालुण्ड गायि-गालुण्ड
 माञ्जगालुण्ड लक्क-गालुण्डुगळु वयिचय्य होन्नय्य-मुख्यवाद समस्त-प्रभु-गालुण्डुगळ

तम्मगागि कुन्तलापुरदक्षि सदाचारय्यरप्प नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवरिगे
 नाळ्-प्रभु सावन्त-मारय्यनु विचारिसि काळ-ग्राधुण्ड
 मयण पेम्म दियरं कण्डु तव बरद शीलाशासनवं तोळदु बलात्कारदि
 तम्म भक्तियागे सलुत्त बेणवळिळ-याक्ष कोण्डु नाळ्-प्रभुगळु
 अधिकारि सावन्त-मारय्यनुं मनदारेयागि नेमिचन्द्र-भट्टारकदेवर कालं तोळदु
 घारा-पूर्वकवागि शिला-शासनवं बरेदु बेनबसेय दोडिकेय (महेशाके
 अन्तिम वाक्यावयव तथा श्लोक)

[(उक्त मितिको) जिस समय वीर-बल्लाल-देव दोरसमुद्रके निवासस्थानमें
 था;—प्रधान मंत्री हिरिय-हेडेय-असवरमारय्यकी उपस्थितिमें, तमाम सरदार और
 किसानोंने (बहुत-सोंके नाम दिये हैं), कुन्तलापुरके आचार्य नेमिचन्द्र-भट्टारक-
 देवके लिये;—सावन्त मारय्यने बांच-पड़ताल करके, जबर्दस्ती, उस
 लिखे हुए शिला-शासनको मिटवा दिया और अधिकारी सावन्त-मारय्यके साथ
 मिलकर, नाळ्-प्रभुओंने, नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवके पाद-प्रक्षालन-पूर्वक एक
 शिला-शासन लिखवा करके दिया ।]

[E C, VII, Shimoga tl., No 65.]

४५१

गोगा;—कन्नड

[बिना काळ निर्देशका, पर लगभग १२०५ ई० का]

गोगासे, वीरभद्र मन्दिरके दरवाजेके छाँचेके दोनों ओर]

(बाईं ओर)

माडिसिद् बिनालयमव् एल्लियुमिस्त ऊरेनल् ।

नाडे विराजिसल् बेळगवसिय-नाडोळनून-भक्तियिम् ।

कूडे विभूतियष्ट-विधार्चनेयेम्बिऊ कुन्ददन्तु कोण्ड- ।

आडुतविप्पे निन्दुबेनल्लीचणनन्तिरे भव्यनावव (न) म् ॥

ऊरोळ् तप्पदे बसदियच् ।

ओरन्तिरे माडि बेळगवसिय-नाडम् ।

बारिष्मिगे नेगळ्द ~~कोणक~~ ।

ओरगे माडिदनुदार-नर्तवयीचरसन् ॥

(दावी ओर)

एरेयन देव्यवाऊददु तन्नय देव्यमदाऊदातनोळ् ।

नेरद गुणोन्नतिकेयदु तन्नय मिक-गुणोन्नतिके कण् ।

देरदडदाव धर्मवचिनाथनोळन्तदे तन्न धर्मवेन्द ।

एसकदे मन्त्रियीचणन वल्लभ **सोवल-देवि** भाविपळ् ॥

नगेनगे मोगवम्बुजभम् ।

मिगे मृग-बीक्षणमनीक्षण मिगे मृगघरनम् ।

तेगळे मोख-कान्ति चेल्वम् ।

त्रि-गुणिसिदुदु निन्न रूपु **सोवल-देवि** ॥

[ईचणने बेळगवत्ति-नाड्मं ऐसा। एक बिनालय बनवाया जैसा उस प्रदेशमें और कहीं नहीं था। और इस तरह बेलगवत्ति-नाड्को कोणके समान बना दिया। मंत्री ईचणकी पत्नी सोवल-देवीकी प्रशंसा।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No 317]

४५२

बकलगेरे-संकुत तथा कवच

[सक ११२० = १२०२ ई०]

[**बकलगेरे** (**यगटे परगना**) में, बाण-रत्नाय मन्दिरके बाहरी भागनके एक पाषाण पर]

नमः सिद्धेभ्यः ॥ भद्रमस्तु चिन-शासनाय ।

श्रीमत्-परमगंभीर स्यादादामोवलाळ्छन्म् ।

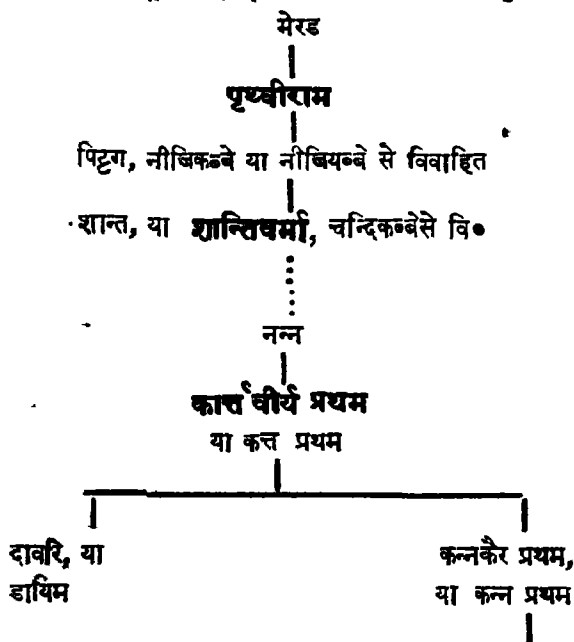
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं चिन-शासनम् ॥

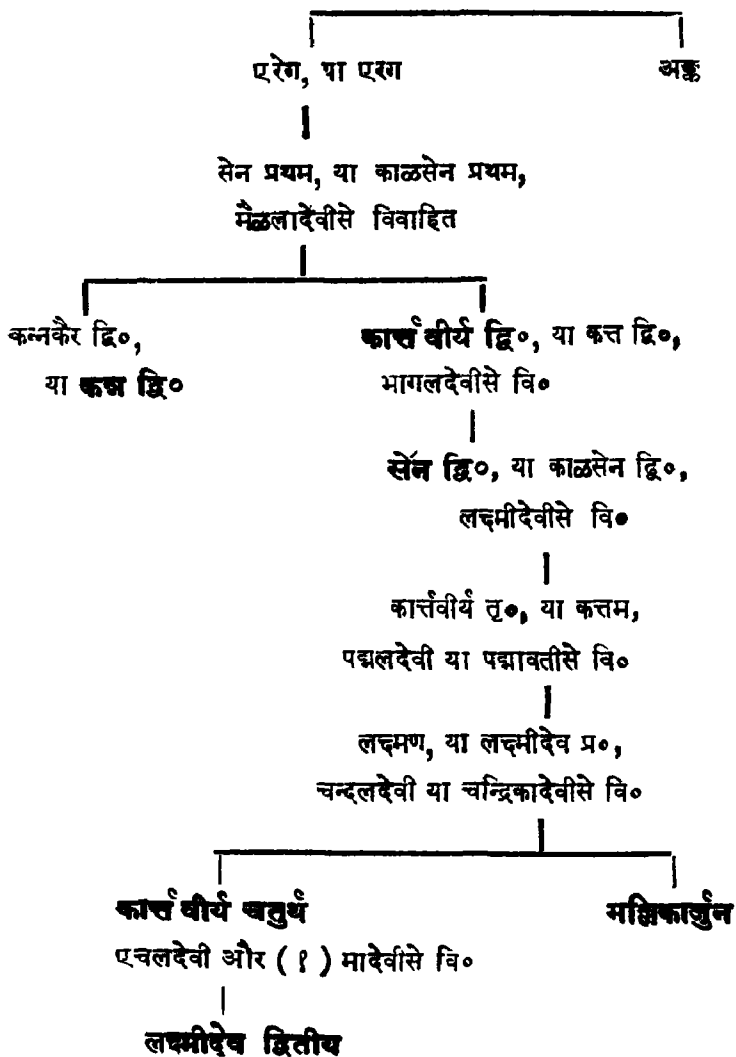
स्वस्ति श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराज परमेश्वर परम-भट्टारक चाळुक्याभरण श्रीमद्-भू-वल्लभ पेम्माडि-राय कल्याणद नेले-वीडिनोळ् ~~सत्तवर्द्ध-साम्राज्य~~-भूमियं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालनं गेय्दु सुख-संकथा-विनोददि राज्यं गेय्ये । स्वस्ति सम्-

द्वितीय शिलालेखके, जिसका ऐतिहासिक भाग पहले ही लेख-जैसा है, दान भी ठीक उसी काल, उसी व्यक्ति, और उसी कार्यके लिये किये गये हैं। पर इस लेखमें दान स्वयं वेणुग्रामकी भूमिके थे। इस लेखमें कार्तवीर्य तृतीयकी पत्नीका नाम **पद्मावती** दिया हुआ है। यही नाम दूसरे कन्नड़ लेखोंमें पद्मल-देवी' आता है।

इन सब ऊपरके शिलालेखों परसे निष्पन्न रट्टोंकी वंशावली इस प्रकार प्रति-फलित होती है:—

[यहां यह ध्यानमें रखना चाहिये कि वंशपरम्परामें सिर्फ एक जगह टूट आती है और वह **शान्तिवर्मा** और **नन्न**के बीचमें है।]





निम्नकोष्ठक से अब तक के आये हुए रट्टोंकी ऐतिहासिक कालावलीका पता एक ही बारके देखने में लग जायगा:—

रट्टका नाम	किसके अधीन	इन शिलालेखोंसे विदित काल
पृथ्वीराम.....	राष्ट्रकूट कृष्णराज जो शक ७६८ तथा शक ८२५ में शासन कर रहा था ।	लगभग शक ८००
शान्तिवर्मा.....	चालुक्य तैलपदेव द्वितीय, शक ८६५ से ९१९.	शक ९०३
कार्तवीर्य प्रथम...	चालुक्य सोमेश्वरदेव प्र०, शक ९६२ ? ९९१ ?
अङ्क.....	चालुक्य सोमेश्वरदेव प्र०	शक ९७१
कन्न द्वितीय.....	शक १००९
कार्तवीर्य वि०...	चालुक्य सोमेश्वर द्वि०, शक ९९१ ? ९९८, और चालुक्य विक्रमादित्य द्वि०, शक ९९८ से १०४९.	शक १०१०
सेन द्वितीय.....	चालुक्य विक्रमादित्य द्वि० का पुत्र जयकर्ण । बादमें स्वतन्त्र ।	लगभग शक १०५०
कार्तवीर्य चतुर्थ, और मल्लिकार्जुन	स्वतन्त्र.....	शक ११२४ और ११२७
अकेला कार्तवीर्य च.	वही.....	शक ११४१
लक्ष्मीदेव द्वितीय...	वही.....	शक ११५१

४५५

गोगा;—कन्नड़—भग्न ।

[काक लुप्त—पर लगभग १२०७ ई०]

[वीरभद्र मन्दिरके पासके एक तीसरे पाषाण पर]

(अग्रभाग घिसा हुआ है)...नेक-ऋषिय ... वैशाख सुद्ध ५
 बृ... अदके सीप्र बडगल्... वण तुम्ब केळगे पडुवळु...
 ...मत्तर १...ब ५० अदके चतुस्तीमे नट्ट कळु...
 ब ५ देवर नन्दा-दिविगेगे गाण १ हत्तेत्तिन बळळु... हुडिके-देरे हडियदे
 ग असगर वोक्ळु १ यिन्तिनितुम सुक्क... विरुपय्यङ्गळु विट दत्ति समस्त-
 प्रजेगळिई कोट्ट घान्यव ग नेल्लु को २ नवणे को २ एळु को १ यिन्तिनितु धम्ममं
 श्रीमतु सोवल-देवियरु ई... कन्या-दान माडि वासुपूज्य-देवर काल कर्त्ति
 घारा-पूर्वक माडिदरु यिन्ती धम्ममं नाग-गौडन्... नय-प्रभेतेयागि प्रतिपाळिसुवरु ॥
 (हमेशाके अन्तिम श्लोक) ।

[(प्रथम अंश नष्ट हो गया है, और उसका अधिकांश मिट गया है)
 विरुपय्यके द्वारा भूमिका दान । वासुपूज्य-देवके पाद प्रक्षालन-पूर्वक सोवल-
 देवीके द्वारा (उक्त) अनेक तरहके घान्यका दान, तथा एक कुमारीकी भेंट ।
 इस पुण्यकी रक्षा नाग-गौड, अपनी आँखकी ज्योतिष्की तरह, करेगा । हमेशाका
 अन्तिम श्लोक ।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No 321 .]

४५६

गोगा; कन्नड़—भग्न ।

[शक ११३० = १२०८ ई०]

[गोगामें, वीरभद्र मन्दिरके पासके पाषाण पर]

ऊपरका भाग मिट गया है)... अञ्जुरिये... बुद्धि

... .. भोच्चण्ड **बीर-बळळाल** अरसंक-कर

... .. वोळगागनेक चट्टरस

आ-दम्पतिगळ पुण्यदिन् ।

आदं मगनधिक ।

... .. ।

... .. विख्यात-सन्धि-विग्रहि **यीच** ॥

अभ्याहारादि-शास्त्र ।

शुभ-चारित्र [ङ्ग] छिन्दं पर-हित-गुणदिन्दं ब्रताचार दिन्दम् ।

शुभ उर्वी-नुतं कीर्त्ति-कान्त- ।

प्रभु-मन्त्रोत्साह-शक्ति-त्रप-युतनधिकं सेव्य ... ।

पति-हिते सीतेयन्ते बिनपार्चर्चकिं तेवक्रियन्ते भर्तृ-सम्-

युते गिरिजातेयन्ते लक्ष्मियन्ते सु- ।

ब्रते नेगळद् तिमम्बे न्विते वाणियन्ते तान् ।

अतिशयस् इद्दळ् अङ्गने **सोबल-देवि** घात्रियोळ् ॥

... .. सति पद्मसंभवनोळद्विजे **चन्द्र** नोळ् ।

परम-सुख-प्रशस्ते सिरि विष्णुविनोळ् नेलसिष्प माल्केयिं ॥

स्थिरतर **सोबल-देवि** मनोनुरागदिं ।

निरुपम-सन्धि-विग्रहि-सिखामाण्योच्चनोळी- ॥

[(लेखका प्रथम अंश नष्ट हो गया है, और उसका अधिकांश मिट गया है) ।

ईच और उसकी पत्नी सोमल-देवीकी प्रशंसा । उनके गुरु-परम्परा (गुरु-कुल) की तारीफ—लेखमें सिर्फ चन्द्रप्रभाचार्यका नाम रह गया है ।

महामण्डलेश्वर मङ्गल-देवरस सन्धि-विग्रही मंत्री एचकी पत्नी सोमल-देवीने, अपने छोटे भाई ईचके मर जाने पर, एक बसदिका निर्माण किया,—भगवान शान्तिनाथकी अष्टविध पूजनके लिये, और मन्दिरकी मरम्मतके लिये, (उक्त मितिको) चन्द्रग्रहणके समय, (उक्त) भूमिका दान किया ।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No 320.]

४५७

सोरब;—संकृत तथा कन्नड ।

—[शक ११३० (?) = १२०८ ई०]—

[सोरबमें, वण्ढावती नदीके पूर्वी किनारे पर अवभूत-मण्डपके स्तम्भपर]

श्रीमत्परमगंभीर स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रेलोक्यनाथस्य शासनं विन-शासनम् ॥

अम्बुवि-कमळाकरदोळ ।

जम्बु-द्वीपाब्जदोन्दु-कर्णिकेयेनिकुम् ।

पोम्बेट्टदरिं तेङ्कलु ।

चेम्बेट्टेसळेनिपुदल्ले **भारत-क्षेत्रम् ॥**

भरत-श्री-भूषणदन्त-।

इरे **कुन्तण-देस** मल्लि नायक-मणियन्त् ।

उरुतर-शोभा-विक्रम-।

करमेने **वनवास-देस**मोळुपं पडेगुम् ॥

तद्देशाद्यनेक-वळनिधि-वळय-वळयित-देशाधिपति ।

यी-वसुधाग्रमं **यदु-कुळङ्गे** सळंगे कुडल्ले कुत्तुं प-।

आवतियं **सुदत्त-मुनिपर्** व्वरिसल् पुलियागि बर्पुदुम् ।

भाविसे नोडि पोय् शळयेनळ मुनिपर् स्तेळैयिन्दे पोय्दु तद्-

देविगे शौर्यमं मेरेदु **पोय्सळ**-नाममनान्तना-नृप ॥

अन्तु सुदत्ताचारियर् **प्यशावती-देवि**यि पदेदित.....रदि तदन्वयदोळनेक-
मुदितोदितमागे राज्य गैद बळिय ॥

उदयिसिदनमृत-वार्षियो ।

ळ उदय-गेय्दमर-भूजमेन्निनेगं चेल्व-।

ओदविरे **बल्लाळ-नृपम् ।**

यदु-कुलदोळु विशद-कीर्त्ति दानाभरणम् ।
 धुर-रङ्गं नृत्य-रङ्गं पर-नृपति-कपाळाळि ताळाळि नन्दज्-।
 चरियकळ् पाडुवर् तद्विजय-रुह-यशं दुन्दुभि-ध्वानमागुन्त ।
 हरे विद्विष्टोवनिपाळक-निकरद रुण्डङ्गळि ताण्डवाडम्-।
 बरमं माळपोळिपनिं नट्टविगनेनिसिदं **बीर-बल्लाळ-भूपम् ॥**
 पगेवर पेण्डर कण्णिन्द ।
 ओगेदञ्जन-पङ्किताम्बुविन्दं वेळक्रम् ।
 मिगुवुदु विचित्रमिन्तिदु ।
 जगदोळु **बल्लाळ भूप**-निज-विशद-यशम् ॥

एने नेगळ्द **बल्लाळदेवं दोरसमुद्रद** नेलेवीडिनोळ् सुख-संकषा-विनोददि
 राज्यं गेय्युत्तमिरे ॥

दोरेयेने **कोळकणि वनवा-**।
से-रोहणाचळद पुरुष-कान्ता-त्रिबुवोत्-।
 कर-रत्नङ्गळ कणयेने ।
 निरन्तरं तोळगि बेळगि राजिसुतिक्कुम् ॥

तद्ग्रामाधिपति ॥
 वनवास-देश-भूषण-।
 नेनिपं गाबुण्ड-मण्डनं-दिक्-कान्ता-।
 स्तन-मण्डल-परिशोभित-।
 घनतर-तेजः-प्रकाश-धुशृणं **मसणम् ॥**

तदपत्य ॥

घु-नदी-प्रोतुङ्ग-रङ्गद-ब्रह्मल-लहरिकान्दोळनोद्भूत-संघा-।
 त-नमेरुचक्षुस्तान्तावलि-वळयित-डिण्डोर-पिण्ड-प्रभा-मण्-।
 डन-पाण्डु-प्रौढ-कीर्त्ति-प्रसर-विसरितोर्ध्वी-नभश्चक्र-दिक्च-।
 क्र-निकायं तानेनिष्पोन्देसकदिनेनसुं **कीर्त्ति-गाबुण्डनादम् ॥**

मनमोल्लुब्धं क्रीडितं मसण-गावुण्डोत्तम-प्रेम-नन-
 दननं वन्दि-जनार्थितार्थ-फलदं प्रत्यक्ष-कल्प-द्रु-नन-
 दननं दुर्जन-दर्प-खण्डनननुब्धी-जात-गावुण्ड-मण-
 डननं कीर्त्तियनिन्दु-कुन्द-हर-हासोद्भासि-सत्-कीर्त्तियम् ॥
 आर्त्तीव दानियं घरे ।
 कीर्त्तिकुमभिमान-मूर्त्तियं धन-तेजस्-
 स्फूर्त्तियनी-प्रभु-मण्डन-
 कीर्त्तियनङ्गभव-मूर्त्तियं प्रियदिन्दम् ॥

तदपत्यम् ॥

सोमं जननयनोत्पल-
 सोमं **मसणं** विरोधि-जन-हृत्-रवषणम् ।
 श्री-महित-**महादेवम्** ।
 प्रेम-महादेवनल्ले रामं **रामम्** ॥

आ-कीर्त्तिगावुण्डनणुगिनळियम् ॥

विततैश्वर्य्यन माधिनाथ-विभवं-राज-प्रियं बाहिनी-
 पति भोगीश्वर-भूषणं नुत-वृषाङ्कं केशव-प्रेम-वि-
 श्रुतनेम्बोळ्पेनसुं विराजिसे **महादेवं** महादेवनेम्-
 व तदीयाङ्कमनन्वितार्थमेनळ्ळर्थ-व्यक्तियं माडिदम् ॥
 सुमनो-भूधर-राजितं विपुळ-शास्त्रं बन्धुर-स्कन्ध-मूर्-
 त्ति महीजात-वरं सु-पत्र-निचय-स्तुत्यं घरा-शेखराङ्-
 धि महोदारि दलेम्ब तन्नेसकदिन्दं भव्य-कल्पावनी-
 जमेनिर्णयं विबुध-स्तुतं विभु-**महादेवं** चमूपोत्तमम् ॥
 ओदवल् कण्णिडे मर्बुं पोगे रवि लोकक्केय्दे कण्णागि तान् ।
 उदयं-गेय्देवोलिन्दु रेचरसनिन्द्वत्वक्के पक्कागे का-
 णदे मुन्दं देसेगेट्ट जैन-जनक्केल्लं लोचनं तानेनल्क् ।

उदयं-गोय्दनिला-तळ-स्तुत-महादेवं चमूपोत्तमम् ॥

कवि-रिपु गुरु गुरु-रिपु भृगु-।

ववरेवरेनल् धरित्रि कवि-गुरु-जनतोद्-।

भवमोदवे मन्त्र-गुणमोप्-।

पुवुदु महादेव-दण्डनाथोत्तमनोळ् ॥

अन्तु कीर्त्ति- गावुण्डं तन्नळिय महादेव-दण्डाधिनाथतुं तदपत्त्यदं बेरसु ॥

सक्कलित-गुण-गुणगणं श्री- ।

वक्कभनभिमान-मूर्त्ति कीर्त्ति-वधू-धम्- ।

मिक्क-विराजित-मल्ली- ।

फुल्लं श्रेष्ठि-प्रतान-मण्डन मल्लम् ॥

एने नेगळ्द मल्लो-सेट्टिग- ।

मनुपम-चरित्र-सीते माचाम्बिकेगम् ।

बनियिसिदं सुकृतं सज्- ।

बनियिसे निब-कुलके नेमनखिळ-ललामम् ॥ •

नेगळ्दर् गुरुगळ् गुणचन्- ।

द्र-गणि-वरम्भूकसंग (घ)-काणूर्-गणदोळ् ।

सोगयिसुव नुन्न-धंशदो- ।

ळेसेवररागे नेमनभिबन-रामन् ॥

परहित-मूर्त्ति भव्य-जन-कळ्प-कुजं विभु नेमि-सेट्टि बिन्-

तरदोळे कूडे जिड्धळिगे-नाड् पडे-नाडे निसिप्प नाळ्गबोळ् ।

परम-बिनेन्द्र गेहमननेकमनुद्धरिसुत्तमित्तबुद्- ।

धरिसिदनुत्तरोत्तरमेनल् निब-कीर्त्ति-लता-वितानमम् ॥

कोड कणि-पुर-त्तद्धिमय मेय्- ।

दोडवेनिसिरे नेमि-सेट्टि विभु माडिसिदम् ।

कडु-गोर्वि कीर्त्ति-लते दाड्- ।

गुडि विडुविने शान्तिनाथ-जिन-मन्दिरमन् ॥

मनमर्हत्-प्रतिकृतिनिम् ।

तनु सु-व्रतदिं धनं जिनेन्द्रालयसञ्- ।

जनन-क्रियेयिन्दति-पा ।

वनमागिरे नेमि-सेटिट नेगळ्दं जगदोळ् ॥

अन्तु नेमि-सेटिट सक-वर्षद [साविरद] नूर मूवतेनेय विभव-संव-
त्सरद जेष्ठ शु १० शुक्रवारदोळ् शान्तिनाथ-देवर प्रतिष्ठेयं माळ्प
कालदोळ् कौर्त्ति-गावुण्डतुं तत्तनूजरुं तर्नाळ्य महादेव-वण्डनापकतुं,
परिवृत मागिरलु देवरष्ट-विघाचर्चनेगं ऋषियराहारदानकं कोट्ट गद्दे कम्म ५०

वरद-ध्री कण्ठ-व्रति- ।

परिकिकदर् शान्ति-[बि] न-ग्रहाचार्यर्गोप्- ।

इरे योग-पट्टिगेयना- ।

दरदिन्दं वज्र-पञ्जरमनिक्कुवोलु ॥

यिदु बोग-वट्टिगेयनान्- ।

तुदु मद्-धम्मन् दलेन्द-संख्यात-गणा- ।

त्युदित-यशर् प्रतिपालिप- ।

रुदात्तदी- शान्तिनाथ-जन-मन्दिरमम् ॥

[जिन शासन की प्रशंसा ।

जम्बूद्वीप, उसमें भरतक्षेत्र, उसमें कुन्तल देश, उसमें बनवास-देश ।

जिस समय उस तथा समुद्र-परिवेष्टित अन्य देशोंका अधिपति यदुकुलके
सल्लको यह मुख्य क्षेत्र देना चाहता था, सुदत्त मुनिपने पद्मावतीको एक चीतेके
रूपमें प्रकट करवाया । पद्मावतीको चीतेके रूपमें देखते ही, उन्होंने सलसे
कहा—‘पोय् सल’ (सल, मारो); जिसपर उसने चीतेको सल (डण्डे से)
मारा और देवी पद्मावतीको उसके साहसका प्रदर्शन कराया, और इससे राजाका
नाम ‘पोय्सल’ पड़ गया ।

इस तरह सुदत्ताचार्यके पोयल्ल राज्यकी नीवं गेरनेके बाद उस वंशमें बहुत-से राजा क्रमशः हुए। जिनके बाद राजा बल्लाळ उत्पन्न हुआ; उसकी कीर्त्तिकी प्रशंसा।

बिस समय बल्लाळ-देव दोरसमुद्रके निवास स्थानमें था और सुखसे राज्य कर रहा था:—

कोडकणि क्षेत्रका वर्णन। उसका अधिपति मसन था। पुत्र, (प्रशंसा सहित), कीर्त्ति-गावुण्ड था। उसके पुत्र सोम, मसन, महादेव और राम थे। उसका दामाद महादेव-दण्डनाथ था; (उसकी प्रशंसाएँ)।

मल्ल-सेट्टि और माचाविकेसे नेम उत्पन्न हुआ था, जिसके गुरु मूलसंघ तथा काणर-गण के गुणचन्द्र थे। नुन्न-वंशके नेमि-सेट्टिने जिद्धळिगे-नाड् तथा एडे-नाड् में कई जिनेन्द्र-मठ बनवाये थे। कोडकणिमें उसने शान्तिनाथ-जिनालय बनवाया था।

इस प्रकार नेमि-सेट्टिने (उक्त मिति को^१) शान्तिनाथ-देवकी प्रतिष्ठाके समय, कीर्त्ति-गावुण्ड, उसके पुत्र तथा दामाद महादेव-दण्डनाथकेसे परिवेष्टित होकर ५० दण्ड प्रमाण धान्य-क्षेत्र भगवानकी अष्टविध पूजाके लिए तथा ऋषियोंके आहारके लिये दानमें दिया।

और श्रीकण्ठ-व्रतिपने शान्ति-जिन मन्दिरके पुजारीको एक योग्य स्थान दिया।

[EC, VIII, Sorab, tl., No. 28]

१—‘शक-वर्षदत्त-मूलतेनेय,’ इसमें हजारकी संख्या सुस है।

४५८

अनवेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़ भग्न ।

वर्ष प्रज्ञापति [१२११ ई० (ल० राहस) ।]

[अनवेरी (होळखूरं परगना) में रंगप्पाके खेतमें पड़े हुए पाषाणपर]

स्वस्ति श्रोमतु ... यणन्दि-भट्टारक-देवक ... अर्हन्त-बोवि-सेट्टि श्री-मूलसंघ-
सुर ... गण मार-सेट्टिय मग बिट्टि-सेट्टि धर्मवं ... माडिसिद ... प्रज्ञा-
पति-संवत्सरद चैत्र-शुद्ध १० सोमवार श्रोमतु होयसण-वीर-बल्लाल-देव
पृथ्वी-राज्यं गेयुत्तिरलु कळु ... तिप्पयङ्गे ... २० कम्ब केय्य ... पूर्वकं
माडि भूमि ...

... लाञ्छनम् ।

बीयात् त्रैलोक्य-नाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

(अन्तिम श्लोक)

[कुछ सेट्टि लोगोंने (जिनके नाम दिये हैं), (उक्त मितिको), ...
यनन्दि-भट्टारक-देवको, जब कि होयसण वीर-बल्लाल-देव दुनियाँपर शासन कर रहे
थे, दान किया । जिन शासनकी प्रशंसा । हमेशाके अन्तिम श्लोक ।]

[EC, VII, Shimoga tl., No103.]

४५९

बन्दलिके-संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न ।

वर्ष श्रीमुख [१२१३ ई० (ल० राहस) ।]

[बन्दलिके में, झान्नीरवर बस्तिके उत्तरकी ओरके द्वितीय पाषाणपर]

श्री-मूलसंघ-बलधौ समुदेत्य नित्यम्
क्राणूर्गणोज्ज्वल-सुधाम्भसि सिन्निणीक- ।

गच्छाच्छके ललितकीर्त्ति-मुनेर्विनेयः

आशाम्बर-श्रियमभाच्छुभचन्द्र-देवः ॥

वर्ष-श्रीमुख-मास-चैत्र-सित-पक्षा-चैः-चतुर्थ्या-दिने

वारे चान्द्र [...] महति नक्षत्रेऽरिवनी-संशिके ।

दैने ज्योतिषि कृत्तिकः ... परि ... सौभाग्य-योगे वणिग्-

नामाद्योत्करणे स्व ... य शुभचन्द्राख्य-व्रती योगतः ॥

सन्यस्य सर्व्व-सङ्गानि पठन् पञ्च-पदानि च ।

समाहितो निर्व्वृते शुभचन्द्र-व्रतीश्वरः ॥

भरताधीश्वरनिन्दमन्द-शुभचन्द्राभिख्यनिन्देन्दु भा- ।

सुर-जैन-व्रतिनाथनप्य विदितानन्दाभिधाचार्य्य ... ।

... ... शुभचन्द्र-देव-मुनियिन्द ... आदुदत्यूजितम् ।

सुर-राज्योजितवप्य बगत्पावनम् ॥

बन्दणिके-मठाधिपति-शान्ति-जिनावसथाग्रदोळ जगम् ।

ब मण्टपमनोप्पिरे मासिसि तत्र कीर्त्ति-या- ।

नन्द ... नाडे भू-भुवन-मण्टपडोळ् ।

सन्द समाधियन्द ना शुभचन्द्र-संयुतम् ॥ श्री

[श्री-मूलसंघ, क्राणूर-गण तथा तिन्त्रिणीक गच्छके, ललितकीर्त्ति-मुनिके आभाकारी, शुभचन्द्र-देव थे । (उक्त मितिको) वह स्वर्ग गये । 'सन्यसन' (समाधि या सल्लेखना) में सब कुछ त-ागकर, पाँच शब्दों (परमेष्ठियोंके वाचक) को उच्चारण करते हुए, उनका मरण होगया । भरतेश्वरसे लेकर बन्दणिकेके मठाधिपतिके लिये शान्ति बसदिके सामने एक मण्डप खड़ा किया गया था ।

[EC, VII, Shikarpur tl., No 226 .]

४६८

दानसाले;—संस्कृत तथा कन्नड-अंग ।

११८० ?

—[... .. = कगभग १२२० ई०]

[दानसालेमें, उत्तरकी ओर, बस्तिके पासके एक समाधि-पाषाणपर] .

श्रीमत्परमगम्भीरयाद्वामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

नमो अरिहन्ताण ॥ स्वस्ति श्रीमत्तु शक वर्ष ११४ ... नेय सार्वधारि-
 संवत्सरद कात्तिक-सुख १० सोमवारदन्दु श्रीमन्महामण्डलेश्वरं कलिगणं-
 कुस मण्डल-महीपालन सर्वाधिकारि-पद्मप्रभ-देवर गुडु वैजण-सेनबोधन
 पुत्र बयल-सेनबोधन तम्म बल्लिग-सेनबोधनु निजायु सानमनषिदु ॥
 पोरैदा अगे पर-मण्डलद महीपालारभिप्राय (२ पंक्तियां नष्ट हो
 गई हैं) सुखदि वैबण-सेनबोव ॥ तनुजातं कादम्बलिंग यिन्ती
 सहितं मन्त्रि दियकोगेद

[जिन शासनकी प्रशंसा ।

स्वस्ति । (उक्त मितिको), बल्लिग-सेनबोव,—जो वैबण-सेनबोवके पुत्र
 बयल-सेनबोवका छोटा भाई और महामण्डलेश्वर मण्डल-महीपालका सर्वाधिकारी
 पद्मप्रभ-देवका गृहस्थ-शिष्य था,—अपना अन्त समीप जानकर,
 कादम्बलिंगमें स्वर्गको गया ।

[EC, VIII, Tithahalli tl., No. 191.]

४६९

पुरले;—कन्नड ।

—वर्ष विजय [१२२० ई० ? (ल. राष्ट्र) ।]

[पुरलेमें, बस-स्टेटिके सेतके स्तम्भपर]

पूर्व-मुख

भय-संवत्सर-पुण्यद् । बहुलद् बारसिय कुजन बारदोळ् सद् ।

विनय-निधि बालचन्द्र । सु-समाधियं मुडिपि नाकमेयिदनीगळ् ॥

अतिथिगम् ... । प्रतिभा-प्रागल्भ्य मनु-मुनिग् ... ।

... .. रत-वाडिगळ दानम- । वतिशयमी-बालचन्द्रनुळ्नेवरं ॥

ळले बुध-समिति सिश्टर । बळगं मेल्लमल्लने मरुगे दान-विनोदम् ।

प्रळल-प्रक्षोभदबोल् । कळि श्री-बालचन्द्रनभिनव-चन्द्रम् ॥

पश्चिम मुख

मनमं निपमिसलरियर् । तनुमं ... तोर्ध्प मुनिथं मुनिये ।

मनमं तनुव नियमित- । लनुदिनमी नेमि-देवनोर्व्वने बल्लम् ॥

[(उक्त मितिको) विनयनिधि बालचन्द्रने समाधिमरण किया और स्वर्ग प्राप्त किया । (उनकी प्रशंसा) ।

मन और काय दोनोंके दैनिक नियमनमें, नेमि-देव ही अकेले योग्य हैं ।]

[EC, VII, Shimoga tl., No. 66.]

४७०

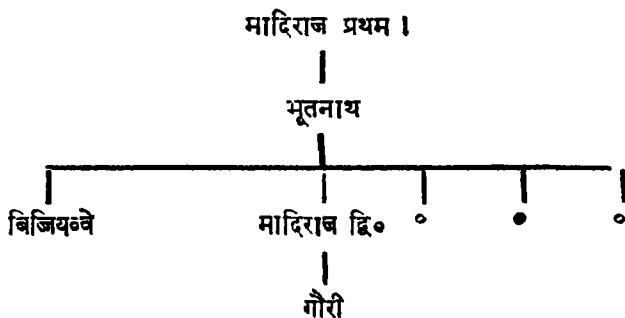
सौंदर्य,—कवय ।

[शक ११५१=१२२६ ई०]

शिलालेखका परिचय

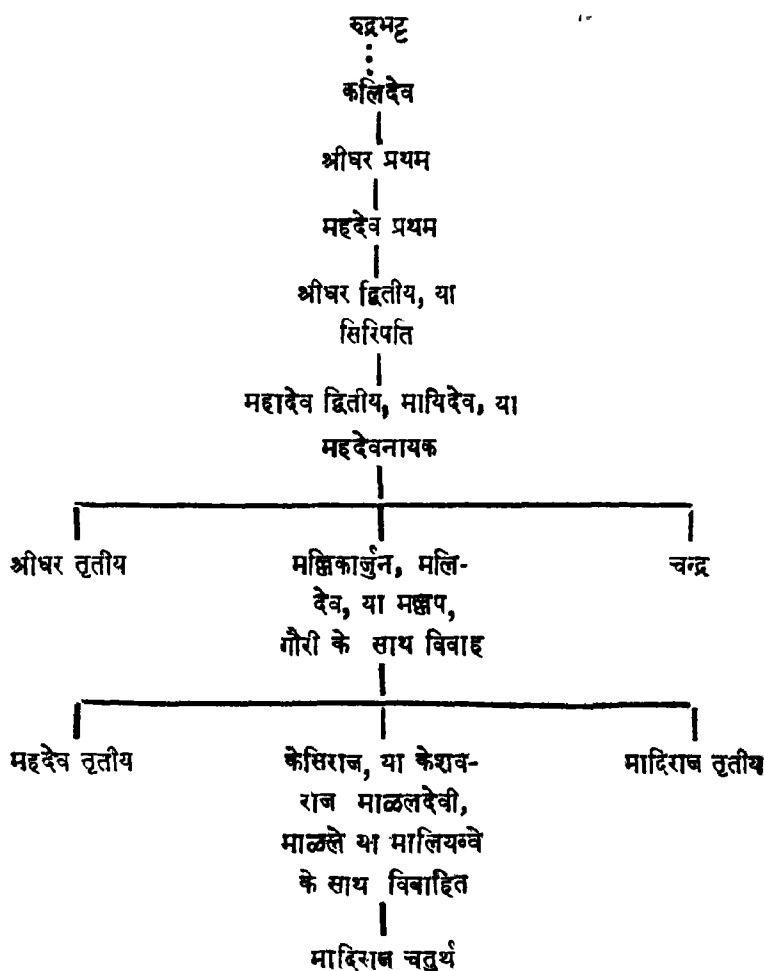
यह शिलालेख कुन्तलदेशके अन्तर्गत कुण्डी बिलेके अधीश्वर राष्ट्रकूटवंशके लक्ष्मण या लक्ष्मीदेव प्रथम के प्राथमिक वर्णनके बाद लक्ष्मीदेव द्वितीयका वर्णन करता है । ल० द्वि. कार्त्तवीर्य चतुर्थ और मादेवीका पुत्र था । इस तरह यह लेख और शिला लेखोंकी अपेक्षा रट्टोंकी वंशावलीको एक कदम

और आगे बताता है। यह कार्तवीर्य चतुर्थकी द्वितीय पत्नी होनी चाहिये, क्योंकि शि० ले० नं० ४४६ में उसकी पत्नीका नाम **एचलदेवी** दिया है। तत्पश्चात् हम देखते हैं कि **सुगन्धवर्ति बारह** का शासन लक्ष्मादेव चतुर्थकी अचीनता में रट्टोंके राजगुरु मुनिचन्द्रदेवके द्वारा होता था, और मुनिचन्द्रके सहायको या परामर्शदाताओं में शान्तिनाथ, नाग और **मल्लिकार्जुन** थे। मल्लिकार्जुनकी वंशावलीके देनेमें स्थानीय दो महत्वशाली वंशोंका विशेष वर्णन है—१८ गाँवोंके वृत्त (समूह) के अधिपति (इन गाँवोंमें **बनिहट्टि** मुख्य था जो आजकल जामखण्डीके पासका एक छोटा शहर मालूम पड़ता है), और **कोलार** के अधिपति (आजकलका कोर्त्ति-कोल्हार जो कलाद्रीसे नातिदूर कृष्णाके किनारे है)। कोलारके वंशमें पुरुष-उत्तराधिकारीके न होनेसे वहाँका अधिपतिविविवाहके द्वारा बनिहट्टिके अधिपतियोंके वंशमें चला गया। कोलारके अधिपतियोंका वंश यहपति **वशिष्ट**के वंशसे शुरू होता है, और उसमें निम्न नामोंका वर्णन आया है :—



मादिराज द्वि० अपने छोटे भाइयोंके साथ-बिनके नाम नहीं दिये हैं—युद्धमें मारा गया था। उसकी मृत्युके बाद उसकी बहिन बिजियव्वेने शासन-सूत्र अपने हाथमें ले लिया और कुछ समय बाद इसे बनिहट्टिके मल्लिकार्जुनके साथ गौरीके विवाहमें देहजके रूपमें दे दिया। बनिहट्टिके शासकोंके वंशका नाम 'सामासिग-वंश' था और यह अत्रि श्रृषिसे प्रारम्भ होनेवाले इन्दुवंशकी एक

शाखा थी। इस खानदानकी वंशावली, जिसमें ६३वीं केसिराजके पुत्र मादिराज का भी नाम आ जाता है, निम्नभांति है :—



जैसा कि ऊपर निर्दिष्ट है, यह खान्दान रुद्रभट्टसे शुरू हुआ ।

इसके बाद लेखमें बताया है कि किस तरह केसिराज, श्री-शैलके मल्लिकार्जुन देवकी वेदीके 'लिङ्ग' की तीन यात्रा और वहाँ कठिन व्रत धारण करनेके बाद, पवित्र पर्वतकी चट्टानसे बने हुए 'लिङ्ग' को अपने साथ लाया और उसे सुगन्धि-वर्त्ति नगरके बाहर नागरकेरें तालाबके पास अपने पिताके नामपर बनानेवाले मल्लिकार्जुन देव या मल्लिनाथ देवके मन्दिरमें स्थापित किया । बादमें इस मन्दिरके उच्च-पुरोहितका पद उसने लिङ्गय्य, लिंगशिव, या वामशक्तिके पुत्र देवशिव, उसके पुत्र वामशक्तिको दे दिया । इसके बाद लेखमें इस मन्दिरके लिये भूमि और उसके दशवें अंशके कई दानोका उल्लेख आया है । ये दान सर्वधारो संवत्सर, **शुक्र वर्ष ११५१** में, राजगुरु मुनिचन्द्रकी आज्ञासे किये गये थे । उस समय शासनकर्त्ता बेणुग्राम राजधानीमें महासामन्त **राजा लक्ष्मीदेव** थे । अन्तमें इस लेखके लेखकका नाम मादिराज दिया है । यह केसिराजका पुत्र था ।

समस्तुंग शिररसुम्बिचन्द्रचामरचारवे [।] त्रैलोक्यं नगरारम्भमूलस्तम्भाय शंभवे ॥ इगे निरन्तरं सुखमनाश्रितर्णा गिरिजाधिनथनुर्वीगगनेन्द्रिनानन्दमस्त-लिलालम्बराष्टमूर्तिर्यं रागदे लोक यात्रेमे निभोगिसि तन्न मनोनुरागदि श्रीगिरियो-ळ विराषिप सदाशिवनी विभु मल्लिकार्जुन । वनधिभृतावनिमध्यद कनकाद्रिय तैकदेसेय भरतवनिथोल् जनपदमेसेपुट्टु कुन्तळवेनसु सोगयिसुवुदल्लि कृष्णदेशं [॥] आ देशाधि ईश्वरं लक्ष्मणनृपनेसेदं तत्सुतं कार्त्तवीर्यगादळ् महादेवि तां श्रीसतिय-वर्गे जगजात विद्व(ज)नकाहार्दं (पेळ्के) ळ विद्विद् क्षितिपति निवहक्कुब्बेगं पुट्टे तद्रामादिहोणि ईश शौर्य्य सकळगुणयुतं पुट्टेदं **लक्ष्मीदेवं** [॥] सुकुमार-क्राने श्रीसतिगुदयिसिदं धारणाचक्र संरक्षकने श्रीकार्त्तवीर्यावनिपतिमुतने स्त्रुवंशो-दम्बं राजकदाळ् सस्सेव्यने भाविमुवडे निजदि **लक्ष्मीदेवं** प्रभावाधि(कने) तिम्याशुवंश प्रकायित विमवं नोर्प्यदो **लक्ष्मीदेवं** ॥ इदमोघं राष्ट्रकूयान्वयनतुळवळं लक्ष्मीदेवं सुरुपन्वदोळुय (तेजदोळ् शौर्य्यदो) ळखिलजनानन्ददोळ् भायोळो-दार्य्यदोळा कन्दर्पनं भानुवननिलजनं रोहिणीनाथनं पूर्वदिशाकान्तेशनं कर्णन-नतिशयदि पोस्तु विख्यातिवेत्तं आ स्त्रुराज्यमं विस्तारिसि नलविन्दे स्त्रुराज्य स्थिर

निस्तारक नेनिपं लक्ष्मीनारीशं रट्टराजगुरु मुनिचन्द्रं [॥] कुमुदानन्ददेविन्द बोन्दि
मुनिचन्द्रं शत्रुमूढमुखान्मनिर्पोषिप तेजदिदे मुनिचन्द्रं रट्टराजबिषयं क्रमदि
दिक्तयत् पञ्चचलेविनं पेच्येप तन्नोन्दु विक्रमदिदं मुनिचन्द्रनिन्तु मुनिचन्द्रं चन्द्र-
नामान्वितं [॥] गुरुवादं कार्तवीर्यचित्तिपतिगेनसुं मन्त्रदिं ताने शिद्धागुरुवादं
शस्त्रशास्त्रस्थिरपरिणतेयोळ् लक्ष्मीदेवंगे दीक्षागुरुवादं प्राज्यराज्यापहरणदे परत्तोणि-
पाळ्योनल्वेळुशब्दं वाय्ववाय्वतक्तदे वरमुनिचन्द्रंगिदं देसेगायते [॥] धरणीशाग्रणि
कार्तवीर्यसुतनप्पी लक्ष्मीदेवंगे सुस्थिरवप्पतिरे वात्रियं नयदिनेकायत्तमं माडिदं
वरबाहावळदिं (विरो) चिन्तपरं बैकोण्डनी वाणसा भरणं श्रीमुनिचन्द्रदेवन सुहृन्मा-
तंगकण्ठीरवं [॥] आर्य्य सचिवरोळ्तिचातुर्य्यं रट्टोर्व्वीपं प्रतिष्ठाचार्य्यं कार्य्य-
धुरन्धरतेयोळोदार्य्यदोळारिदवधिकनी मुनिचन्द्रं [॥] आ मुनिचन्द्र देवमल
मात्यरिळास्तुतरिष्टचित्तामणिकामराजतनयं करणाग्रणि शान्तिनाथनुद्दामपराक्रमं
नेगळ्द कूण्डिय नागानुदारचारुलक्ष्मी महिमावळभवनसुखानुभवं मले मल्लिका-
ज्जुनं [॥] एने नेगळ्द मल्लिकाज्जुनननुपम दंशावतार मेन्तेने चतुराननन सभे-
यल्लि पूव्यं मुनिसत्तकमद्रोळ्त्रिमुनिवरनधिकं ॥ (आ) मुनि मुख्य कान्तेयनसूये
पतिव्रते वोल्दु धर्ममं काममनर्थमं परमसंपदमं पुरुषंगे माडे तत्का (मि) निगदरा
हरिहराब्जभवस्सुतरत्रिनेत्रदिं सोमन जन्मवायुद इन्तकुलकिंदुकुलं धरित्रियोळ् [॥]
धरेगिन्दुवंशमेने विस्तरवं तळेदत्रिगोत्रदोळ् वरविद्यापरिणतरिळामरप्पलेवरोगेदरव-
रोळ्तो रुद्रभट्टकवीन्द्रं [॥] तन्नय वंशजकळरुदिगळ्तेलुद्ध कवीशरप्प वाक्योज्जितियं
सरस्वतियिन्नूर्पदिनेटरोळ् प्रभुत्वमं कन्नरनिंदवन्दु पडेदं दोरेमा कविताविळास दोन्दु-
जितियोळ् प्रभुत्वद नेगत्तैयोळा विभु रुद्रभट्टनोळ् [॥] आ सुकवि रुद्रभट्टनिज
सोमकुलाख्यनेनिषुव त्रिकूलं सामासिग कुलवेनिसिदुदन्ता सन्कुलदोळगे पुट्टितमळि-
चरित्रं ॥ अद्रोळ् निज रामाक्षरविदे सासिर पोंगे कोट्टदं बिडिय निडुदिनं पडेदं
रुद्रनेम्बी पडेमातं रुद्रभट्टमुर्व्वी (व्वी) जनदिं नुतसामासिग दंशदोळ्तेलुद्धल्लवरा-
दरवरोळ् भुवन रत्ननेनिसि विभुतेवेत्तुंजतिवडेदं विमलकीर्तियं कलिदेवं ॥ तदफ्यं
बनिहट्टिनामपुरमुख्याष्टादशकं प्रभुत्वदिना श्रीधरनोप्पुवं तनुजनातगादनुत्तु-
खास्पदनप्पं महदेवनातन सुपुत्रं श्रीधरं विक्रमोन्मदनप्पं महदेवनेम्ब सुतनागल्

लोलैवेत्तिप्पिनं ॥ गगनसरोवर पुरदवरिगमा सिरिपति गवागे वैरं होलवे रेगे
 सिरिपति तत्पुरवासिगळिं 'यमपुरमनेमिन्द' रणमुखदोळ् ॥ बनकं शत्रुशराळिगळ्गे
 गुरियागळ् तानदं केळ्दु भोकेने देशान्तरमेद्दुं पोगि रविस्संख्याब्दं वरं द्वीपदोळ्
 धनमं लादिसि तन्दु भूपतिगे कोट्टा शत्रुवं कोपदुर्विन्नदिं गन्धगजंगळिं तुळ्ळिदु कोन्दं
 भायिवेवोत्तमं ॥ मुं जमदग्निरामनखिलक्षितिनाथरनिप्पतोन्दुळ्स्सुम्भाब्ज गाल्लियन्ते
 तवे कोन्दुवौली महादेवनायकं कुंजरदिदे वैरिकुलमं तवे कोन्दु पित्तंगे माडिदं तां
 अवदानविक्रियेगळं बनिहट्टि समुद्भवेश्वरं ॥ शरणागतं रत्तिप विरुदं घरे पोगळे
 हगवदोळ् सीयल् कळ्करेनिप मातंगरनन्दुरियोळ् तां पोक्कु कायिद ना महादेवं ॥
 शरणागतं रत्तिसि परबळमं गेय्दु मान्यरं मज्जिसि दिक्करि वेरवायतिथं विस्तरिसिये
 महादेवनायकं घरेगेसेदं ॥ एनिसिप्पां महदेवनायकन पुत्र् श्रीघरं मल्लिकार्जुननुं
 चन्दनुमेम्ब भूवरोगेदत्तपुत्रोळ् वंशवर्धनमुं पुण्ययशोवर्धनमुमागळ् तन्नोळा
 मल्लिकार्जुन नात्मीय कुळाब्जषण्डवनमार्तण्डं करं रंचिपं ॥ गुणजळदिं तेजद
 बल्लुक्कि बुध शिष्टेष्टजन मनोरथ चिंतामणि सामासिगवंशप्रणियेने विभु मल्लि-
 कार्जुनं रञ्जिसुवं ॥ एने पंपुक्ते मलिदेवन पुण्यांगने पितृ द्विबाभरसंपूजनरते
 पतिहिते गौरी वनिते तटंगनेय कुलमनभिर्बण्णिमुवे ॥ मुनिसत्तकदोळ् पैपिगे नेलि-
 यिनिप्पं वशिष्ठमुनिमुख्यं तन्मुनिगोत्रदोळ्दयिसि कोलारनगरविभु मादिराज
 पुण्यचरित्रदोळेने माळलदेवि भुवनवन्दितेयादळ् ॥ पतिहितवप्प चारुचरितं पति-
 भक्तियोळ्दिदा मनं पतियने बण्णिरोन्दु वचनं सति लक्षणविन्नु तन्नोळ्जितवेने
 केसिराजन मांगने माळलदेवि गोत्रसन्नुते वरपुत्रपौत्रबहुसंततिथिं घरेयोळ् विरा-
 जिकुं ॥ मनयोळ्गेनुळ्डविल्लनुत्तं स्वयमर्थभूरियागुत्तिर्पंगनेयम्मळिज्जदेविय विन-
 याम्मोनिधिय गुणदोळेन्तेणेयप्पर ॥ मनयोळ्गुळ्डं मङ्गे तत्पतिगं मनेभक्कळिग-
 वेळ्ळनिद्रुवनिकला इदे केळ् कळेयुं सुडेनल्के जीविपगेनेयन्नं कुलांगने भरन्देन-
 लक्कुमे केसिराजनंगने पतिभक्ते चारु गुणयुक्ते कुलांगने भूतळाग्रदोळ् ॥ मनेगो
 बन्दरे बिट्टमरेनलोळ्थिगोडि होगियडगुव समुखं तनगादडे नीवारेम्ब नलेयरि
 माळियब्बेगेन्तेणेयप्पर ॥ कुटिले कुमार्भो कुत्तिते कुरुपि कुमाये, कुशीले, जिह्म-
 लंपदे, शठे धूर्ते दुग्गुणि दुरन्विते दुर्जने दुष्टे कष्टेयैम्ब टमट्कार्त्तिस्संतियरे

गुणदोळ् सले माळियव्वेयुंगुटकेणयागरेन्दोडितरांगनेयम्भुवनातराळ्दोळ् ॥ पुरुष-
रमेळ्दिवं माळ्वरिदुं हिरिटागे बगेव परं मायाचरणदोळेसगुव सतियहौरेये हेळ्
माळियव्वेयोळ् कुत्तितेयर असवने गंगलक्के तलेमागिलेगच्चवे नोडली इलिंगो-
सगेगे नोपिंगगडिगे वाडिन सन्तेगे बायिनक्के पोपेसकदे पाम्बरोळ् नेरेवरं कुल-
नारियरेम्बुदे विचारिते पतिभक्तिवेत्तेसेव **माळलदेविय**नल्लदन्यर । गाळुतनदिदे
पुरुषरने विदवं माळ्पं दुच्चरित्रेयरं वाचाळेयरं कण्डघतति **माळलदेविय** गुणानु
कथनदे वेडुगुं ॥ पति बसदक्कुमिन्नुतमगेन्दु दुरौषधमं प्रयोगिप क्तितकेयरन्तयिन्दे
परुषर्क्षय कामळे पाण्डु गुल्मदिदं तिकृषरागे विच्चलिसुत्तिपवरेन्त् कुलांगबनं पतिहिते
माळियव्वेये कुलांगने वाचिपरीत चात्रियोळ् कृतयुगचरितद सतिगुणवतिशयदिं
तन्नोळिक्कुवेने नेगळ्द महासति **माळलदेवि** पतिवृते **मल्लिदेवन्न** सुजननि रंवि-
सुत्तिर्पळ् ॥ जननुते **माळलदेविय**ननुपमगुणवतियनी महासतियं कण्डनितरोळ-
मरकदीसेवनेय फसप्राप्तियेन्दे वणिषुदो । अत्रिमुनिन्द्रपत्नियनस्ये पतिवृत-
वृत्तियिदे लोकत्रयवेदे वाणिसे विरिचियनच्युतनं त्रिनेत्रनं पुत्ररेनळ्के
पेत्तळेसवीयुगदोळ् पतिभक्ति तन्न चारित्र दिनत्रिगोत्रदोळगुण्डेने **माळलदेवी**
रेचिण्ळ् ॥ कुलवधुविन नडवळियोळ् कुळमुं पतिव्रतागुणदिदं नेलसिक्कुमेम्बु-
दिदु **माळलदेविय** चरितदिदे धरेगतिविदितं । जननि महापतिवृते वशिष्ठकुलो
द्भवे गौरि **मल्लिकार्जुन**नभवाभ्रीपंकरुहषट्चरणं पितनप्रतानुजर्बनधिगभीरनप्य
महदेवनुमा विभु **मादिराजनुं** वनिते विनूते माळलेयेनल् विभु **केशवराज-**
नोप्पुवं ॥ वचन ॥ आपुण्यांगनेयर शिष्टकाम भोगंगळननुभविसुत्तं मल्लिकार्जुननुं
मादिराजनुमेम्बीर्व्वपुत्रं पडैयलवरीर्ब्वरं श्रीरट्ट राज्यप्रतिष्ठाचार्यनुं अरिविदमण्ड-
लिकजवराजनुमप्य श्रीमद्राजगुरुगळ् **मुनिचन्द्र**देवरनोलगिसि कूण्डभूर सुसासिरद
बळिय बाडं श्रीमद्राजगुरुगळ् **मुनिचन्द्र**देवराळ्के वाडं **सुगन्धवर्त्ति** हन्नेगडुमं
तदाज्ञेयिं प्रतिपालिसुत्तामरसा कंणद मोदसु बारं पट्टणं **सुगन्धवर्त्तिय** विळ्सा-
मेन्तेन्दे ॥ होडवोळलोल् विराजिसुव चूतवनं गिरसंकुळं फलं दुसुगिदनारि केरवन-
वोप्पुवशोकवनं शिवालये मिसुप जिनेय्द्र गेहमेत्रिपितिवलन्दव शेषसौख्यदोन्नेसेदु
सुगन्धवर्त्ति सले कूण्ड महीतळ्दोळ् विराजिक्कुं । पन्नीर्व्वर्गाऊण्डुगळ्दुत्तत सत्वप्रता-

परगुणगण निष्ठयस्सनुत चरित कीर्ति महोम्नतरप्रतिमरा स्थळकक्षिपतिगळ् आ स्थल
 दोळ् ॥ आराधिपनभवनन सुरोरब्जचरामरेन्द्रवन्दितपदपंकैरुहननर्यियि कोलारद
 विभु केसिराजनमळचरितं । विदितं भीषर्ष्वताधीश्वरन चरणं काणली केसिराजं
 मुददि नेसेदं घरेयोळ् ॥ सुतनादं मादिराजं गमळ चरितन्त भूतनाथं यशोरंजित
 रण्यवस्तुतत्तंप्रभु गोगे दरिळास्तुत्यरस्त्यवरोळ् सन्नुतनादं मादिराजं सेणसुववर
 गंतळ्गे गाळं प्रतापोनंतनेन्दुर्वी बन्नं वर्णणेसि पेसेव्वडेदं तेज्जदोदेळ्गेयिदं ॥ शर-
 णागतबनमं नित्तरिपेडेयोळ् वज्रपंजरं तानेने डोंकरमादिराज विभु तोडर्दं डोंके-
 निप्प बिदुदनिरेदेत्तिसिदं ॥ इरे कोलारदोळा समानविभुपुगव्वत्तिलोपार्त्ता
 तुरचेतम्मरेवोक्कडन्तवरनादं कादु तानुप्रसंगरदोळ् सानुबनेयिद् वीरसिरियं पंचत्वमं
 पोर्दि विस्तर देवानकऊण्मे दिव्यगतिवेत्तं चात्रि बाप्पेम्बिनं । आ मादिराजनप्रजे
 भूमिस्तुते बिज्जियव्वेयनुचर महिभोदामभुमंनप्रतेयन्त माळ्केयिनधिकवागे नडे-
 यिमुत्तिदं ॥ सले कोलारदोळ् प्रभुत्ववेसे गुं तेनामदोळ् मादिराजळ् सत्पुत्रियन्त
 प्रभुत्वसहितं श्रीगौरियं पोप्पे मंगळदूर्य विभु मल्लिकार्जुन नोव्वेळिप बिज्जियव्वे
 प्रभुत्वलताविस्तरयागे तां नेरपि चिन्तोत्साहमं ताळिददळ् ॥ इत्तण विभवदिं
 पैपं तळेद महाप्रसिद्धवंशजे गौरीकान्ते निब कान्तेयेने चैरन्तनरोळ् मल्लिकार्जुनं
 समविभवं ॥ आ दंपतिगळ् मुखदिनिरे ॥ पित्तयेपात्तं तदीयप्रभु तेयेनिसुवष्ठादश-
 ग्राममुं दौहित्रं तां मादिराजंगद इनमरे कोळारदोन्दु प्रभुत्वं पुत्रं श्रीगौरि
 मल्लपविष्णुगोदं केसिराजं लसच्चारित्रं श्रीशैलकन्या पति पदनलखन्द्रांशु-
 चंचच्चक्रोरं ॥ सात्विकदादिनन्दे परमेश्वरनी गिरिजेशनेम्बुव तत्वविचारादेदे इदु
 नान्मिद निश्चळमक्तिविन्दे शान्तत्वमे रूपगोण्डु मुदमानविषाददोळ्देदिर्प्य शूरत्व-
 दोळी धरावळयदोळ् विभुकेशवराजनोप्पुवं ॥ परकितकळिपदेयं परवधुविगे-
 वे इकमं माडदेयं हरचरणपरिणतान्तःकरणतेयि केसिराजनं कृतकृतं ॥ एने नेगळ्द
 केसिराजन वनिते नुतागस्त्यगोत्रसंभवे पुरुषंगनुवशपोपक्षि तां रक्षिसुवनिबरोळ्
 पिन्ते रोगादिगळ् तोसिडोदं भक्तिं वारें दिडवेनलभवं कृत्तुं तत्पुत्र वर्मा पुदुळ्
 निश्चित विष्णुजिरिदिनभिकं चात्रिगाश्चर्य्यमागळ् ॥ मत्तमा तीर्यवात्रेयोळ् ॥
 तनु गाळं परिचर्य्यं मुददे माडम्बाब्दोर्गो तन्नैरं बाडोड गुडि बप्पवर्गो काळ-

प्राप्तिशब्दादो ङोक्मे साक्तवर्गागळागदेनिपी वीरवृत्तं **मल्लिकाज्जुनदेव**
दयेगेय्यली प्रभुगे सल्लुं केशवंगुर्वीयोळ् ॥ इन्तिवादियागिरनन्तवीरवृत्तंगळि श्री-
शौळद मल्लिकाज्जुन देवरं मूरुसळ् दर्शनं माडि तरपीतियि पर्वतलिगमं तन्दु कृण्डि
मूळसासिरद बलिय कपणं **सुगन्धवर्त्ति** हन्नेरदर मोदळ बाडं श्रीमद्वाजगुरुगळ्
मुनिचन्द्र देवराळ् केवाडं पट्टणं **सुगन्धवर्त्तिय** होळवोळम मागरकेरेयसि तन्न
तन्दे मल्लिकाज्जुन पेसरोळ् श्रीमल्लिनाथदेवर प्रतिष्ठेयं माडि ॥ स्वस्ति समधिगत
पंचमहाशब्द महामण्डलेश्वरं **सत्सनुपुर** वराधीश्वरं गोवळीतूर्यनिर्घोषणं **रदकुळ**
भूषणं सिंधूरलाङ्गुनं शशिविशदयशोलाङ्गुनं सुवर्णं गुरुदध्वजं विदग्धमुग्धांगनाम-
करध्वजं वैरिवळवीरवृकोदरं परनारिसहोदरं मण्डलिकाण्डतळप्रहारि उद्दण्डरिपुमद-
निवारि साहसोत्तुगं **बोपनसिंग** नाभादि समस्तप्रशस्तिसहितं श्रीमन्महामण्डलेश्वरं
लक्ष्मोदेव तस् **बेणुग्रामेय** नेले वीडिनळ् सुखसंकथाविनोददिंदनवरतं राष्ट्रं गो-
य्युल्लभिरे **शकवर्ष ११५१** नेय **सर्धचारि** **संवत्सरद** आपाददमवासे सोम-
वारदन्दिन सर्व्वग्रासिसूर्य्य ग्रहण दुत्तमतिथियोळा **मल्लिनाथ देवर** अङ्गभोगरंग-
भोगककं खण्डस्फटितल्लाण्डारकं श्रीमद्वाजगुरुगळ् **मुनिचन्द्र** देवर कोट्टकेय्यन
वर नियामदिदा **सुगन्धवर्त्तिय** हेनीर्वरं गाऊण्डगळ् वृपे पडुवणं होळनोळ्
मुळगुन्दवळिळय होळवेरेय हनिमत्तर मान्यद होळवेरेयि तेकळ् हमुडिय दारियि
बडगळ् कडिमण्ण कोळिनलळेन्दु सर्व्वसमस्यमागि कोट्ट केयि कंबवन्नूर
६०० सिरिवगळि पडुवळ् राबत्रीदिथि पडुवण केरियोळ् राबहस्तद सेक्कय्यगळ्
इण्त्तोन्दु कैनीळद मनेय कोट्टर ॥ मत्तमा हीनीर्वरं गावुण्डगळ् मुख्य समस्त-
प्रजेगळ् देवर नियोपहारकेन्दु चन्द्रार्कस्थायियागि मेटेगोळगव कोट्टर ॥ मत्तमा-
हन्नीर्वरं गाऊण्डगळ् कौदिय मादिगाऊण्डनुं पंचमठतपोचनधं एण्डहिट्टु सहित
विद् सभेय समक्षदलि कडसेय नागगाऊण्डनु मोदलूर गौडुवान्यदोळो तन्न गौडु-
मान्यं कळळेयवळनहरळहमुगेयत्तिमा गौडुमान्यद कोलिनलळेदु सर्व्वसमस्यमागि
कोट्टकेयि कम्बविन्नूर २००, [॥] मत्तं ॥ स्वस्ति समस्त भुवनविख्यात पंचशत-
वीरशासनलन्वानेकगुणगणाळंकृतसत्यशौचाचारचारुचारित्रनयविनयविज्ञानवीराक्ता-
स्वीरबण्भुसभयधर्मप्रतिपाळकरप्प **सुगन्धवर्त्तिय** हनीर्वर्वाऊण्डगळ् मुख्य

स्थलसमस्त नरवर मुमुरिदङ्गळ् सन्तेय देवस महासमेयागिर्दु तम्मोळैक्यमतवागि
 आ मूर्तिनाथदेवरिगे बिट्ट आयवेत्तेन्दडे [।] एळेय हेलिगेनूरेळेय कोट्टर् होत्त-
 लिग ऐवत्तेलेय कोट्टर् [।] अरोळगेयुं सतेयोळगेयुं माळुव चान्यवर्गदलुं भत्त-
 वसरदलुं सट्टुगवत्तवकोट्टर् [।] पसारक्करडकेय कोट्टर् [।] अल्ल व्वेत्त अरिसिन
 मोदलागि किरिकुळवेत्तव पसारक्कोन्दोन्दु कोट्टर् [।] हत्तिय पसारक्के हिडिवत्तिय
 कोट्टर् [।] मत्तमा देवर नन्दादीविगेगेय्वत्तोक्कळ् गाणक्के सोहिगण्णय कोट्टर् [।]
 बेऊरिन्द बन्ध माळुव एण्णय हाडकेयद्देण्णय कोट्टर् आस्थळद अय्सावन्तर् ।

देवरग्वणिय बिन्दिगेगे आवत्तेगळन कोट्टर् । मत्तवन्थूर्वर बाडुकाय
 मावुव बल्लगेरडु सडु हेचिगे नात्तकु काय कोट्टर् [।] बोव क्कट्ट तन्दु मारुव
 बाडुकायिगे तिप्पे सुंक्क कोट्टर् ॥ मत्तमा देवर्गे एळरावेव हंनीव्वर् गावुण्डगळ्
 तम्मूर् तैक्क होलनोळ् स्वववत्तिय तम्म होलन सीमेयोळ् सिरिवारैमे होद
 हेव्वेट्टेयि मूळळ कडिगुरुहल्लारं बडगळ् नविल्गुन्द गोलिनलळेडु सर्व्व समस्यवागि
 कोट्ट केयि मत्तनाल्कु ४ अय्यगळ हंनिकैनीळद मनेय कोट्टर् । मत्तं बेट्टसुरद
 मेनेय विंदर मैलेय नायकनुं अ स्थलदलुवर्गाऊण्डु गळुं तम्मूर् तैक्क होळनोळ
 कडिगुरुहल्लर्दि तेक्कल् नविलुण्ड गोलिनलळेडु सर्व्वसमस्यमागि कोट्ट केयि
 मत्तनाल्कु ४ अयिगय्यगळ हंनिकैनीळद मनेय कोट्टर् ॥ मत्तमा देवर्गे हूलिय
माणिक्य तीर्थद बसदियाचार्य **प्रभाचन्द्र सिद्धान्तिदेवर** सहधर्मिगळप्प
शुभचन्द्रसिद्धान्तिदेवरं या **प्रभाचन्द्र सिद्धान्तिदेवर** शिष्यरप्प इन्द्रकीर्ति-
 देवर श्रीधरदेवर मुख्यवा संप्रसमुदायंगळुं आ माणिक्य तीर्थद बसदिय स्थलं हिरिय
 कुंवियल् आल्लियक्कवर्गावुण्डगळ् सहितविदुर्दु आ ऊरिं तेक्कददेसेयल नल्लियचट्ट
 गौडन बळबोळ्ळगे नेमणन केयि तेक्कल् उरुगोळनहोल सीमेयं मूळल् नविल्गुन्द
 गोलिनलळेडु सर्व्वसमस्यमागि कोट्ट केयि मत्तनाल्कु ४ अयिगय्यगळ हंनिकै-
 नीळद मनेय कोट्टर् । मत्तमा देवर्गे श्रीमदनादिय पिरियग्रहारं हसुर्जियन्न्र्महाजनं-
 गळुं हवीव्वर्गावुण्डगळुं तम्मूर् तैक्क घैस्सगेरियिं तैक्कल् **समन्धवत्तिय** सवण्बेलद
 होलवेरेयि पडुवल तम्म बासिगावाडद पडुवण हेव्वसुगेय स्थळदोळगे सोगळद
 दिगीश्वरदेवर होललळेडु सर्व्वसमस्यमागि कोट्ट केयि कळं मूनूरु ३०० [॥]

मत्तं श्रीभुजोद्भवैर आयद चट्टिभरगर बिलपदि गाणायदायकारदक्षि सोमवारं
प्रति वोन्दु खोळगे एण्णेयं कोट्टर ।

इन्तिनिनुमना कोलाएद केसिराजं मुगन्धवत्तिय नागरकेरेय श्रीमल्लि-
नाथदेवरिगे वृत्तियं पडेदु आकेरेय कट्टिसि-मुत्तल्लु मारवेयनिट्टु तन्नाराधिसुव
माळ्ळेय शुद्ध शैवमार्गिळ्ळप तन्न गुरु भागिगळ शिष्यर् वामशक्तिनामाभिषेयरप्प
बल्लिट्टगेय श्रीमूळस्थानदाचार्यलिंगयंगळिगी स्थानमं धारापूर्वर्कं कोट्टनवर वंशा-
नुक्यनमेत्तेने ॥ आ मुनि दूर्वासान्वयनेभातनुपहतनेन्दु दिव्यम्बिडिदा वामशक्ति-
वृत्तीशं भूमिस्तुतनेनिसि जयसि पेसवंसेदेसेदं तत्तनयर्देवशिवरुदात्तयशस्संकलशास्त्र
संपन्नस्संदृत्तत्त्वंभुजोपाजितवृत्ति समाज वीराधिसिदरुक्क्यरेयोळ् तदपत्थलिंग शिव-
व्विदितशिवा गमररतक्क्य गुणगणनिलयस्संदमळ चरित श्रीशैलदभवन्न भक्तियुक्त-
वादाधिसुवर ॥ सिंगननाराधिपडं श्रीमल्लिनाथपदसरसिजदोळ् भृंगनवोलेसेवनेन्दु
मन्नंगोण्डा केसीराजन्न वर्गिदनिच्चं । ततशासनार्थवप्पी च्चित्तियं विभवोन्नति संतत-
वोदितोदित वक्कुं प्रतिपाळिसलील्लदब्दिनसुगतिगिळ्ळिगुं ॥ गये वारणासि कुरु-
भूमि येनिप तीर्थगगळल्लि गोकुलयं तन्नय कुलमं ब्रह्मणरं दयेगिडे कोन्दनिदु
पापमिदनळियलोडं ॥

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुधरां ।

षीष्टवर्षसहस्राणि विष्टायां जायते कृमिः ॥

तंनिचुद मेणम्यकुलोन्नत रिक्तुदु मनवनियं धर्मात्मळं मन्निसदळिदा मनुजं
मुन्नं क्रिमियागि बळिके नरक्ककिळ्ळिगुं ॥

मद्वंशनां परमहीपतिवंशना वा पापादपेतमनसा भुवि भावि भूपाः ।

ये पालयंति मम धर्ममिदं समग्रं तेषां मया विरचितांजलिरेष मूर्ध्नि ॥

तानोसगिसिद नृपकुलदा नृपरक्कम्य भूपरक्की धर्मक्केनुमनळिवं तारदडा नृप-
रिगविन्दे सुगिन्द कर्थान्दिप्पे इदा केसिराजन्न वचन ॥ एसेवी शासनमं विरसि
बरेदं पूर्वं बन्मदोल सुकृतमनजिसि केसिराजविभुविन सिसुवेनिसिद मादिराज-
नाविभुमतदि ॥ ई धर्ममं सुगंधवत्तिय हेनीव्वर्गाऊण्डुगळुं प्रतिपाळिसुवर ॥]

[JB, X, p. 176-179, a; p. 260-272, t. ; p. 273-
286, tr. (Ins. No 7.).]

४७१-४७२

पर्यंत आबू—संस्कृत

[सं० १२८० = १२३० ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायके लेख

[EI, VIII, No 21, No 1. f.-p., t. and tr.]

४७३-४७४

पर्यंत आबू—संस्कृत

[सं० १२८८ = १२३१ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[EI, VIII, No 21, No 12, t.

and

[EI, VIII, No 21, No 40-11 and 13-18, t.]

४७५

अवणबेलगोला;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[वर्ष खर = शक ११५३ = १२३१ ई० (कीकहौलै)]

[जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग]

४७६

गिरनार;—संस्कृत ।

[सं० १२८८ = १२३२ ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XIV),
p. 328-331, No. 1, t, and tr.]

४७७

गिरनारः—संस्कृत ।

[बिना काल निर्देशका]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख ।

[Revised Lists., p. 357-358, No. 21 & 22, t. and tr.]

४७८

माण्डनिडुगल्लु;—संस्कृत + कन्नड

[शक ११५५ = १२३२ ई०]

[निडुगल्लु-बेट (निडुगल्लु परगना) में, जैन वस्तिमें एक पाषाण पर]

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय.....न शक-वर्ष ११५४ नेय नन्दन-संवत्सरद
आषाढ़-शुक्लाष्टमी-आदिवारदन्दु नेमि-पण्डितर मकलीवसदिय वृत्तिथं चारा-
पूर्वकं पडेदरु मङ्गल महा श्री

(५२)

उसी पाषाण पर

श्रीमत्परमगम्भीररस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।

बीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-वसुमती-मारघौरेय-दोर्दण्डरुमघःकृतोद्दण्डरं मार्तण्ड-कुल-भूषण-
रुममभिसम्पात-भीषणरुमोरेयूर-प्पुरवराषीशरुमेनिष्प खोळाबनीशरीळ् ॥

मङ्गि-नृप-सुत बन्धि-नृ-।

पं गोविन्दरननवमिरुल्लोळनना-।

तङ्गुद्विसिद भोग नृ-।

पं गौरव-मेरु बर्म्म-नृपनं पडेदम् ॥

कलि-बर्म्म-नृपतिगं बा-।

खल-देविगवुदित-भद्र-लक्षण-वत्स-।

स्थळकनिरुक्कोळ-धारा -।

पितळकं नळ-नहुष-भरत-चरितं नेगळ्दम् ॥

हरि गोवर्द्धन-गोत्रमं दशमुखं रुद्राद्रियं रामर्नकि -।

क्करुमाचळ-कोटियं रविसुतं तेर-ग्गालियं पूण्डु दु -।

र्द्धर-संरम्भदिनन्दु मेट्टि किल्ले नोन्दायासविन्दारितु -।

व्वरेगी-दक्षिण-बाहु-सङ्गदिनिरुक्कोळ-क्षमापाळन ॥

कुळिकन लवलविके लया -।

नळतुरुवणि सिद्धिल सडगरं मित्तुविन -।

ग्गळिके जवनुज्जर्गं मार्प -।

ओळोवुदिरुक्कोलनाभिगेत्तिद बाळोळ् ॥

अन्तु नेगळ्द निगलक-मल्लं परनारी-सहोदरनरुवत्तनाल्वर् मण्डळिकर तले-
गोण्ड मण्ड बुदण्ड-मण्डळिक दानव-मुरान्तकं रोद्द गोवं बाण्णर बावं खड्ग-सहदेवं
देव-देव-सदाशिवपादाब्ज-सेवा-समुन्मिषत्-प्रभाव निरुक्कोळ-देवं राज्यं गेय्यु-
त्तमिरे तत्पाद-पद्मोपजीवियप्प गङ्गेय-नायकङ्गं चामाङ्ग नेगबुद्धविसि गङ्गेयन
मारेयं श्री-मूल-संघद देशिय-गणद कोण्डकुन्दान्वदय पुस्तक-गच्छुद
वाणद-वळिय श्री-वीरनन्दि-सिद्धान्त-चक्रवर्त्तिगळ शिष्यराद मेदिनीसिद्धर
पद्मप्रम-मल्लधारिदेवर चरण-परिचर्यैयि पट्थीत-कामितराद नेमि-पण्डित-
रिनङ्गीकृत-व्रतनादम् । आगि ॥

काळाञ्जनवेम्बुदिरु -।

गळन गिरि-दुर्गवन्तदभ्रकृषा -।

भीळतर-चूळवदरु -।

ताळतेयने नोडि धात्रि निडुगळेन्दुम् ॥

धा-कुत्कीळद बदरन्त -।

टाकट दान्त्तण-शिलाग्रदोळ् पार्श्व-जिन -।

न्याकोसि-बसतिथं प्रिय -।

लोकं गङ्गेयन मारनिदनेत्तिसिदम् ॥

इदु जोगवट्टिगेय बस -।

दि दला-चन्द्रार्कविं सनातमविं सल् -।

वुदु पञ्च-महा-शब्दवद् ।

इदक्के पालिपुवरिन्नसङ्ख्यातर्कळ् ॥

स्वस्ति निरस्ततम-कमठानेक-वैकुण्ठाणनप्प पार्श्व-जिनेश्वरन दैनन्दिन-सपर्या-
कार्यकं महाभिषेककं चातुर्वर्ण-दानकं गङ्गेयन मारेयनुं नारि बाचलेयुवा-
चन्द्र-तारमिनिचने सल्लपुदेन्दो इरुक्कोळ-देवं धारा-पूर्वकवित्त दत्ति (दानकी
विगत तथा वे ही अन्तिम वाक्य और श्लोक) ।

(प्रथम लेख)

[स्वस्ति । (उक्त मिति को), नेमि-पण्डितके पुत्रने इस वसदि की भूमि
प्राप्त की ।]

(द्वितीय लेख)

जिन शासनकी प्रशंसा ।

स्वस्ति । चोळ राजाओंमें,—मङ्गि-नृपका पुत्र बप्पि-नृप, (और) गोविन्दरका
पुत्र इरुक्कोळ हुआ, जिसके भोग-नृपका जन्म हुआ था, जिसके बर्म-नृप हुआ ।
जिससे और बाचल-देवीसे इरुक्कोळ (प्रशंसा सहित) उत्पन्न हुआ था ।

जब (अपने पदों सहित), इरुक्कोळ-देव राज्य कर रहा था:—तत्पादपत्रो-
पनीवी गङ्गेयन-मारेय गङ्गेय-नायक और चामासे उत्पन्न हुआ था । इसने
नेमि-पण्डितसे व्रत लिये थे । ने० प० को पद्मप्रभ-मलघारि-देवसे मनोभिलषित
अर्थकी प्राप्ति हुई थी । प० म० देव श्रीमूलसंघ, देशिप-गण, कोण्डकुन्दान्वय,
पुस्तक-गच्छ तथा वाणद-बलियके बीरनन्दि-सिद्धान्त-चक्रवर्तीके शिष्य थे ।

काळाञ्जन इरुञ्जोळके पहाड़ी किलोका नाम था। यह देखकर कि इसकी चोटियाँ बहुत ऊँची हैं, लोगोंने इसका नाम निडुगळ् रख दिया। उस पर्वतके बदर तालाबके दक्षिणकी तरफ एक चट्टानके सिरेपर गङ्गेयन मारने पार्श्व-चिन वसति खड़ी की थी। इसीको 'बोगवट्टिगे वसदि' भी कहते थे।

पार्श्वनाथ-चिनेशकी दैनिक पूजा, महाभिषेक करनेके लिये, तथा चतुर्वर्णको आहार दान देनेके लिये गङ्गेयन मारेय तथा उसकी स्त्री वाचलेने इरुञ्जुल-देवसे आ-चन्द्र-सूर्य-स्थाथी दान करनेके लिये प्रार्थना की और उसने तब यह (उक्त) भूमियोंका दान किया; तथा गङ्गेयनमारेयनहस्तिके कुछ किसानोंने मिलकर बहुतसे (उक्त) अखरोट और पान प्रति बोझपर दिये; पैलिके किसानोंने भी कौलहुओंसे तेल दिया। वे ही अन्तिम श्लोक।]

[EC, XII, Pavagada tl., No. 51 and 52]

४७६

गिरनार;—संस्कृत।

[सं० १२८८-१२८९ = ११३३ ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख।

[Revised List ant. rem. Bombay (ASI, XV1),
p. 361, No. 34, t. and tr.]

४८०

पर्वत आवु;—संस्कृत।

[सं० १२९० = १२३३ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EL, VIII, No. 21, No. 19-23, t.]

४८१

एलूरा;—संस्कृत ।

[शक ११५६ = १२३५ ई०]

[कालगुण सुध त्रीतिमा^१ बुधे]

[१] स्वस्तिश्री शाके ११५६ जयसंवद्वरे (संवत्सरे)

श्रीर्दना (श्रीयर्दना) पुर े। जभा े- बनि राणगिः ।

तत्पुत्रो म्हालुगिः स्वर्णा वल्लभो जगतोप्यभूत् ॥१॥

ताम्यं (म्यां) बभूवुश्चत्व (त्वा) रः पुत्राश्चक्रेश्वरादयः ।

मुख्यश्चक्रेश्वरस्तेषु दा[न]धर्मगुणोत्तरः ॥२॥

[२] चैत्यं श्रोपार्ष्वनाथस्य गिरौ वा (चा) रणसेविते ।

चक्रेश्वरोसृजद्दानाद्धृ (ना धृ ?) ताहुतीं च^२ कर्मणां ॥३॥

बहूनि विमानि विनेश्वराणं (णां) महाति (हान्ति) तेनैव विरच्य सर्वतः ।

श्रोचारणादिर्गमितः सुतीर्यतां कौलासभूध्रद्वरेतेन यदत् ॥४॥

[३] धर्म्मकमूर्तिः स्थिरशुद्धदृष्टि दृद्योसती (?)^३ वल्लभकल्पवृक्षः ।

उत्पद्यते निर्मलधर्मपालश्चक्रेश्वरः पञ्चमचक्रपाणिः ॥५॥

शुभं भवतु ॥

कालगुण त्रीतीयां बुधे

अनुवादः—स्वस्ति श्री ? शक सं० ११५६, जयसंवत्सरमें । श्री (व) र्दना-पुरमें राणुगिने जन्म लिया था, उसका पुत्र म्हा (गा) लुगि था जिसकी पत्नी स्वर्णा थी और जो जगतको भी प्यारा था ।

२. उनके चक्रेश्वरादिक चार पुत्र हुए । इनमें चक्रेश्वर मुख्य था, वह दानधर्म गुणमें सबसे आगे था ।

१. तृतीया । २. भगवानका हृद्यो ० छात्रीकता हंत्रवि० पढ़ते हैं ।

३. भगवानका हन्त्रजो हृद्ये 'दोनो सती' पढ़ते हैं ।

३. चारणोंसे सेवित इस पर्वतपर उसने श्री पार्श्वनाथका विम्ब बनवाया, (प्रतिष्ठित किया) और इस कृत्यसे उसके कर्मोंकी निर्जरा हुई ।

४. जिस तरह भरतने कैलास पर्वतको पवित्र तीर्थ बना दिया था, उसी तरह उसने इस पर्वतपर बिनेश्वरोंके विशाल-विशाल विम्बोंको बनवाकर इसे एक सुतीर्थके रूपमें परिवर्तित कर दिया था ।

५. धर्म्मैकमूर्ति, स्थिरद्युद्धष्टि, दयावान, सतीवक्त्रभ (अपनी पत्नीके प्रति एकनिष्ठ), दानादि गुणोंसे कल्पवृक्षके समान चक्रेश्वर निर्मलधर्म्मका रत्नक बन जाता है, पाँचवाँ वासुदेव । शुभ हो । फाल्गुन ३, बुधवार ।

[*Ins. Cave-temples of western India,*
p. 99-100, t. and tr.]

४८२

पर्वत आबू;—संस्कृत ।

[सं० १२३३ = १२३६ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[*EI, VIII, No. 21, Nos 24-31, t.]*

४८३

दिलमाल (*Dilmal*);—संस्कृत तथा गुजराती ।

[सं० १[२]३५ (१) = १२३८ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[*EI, II, No. 5, No. 4, (p. 26), t. and tr.]*

४८४

हरेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक ११९१ = १२३३ ई०]

[ठली बस्तिके दक्षिणके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्-परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमतु कुमार-पण्डितर गुडि पेक्कम-सेट्टिय हेण्डति गुण-गण सम्पन्ने
शीलवतियप्प मल्लन्वे शक-यर्थ ११६१ नेय विकारि-संवत्सरद् मार्गा-
शिर-मास बहुल-पक्षाद् त्रयोदशि बृहस्पतिवारवन्दु दान-धर्म-परोपकार-
निरतेयागि समाधि-विधिधि सुर-लोक-प्राप्तेयादल्ल केलसे सोबोजन माण्डि ।

[कुमार-पण्डितकी यहस्थ शिष्या, पेक्कन-सेट्टिकी पत्नी, मल्लन्वेके जैन-विधि-
पूर्वक किये गये समाधिमरणका स्मारक । केलसे सामोजने इसको बनवाया ।

[EC, VIII, Sagar, tl., No. 161.]

४८५

कीरग्राम;—संस्कृत ।

[सं० १२२९ = १२४० ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[EI, I, No. XVII (L. 118-119), t. and tr.]

४८६

पर्वत आवू;—संस्कृत ।

[सं० १२३० = १२४१ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[EI, VIII, No. 21, No. 32, t.]

४८७

• रोहो;—संस्कृत तथा गुजराती ।

[सं० १२११ = १२४२ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[EI, II, No. v, No. 14 (p. 29), t. and tr.]

४८८

सियासतबेट;—संस्कृत ।

[सं० १३०० = १२४३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[ASI, XVI, p. 253-254, t.]

४८९

हेरेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[सं० ११६५ = १२४३ ई०]

[इसी बस्ति के उत्तरकी ओरके सम्राट्-पाषाणपर]

श्रीमत्पवित्रमकलङ्कमनन्तकल्पम्

स्वायम्भुनं सकल-मङ्गल-वस्तु-मुख्यम् ।

नित्योत्सवं मणिमयं निलयं विनानाम्

त्रैलोक्यभूषणमहं शरणं प्रपद्ये ॥

स्वस्ति श्रीमत् शुभकीर्ति-पण्डित-देवर गुडि पेकम-सेट्टिय मगळु कामळ्वे
सकळ-गुण-गण-संपन्ने शीलैवति शाक वर्ष ११६५ नेथ शुभकृतु संवत्सरद

वैशाख-मास-शुक्ल-पक्ष-त्रिदशे-बृहस्पतिवारदन्दु आहाराभय-मैत्रय-शास्त्र-दान-
निरतेयागि सन्यसन-समाधि-विधियि सुरलोक-प्राप्तेयादळु ॥ **सोवोजन** बेस

[शुभकीर्त्ति-पण्डित-देवकी शिष्या, पेकम-सेट्टिकी पुत्री, कामन्वेका भी वैसा
ही स्मारक । सोवोवका कार्य्य ।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 162.]

४९०

कडकोल;—कवच ।

[शक ११६८ = १२२६ ई०]

- [१] स्वस्ति श्रीमत्-यादव-**रायनारायण** बु (भु)जवल-प्र-
- [२] ताप-चक्रवर्त्ति **सिंहणदेव** [२] वर्ष ३७ परा-
- [३] **भष-संवत्सर** मार्गाशिर सु (शु)ध(द्र) पंचमी त्रि(बृ)-ह-
- [४] स्पति वारदळु **सूरस्थगण**द **मूलसंघ**द **ओ-नन्दि-**
- [५] **भट्टारकदेव**र गुड **कडकुळ**द **सावन्त-बो-**
- [६] **प्पगौड** हेगडे **सोमय्य**नु समादि (धि) ई (यि) म्
- [७] मुडिपि स्वर्ग-प्राप्तनाद [नु] [।]

मंगळ-महा-श्री [॥]

अनुवादः—स्वस्ति ! यादवोंमेंसे श्रीवाले रायनारायण भुजवल-प्रताप-चक्रवर्ती
सिंहणदेवके ३७वें वर्ष, पराभष-संवत्सरके मार्गाशिर (महीने) के शुक्लपक्षकी
पंचमी, बृहस्पतिवारको सूरस्थगणके मूलसंघके भीनन्दिभट्टारक देवके शिष्य या
अनुयायी; तथा कडकुळ^१के सावन्त-बोप्पगौडके 'हेगडे'^२ **सोमय्य**ने पूर्ण इन्द्रिय-
विरतिकी हालतमें मरणकर स्वर्ग प्राप्त किया । मंगल-महा-श्री ।

[IA, XII, p. 100, No. 1. t. and tr.]

१. 'दूखें झिकावेलोंमें यही नाम 'कडकोळ' पाया जाता है । २. मैजेवर ।

४६१

ऊर्द्धि;—कवच भग्न ।

[वर्ष दुन्दुभि (?)]

[ऊर्द्धिमें, बन-कङ्करी-मन्दिरके मार्गके एक पाषाणपर]

(प्रथम अंश मिट गया है) ... गतिनयनेश-संखेय शकाब्द दुन्दुभि-
 नाम-संवत्सर ... वर-ज्येष्ठमासद सितेतर-पक्षदोळ् द्वितीय-सन्तुतमर्कवार मनुव
 ... तां बसवले लोक-विश्रुते ... दळ् समाधि-वर्षाधिन्दमानिन्द्र-निवास-सौख्यमम् ॥
 नन्दि-वेष-पद-युग-सरसिषहद पञ्च-पद-विनुतान्तःकरणे-महादेव-विभु-विभु वर-
 सरस्वतगणे सुगतिय नडे पडेदळ् ॥

सुरोर्द्धु पुष्प-वृष्टिय- ।

नेरदागळे सुरिये देव-दुन्दुभि-खमम्- ।

बरदोलेसेयल्के बसवले ।

सुर-लोकवेदिदळ् महोत्सवदिन्दम् ॥

नमो वीतराग ॥

[लेख स्पष्ट है । इसमें भी समाधिमरण [चारणकर सुगति-प्राप्तिका
 उल्लेख है ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No, 142.]

४९२

अवधनेलगेला—कवच ।

[वर्ष कदाभव = १२४१ ई० (ख० गणक०)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४८३

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० ११०२=१२४८ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rom. Bombay (ASI, XVI),
p. 358, No. 23, t. and tr.]

४८४

हुस्मच;—कचव—भवन ।

[संक ११७०=१२४८ ई०]

[पद्मावती मन्दिर में, प्राङ्गण में दूसरे पाषाण पर]

भद्रं भूयाजिनेन्द्रस्य शासनायाध-नाशिने ॥

स्वस्ति श्रीमत् स (श) क- वर्ष ११७० नेय अक्षय-संवत्सरद् पुष्य-
शुक्ल-पञ्चमो-बृहस्पतिवारवन्दु श्रीमत् से सोमयन मग ...
डे वेगडे-त वसेयन ... दक्षिण समुदायमं ... मं करदु समस्त ...
ग-सेवितनुमागि ब्रतारोपणं माडिकोण्डु समाधि-विधिधि मृदुपि सुर-लोक-प्राप्तनाद
मङ्गळ महा श्री श्री

[सोमयके पुत्र डे-वेगडेके लिये एक समाधिमरणपूर्वक सुरलोक-
प्राप्तिका उल्लेख है ।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 50]

४९५

मलालकरे;—संस्कृत तथा कचव ।

संक ११७०=१२४८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४६६

हीरेहस्तिः—संस्कृत और कन्नड़—भग्न ।

[शक ११७० = १२४८ ई०]

[हीरेहस्तिमें, भल्लेश्वर मन्दिर की दक्षिणी दीवारके एक पाषाण पत्र]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

नमोऽस्तु ॥

श्रीमत्-पोरुसल्ल-वंशदक्षि विजयादित्याख्यनादं यथा:- ।

प्रेमं तन्त्रप-पुत्रनादनैरेयङ्गोर्वीश्वरं तत्सुतम् ।

भूमिपाळक-मौळि-लाळित-पदं श्री-विष्णु-भूपाळनुद्- ।

दाम-स्व-क्रम-विक्रमोजित-जय-भ्राजिष्णु विष्णूपमम् ॥

मलेयेल्लं वसमास्तदोन्दे तळकाडुं कोयदूर् कोङ्गु नं- ।

गळि काञ्ची-पुरी गङ्गवाडि पेसवैत्तुच्चङ्गि बळळारे बेळ्- ।

वल-नाडा-राचनूर्मुडुगनूर्वल्त्तुरिवं कोण्ड तोळ् ।

वलदिं पोल्ववरारो पेळ् भुज-बळ-भ्राजिष्णुवं विष्णुवम् ॥

आ-विष्णुबळ्दंनङ्गम् ।

भावोद्भव-राज्य-लक्ष्मियेनिसिद लक्ष्मा- ।

देविगमुद्भवसिदिनव- ।

नी-विश्रुत-नारसिंहनाहव-सिंहम् ॥

आ-विश्रुवन पट्ट-महा- ।

देवि मही-देवि विदित-याहव-लक्ष्मी- ।

देवि जय-देवियेवल्- ।

देवि जगत्स्याते सीतेगेजे गुण-गणदिम् ॥

आ-नरसिंह-देवंगं पट्ट-महा-देवियेनिसिद्धेयल-देविगम् ।

सकल-कला-परिपूर्णं ।

सकलोर्वी-नयन-सुखदनकलङ्कं तान् ।

अकुटिलपूर्व-नव-सी- ।

तकरं बल्लाल-देवनुदयज्जेदम् ॥

चोळम्मुत्तिरे पन्नेरळ्-बरिसेकं कोळपोय्ते तां पोदनेम्बु ।

आळापं बरे साल्दोन्दु मोळनं मेल्-डे ... उच्चंगियुं ।

पेळासाध्यवदादुदेन्दु दिविज ... घर वि. ये ब- ।

लल्लाल्दं गिरिदुर्ग-मल्ल-वेसरं बल्लाल-भूपासकम् ॥

सानिवारदन्दे पाञ्चा- ।

वनिपन सप्ताङ्गमेय्दे सिद्धिसिदुदरिम् ।

सानिवार-सिद्धि-वेसरं ।

जनपति बल्लाल-देवनेसेदिरे तळेदम् ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरम् । द्वारावली-पुरवराधी-
श्वरम् । त्रिभुवनमल्ल तळकाडु-कौगु-नङ्गलि-गंगवाडि-नोळम्बवाडि-बनक्से-हुलिगेरे-
हानुङ्गल्-गोड भुजबळ वीरगङ्गनसहाय-शूर सनिवार-सिद्धि गिरि-नुर्ग-मल्ल
चलदङ्क-राम निशङ्क-प्रताप होयसळ-वीर-बल्लाल-देव बोरसमुद्र
नेलेवीडिनल्लि सुल-संकथा-विनोददिं पृथ्वीराज्यं गेयुत्तमिरे ।

वृ ॥ मले-नाडन् तुलु-नाडनभाड बयल-नाडं लसच्चोड-मण-
डलमं पेहोरे मेरेयागे बडगल् श्री-विष्णु-भूपङ्गे भू-न
तलनं साधिसि कोट्टु माण्डु रणदोळ् मारन्तरं कोन्द दोर्-
ब्बळदिं द्रोह-घरट्टनेन्दु पेसव्वेत्तं बोप्प-दण्डाधिपम् ॥

श्रीमन्महाप्रधानं हिरिय-दण्डनायकं द्रोह-घरट्ट-बोप्प-देव आसन्दि-नाड
कोण्डलियं तन्न हेसरिं द्रोहघरट्ट-चतुर्वेदिमङ्गलमेन्दु पेसरनिट्टु भुवन-वीरावतार-
मेम्ब तन्नपेसर्गानुरूपमप्यन्तव्यतिवर्दं भरणवाणि सर्व्व-नमस्यवाणि विट्टना-महाध-
हारद अशेष-महाभनङ्गलम् ।

कोण्डलिव माचनं भू न

मण्डल-विदितं समस्त-शास्त्र-विचारा -।

सञ्चित-मतिमद्-ब्राह्मण -।

मण्डल-सरसीव-सण्ड-चण्डाद्यु-निभं ॥

भूतेय-नाक-गुण्य -।

ख्यातं कटक-रत्न-सक-सङ्कारम् ।

भूतल-विदितं तत्तनु -।

वार्त बल्लाल-रूप-कुमारं मारम् ।

व ॥ इन्तिनिबरविर्दु तम्मूरिन्दं बहगण जकवेगेरेयं केम्बणनफेरेयसी-ओ वूरं
माडवेळकेन्दु प्रार्थियसि काळ-गवुण्डन तम्मनप्प होन्न-गवुण्डन जक-गवुण्डिय
भगनप्प महा-प्रभु-आदि-गवुण्डके सन्तेयं कोट्टुडाय्यतुं तुन्न तम्म माडि-गवुण्डनुं
मार-गवुण्डनुं अवर मकळुं माच-गवुण्डनुं मार-गवुण्डनुं नाक-गवुण्डनुं चिक-
मारेयनोळगागि काडं कडिदु कन्नेगेरेयं कट्टिसि वूरं माडिदरु ॥

आ- बच्चन अन्वयवेन्तेन्दोडे ।

कञ्च-गवुण्डमुत्तेय ।

.....हिरिय्यम् ।

सञ्चित-सद्-गुण-गण-मणि ।

सञ्चय ... लिद् होन्न-गौडण्डं वनकम् ॥

आ-नेगळ्द होन्न-गवुण्डन ।

... .. आदि गवुण्डन ताय् ताम् ।

भू-नुत्त-पतिव्रता-गुणे ।

वानकियो जक-गवुण्डि गुण-निचिये ... ॥

... .. । ॥

यस्यस्यगच्छिमी पासम् ।

पांसट्टुवाजमन-वारियागिरे नञम् ।

हस-गासदोळ् अ ।

... सनदिनारादि-गौण्ड ... ॥
 केरेयं कट्टिसुतिपुंहु- ।
 मरवण्णोयिडिसुतिपुंहेसे ... ॥
 ... ॥
 ... उज्जुगवेन्दुम् ॥
 ... ॥
 हसिदर मोगमं नोडम् ।
 हसिबुं नीरळ्ळे यिस्स कण्ड ... ॥
 ... एनिप ... ॥
 वसुवैयोळान्नोंळ्पडादि-गौण्डन दोरेयर् ॥
 अन्तेसेडादि-ग [व्] ण्डन ।
 कान्ते मनः कान्ते नाग-गाडुण्डि जगत्- ।
 कान्ते पति-भक्ति-गुणदिन्द ।
 अन्तिस्सद जसदिनेसेदळवनी-तळदोळ् ॥
 वन्दर् बिदिनरेन्दन् ।
 ओन्दिद सन्तोषदिन्द सासिरकं कय्- ।
 सन्ददुण्णु बडिप-गुण- ।
 दिन्दं पेळु नाग-गौण्डि ... ॥
 ... ॥
 ... भू - । मण्डलदोळगिन्नु नोन्त कान्तेषरोळरे ॥
 अवरिर्बर्म्मो पुट्टिद ।
 ... माय-गौण्डनातन तम्मं ।
 सुवनाधारं ... य- ।
 नवननुचर ... चिक-मारेयनेम्बर ॥
 अकरोळ्ळी ... ॥
 भुवन-हितं माय-गौण्डनेम्भ महात्मम् ।

भवसेयिनोद्धिपन्दार्पिद् ।

इवन-बोलाभुणिगळेनिसि नेगळ्दं बगदोळ् ॥

..... ।

... मत्तवधिक-वलदिं किरिदळु ... ।

... निपं समस्त-पुरुषा- ।

र्थ-निधानं **माच-गौण्ड** नर्थि-निधानम् ॥

मार-गौण्ड ।

..... निधानम् ॥

वारिनिधि-वेष्टितोर्व्वियो- ।

ळारुं तन्नन्नरिल्लेनिप्यं गुणदिम् ॥

लोकापकार-कारण- ।

नेक-क्रमव ।

..... ।

... गनी-लोकदोळगे लोकं बडेवं ॥

मातृ-पितृ-भक्तनखिल- ।

ख्यातं पुण्यक त्रि-मूर्ति ।

..... ।

... क तम्मनम्मङ्गणम् ॥

आदि-गौण्डन गुरु-कुल-क्रमवेन्तप्पुदेन्दडे । श्रीमद्-**ब्रमिळ** वारिसि
 ... धर्म-तीर्थं प्रवर्त्तिसुन्न **ब्रह्मामिणळिन्द** पर-
 वादीश्वर वृन्द-वंद्य-श्री-पादरशेष-शास्त्र-वार्द्धिग रायणप्पर-
 हित-व्यापार गुण-धनं श्री-**वासुपूज्य-मुनि** न्त-
 देवर-शिष्य **पेरुमाळे-देवरिगे** तोषेद बसदिं माडिसि
 श्री-देवर-प्रतिष्ठेयं माडिसि आ-देवरष्ट-विधान्चर्चनेमं रिषियराहार-दानककं बीण्णों-
 दारककं नडवन्तागि बिट्ट तळ-वृत्ति (आगेकी ५ पंक्तियोंमें दानकी चर्चा है)
 सक-वर्ष ११७० तेनेय **प्लव-संवत्सर** तुत्तरायण-तङ्कमाण-व्यतीपातदन्दु

कोण्डलियशेष-महाबनङ्गलुं आदि-गौण्डनुं माडि कोट्टरु मङ्गल महा श्री (हमेशा का अन्तिम श्लोक) नमोऽस्तु वीतरागाय ॥

[इस लेखमें आदि-गवुण्डने अपने गुरु पेरुमाले-देवके लिये एक विशाल बसदि बनवायी और उसके लिये (उक्त) कुछ भूमिका दान दिया, और (उक्त मित्तिको) आदि-गवुण्ड, और उसके पुत्रों तथा गाँवके ४० कुटुम्बोंके साथ कोण्डलिके सारे ब्राह्मणोंने उस भूमि तथा मन्दिरको पेरुमाले-देवको समर्पण कर दिया ।]

[EC, V, Belur tl., No. 138.]

४६७

बुग्मन्, — संस्कृत तथा कन्नड — भग्न ।

[शक ११७२ = १२५० ई०]

[पद्मावती मन्दिर में, एक पाषाण पर]

बरमसेन... नाय... स्वास्त

श्रीमत्परमर्गभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमत्-स (श) क- वर्ष ११७२ नेय कीलक-संवत्सरद् शुद्ध-
भाषण-दशमी-शुक्लवारदन्दु श्रीमन्महामण्डलेश्वर श्री-ब्रह्म-भूपालकन सवि

... .. ब्रह्मय-सेनबोवन प्रिय-पुत्र

पार्श्व-सेनबोव माडि

... .. सुर-लोक-प्रापितनादम् श्री (बाकीका पढ़ा नहीं जा सकता है) ।

[महा-मण्डलेश्वरब्रह्म-भूपालके मन्त्री ब्रह्मय-सेनबोवके प्रिय पुत्र पार्श्व-सेनबोवने 'समाधि' की विधिसे स्वर्गलोक प्राप्त किया ।]

[Ec, VIII, Nagar tl., No. 56]

४९८

अवणबेलगोला;—संस्कृत तथा कन्नड—अग्न ।

[बिना काक निर्देसका]

[कै० शि० १००, प्र० भा०]

४९९

हलेबोड;—संस्कृत और कन्नड ।

[शक ११७७ = १२५१ ई०]

हलेबोड से कर्गो हुई बस्तिहल्लिमें, पारवंनाय बस्तिहले बाहरकी दीवाकके

पाषाणके एक ओर]

श्रीमत्-सम्पत्त्व-चूडामणि सल्ल-नृपना-वंश-सिंहासनस्थम् ।

सोमेशं नित्यन्यन्तोसेदु विजय-तीर्थाधिनाथकं नाल्लकुम् ।

सीमा-संस्थानदोळ् मुकोडे यसेविनेगं नट्टु धम्मके कोट्टम् ।

भूमीशत्वके तानेन्दरिपुव तेरदि तत्सुतं नारसिंहम् ॥

शुक्रवर्ष ११७७ नेय आनन्द-संवत्सरद् मार्गशिर-व १ वृ-धन्दु
 श्रीमत् प्रताप-चक्रवर्त्ति-होयसल्ल-श्री-वीर-नारसिंह-देवरस ६ बोप्प-देव-दण्णाय-
 कर बसदिगे विजयं गेट्टु श्री-विजय-पार्श्व-देवरिगे काणिकेयनिकि आ-वसदिय
 मुण्ण शासनवं कण्डु तम्मन्वयराजावळियनोदिसि-गोडुत्तविह्वसरदोळ् आ-शासन-
 स्थवह देव-दानद क्षेत्रदोळगे मय्दुनं पण्णि-देव ६ वट्टारव कट्टि मनेय माडि आ-
 वठारल्लु हल्लव वरुसदिन्दुवु हल्लागि विदुदनु केळि तम्म अन्वयद धम्मबोप्पु ...
 कारणवागियुं श्रीमत् प्रताप-चक्रवर्त्ति-होयसल्ल-श्री-वीर-सोमेश्वर-देवरस राज्या-
 म्युदयवहन्तागियुं पूर्व-देसे ... नट्ट कल्लिन्दोळ्पाणभूमिसहित मयिदुन-
 पण्णि देवन वठारवनु बी ... मनेयमाडि आ-विजय-पार्श्व-देवन श्री-काट्ट व
 नडिसु वन्तागि सर्व-बावे-परिहारवागि आ-चन्द्रार्कस्यायियागि सल्लुवन्तागि अन्दिन

घनुस्-संक्रमणदलु आ-देवर सन्निधियलु आ-कुमार-नारसिंह-देवर तम्म श्री-
हस्तदलु पुन-[२]-घारेयनेरेदु कोट्टरु मङ्गल महा श्री श्री

[१२६]

आनन्द-संवत्सरद फाल्गुन-व २ बु । इन्दु श्रीमतु प्रताप-चक्रवर्त्ति-
कुमार-नारसिंह-देवरसरु तवगे उपनयनवादल्लि बोप्प-देव-दण्णायकर बसदिय
श्री-विजय-पार्व-देवर श्री-कार्यके आ-चन्द्रार्क-स्थार्यागि नडवन्तागि हिरिय-
केरय केळगे केम... द साल-माविन गट्टिनोळगे कोळद-होन्नयन पट्टशालेगे कल्ल
नट्टु बिट्ट भूमियिन्द मूडलु गद्दे गुम्मेस्वरद कोळगदल्लु गद्दे सलगे नाल्लकुवम्
घारा-पूर्वर्क माडि सर्व्व-बाघे परिहारवागि कोट्टरु (परिचत अन्तिम श्लोक)
मंगळ कहा श्री श्री श्री

[सलके दंशमें सोमेश हुआ । उसका पुत्र नारसिंह था । सोमेशका
विजय-तीर्थाभिनाय (दण्णायक) बोप्पदेव था । (उक्त दिन) प्रताप-चक्रवर्त्ति
होय्ळ बीर-नारसिंह देवरसने बोप्पदेव-दण्णायककी बसदिका निरीक्षणकर बसदिका
पूर्व 'शासन' देखा और अपनी दंशावली पढ़ी । उसने अपने साहो या बीजा
पाश्र्व-देवके द्वारा बनवायी गई चहार-दीवारी और एक मकानको, जो कि ध्वस्त
हो गया था, सुधरवाकर घनुस्-संक्रमणके समय में विजय-पार्व-देवकी सेवामें
अर्पण कर दिया ।

[१२६]-कुमार नारसिंह देवरसने (उक्त भित्तिको) अपने 'उपनयन'
संस्कारके समय (उक्त) कुछ दान दिये ।]

[EC, V, Belur tl., No. 125 and 126.]

५००

हुम्मच;—कन्नड ।

[वर्ष आनन्द = १२५५ ई० ? (ल. राहस) ।]

[पञ्चावली मन्दिरके प्राङ्गणमें, २वें बायाणपर]

श्री-मूलसंघ-देशी-गणद ... दु-त्रैविद्य-देवर गुडु ... जननी
 बाळचन्द्र-देवर गुडि व्रत-शील-गुण-सम्पन्ने सोयि-देवि आनन्द-संवत्सरद
 पुण्य-मास-बाळ-दशमि-बुधवारवन्दु समाधि विचयि मुडिपि सुर-लोकव
 सुरे गोण्डळ

माता कामाम्बिका श्रीमान् ... माधवाहयः ।

पुत्री सोमाम्बिका तस्याः सोयि-देवी ... ज ॥

कवित्वे गमकित्वे च वादित्वे वाग्मिता-जये ।

त्रैविद्य-बाळचन्द्रस्य सदस्यो नास्ति नास्ति हि ॥

मङ्गळ महा श्री

[श्री-मूलसंघ और देशी-गणके ... दु-त्रैविद्य-देवके गृहस्थ शिष्य ... की
 माँ, बाळचन्द्र-देवकी गृहस्थ-शिष्या सोयि-देवि, (उक्त मितिको), समाधिकी
 विधिसे मर गयी और स्वर्गलोकको प्राप्त हुई । उसकी माँ कामाम्बिका थी, पिता
 माधव, तथा पुत्री सोमाम्बिका थी ।

कवित्वमें, गमकित्वमें, वादित्वमें, वाग्मिता तथा जयमें त्रैविद्य-बाळचन्द्रके
 समान दुनियामें कोई नहीं है, कोई नहीं है ।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 53.]

५०१

धवणवेल्लोला;—कन्नड ।

[वर्ष नळ = १२२४ ई० (ल. राहस.)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

१०२

चिह्न-मागडि,—कलक-भग्न ।

[संभवतः कलक १२२१ ई०]

[चिह्न-मागडिके, बस्तिके पासके पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमत्तु यादव-नारायण भुजबल-प्रताप-चक्रवर्त्ति श्री-कन्दार-देवन ११
नेय नर-सर्वस्वरद व-बहुल-अमवासे-बहुवारदन्दु मुडिय सा वन्त
सन्यसन-समाधिय माडि सुगति-प्राप्तनादं मङ्गल महा श्री श्री गण-सैलेन्दु-शशङ्क
... कार्तिक-कृष्ण-पक्षमेने हिमना शनिवार उत्तरायण ... स ...
... प्रणष्ट ... देवर गुडनेसेव शान्त ... नवरनु सामन्त मु ...
मनदोलु ता पञ्च-पदवं चिन्तिसुत्त मरमु ... स्वर्मा-जनके ... आप्त-जन
परिवारं बन्धु-जनमुमाभित-जनसं निलेदेक्षरं शरणिस्तदेन्दु ... उत्तिदर ।

पुरुष-निधाननं सकल-भोगियनाभित-कल्प-वृक्षनम् ।

नर-सुर-वेनु वन्दि-सुर-भूज नवीन-मनोज-रूपन ।

गुरु-पद-भक्ति ... ल् प्रभाव-साकन्त मुब्बन ... वोन्देनि ... ।

कशणि विधात्रमूल ... पद-लोभिगळि ॥

(बाकीका मिट गया है) ।

[स्वस्ति । यादव-नारायण भुजबल-प्रताप-चक्रवर्त्ति कन्दार-देवके ११वें वर्षमें,—मुडिके सा ... वन्तने, 'सन्यसन' महोत्सवकी (विधि) को करते हुए, सुखी हालत प्राप्त की । उसकी और भी प्रशंसा । (शिलालेख बहुत घिसा हुआ है ।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No. 198.]

[यह शिलालेख बहुत-कुछ फिसा हुआ है ।]

जिन-शासनकी प्रशंसा । जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्र और कर्णाटक विषयको प्रशंसा । बहुत राज्यों का स्वामी, लक्ष्मेश्वर, यादववंशीय राजा रामचन्द्र थे । उसकी उत्पत्ति । जयसिंह नामके कोई राजा थे । उनके पश्चात् [कन्दर राय] और उसका भाई महदेव था । कन्दर रायका पुत्र रामदेव हुआ ।

तत्प्राप्तपद्मोपजीवी कूचि-राज था, और राजगुरु जिन-भट्टारक-देव थे । उनकी उत्पत्ति । वीरसेन और जिनसेनाचार्यकी परम्परामें । गुण-भद्र-योगी और जिन-सेन-योगी हुए । इसके बाद महसेनके पुत्र मुनि पद्मसेन-यतिपकी प्रशंसा आती है ।

उक्त मुनीश्वरके चरणोंका भक्त कूचि-राज था । उसकी उत्पत्ति । वह सिं [ह] देव और मल्लाम्बिकाका पुत्र था, उसका छोटा भाई चट्ट था, पत्नी लक्ष्मी (या लक्ष्मी) थी । उसकी पत्नी लक्ष्मी-देवीकी प्रशंसा । उसका पुत्र वीणदेव था, जो पद्मसेन मुनिके चरणोंका भक्त था ।

पाण्ड्य-देशके मध्यमें स्थित बेतूर की प्रशंसा । माचिके पुत्र हरिप-गौड, माचिके पुत्र योग-गौड, तथा सोमके पुत्र राम-गौडका उल्लेख ।

और जब उस कूचि-राजको बेतूर तथा दूसरे गाँवोंका घेरा मिल गया,—और जब उसकी स्त्री स्वर्गस्थ हो गयी,—पद्मसेन-भट्टारककी सम्मतिसे, उसने लक्ष्मी-जिनालय खड़ा किया । और कूचने यह मन्दिर श्री-मूलसंघके सेनगणके योगले-गच्छको दे दिया ।

कूचि-राजने (उक्त मितिको) वीर-महदेव-रायके शुभ हस्तोंसे अग्रहारके रूपमें, लक्ष्मी-जिनालयके लिये, दुर्गितेयहस्ति प्राप्त करके तथा १२ होन्तुपर काम करनेवाला एक भोजिय-सदाके लिये नियत कर, उसे पद्मसेन-भट्टारक-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक, उस जिनालयके पारवनाथ देवके लिये एक शासन (लेख) द्वारा सौंप दिया । तथा, गौड लोगोंके साथ-साथ चलकर, उसने एक दुकान तथा दुपारीका एक बगीचा भी दिया ।

[EC, XI, Davangere tl., No 13]

५१२

भवणबेलोलक-संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक ११११ (ठीक १११५ ?) = १२७३ ई० (बीकानेर)]

[जै० शि० सं०, प्र० मा०]

५१३

चिक्क-मागडि; कन्नड-भग्न ।

[बिना काठ-निर्देशक]

[चिक्क-मागडिमें, वस्तिके पासके पाषाण पर]

स्वस्ति श्रीमत्तु यादव-नारायण प्रताप-चक्रवर्ति देवर बर्बड २८
नेव शर्बदि संवत्सरद कार्तिक चिक्कमागडिय अकशले बम्मोज
स वदिर गति
... .. नेन्दे पुण्डु सत्-पुण्ड-सिधनुदात्त-निकि
सञ्चारित पडेद समाधिषम् ॥

पडेदु समाधिषनिन्नोर ... ।

पडलददभर-पुरकेगि देव-निकायम् ।

गेडेगोडरे मुर-मुल्लम ।

पडेद बम्मोज अमल-बिन-मावनेयम् ॥

[मुनार बम्मोजके लिये उसकी सम्पत्तिकर प्रदर्शक यह लेख है ।]

[Eo, VII, Shikarpur tl, No. 199]

५१४

इलेफोड—कन्नड ।

[शक-११६७ = १२७४ ई० (चीकहॉर्न)]

[आदिनायेश्वर बस्तिके पास-बस्तिहस्तिमें]

श्रीमन्नेमिचन्द्र-पण्डितदेवर

श्रीमद्बालचन्द्र-पण्डित-देवर

केळिहर

सारचतुष्टयादि-ग्रन्थगळ

व्याख्यानमं माडिदपरः

(बायीं ओर) स्वस्ति श्री मूलसंघ-देशिय-गण-पुस्तक-गच्छ-कोण्ड-
कुन्दान्वयदिज्ञलेश्वरद बलिय श्री-समुदायद-भावनन्दि-महारक-देवर
प्रिय-शिष्यद श्रीमन्नेमिचन्द्र-महारक-देवर श्रीमद्भयचन्द्र-सिद्धांत-
चक्रवर्तिगळुं दीक्षा-गुरुगळुं भुत-गुरुगळुमागे तप [स्]-भुतज्ञलि जगदोळ
विख्यात-बेट् श्रीमद्बालचन्द्र-पण्डित-देवर सक-वर्ष ११६७ नेय भाव-
संवत्सरद भाद्रपद-शुद्ध १२ बुधवारद मध्याह्न-कालदोळु यमगे समाधियन्दु
चातुर्वर्णिगळुगरिपि नीवेळवर धार्मिकरूपुदेन्दु नियामिसि क्षमितव्यमेन्दु सन्य-
सनपूर्वकं सकळ-निवृत्तियं माडि पत्त्यंकासनदोळिर्दु पञ्च-परमेष्ठिगळ स्वल्पमं
ध्यानिसुतं स्व-उमय-पर-समयंगळु मेन्वे उत्तम-समाधियं पडदर श्रीमद्रावबानी-
दोरसमुद्रद सम्भूत-भ-(दायीं ओर) व्य-जन-गळुं तत्कालोचितमप्य चर्म-
प्रभावनेयं माडि परोक्ष-विनय-मागि गुरुगळ प्रतिवृत्ति-समन्वितं पञ्च-परमेष्ठिगळ
प्रतिमेयं माडिसि यथा-क्रमदिं लोकोत्तरमागे प्रतिष्ठेयं माडि पुण्य-वृद्धि-यशो-
वृद्धियं माडिकोण्डर । भद्रमस्तु जयतु जिन शासनाय ।

श्री-जैनागम-वाङ्मि-वर्द्धन-विशुः कन्दर्प-दर्यापहो

उपर्युक्त पात्राणके छिरे पर हो मूर्तियोंके ऊपर यह लिखा हुआ है ।

भव्याम्भोज-दिवाकरो गुण-निधिः कारुण्य-सौघोदधिः ।
 स श्रीमानभयेन्दु-सन्मुनि-पति-प्रख्यात-शिष्योत्तमो
 जीयात् कावनिशब्जिबात्मनि रतौ **बालेन्दु-योगीश्वरः ॥**
 पूर्वाचार्य-परंपरागत-जिन-स्तोत्रागमाध्यात्म-सच्-
 छात्राणि प्रयितानि येन सहसाम्भूवन्निष्ठा-मण्डले ।
 श्रीमन्मान्य-**भयेन्दुयोगि-विबुध-प्रख्यात-सत्-सु-जना**
 बालेन्दु-व्रतिपेन तेन लसति श्रो-जैनधर्म्मोऽधुना ॥

श्री-**बालचन्द्र-पण्डित-देवाय** नमः ॥

दूसरा लेख

(उसी बस्तिमें, समाधि-मण्डपके बायीं ओर)

श्रीमदभयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्त्तिगळु व्याख्यानमं माडिदवर ॥
 श्रीमद्-बालचन्द्र-पण्डित-देवर केळिदवर ।
 श्रीमज्जिनेन्द्र-मुख-निर्गत-दिव्य-वाणी
 यस्याननेन्दुमुपसृत्य विवर्द्धमाना ।
 तं **बालचन्द्र-मुनि-पण्डित-देवमस्मिन्**
 लोके स्तुवन्ति कवयः परमादरेण ॥
 कस्त्वं कामः क एते हरि-हर-विधि-विश्वं सकाः पञ्च-वाणाः
 कोऽयं धर्म्मः क एष भ्रमर-मय-गुणस्तेऽत्र किं, योधुकामः ।
 संख्यातीतैर्गुणौघैर्जगति दश-विधैश्चारु-धर्म्मैरनन्तैर्-
 वर्णैर्वालेन्दु-योगी लसति कुरु ततस्तत्पदाम्भोज-सेवाम् ॥
 येनाधीतमतीत-बाधममितं स [ज्]-ज्ञान-सम्पादकम्
 शास्त्रं सर्व्व-जनोपकारि विहिताचारोचितां प्रेमतः ।
 तस्मादनन्त-भव्य-कञ्ज-तरणेर्वालेन्दु-योगीश्वराद्
 आप्तं मुक्ति-सुखैक-साधनमनु प्रेक्षोपदेशादिकम् ॥

इक्षोऽयमक्षपादादि-पक्षमावीक्ष्य तत्क्षणे ।

प्रत्यक्षादि-प्रमाणेन मेत्तुं बालेन्दु-सन्मुनिः ॥

चर्द्धतां चिन-शासनम् । श्री-पञ्च-परमेष्ठिगळे शरण । श्री-बालचन्द्र-पण्डित-
देवाय नमः ॥

ॐ ह्रीं हं

[बालचन्द्र-पण्डित-देव 'सारचतुष्टय' तथा अन्य ग्रन्थोंपर टीका बनाते हैं (या करते हैं) । नेमिचन्द्र-पण्डित-देव सुनते हैं (ऊपर पाषाणके माथे पर लिखा हुआ) ।

श्री-मूलसंघ, देशिय-गण, पुस्तक-गण्ड, कौण्डकुन्दान्वय, इक्ष्णुशेखर-बलि, श्री-समुदायके माघनन्दि-भट्टारक-देवके प्रिय शिष्य,—नेमिचन्द्र-भट्टारक-देव और अमयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्ती उनके क्रमसे 'दीक्षागुरु' और 'श्रुतगुरु' थे,—
बालचन्द्र-पण्डित-देवने चतुर्वर्णोंके सामने यह घोषणा की कि "(उक्त मितिको) मध्याह्न-कालमें मैं समाधि (सल्लेखना) ले लूँगा ।" तदनुसार उनके समाधि-मरण प्राप्त करनेके बाद दोरस्मृद्रके भव्य लोगो (जैनो) ने उनके स्मारक के रूपमें उनकी (अपने गुरु की) तथा पञ्च-परमेश्वरकी प्रतिमायें बनवाकर उनकी प्रतिष्ठा की । इससे उनका गुण और कीर्ति खूब बढ़े ।

१३२ वें लेखमें अमयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्ती टीका करते हैं । बालचन्द्र-पण्डित-देव सुनते हैं । इसमें बालचन्द्र-पण्डित-देव की प्रशंसा भरी हुई है । कामको भी उनकी सेवा करनेका आदेश इसमें दिया हुआ है ।]

[Ec, V, Belur tl. No 131 and 132]

५१५-५१६

अवणवेल्गोला;—कन्नड़ ।

[वर्ष माघ = १२७४ ई० ? (ल. राहू.)

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५१७

अवधबेलगोला—कवच ।

[बिना काक निर्देशका]

[जै० झि० सं०, प्र० भा०]

५१८

गिरनार,—संस्कृत

[सं० १३३३=१२७६ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay
(ASI, XVI), p. 353, No. 10, t. and tr.]

५१९

चित्तौड़ (राजपूताना);—संस्कृत ।

[सं० १३३७=१२७७ ई०]

[शृङ्गार चावडी मन्दिर के पास किले की दीवार में एक पुराने मन्दिर
के डहटे बनाये गये चौखट के ऊपरी भागपर]

(१) (चिह्न) • ॥ स्वस्ति श्री-सं०-१३३४ वर्षे वैशाख सुदि ३ बु (बु) च-दिने
श्री बु (बु) हृद्-गच्छे सा० प्रह्लाद-पुत्र-सा०-रत्नसिंह-कारित-श्री-शान्ति-
नाथ-चैत्ये सा०-समधा-पुत्र-सा०-महण-भार्या-सोहिणी पुत्री-कुम-

(२) राज-भाविक्या मातामह-सा०-ठाडा-श्रेयसे देव-कुलिका कारिता ॥

[लेखमें शान्तिनाथमन्दिरके प्राङ्गणमें एक छोटे मन्दिर (देव-कुलिका)
के निर्माण का स्पष्ट उल्लेख है ।]

[ASWI, progress Report 1903-1904, p. 59, t.]

५२०

अवणबेलगोला—कन्नड ।

[शक १२००=१२७८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५२१

अमरापुरः—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १२००=१२७८ ई०]

[अमरापुरमें, ताळाव के नष्ट बाँध में एक पाषाण पर]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासन । बन-शासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-वसुमती-भार-धौरेय-दोर्-दण्डरं अधः-कृतो-दण्डरं मार्त्तण्ड-कुल-
 भूषणरुमभिसम्पात-भीषणरुमोरेयूर-पुर-वराधीश्वरमेनिष्य चोळावनीशरोळु ॥
 स्वस्ति श्रीमन्-महा-मण्डलेश्वरं त्रिभुवनमल्ल भुज-बळ-भीम रोद्द गोव खडग-सह-
 देव अरुवत्तारु-मण्डळिकर तले-गोण्ड-भाण्ड बण्ढर बाब पर-नारी-सहोदर पडे मेन्चे
 गण्ड निगळ्ळ-मल्ल भीतरं कोल्ल मरेवुगे काव शरणागत-वज्र-पञ्जरमसहाय-शूर
 येकाङ्गवीर निरर्शक-प्रताप-चक्रवर्त्ति वीर-दानव-मुरारि पिरुङ्गोण-देव-चोळ-
 महापञ्जर श्री पृथ्वी-निङ्गुगल्लु-नेलेवीडिनोळु नेलास सुख-सङ्कथा-विनोददि
 राख्य गेय्युत्तमिरलु शक-वर्ष ॥ १२०० नेय ईश्वर-संवत्सरद आषाढ-
 शुद्ध-पञ्चमी-सोमवारन्दु तैलङ्गेरेय जोग-मट्टिगेय ब्रह्म-जिनालयके
 मूल-संध देशिय-माण कोण्ड-कुन्दान्वय पुस्तक-गन्धु यिङ्गळेस्वरद बळिय
 त्रिभुवन कीर्त्ति-रापुळर प्रचान शिष्यर बाळेन्दु-मल्लवारि-देवर प्रिय-गुडुर्नु
 सङ्गयन बोम्मि-सेट्टिगं मेळव्वेगं पुट्टिद मल्लि-सेट्टि तम्मडियहळ्ळिय
 एरेयगुय्यल तन्न एरडु-भागवू एरडु-सायिर-अडकेय-मरनु तैलङ्गेरेय वसदिय

प्रसन्न-पार्श्वदेव प्रतिहस्तवागि मकळु-पर्यन्तं वृत्तिवन्तनेन्दुं दक्षिण-पाण्ड य-
देश दक्षिण-मधुरेय उत्तर-भागदक्षि पोन्नर ... न्ति-सीमेय भुवलोका-
नाथ विषयद भुवलोकाथन वूर (पुर) बिन-ब्राह्मणरक्षि यजुर्वेदवैत्रेय-
शस्त्रे वशिष्ठ-गोत्र कौण्डिन्य-मैत्रा-वरुण-वैशिष्टमेम्न-प्रवरद दीप-नायकज्ञं
पोन्नव्वेगं पुट्टिद श्री-सयनगिरियुं आ-बालेन्दु-मलधारि-देवर प्रिय-शिष्यनु-
मप्य चेक्षपिस्ते-हस्तदक्षि आ-चन्द्राकं-वरं तन्न मेळि-भागवनु धारा-पूर्वकं वृत्ति-
यागि कीट्ट ॥ यिन्तपुदके साच्चि हदिनेण्डु-समयं मस्ति-सेट्टि ओप्प श्री-जीतराग
हदिनेण्डु-समयद ओप्प सदाशिव-देवर (वही अन्तिम श्लोक)

[बिन शासनकी प्रशंसा ।

स्वस्ति । मार्तण्ड-कुल-भूषण, ओरेयूर-पुरवराचीश्वर, चोळ राजा थे,—
बिनमेंसे,—बिस समय महा-मण्डलेश्वर, यिरुक्कोण-देव-चोळ-महाराज अपने
पृथ्वी-निडुगलके निवासस्थानमें थे:—

(उक्त मितिको,) तैलङ्गेरेमें बोगमट्टिगेके ब्रह्मजिनालयके लिये, (मूल
संघ, देशिय-गण, कोण्डकुन्दान्वय, पुस्तक-गन्ध, और इङ्गळेश्वर-बळिके त्रिभुवन-
कीर्त्ति-रावुळके प्रधान शिष्य) बालेन्दु मलधारिके प्रिय पृहस्थ-शिष्य, सङ्गयके
(पुत्र) बोम्मि-सेट्टि तथा मेळव्वेसे उत्पन्न,—मल्लिसेट्टिने, तैलङ्गेरे बसदिके
प्रसन्न पार्श्व-देवके लिये, तम्मडियहळिळमें सुपारीके २००० पेड़ोंके २ हिस्से
वंशानुवंश तक जानेके लिये अलग निकाल दिये तथा दीपनायक और पोन्नव्वे-
से उत्पन्न चेक्षपिस्तेको वे अपित कर दिये । (यहाँ दीपनायकके शहर, खानदान
आदिका परिचय दिया है ।) चेक्षपिस्ते सयनगिरि और बालेन्दु-मलधारिका प्रिय
शिष्य था । साच्चियों के हस्ताक्षर ।]

शाप ।

[EC, XII, Sira tl., No. 32.]

५२२

कलस—कलस ।

[सं० १२०० = १२७० ई०]

[दूसरे ताम्रके शासनपर]

स्वस्ति श्रीमत्-पट्टद पिरिपरसि कलाल-महादेवियर पृथ्वी-राज्यं गेयुत्तिरलु
 मुक्क-काल १२०० नेय ईश्वर-संवत्सरद वृश्चिक ३ वा १ कलसनाथ-
 देवरिगे जिनेश्वर-देवारगे मादेवसवागि कलसेट्टिय मादव दारेयनेरसिकोण्डा अकि
 मान २ नडवन्तागि निमानिय मेगे कोडक्किय नि ... क सहितौ गळु बिट्टि तेरुमा
 सलुव प १ छदे आव त्वरुगडेयू अल्ल अन्तपुदके सात्ति आ-मरसणिय नाळ
 कळसद हेन्वरवकळु (औरों का नाम दिया है) कलसनाथदेवर अमृतयाडगे
 अकि कुहुते १ नील-कष्टकोळ माकेयन कैयलि कोण्ड अलुगल-मकिय ...
 हुलियहाळिय मेळे मुदुकिय तलेय गण १ मेले न ... अन्तपुदके सात्ति कळसद
 ग्राम आ-देव्वारवकळु ।

[जिस समय अभिषिक्त ज्येष्ठ रानी कलाल-महादेवी पृथ्वीका राज्य कर
 रहीं थी :—(उक्त मितिको) जब कि यह कलसनाथ और जिनेश्वर दोनोंका
 महान् दिन था,—कलसेट्टिके पुत्र मादवने, सर्व करोसे मुक्त, दो 'मान' धान्य
 (चावल) देनेके लिये (उक्त) दान दिया । सान्नी । उन्हीं देवताके लिये एक
 और भी (उक्त) भूमिका दान ।]

[EC, VI, Mudgere tl., No. 67 l.]

५२३

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १२१५ = १२७० ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI),
 p. 352-353, No. 9 (II part), t. and tr.]

५२४

हलेबीड— संस्कृत और कन्नड़ ।

[शक १२०१ = १२७१ ई०]

[बस्तिहल्लिमें, शान्तिनाथेश्वर बस्तिके पहिले ही प्रतिमा पाषाणपर]

(सामने)

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।
 जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
 श्री-संघ-रै-कुभृति देशिय-सद्गणाख्य-
 कल्पाङ्घ्रिप्रयो लसति पुस्तक-गच्छ-शाखः ।
 श्री-कुण्डकुन्द-मुनिपान्वय-चार-मूलः
 सारेङ्गलेश्वर-बलि-प्रच्छोपशाखः ॥
 इन्तु पोगळ्तेवेत्त यति-सन्ततियोळ् कुलभूषणाख्य-सै- ।
 शान्तिक-शिष्यनूजित-जिनालय-कारक-निम्ब-देव-सा- ।
 मान्तन सुवतकके गुरु वाग्-बनिता-पति माघनन्दि-सै- ।
 शान्तिक-चक्रवर्ति येसेद वसुधा-पति-राजि-नूजितम् ॥
 नमो गन्धविमुक्ताय तच्छिष्याय त्रिमुक्तये ।
 विशुद्ध-जैन-सिद्धान्त-नन्दिने शुभनन्दिने ॥

तच्छिष्यरु ।

धवळ-यशो-नीरञ्जित- ।
 भुवनं कवि-गमक-वादि-वाग्मि-वितान- ।
 प्रवरं सार्थक-निज-ना- ।
 म-विलासं चारुकोर्त्ति-पण्डित-देवम् ॥

तच्छिष्यरु ।

कु-मतौष-निवारकनम् ।

नमस्करिष्येम् बिनागमोद्धारकनम् ।

बिमल-दयाचारकनम् ।

समुदायद माघनन्दि-भट्टारकनम् ॥

श्री-नेमिचन्द्र-भट्टारक-वेषोऽप्यभयचन्द्र-सैदान्तोऽपि ।

इति शिष्याभ्यां गुरु-माघनन्दाभूदधर्म-इव ... म्याम् ॥

तदुभयरोळ् अभयचन्द्र-सैदान्त-चक्रव (दायीं ओर) त्रिगळ महिमेयेन्तेने ॥

वृ ॥ छन्दो-न्याय-निघण्टु-शब्द-समयालङ्कार-षट्-खण्ड-वाग्-

भू-चक्रं विवृतं चिनेन्द्र-हिमवन्नात-प्रमाण-द्वयो- ।

गङ्गा-सिन्धु-युगेन दुर्मन्त-खगोर्बोभृद्भिदा यत् स्व-वी-

चक्राक्रान्तमतोऽमयेन्दु-यतिपः सिद्धान्त-चक्राधिपः ॥

तदुभयमुं क्रमदि दीक्षा-गुरुगळं श्रुत-गुरुगळुमागे पेम्पु-वडेद ।

मासिनी ॥ नुत-गुण-मणि-कोशं कीर्त्ति-वल्लीवृताशं

वितत-सदुपदेशं शस्त-बोध-प्रकाशम् ।

कृत-मदन-निवासं नौमि निम्मोहपाशम्

हत-कुपत-निवेशं बाळचन्द्र-व्रतोशम् ॥

तन्मुनीन्द्र-शिष्यरु ।

स-विशेषागम-वाक्-सुबोधमनीष्टल् कोट्ट कार-त्रि-दो- ।

ष-विचारकृत्तनेत्ति किल्लु विळसद्वल्लनत्रयं रत्तया- ।

गे विनयाळिगे कट्टि रत्तिसिदनी-सिद्धान्त-चक्र-शनेम् ।

मव-रोगकके सु-वैद्यनोबभयचन्द्रं बाळचन्द्रात्मकम् ॥

सासिरदिन्नूरेरडेने- ।

या-शक-वर्ष-प्रभादि-समदूर्ण-लसन्मा- ।

सासित-पद्मद नवमी- ।

शसिवार-त्रियामदोळ् तन्मुनिपम् ॥

अरिहात्मीय-समाधिर्धं तोरदु सन्नीहारमं देहमं ।

मेरेडच्चोभत्तैयं बगं पोगळे पर्यङ्कासन-प्राप्तिरियम् ।

नेरेडालोड-कलाशुवं दिवदोळं तोप्येन्दलेम्कददिम् ।
 तरिसन्दं सर-मन्दिरकभयचन्द्रं रन्द्र सैद्धान्तिकम् ॥
 मुददभयचन्द्र-सिद्धान्त- ।
 ति-देवरगाद निसिचियं दोरसमु- ।
 द्रद नखरङ्गळ् निर्मिसि ।
 विदित-यशः-पुण्य-बुद्धियं कैकोण्डर् ॥

मंगलमहा श्री श्री श्री ॥

(बायीं ओर) श्री-अभयचन्द्र-सिद्धान्ति-देवर् तम्म शिष्य-बाळचन्द्र-देवरिगे
 आख्यानं माडिदपर ॥ श्री श्री

[इस लेखमें बालचन्द्रकै श्रुतगुरु अभयचन्द्र महासैद्धान्तिकके समाधि
 मरणका उल्लेख है ।

जिन शासनकी प्रशंसाके बाद श्री-संघ (मूलसंघ) को एक पर्वत मानकर
 उसके ऊपर देशिय-गणको एकवृक्षकी उपमा दी है । इस कल्पवृक्षकी जड़ कुन्-
 कुन्दान्वय है, इसकी शाखाएँ पुस्तक-गच्छ हैं, और इसकी उपशाखायें इक्ष-
 लेश्वर बलि हैं । इसी प्रसिद्ध परम्परामें कुलभूषण-सैद्धान्तिक, उनके शिष्य एक
 जिन-मन्दिरके संस्थापक निम्बदेव-सामन्त हुए । उस सामन्तके चारित्र-गुरु माष-
 नन्दि-सैद्धान्तिक-चक्रवर्त्ति हुए ।

एक गन्धविमुक्त हुए, उनके शिष्य शुभनन्दि-सैद्धान्त, उनके शिष्य चार-
 कीर्त्ति-पण्डित-देव, उनके शिष्य समुदायद-माघनन्दि-भट्टारक थे । माघनन्दिके दो
 शिष्य हुए,—नेमिचन्द्र-भट्टारक-देव और अभयचन्द्र सैद्धान्ती । तत्पश्चात् अभय-
 चन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्तीकी महिमाका वर्णन । ऊपरके ये दोनों बालचन्द्र-व्रतीशके
 क्रमसे दीक्षागुरु और श्रुतगुरु थे । बालचन्द्रके पुत्र अभयचन्द्र बालचन्द्रके
 शिष्य हुए । (उक्त मितिकी) रातको अग्ने सल्लेखनाके समयको जानकर,
 उसकी विधिकी धारण करके अभयचन्द्र महासैद्धान्तिक दिवंगत हुए ।]

५२५

कडकोल;—कवच ।

[शक १२०१ = १२७१ ई०]

[कडकोल गाँवके अन्दर हणमन्त या हनुमान मन्दिरके पास के

स्मारक पाषाण पर यह अभिलेख है]

- [१] स्वस्ति श्री स (श) कवर्ष १२०१ प्रमाथि-संवत्स-
 [२] रद भाद्रपद सु (शु) ऋ ऋ [ट] टि सोमवारदन्दु श्रीम-
 [३] न-मूलसंघद पडुमसि (? से) न-भट्टारकदेवर गु-
 [४] [ड] डि कडकोल सावन्त सिरियम-गौडन हेण्डति
 [५] चण्डिगौडि सर्व्व-निमि (वृ) त्तियं कयि-कोण्डु स-
 [६] माडि (धि) थि मुडिपि स्वर्गप्राप्तेयाद निपिडि (धि)-
 [७] य स्तम्भम् [।] मंगल-महा-श्री-श्री-श्री [॥]
 [८] हिर्य-बोप्पगौड चिक-बोप्पगौड चिकगौड
 [९] क (?) लिदेव रुषा (?) घ (?) चिरिदेव सुख्य इन्नेरु-हि-
 [१०] टटु समस्त-प्रजे बसदिगे कोट येरे मत्तर १ [।] श्री-
 [११] वान्य मङ्गल-महा-श्री-श्री-श्री [॥]

अनुवाद—स्वस्ति ? पवित्र मूल संघके पडुमसेन-भट्टारकदेवकी गुडि (शिष्या या अनुयायिन); (तथा) कडकोलके सावन्त-सिरियमगौडकी पत्नी चण्डिगौडिकी (स्मृतिका) यह 'निपिधि'-स्तंभ है । उसने यह समाधि सर्व इन्द्रियोंके विषयोसे निवृत्त होकर तथा सर्व सांसारिक कार्योंका त्याग करके प्रमाथि संवत्सर-बो शक वर्ष १२०१ था-के भाद्रपद (महीने) के शुक्ल पक्षकी छठ, सोमवारकी ली थी स्वर्ग प्राप्त किया था । मंगल और लक्ष्मी बड़े ? १२ हिट्टु तथा हिर्य-बोप्प गौड, चिक-बोप्पगौड चिकगौड, (?) (कलिदेव, (तथा) रुषाचिरिदेव प्रमुख सब लोगोंने बसदिके लिये ? 'मत्तर' काली-मिट्टी वाली भूमि दी । मंगल-महा-श्री-श्री-श्री !

[IA, XII, P. 100-101. No 2. T and Tr]

५२६

चिक-मगलूर—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १२०२ = १२८० ई०]

[चिकमगलूरमें, लालबागमें एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघताञ्जनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशामनम् ।

श्रीमन्-नाल्ल-प्रभु सु-चरितनेने विनय-निधियु निर्मल-चित्तं प्रेमं बुध-चननिकरका-
लय वासुनेमं सकलजनकाधारं घामिष्टं वीरं धुरन्धरं पुरुषाकारं कामरूपं मसण-
गावुण्डनप्र तत्तूर्जं सोम-नामं धरेयोळ् ।

जिन-समय वर्षि-वर्द्धन [न्] । अनन्तरं चातु-वर्णाकृतं तणियम् ।

घन-महिम-श्रेयाम्-। सुनियगुडुनु विनय-निधि चलदङ्क-रामनेनिपं सोमम् ॥

आरडि-गौण्डेयवे ... । सारदे गुण-रत्न-भूमि-चिन्तामणिय ... ।

... रुं नोय्दं ताय्वरे । तोरद ... सोम-गौण्डनेम्ब निधानम् ।

स्वास्ति परम-जिन-समय-समृद्धरण-करण परिणतनुमेनिस्ति श्री-मूल-संघद देशि-
गण-पोस्तुक-गच्छ हनसोगेय बळि कोण्डकुन्दान्वयद भेयान्त-भट्टा-
रक गुडु चिकमुगुळिय मसण-गौडनप्र-सुन सक-चरुस १२०२ नेय चिकम-
संघत्सरद श्रावण-शुद्ध-तदिगे मंगळवारदन्दु सोम-गौड समाधि वड्डु
सुर-लोक-प्राप्तनाद ई-निधिधिय कल्ल आतन मग हेगगडे-गौड प्रतिष्ठे माडिद
अष्ट-विचारन्वने चरुविगे कावन्निय गुळिय गदे ... कोम्ब ५ ...

[जिन शासनकी प्रशंसा । मसण-गौडके पुत्र सोमकी प्रशंसा ।

चिक-मुगुळिके मसण-गौडके ज्येष्ठ पुत्र सोम-गौड, जो श्री-मूलसंघ, देशि-गण,
पोस्तुक-गच्छ, हनसोगे-बळि तथा कोण्डकुन्दान्वयके भेयान्त-भट्टारकका गृहस्थ-
शिष्य था, के समाधिमरण धारणकर स्वर्ग जानेके बाद, उसका यह स्मारक-पाषाण

उसके पुत्र हेगडे-गोडने खड़ा किया था । उस समय अष्टविष पूजनके लिये (उक्त) भूमिका दान दिया था ।]

[Ec, VI, Chikmagalur tl., No, 2]

५२७

भवणवेल्लोला—कन्नड ।

[शक १२०३ (सीक १२०१ ?) = १२८१ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५२८

भवणवेल्लोला—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १२०५ = ११८२ ई०]

[जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग]

५२९

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १३३३ = १२८२ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant rem Bambay (ASI, XVI),
p. 352-353, No 9 (1st parh), t. and tr.]

५३०

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १३३३ = १२८२ ई०]

श्वेताम्बर लेख

[Ant. Kathiawad. and kachh (ASWI,
II), p. 169, tr.]

५३१

कण्ठकोट;—संस्कृत ।

[सं० १३४० = १२८३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[ASWI, Selections, No. CLII, p, 64, a.; p. 86, t.
(ins, No. 26).]

५३२

सियाल-बेट;—संस्कृत ।

[सं० १३४३ = १२८६ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[ASI, XVI, p. 254, t.]

५३३

अवधबेलगोला;—कन्नड ।

[वर्ष सर्वधारी = शक १२१० — १२८८ ई० (कीरहौर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५३४

तवनन्दि;—कन्नड ।

[वर्ष सर्वधारी = १२८८ ई० ?]

[तवनन्दिमें, कियेकी वस्ति के दक्षिणकी ओरके समाधि-पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमत् सर्वधारी-संवत्सरद माषाङ्ग-सुख-तविगे-बृहस्पति-वारद
श्रीमत् काणूर-माणद माधवचन्द्र-देवर गुडि श्रीमत्-बालु-प्रभु माळि-गौडन

५४७

हिरे-भावलि;—कण्व ।

[वर्ष विकारी = १२६१ ई० ? (वृ० राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, ज्वस्त जिन वस्तिके सामनेके १२ वें वाचाण पर]

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं तुळुव-राय राय-वेण्टेकार मत्तैयमण्ड-
लिक-मवेम-कुम्भ-विदळन-वेदण्डारि-सदृश श्रीमन्महामण्डलिक कोटि-नायकन राण्या
मुदकन्दु विकारि-संवत्सरव् भावण-मास-शुक्लपक्ष-पञ्चमो-शनिवार-
वधु श्री-मूला-संघ देशी-गण-कोण्डकुन्दान्वयद समस्त-गुण-शाल-सम्पन्नरूप
गुणजन्दि-भट्टारकर गुडि खण्ड-स्फुटित-बाणर्ण-जनालयोद्धरण-परिणतान्तःकरणनु
आहाराम्भ-मैषण्य-शास्त्र-दान-विनोदनुं सम्यक्त्व-रत्नाकनु जिन-गन्धोदक-पवित्री-
कृतोत्तमांगनुमप्य श्रीमन्-नाळ-प्रभु अवलिय शिरियम-गौडन सम्बाग-लदिम शिरि-
यम-गौडि सकल-सन्यसन-पूर्वकं समाधिय मुडिपि स्वर्ग-स्तेयादळ ॥ मङ्गल
महा ? श्री

[लेख स्पष्ट है । १२६६ ई०; कोटि-नायकका राज्य था ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 122.]

५४८

इलेबीड—संस्कृत और कण्व ।

[शक १२२२ = १३०० ई०]

[वस्तिकदृष्टिमें, वृक्षरे प्रक्षिप्ता-वाचाण पर]

(सामने)

श्रीमत्परमार्जुनीरस्याद्रादामोघलाञ्छनम् ।

बीयात् प्रैलोक्यनायस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री मूल-संघ-देशिय गण-पुस्तक-गच्छ-कुण्डकुन्दान्वयद पिङ्गलेश्वरद
बळिय भो-समुदायद माघनन्दि-भट्टारकदेवर प्रिय-शिष्यर श्री-नेमिचन्द्र-
भट्टारक-देवर श्रीमद्-भयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्तिगळुं विद्या-गुरुगळुं भूत-
गुरुगळुमागे तपश्श्रुतगळि जगदोळ् विख्यातिर्यं पेट् श्रीमद्-बालचन्द्र-पण्डित-
देवर प्रियाग्र-शिष्यरुमप्य श्रीमद्रामचन्द्र-मलघारि-देवर सक-वरुण-सासि-
रदिन्नूरिप्यस्तेरडनेय साव्वरि संबस्सरद-चैत्र-बहुल-तदिगे-बृहद्भार-
दपराह्णकालदोळेमगे समाधियेन्दु चातुर्वर्णगळ्गरिपि (बायीं ओर) नीमेलरं
घार्मिकरपुदेन्दु नियामिसि क्षमितव्यमेन्दु सन्यसनपूर्वकं सकळ-निवृत्तियं माडि
पर्यङ्कासनदि पञ्च-गुरु-चरण-स्मरणेयं माहुत्त दिवके सन्दर । अवर तपो-माहात्म्य-
मेन्तेन्दोडे ।

नडेवडे बाहु-दूगड युगान्तरमं नेरे नोडदावगम् ।

नडेयद कामिनी-कनकमं सले शोकद कर्कसङ्गळम् ।

नुडियदहर्निशं विकयेयं मारेदाडद मोह-पाशदोळ् ।

तोडरट् ... मलघारिय विराचिकुम् ॥

श्रीमद्रामचन्द्र मलघारि-

देवर तम्म प्रियाग्र-शिष्यर-

मप्य शुभचन्द्र-देवरिगे श्रे-

यो-मागोपदेशमं माडियर

अवर केळिहर ॥

श्रीमद्-बालचन्द्र-पण्डित-देवर

तम्म प्रियाग्र-शिष्यरुमप्य श्री-

मद्-रामचन्द्र-मलघारि-देवरिगे

सारचतुष्टयं मोडलाद ग्रन्थगळ

व्याख्यानं माडिहर अवर केळिहर ॥*

यिन्दु पोगळ्ते-वेत्त श्रीमद्रामचन्द्र-मलघारि-देवर प्रतिकृति-समन्वित-पञ्च-
परमेष्ठिगळ प्रथुमेगळं श्रीमद्-नाबघानि-द्वोरसमुद्रद भव्यजनगळुं माडिसि पुण्य-
वृद्धि-यशोवृद्धिय कैकोण्डर ॥ भद्रमस्तु बिनशासनाय मंगल महा श्री ॥

[इह लेखमें रामचन्द्र-मलघारि-देवके सल्लेखना-व्रत लेनेका उल्लेख है ।
रामचन्द्र-मलघारिदेवके गुरु बालचन्द्र-पण्डित-देव, इनके गुरु माघनन्दि-भट्टारक

* ये दो प्रतिमाओं पर लिखे हुए हैं ।

देव, श्री मूलसंघ, देशिय-गण, पुत्तक गच्छ, कुण्डकुन्दान्वय, पिङ्गलेश्वर-बलि और श्री-समुद्राके थे । बा० प० दे० के विद्यागुरु नेमिचन्द्र-भट्टारक-देव और भुत-गुरु अभयदेव-सिद्धान्त-चक्रवर्ति थे । रा० म० दे० के शिष्य शुभचन्द्र देव थे । इनकी प्रतिमा दोरसमुद्रके जैनोंने बनायी थी ।

[Ec, V, Bel w tl., No 134]

५४६

हलेषोड—कवच ।

[बिना काक-निर्देशका पर लगभग १३०० ई० ?]

[हलेषोडसे कगी हुई बस्तिहस्तिमें, पार्श्वनाथ बस्तिके बाहरकी

दीवाकके स्तम्भ पर] ,

ईशान्यद-आदि-मोदलागि ईशान्यद हदिनैदु-कैयन्तरदल्ल आरुगय्युच्चेदट्ट शान्तिनाथ-रेवक भूमिस्थवागिहईहक आवनानुं पुण्य-पुरुष तेगदु प्रतिष्ठेय माडि पुण्यमं माडिकोळुषुदु ॥

[ईशान दिशासे शुरू करके, उससे (ईशान दिशासे) १५ बिलस्तके अन्तरपर शान्तिनाथ देव, जिनकी ऊँचाई ६ बिलस्त है, जमीनके अन्दर गढ़े हुए हैं । कोई पुण्य-पुरुष उनको बाहर निकालकर, उनकी प्रतिष्ठाकर पुण्यका लाभ लेंगे ।]

[Ec, v, Belur tl. No 127]

५५०

पर्वत आवू-ग्रहल ।

[सं० १३९० = १३०३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat, Res, XVI, P. 311, No XX, a.]

५५१

होन्नेनहल्लिके:—कवच ।

[शक १२२५ = १३०३ ई०]

[होन्नेनहल्लिक (किराजाजि प्रवेश) में, बस्तिके प्रवेशके बायीं ओरके पत्थरपर]

स्वस्ति श्री मूलसंघ देशियगण पोस्तकगच्छ कोण्डकुन्दान्वय इनसोगेय बल्लिय श्री बाहुबलि-मलधारि-देवर प्रिय-शिष्य-रुमप्प ओ-पन्नान्दि-भट्टारक-देवर शक-वर्ष १२२५ शुभकृतु-संवत्सरदन्दु होन्नेयनहल्लिय बसदिय गन्ध-गुडियनु गद्याणं हदिनय्दन् कोट्टु माडिसिदर (बाहुबलि-देवर पारिस्व-देवर बरसिदर) मज्झमहा भी इवनल्लिदवर नरकके लोहर ॥

[पन्नान्दि-भट्टारक-देवने, जो मूलसंघ देशीगण पुस्तकगच्छ तथा कोण्डकुन्दान्वयके, और इनसोगेके बाहुबलि-मलधारि-देवके प्रिय शिष्य थे, होन्नेयनहल्लिके बसदिको १५ 'गद्याण' (गद्याण एक सिक्का (मुद्रा) विशेष है) दिये और उसके लिये 'गन्ध-गुडि' भी बनवायी थी । (इस लेखको बाहुबलि-देव और पारिस्व-देवने लिखा था ।)]

[EC, IV, Hunsur tl., No. 14]

५५२

अवधनबेल्लोत्ता:—कवच ।

[शक १२३५ = १३१३ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भाग]

५५३

गिरनार,—संस्कृत

[सं० १३७०=१३१३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay
(ASI, XVI), p. 362, No. 36, t. and tr.]

५५४

पर्वत आबू—संस्कृत ।

[सं० १३७६ = १३२२ ई०.]

श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res. XVI, p. 312, No XXII, a.]

५५५

कुप्पदूद;—संस्कृत तथा कन्नड ।

वर्ष चित्रभाटु [१३७२ ई० (या १४०२) ? (ख. राहस)]

[कुप्पदूर्कमें, चौथे पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनायस्य शासनं त्रि-शासनम् ॥

द्वीपे जम्बूमति क्षेत्रे भारते भोधरा न्वते ।

चन्द्रगुप्तैन सु-क्षेत्र-धम्मगेहेन धीमता ॥

रक्षितो दक्षिण-पा ... -जन-सम्पद्-विराजितः ।

अ० षडैश्वर्य-निलयो नागरखण्डक-नाम-भाक् ॥

स्वस्ति-भागस्ति विषयो विषयोऽखिल-सम्पदाम् ।
 निलयो लय-राहित्यादासतां भीमतां सताम् ॥
 तत्र ॥ नाळिकेराम्न-पूगा [...] धारामेण विराजितः ।
 विद्यते कुप्पटूराल्यो ग्रामो गोपेश-रक्षितः ।
 तत्रास्ति हरिहराबीश-भू-सती-तिलकोपमः ।
 जिन-चैत्यालयो नाम कदम्बैः कृत-शासनः ॥
 तच्चैत्य-पूजनोद्योग-चातुरी-वार्दि-चन्द्रमाः ।
 चन्द्रप्रभ इति ख्यातः पार्श्वनाथस्य बान्धवः ॥
 पितृ-दुर्गोश-निर्दिष्ट-गुरु पण्डित-सेवकः ।
 वर्तमाने चित्रभानौ वत्सरे कात्तिके च सः ॥
 मासे स कृष्ण-दशमी-तिथौ सोम-समाह्वये ।
 वारे दुर्वार-यम-राड्-दूत-ज्वर-गदाहितः ॥
 आयुः-परिसमाप्तेश्च कृत-पुण्य-परिग्रहः ।
 स-सुतः नित्य-सुखास्पदम् ॥

श्री श्री

[जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्रमें श्रीधरपर्वतके पास नागरखण्ड नामका एक प्रदेश था । उसमें अनेक फल सहित वृक्षोंके बगीचों सहित, गोपेश द्वारा रक्षित कुप्पटूर नामका गाँव था । उसमें राजा हरिहरकी भूमिमें एक जिन-चैत्यालय था, जिसमें कदम्बोंकी तरफसे एक शासन (दान-लेख) मिला था । उस चैत्यमें पार्श्वनाथके बान्धव प्रसिद्ध चन्द्रप्रभ थे जो कि एक पण्डितके गुरु थे । (उक्त मितिको) उसे यमराजके दूतोंकी तरफसे बुलारा आ गया और अपनी जिन्दगीका अन्त करके नित्य सुखके स्थान (अर्थात् स्वर्गको) चला गया ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 263]

५५६

हिरे-आवलि;—कण्व ।

[वर्षे विजय = १३४६ ई० ? (लू. राहल) ।]

[हिरे-आवलिमें, ज्वस्त जैन-बस्त्रिके सामनेके पाषाणपर]

व्यय-संवत्सरद् ज्येष्ठ-सु ५ गु रामचन्द्र-मलधारि गुगळ गुड अव-
लिय चन्द-गौडन मग राम-गौड जिन-पदवनर्यादद ।

[लेख स्पष्ट है । १३४६ ई०; राजाका उल्लेख नहीं है ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 123]

५५७

तिरुमलै,—तामिल ।

[?]

१. स्वस्ति श्री [॥] राजनारायणन् शम्बुराजकु या-

२. ष्टु १२ वट्टु पोन्नूर् मण्णैपोन्नाण्डै

३. मगळ् नल्लात्ताळ् वैगैत्तिरुमलैक्कु परियळ-

४. प्पाण्णन श्रीविहारनायनार् पोन्नेयिल्-

५. नाथर् [१] चम्मायल्लयत्तु [॥]

[यह लेख राजनारायण शम्बुराजके १२वें वर्षका है और वैगै-तिरु-
मलै, अर्थात् वैगैके पवित्र पर्वतपर जैन प्रतिमाकी प्रतिष्ठापनाका उल्लेख करता
है । इस प्रतिष्ठापनाकी करनेवाली पोन्नूर्की निवासी मण्णै-पोन्नाण्डैकी पुत्री
नल्लात्ताळ् थी ।]

[South Indian ins., I, No. 70 (p. 101-102) t. & tr.]

५५८

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[वर्ष विजय=१३५३ ई० (व. राष्ट्र) ।]

[[हिरे-आवलिमें, ज्वस्त जैन-वस्तिके सामनेके १०वें पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं अरि-राय-विभाहु श्री-वीर हरियप्प-वोडेयर
राज्योदयदन्दु विजय संवत्सरद् पुण्य-सुद्ध ३० शु ॥ श्रीमनाल्लुव-प्रभु राम-
चन्द्र-मल्लधारि-देवर गुड सुरगियदल्लिय गोप-गौडनु मग अवलिय काम-
गौण्डन मोम्म काम-गवुडनु पञ्च-नमस्कारदि मुडिहिद मङ्गल महा श्री

[लेख स्पष्ट है । १३५३ ई०; उस समय हरियप्प-वोडेयर्का राज्य था ।]

[EC, VIII, Sorab. tl., No. 110]

५५९

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १२७६=१३५४ ई०]

[हिरे-आवलिमें, ज्वस्त जैन-वस्तिके चौथे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं अरि-राय-विभाहु हिन्दुव-राय-सुरताल श्री-
वीर-हरियप्प-वोडेयर राज्योदयदन्दु शक-वरुष १२७६ विजय-संवत्सरद् पुण्य-
बहुल-तदिगै आ ॥ श्रीमनाल्लुव-प्रभु-आवलिय काम-गौडन मग 'सिरियम-गौड

सिरियम-गौडन सुपुत्र मल-गौडनु सन्यासन-समाधिणि मुडिणि स्वर्णास्तनादनु आतन
अर्द्धाङ्गि चेन्नकनु सहगमनदिं स्वर्मास्तेयादळु । मंगळ मा (महा) भी भी

[उपरके उल्लेखोंके समान ही, महामण्डलेश्वर, शत्रु राणाओंका नाशक, हिन्दुष राणाओंका सुस्ताल, हरियप्प-बोडेयरके राज्यमें,—स्वर्गगत मालगौड तथा उसकी भार्या चेन्नके, जिसने 'सहागमन' करके स्वर्ग प्राप्त किया, के लिये भी उल्लेख है ।]

[EC, VIII, Sorab tl.. No. 104]

५६०

मलेयूर,—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक सं० १२७७=१३५५ ई०]

[इसी पहाड़ीपर, बड़े गोक दफ्तरके पूर्वकी ओर]

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्री मूलसंघ देशिय-गण कोण्ड-कुन्दान्वय
पुस्तक-गच्छ हनसोगेय बळिय श्रीमद्-राय-रावगुरु-मण्डलाचार्य-समयाचरण-
रमप्प हेमचन्द्र-भट्टारकर शिष्यर तेलुग आदि-देवर ललितकीर्ति-
भट्टारकर शिष्यर ललितकीर्ति-भट्टारकर शक-वरुष १२७७ मन्मथ-
संकासरद चैत्र-बहुल १४ गुरुवारदल्लु तम्म निषिधि-निमित्वागि कनकगिरि-
यल्लु माडिदिद विजय-देवर प्रतिमेगे अवर मुख्यवाद आचार्य ओलगर
मङ्गलमहा भी भी भी

[श्री-मूलसंघ, देशियगण, कोण्डकुन्दान्वय, पुस्तकगच्छ तथा हनसोगेय-बळिके हेमचन्द्र-भट्टारकके शिष्य तेलुग आदि-देव और ललितकीर्ति भट्टारकके शिष्य ललितकीर्ति भट्टारकने अपनी निषिधिके निमित्तसे कनक-गिरिपर विजय-देवकी प्रतिमा बनवायी ।]

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No. 153]

५६१

कणवे;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १२८४ = १३१२ ई०]

[कणवेमें, मण्डगदूरेके समीप, कन्नड-लिखित एक पाषाणपर]

श्री-मूल-संघ-देशी- ।

गण - क-ग-ल्ल कोण्डकुन्दान्वयदोळ् ।

भूमियोळखिल्ल-कला ... ।

काम-करं चारुकीर्ति-पण्डित यतिपम् ॥

श्रीमत्परमगम्भीर-स्याद्वादामोऽलाङ्कनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरमणि-राय-विभाड भासेगे तत्पुत्र रायर गण्ड समुद्र-
त्रयाधीश्वर श्री-सङ्गमेश्वर-कुमार श्री-वीर-सुख-महाराजक राज्यं गेय्युत्तिरे
अवर कुमार विरुपण्ण-बोडेयर मल्ले-राज्यवनालुवलि हेडर-नाडोळगे
तडताळ पार्श्व-देवर देव-स्वद सीमा-सम्बन्धके आ-हेदूर-नाडवर्ग आस्थानद
आचारियर सूरिगळ कूडे संवाणव माडिदडे श्रीमन्महा-प्रधान ज्ञानाण्णगळ
प्रधानि-देवरसरु आ ... दा देवरसरु ... जैन-अल्लप्पनू आरगद
चावडियलि मूर-पट्टणद हलरनू हदिनेण्टु-कम्पणवन्नु करसि विचारिसि आ-नाड-
नोडम्बडिसि पडकोट्टु पूर्व-मरियादेयलि मूडलु बेट्ट तेड्डलु बेट्ट पडवल्ल हळिळ
बडगलु होळे सीमेयागि पार्श्व-देवर देवस्ववेन्दु चतुस्तीमेयनु विवरिसि शक-वर्ष
१२८४ शुभकृतसंवत्सरद माघ-शुद्ध-पञ्चमो-गुरुवारदलु आ-अरसु प्रधान-
रन्नु (औरोंके नाम दिये हैं) तडताळनु आ-चन्द्रार्क नडव हागे शासनव नडसि
कोट्टरु (वे ही अन्तिम वाक्यावयव) !

अक्षय-सुख-मी-धर्ममन् ।

ईदिसि रक्षितुव पुण्य-पुरुषार्थकम् ।

भक्षिसुवातन सन्ता- ।

न-क्षयमायु-क्षयं कुळ-क्षयमवकुम् ॥

श्री-मूलसंघ-देशिगण-पुस्तक-गच्छ-कोण्ड-कुन्दान्वय

श्री-मूलसंघ, देशि-गण, पुस्तक-गच्छ, तथा कोणकुन्दान्वयमें चारुकीर्ति-पण्डित-यतिप थे । जिन शासनकी प्रशंसा । जिस समय महामण्डलेश्वर, संग-मेश्वरके पुत्र वीर-बुक्क-महाराय राज्यका शासन कर रहे थे—हेद्दूर-नाडके तड-ताळके पार्श्व-देव मन्दिरकी जमीनकी सीमाओके विषयमें जब हेद्दूर-नाडके लोगो और मन्दिरके आचार्योंमें झगड़ा चल रहा था,—प्रधानमंत्री नागण्ण और अनेक अरसू लोगोंने, इसकी जांच-पड़ताल करके, फैसला कर दिया । और इस बातका शासन (लेख) लिख दिया ।]

[EC, VIII, Tirthahalli 11., No. 197]

५६२

हिरे-आवलि;—कथव

[शक १२२६ (Sio), वर्ष पार्थिव = १३६९ ई० ? (लू. राइस) ।]

[हिरे-आवलि में, ध्वस्त जिन-वस्तिके सामनेके द्वितीय पाषाण पर]

श्रीमत्तु । विजयानगर-मुख्यवाद-समस्त-पट्टणाधीश्वर श्री-अमिनव बुक्क-राय राज्यं गेटवलि । सकल-गुण-सम्पन्न सिद्धान्त-देवर गुडु । रत्न-त्रयाराचक-रुम् । आवलिष बेच्च-गौण्डन सुत चन्द-गौण्डन तम्प । सक-वरुष १२२६ जेय पार्थिव-संवत्सरं च ११ सोमवारदलु । सन्यसन-समाधि-विधिणि मुडिहि स्वर्ग-प्राप्तियादनु । मङ्गलमस्तु ।

मान-गर्भवनु ... लनु -।

मानदोळ नडिय बल्लमोल्दा-त्तेरदिम् ।

ज्ञानिगळ सलहुतिप्पम् ।

दान-रत्तं रा ... पुरकमिराम् ॥

[जिस समय विजयनगर और दूसरे समस्त पट्टण (नगरों) का अधीश्वर, अभिनव-बुक्क-राय राज्य कर रहा था :—

सिद्धान्त-देवका गृहस्थ-शिष्य, आवळि-बेच-गौडके पुत्र चन्द-गौडका छोटा भाई, (उक्त मितिको), सन्यसन और समाधि-विधिसे मरकर, स्वर्ग गया । उसकी प्रशंसामें श्लोक ।]

[Eo, VIII Sorab tl, No 102]

५६३

कृष्णदूतः—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १२८३ = १३१० ई०]

[कृष्णदूतमें, जैन-वस्तिके पासके वीरकब् पर]

शक-कालं नव-वारण-द्वि-शशि-संख्योक्त-पञ्चगान्धर्वु - ॥

त्सुकदापाद्व मासदोळ विधु-लसद् वारं समन्तोन्दिरल् ।

प्रगटं-वेत्तितिसयवा-भ्रत-मुनि-श्री-पाद-सेवा-रतर् ।

सु-कवीन्द्र-स्तुत-देवचन्द्र-मुनिपर् स्वर-ल्लोकमं पोर्दिदर् ॥

श्रुत-मुनिगळ शिष्यर् भू -। नुत-देशी-गणद देवचन्द्र-व्रतिपर् ।

यति-कुल-ललामरत्यूर् -। जित-तेचरन्नेगळ्दरादिदेवर गुरुगळ् ॥

श्रुत-मुनि-वज्रभेन्द्र-गुरु दीक्षेयनीयलदादियागवूर् -।

जि [त]-गुण-शील-सन्चरि कूडि वेत् ।

अतिस (श) य-जैन-धर्मद निमिर्क्योळेन्दि विराबिसिद्दीदी -।

व्रित्तियोळ देवचन्द्र-मुनि-वर्य्यरमागम-कोविदभिर्बम् ॥

जीर्ण-बिन-भवनमें घरे । वर्णिसलुद्धरिसि कीर्त्तियं तळेदरु सम -।

पूर्णतर-चरितरेनि [सि] ई । अर्णव-गम्भीर देवचन्द्र-व्रतिपर् ॥

नेगळ्दा-मुनिपर् भवन्मा -। लेगळ्क सन्यसनदि समाधियनेदिद् ।

अगणित-महिम्नोलोन्दिद । सु-ग [ति] यनान्तर्विनेय-बन-नुत-चरित् ॥
 श्रीमत्परमर्गमीरस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।
 जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ॥
 भुत-मुनि-वर्याद् भव्यात् पूज्य-श्री-देवचन्द्र-परम-गुरुः ।
 तच्छिष्य आदिदेव सत्-तपो-निष्ठयः ॥

शुभमस्तु ॥

[(उक्त मितिको) प्रसिद्ध भुतमुनिके चरणोंका उपासक देवचन्द्रमुनिपने स्वर्गलाभ किया । भुतमुनिके शिष्य संसार-विख्यात, देशी-गणके देवचन्द्र-व्रतिप यतियोंके कुलमें तिलक-समान थे, वे आदिदेवके गुरु थे । उनकी और भी प्रशंसा, जिसमें कहा गया है कि उन्होंने एक ध्वस्त बिनमन्दिरका पुनरुद्धार करवाया था । भुतमुनिसे सन्मानित देवचन्द्र थे बिनके शिष्य आदिदेव थे ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 260]

५६४

हिरे-आवलि;— कवच ।

[वर्ष प्लवंग = १३६७ ई० (ल० राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जैन-वस्तिके सामने १६ पाषाण पर]

वस्ति श्रीमत् प्लवंग-संघच्छुरद अस्वैव-बहुल-गजमी-शुकवारदन्दु श्री-
 मूल-संघद वारिसेन-देवर गुडु मसण-गौडन मग गोरब-गौड पञ्च-
 नमस्कार-समाधि-विधियि स्वर्गस्तनाद ॥

[लेख स्पष्ट है । १३६७ ई०; राबाके नामका उल्लेख नहीं है ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 109]

५६५

भुवणबेलगोला;—कवय ।

[शक १२६०=१३९८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५६६

कव्य;—संस्कृत तथा कवय ।

[शक १२६०=१३९८ ई०]

[कव्य (सातनूर परगना) में, विक्रणके लेखमें एक पाषाणवर]

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितम्

पाषण्ड-सागर-महा-बडबा-मुखाग्नि-

ओरङ्ग-राज-चरणाम्बुज-मूल-दासः ।

श्री-विष्णु-लोक-मणि-मण्डप-मार्ग-दायी

रामानुजो विचयते यति-राज-राजः ॥

शक-वर्ष १२६० नेय कालिक संवत्सरद भावण-शु २ सो-दलु श्री-मन्महा-मण्डलेश्वरं अरि-राय-विबाढ भाषेगे तप्पुव रायर गण्ड श्री-वीर-बुक्क-रायनु प्तु (थु) वी-राज्यवनाळुव कालदलि जैनसिगे भक्तरिगे संवादवादक्षि आनेयगोन्दि-होसपट्टण-पेनगोण्डे-कळ्यहूळगाद समस्त-नाड जैनर बुक्क-गायङ्गे भक्कर अन्यायदलु कोल्लुवदनु बिजहं माडलागि कोविलु-तिरुमल्ले पेद-माळ्कोविलु- । तिरुनारायणपुर-मुख्यवाद सकलाचार्यर सकळ-सर्माथगळु सकळ-साचिवकर मोष्टिकर तिरुमाणि-तिरुविडि तन्दवर नाळ्वत्तेण्डु-तले-मकळु सावन्त-बोवक्कलु तिरुकुल-जाम्बवकुल-वोळगाद पदिनेण्डु-नाडा-श्री-वैष्ण-वर कथ्यलु महारायनु ... निम्म वैष्णव-दरसनद भषेवोक्केरवेन्दु कोट-सम्बन्ध पञ्च-वस्तिगळलि कळस जगळे-जगटे-मोदलाद पञ्च महा-वाद्यज सल्लुऊदु अन्यरि

[गे] बरकूडहु जैन-समयके सखुबुदेन्दु वृद्धिपाद (बायीं ओर) श्री-वैष्णव-समय यी-मयूदि ओल्लगुळ बस्ति ... श्री-वैष्णव नेट्टु कोट्टेबु (बाकी का पढ़े जाने लायक नहीं है)

[रामानुज की स्तुति ।

(उक्त मितिको), जिस समय महामण्डलेश्वर वीर-बुक्क-राय पृथ्वीपर राज्य कर रहे थे :—जैनों और भक्तों (वैष्णवों) में कोई विवादका विषय उपस्थित होने पर आनेयगोन्दि, होसपट्टण पेनुगोण्डे और कल्यह,^१ इन नाडोंके जैनोंने बुक्क-रायको इस बातका प्रार्थनापत्र देकर कि १८ नाडोंके श्री-वैष्णवोंके हाथसे जैन लोग अन्यायसे मारे जा रहे हैं,—महारायने (यह बोधना करते हुए कि) “हम तुम्हारे वैष्णव दर्शनमें बाधक नहीं हमेंगे” निम्न हुक्म दिया :—कलश इत्यादि पाँच बस्तियोंमें पाँच महा वाद्य बज सकते हैं । और में वे नहीं बजाये जा सकते । वे जैन समय (या समझ) की हैं । श्री-वैष्णव समय, जो बढ़ गया है (बाकीका अधिकांश अपठनीय है)] ।

[Ec, IX, Magadi tl., No 18]

५६७

एन्चिगनहल्लि—कन्नड़ ।

[शक सं० १२६२ = १३७० ई०]

[वृद्धिकण्ठलिः (नम्पलगूढ प्रवेश) में, वहीके पास, जेमिवाय-
बस्तिके उत्तर एक पाबाग पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं ।

जीयात्रैलौक्यनायस्य शासनं विनशासनम् ॥१॥

१. जहाँ यह शिलालेख है, वहाँ कन्नड़ कहते हैं ।

जिस समय पैरुमाल-देवरस शान्तिसे सुखपूर्वक राज्य कर रहे थे, उस समय उन्होंने 'त्रिजगन्मङ्गलम्' नामके चैत्यालयका निर्माण कराया, और माणिक्य-देवको प्रतिष्ठित किया; साथ ही हुल्लनहल्लिके प्राचीन मन्दिर 'परमेश्वर चैत्यालय' का भी जीर्णोद्धार किया, तथा दोनों चैत्यालयोंमें विधिवत् सतत पूजा चालू रहे, इसके लिये भूमिदान किया ।

अन्तमें इन मन्दिरोंकी रक्षा तथा उनसे लगी हुई भूमिका जो गुणवान् आदमी रक्षण करेगा उसके लिए निरन्तर सुखकी मङ्गल-कामना की गई है ।]

५७२

श्रवणबेलगोला—संस्कृत भग्न ।

शक १२६५ = १३७२ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५७३

श्रवणबेलगोला—कन्नड

[बिना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५७४

हिरे-आवलि;—कन्नड ।

[शक १२६८ = १३७६ ई०]

[हिरे-आवलिमें, ज्येष्ठ जिन-वस्तिके सामनेके छठे पाषाण पर]

स्वस्ति भीमतु शक-वर्ष १२९८ नळ-संवत्सरद आश्विन-शु १२ गु
भीमन्नाळ्व-महा-प्रभु आवलि चन्द-गौण्डन मग बेच्चि-गौण्डनु रामचन्द्र-

मलधारि ... र गुड्डु बेचि-गौण्ड नु वीर-बुक्क रायन राव्याभ्यु-
दयदन्दु पञ्च-नमस्कारदि मुडुपि स्वर्गस्तनादनु आतन किरिय-मदवळिगे आ-मुद्दि-
गौण्डि सहगमनदि यिब्बर मुक्तिप्राप्तरादर आवलिय प्रमुगळ सन्तान मसण-
गौडन मग गोरव-गौड काळ-गौड गोप-गौड चन्द-गौड आ-चन्द्र-गौडन
मग बेचि-गौड वू ... गौडन मनेय गोरबोञ्जन मग मादोज नागोज
माडिद निशितिय कल्लु मङ्गळ महा श्री श्री श्री

[(उक्त मितिको), आवलि चन्द-गौडके पुत्र बेचि-गौड, जो रामचन्द्र-
मलधारिका गृहस्थ-शिष्य था—वीर-बुक्क-रायके राज्य में,—पञ्चनमस्कार पूर्वक
मर गया और स्वर्ग गया । उसकी नवीन छो मुद्दि-गौण्डिने 'सहगमन' किया,
और दोनोंने 'मुक्ति' पायी । आवळि प्रभुओंने (जिनमें कईओंके नाम निर्दिष्ट हैं)
यह स्मारक बनवाया । बनाने वाला गोरबोञ्जका पुत्र मादोञ्ज नागोञ्ज था ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 106.]

५७५

धवणबेलगोला;—कव्व ।

[वर्ष नक=१३०६ ई० (लू. राइख)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५७६

गिरनार—संस्कृत-भग्न ।

[बिना काळनिर्देशका]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant rem Bombay (ASI, XVI)
p. 347-351, No 7 t. and tr.]

५७७

तवनन्दि;—कन्नड-भग्न ।

[शक १३०१ = १३७६ ई०]

[तवनन्दिमें, सप्तवें समाधि-पाषाणपर]

श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर श्री-वीर-हरिहर-राय विजय-राज्यं गेय्युत्तमिर्पत्ति
 शक-वर्ष १३०१ दनेय काळयुक्ताच्चि संवत्सरद अवण-शुद्ध १ शुक्रवारदल्लु श्रीमत्-
 तवनिधिय शान्ति-तीर्थकर-पाद-पद्माराधकनुं दासि-वेसि-नर-नारी-सहोदर श्रीमत्तु
 श्रीमन्नाळ्व-महा-प्रभु तवनिधिय बोम्मण्णं मनेय ... नि ओरा ...
 मलधारि-देवरा प्रिय-गुडु (४ पंक्तियाँ पढ़ी नहीं
 जा सकती हैं) ।

[जिस समय महामण्डलेश्वर वीर-हरिहर-राय विजयो राज्य पर शासन
 कर रहे थे :—(उक्त मितिको), तवनिधि के शान्ति-तीर्थकरके चरणोंका पूजक,
 एक दासीके वेषमें, रा ... मलधारि देवका गृहस्थ-शिष्य, आळ्व-महा-प्रभु
 तवनिधि बोम्मणके घरका पवित्र व्यक्ति,]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 200.]

५७८

तवनन्दि;—कन्नड-भग्न ।

[शक १३०१ = १३७६ ई०]

[तवनन्दिमें ही, तीसरे समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।

वीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्रीमन्महामण्डलेश्वरं अग्नि-राय-विभाड भासेगे तप्पुव-रायर गण्ड हिन्दु-राय-
सुरवाण पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधीश्वर श्री-वीर-बुक्क-रायन कुमार श्री हरिहर
रायनु राज्यं गेय्युत्तमिर्पक्षि ॥ स्वस्ति श्री जयाम्बुदय शुक्-वरुष १३०१
नेय कालयु [छि]- नाम-संवत्सरद् पुष्य व ३ सोमवारदशु श्रीमन्नाळुव-
महाप्रभु प्रजे मेच्चे गण्ड अक्षिय हविनेण्डु-कम्पणक्के शिरोमणि एनिप महा-
प्रभुगळादित्य तवनिधि बोम्म-गौडनु सकल-सन्यसन-विचियि मुडिपि स्वर्ग
प्राप्तनादनु ॥ आतन गुणावलि एन्तेन्दडे ॥

पारावार-त्रयाधीश्वरनतुळ-बळ-बुक्क-रायक्के लोका- ।
धारङ्गं ... माडिदवनिय धर्मङ्गळं जैन-ळा-
चारं ... ङं गड ... मर ... माडि पुण्या- ।
कारं ... कीर्त्ति-वृत्तं तवनिधि यधिपं बोम्मणं मेरु-धैर्यम् ॥
परस ... यादि-देव परद ... तान् ... बगं ... ।
दरिसिद् जैननोर्ब कलि ... पाळकनिन्दु भक्तियिम् ।
परम-जिनेश्वर ... नेम्ब ... ।
... दड-चित्तनी-तवनिधि-प्रभु ब्रह्मनि ... क-लोकदोळ् ॥
जिन-पतियन्तरङ्गदोळिगर्प (बाकी का पढा नहीं जा सकता ।)

[जिन शासनकी प्रशंसा । जिस समय, (अपने पदों सहित), वीर-बुक्क-
रायके पुत्र हरिहर-राय शासन कर रहे थे :—(उक्त मितिको), आळुव महा-
प्रभु, १८ कम्पणोंका शिरोरत्न, महा-प्रभुओंका सूर्य तवनिधि बोम्म-गौड 'सन्य-
सन' की विधिपूर्वक, मर कर स्वर्गको गया । उसकी प्रशंसा ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 196]

— — —

५७९

ऊर्द्धिः—संस्कृत तथा कन्नड-भग्न ।

[शक १३०२ = १३८० ई०]

[ऊर्द्धि गाँवके मध्यमें एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभारस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ॥

यैदिदनु स्वामि-कार्यव ।

यैदि...रतिरलु कण्डनी-मान्बलमम् ।

यैदे कडि-खण्ड माडिद ।

यैदिद बिन-पाद-पद्ममं बैचप्पम् ॥

अदेन्तेने ॥

वारिचि-परिवृत-वर-धर ।

णी-रङ्गद-मध्यदमरगिरिणि तेङ्कलु

राराजिप-भरत-धरा- ।

नारी-भूषणमेनिप्प कुन्तळ-देशम् ॥

तां नेरे मेरेबुदु बनवसे ।

पन्निच्छासिर-समेतमदरोळ् मं- ।

...निजदिं पदिनेण्टेनिप् ।

उज्जत-कम्पणके रावधानियेनिककुम् ॥

मत्ता-कम्पण-निचयम- ।

नित्तरोळं नेगळ्द हिरिय-बिदरेय-नाड्- ।

उत्तम्मदरोल् सुख-सम्- ।

पत्ति-स्थानाभिषुद्धि बुद्धरे मेरेगुम् ॥

बृ ॥ अदु नाना-देव-हर्म्य-प्रयुतवतुळ-वापी-तटाकाञ्चितं सम्- ।

पदमं ताळिद्वर्प-विप्राधरिवल्ल-जन-समेतं लसत्पुष्पवाटी-
बिदितोद्यानादि-युक्तं प्रकट-कलम-जाळ-प्रसूता ॥

तोष्णुदु सकल-मुनि-प्रेम-धर्माभिरामम् ॥

.....एने मेरे उद्धरे... ।

.....नत-स्थलमागिरल्लके तां सौन्दर्यदिम् ।

मनुब-मनोजं बैचप्पम् ।

अनुपम-कीर्ति-प्रभावदिन्दोसे[दि]प्पम् ॥

क्षितिनुत-शान्ति-जिन-क्रम- ।

शतपत्र-मधुब्रतं सुरज्जन-मित्रम् ।

चतुरं बैचय-नायक- ।

न तनूजं राजिसिप्पनी- बैचप्पम् ॥

भू-देवाशीर्वादा- ।

झाटं निब-शिर-करण्ड..... ।

.. दं वर्त्तिसे मेरेवम् ।

मेदिनि-मीसेयर गण्डनी-बैचप्पम् ॥

तदनन्तरम् ॥

विलसित-विषयानगरिय ।

नेलेवीडिनोळे वीर-बुद्ध-राज-तनूजम् ।

बलि-निभ-हरिहर रायम् ।

सले राज्यं गेय्युतिर्हानति-मुददिन्दम् ॥

तत्पादपञ्चोपजीवि ॥

वृ ॥ माधव-राय अप्रतिम-तिय ना...उ[द]ग्र-साहसां- !

भोधिगळेन्दु...रणद दन्तिगे...मोय्द-कालदोळ् ।

बोधव-रूपिनि...गोण्ड...रण...बुद्धि-वि- ।

द्याघरर् आक्ष्णं तो...तोळेय... .. ॥

वर-वस्त्राभरण... .. च्छत्रमं... .. ।

... ब्रातम रुग्णलम् चामरो- ।

त्करमं कप्पुर दम्बुल-प्रकरमं कोण्डा...गीत... ।

गुरदी-कोङ्कण-देशवर् रवळर् एनुत्तागेवडं माडदे ।

जल्लाम्बेयोळं घात्री- ।

वस्त्रम माधव निरुत्तरमस्ति तर ।

रक्षस्ति निलुतं बरल् ।

एल्लर परेयल्के कण्डु कलि-वैचप्यम् ॥

श्रु ॥ हयमं देरेगेइं नेलक्किळ्ळितुतं पाय्देरि नोडुत्ते भल्- ।

लेयनुक्केय्दि तारुं तट्टुगुत्तुत्ते बल्- ।

मेयोळ्डुं बरत्तिर्प्प कोङ्कणिगर् कीनाश-लोकक्के निश्- ।

चयदिन्देय्दिसुतं पराक्रमयुतं वैचप्पनिन्तिप्पिनम् ॥

केलवर् कोङ्कणिगर् म्मार- ।

म्मलेवदटिं बण्डु-गाट्टु नेट्टुने परितन्द ।

अलगड्डुण्मं चाळिसि ।

नेलनदिरलु मेय्द ॥

तलेयिन्दं ... सिडि ... तूळ्हाडि खड्गांशु कन्नोळ् ।

किडि सुसित्तेम्बिनं ... रदटिनिं पाय्दु बन्- ।

दडे कट्टी-वैचपं माधव-नरपति नोडल्के सड्ममदिम् ।

किडि-खण्डं माडिदं मार्बलमनदटिनि भीमसेनोपमानम् ॥

आ-रण-रंगदोळ् विडदे कूगि नेगळ्द-वीर ।

... .. बिट्टु नेट्टुने समाधि-विधानमोन...चित्तदोळ् ।

मार-विरोधि नूर्जित-नाक-लोकमम् ।

सारिदनुत्तम-प्रभु-कुलाम्बर-चन्द्र-मरीचि वैचप्यम् ॥

निरुतं श्री-शक-सङ्गे सासिरद मूनूरोन्द्...रौद्रि-व- ।

रसर-वैशाख-सित-त्रयोदशि-लसद्-भौमाह्वयं वार... ।

बारे बैचप्पनुदार-चारु-बिन-पदाम्भोब-सक्तं मनो- ।

हर रूपं वर-चात्रियोळ् मडिदु नाक-क्षेत्रमं पोदिंदम् ॥

[बैचप्पने किस तरह बिन चरणों का आश्रय लिया, इसका इस लेखमें वर्णन है । भरत क्षेत्र-कुन्तलदेश-वनवसे १२०००-१८ कम्पण-उद्धरे-और उसमें बैचप्पका वर्णन । बुक्कराबके पुत्र हरिहर-राय विजयनगरीमें राज्य कर रहे थे । कोंकण-देशसे लड़ाई का वर्णन । उसमें बैचप्प की जीत हुई ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 152]

५८०

मल्लेयूर—कवच ।

[बिन काक निर्देशका, पर कगभग १३८० ई०]

[उली पर्वतपर, पारवनाथ बस्तिके प्राङ्गणमें दक्षिणकी ओरके पाषाणपर]

बाहुबलि-पण्डित-देवर ।

नयकीर्त्ति-व्रति-नन्दनं सकलविद्याचक्रवर्त्याह्वयं

द्वय-भाषा-कविता-त्रिनेत्रनुरु-होरा-शास्त्र-सर्व्वतकम् ।

नययुक्तमवर-मूल-सङ्घदोडेयं देशी-गणाग्रेसरं

प्रियदं पोस्तुक (पुस्तक)-गच्छ-पूर्ण-तिलकं श्रीकोण्डकुन्दान्वयं ॥

[बाहुबलि-पण्डित देव—नयकीर्त्ति-व्रतीके पुत्र, सकलविद्याचक्रवर्ती, द्वयभाषा-कवितात्रिनेत्र, होराशास्त्रसर्व्वज्ञ, नययुक्त मूलरंघाधिपति, देशीगणाग्रेसर, पोस्तुक-गच्छके पूर्ण तिलक और कोण्डकुन्दान्वयी थे ।

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No. 157]

तिरुप्परुत्तिकुण्णू (काञ्चीवरम्के निकट)—**तामिळ ।**

(**दुन्दुमिवर्ष = १३८२ ई० (इस्व)**)]

१—स्वस्ति श्रीः [॥] **दुन्दुमिवर्षं** कात्तिगै-मादत्ति । पूर्व-पत्तुत्तिङ्गत्-क्किळ-
मैयु पौण्युं पेर् ताकात्ति-

२—गै-नाळ् महामण्डलेश्वरन् **अरिहरराज**-कुमारन् श्रीमद्- **बुक्कराजन्** धम्म
आग **वैचय**-दण्डनाथ-पुत्रन्

३—जैनोत्तमन् **इरुगप्** [प]-महाप्रधानि ति [**रूप्**] **प्परुत्तिकुण्णू**-नाय-
नार् त्रैलोक्यवल्लभर्कु पूजैर्कु

४—शालैर्कुं तिरुप्पण्णिक् [कु] म् **मावण्डूर्**-प्ययिल् **महेन्द्रमङ्गलं** नार्पा-
कैल्लैयुं इटै-इलि पल्लिच्छन्दभाग चन्द्रादित्यवरैयुं नडक्कत्तरुवित्तार धर्म्मोयं
वयतु

[काञ्चीवरम्के निकट **तिरुप्परुत्तिकुण्णू**में वर्धमान जिनमन्दिरके भण्डारकी उत्तर तरफकी दीवालपर नीचेकी ओर यह तामिल तथा ग्रन्थ लेख उत्कीर्ण है। इसमें बताया गया है कि वैचय दण्डनाथ (सेनापति) का पुत्र **इरुगप्प** महामन्त्रीने मावण्डूर् तालुकेका महेन्द्रमङ्गलं गाँव जैनमन्दिरको दानमें दे दिया था। उसने यह दान **हरिहर द्वितीय** के पुत्र **अरिहरराज**, अर्थात् **बुक्क द्वितीय**, के पुत्र **बुक्कराज**के गुणके कारण किया था। अतः दुन्दुमिवर्ष, जिसमें दान किया गया था, १३८२ ई० से मिलना चाहिये।]

[EI, VII, No. 15 A.]

५८२

बस्तीपुर—कवच ।

[शक १३०५ = १३८३ ई०]

[बस्तीपुर (बल्लुल तालुका) में, सोमा-पाषाण पर]

भीमपरमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनायस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्री-मूलसङ्घ कानूर-गण तिन्तिणि गच्छ कोण्डकुण्डान्वयद् भी-
वासुपूज्य-देवर शिष्यरु श्री-सकलचन्द्र-देवर तपद् प्रभावमेन्तेन्दोडे ॥

स्थिरवाक्यं सु-व्रताम्भोनिधि सकल-जगत्-पावनं राजपूज्यं
परम-श्री-जैनधर्माम्बर-दिनकरनुद्यत्तपोमूर्ति ... णा ।

भरणं त्रैविद्य-चक्रेश्वर-विमल-पदाम्भोज-विद्धं जिनश्री-

चरणालंकार-शीरुष (ज) म् सुकाविजन-यत्तप्-सन्मुनिं राजहंसं ॥

सोस्ति श्रीशक १३१५ नेय सुभकृतु-संवत्सरद् श्रावण-मास-सुद्-मास्य-
आदित्यवार-सिंह-लग्नदक्षि कूरिगिहळिल्य प्रमु-गळु गौड-कुल-तिलकरं मरें-
होकर-कावरं शिथिल-वेङ्कोम्बरं सत्यदक्षि कर्णरुमप्प केत-गौड राम-गौड
सम्बुध-गौड मदि-गौड मोदलाद समस्त-गौडगळु बस्तिय प्रतिष्ठेय माडिसि
बस्तिय बडगण विट्ट बेदलु को १० पारुष-देवर अमृतपडि तर ।
देवोजन बहर मंगल महा श्री श्री श्री

[मूलसङ्घ, कानूरगण, तिन्तिणि गच्छ और कोण्डकुण्डान्वयके वासुपूज्यदेवके
शिष्य सकलचन्द्रदेवके तपकी स्तुति या प्रशंसा है । कूरिग (गि) हल्लिके गौड़ोंने
एक पारुष-देवकी वस्ति (मन्दिर) बनवाई और उसे दान दिया ।]

[EC, III, Seringapatam tl. No. 144]

५८३

हिरे-आवलि;—कव्व ।

[वर्ष उद्गारि = ११८३ ई० ? (ख. राहस) ।]

[हिरे-आवलिमें, १२ वें पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमत् रुधिरोद्गारि-संवत्सरद् ज्येष्ठ शुध-पुण्णमि-सोमवार-
दन्दु श्री-मूल-संघद् बीरसेन-देवर गुड मुद्-गौड मगळु एकमतियवे पञ्च-
नमस्कार-समाधि-विधिधि स्वर्गस्थेयादळु अचेयवे गौडि माडिसिद कळु ॥ बोपो-
होज गोयिद कळु ॥

[लेख पहिलेके ही लेखों के समान है, अतएव स्पष्ट हैं । सन् ११८३ ई०
का है । किसी राजाका उल्लेख नहीं है ।]

[EC, VIII, Sorab tl.. No. 112]

५८४

रावन्दूर—संस्कृत और कव्व ।

[शक ११०१=११८४ ई०]

[रावन्दूर (रावन्दूर प्रदेश) में, बस्ति के एक पाषाणपर]

श्रीमत्-परमंगमीरस्याद्वादामोघलाब्धनम् ।

बीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं विन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमद्-राय-राज-गुरु-मण्डलाचार्यरेनिसि श्री-मूलसंघदेशीय-गण पुस्तक-
गळु कोण्डकुन्दान्वय यिङ्गळेस्वरद बळि श्री मद्मयधन्वसिद्धान्तचक्रवर्त्ति-
गळु तत्-शिष्यरु श्री-भुतमुनिगळु तत्-शिष्यरु प्रभेन्दुगळु अवर प्रियाग्रशिष्यरु
श्री-भुतकोत्ति-देवर शक-वर्ष १३०६ नेय रुधिरोद्गारि-संवत्सरद्
द्वितीय-भाद्रपद-व ८ आदित्यवारदळु मुक्तिवधू-वज्रभरादरु तत्प्रतिनिधियनु सुमति-

तीर्थकरनू ई-चैत्याल[य]द बीणोद्धारवतु अवर शिष्यरु **आदिदेव-मुनिगळु** श्रुत-
गण-मुख्यवाद समस्तभव्यबनङ्गळु माडिसिद शासन वर्द्धतां बिन-शासनम् ।

[मूलसङ्घ, देशियगण, पुस्तकगच्छ, कोण्डकुन्दान्वय, और इंगुलेश्वर-बलिके
अभयचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्त्ती के शिष्य श्रुतमुनि उनके शिष्य, प्रभेन्दुके
प्रियाग्र शिष्य—श्रुतकीर्त्ति-देवके मुक्तिवधूके वल्लभ होनेके बाद (अर्थात् स्वर्गस्थ
हो जानेपर), उनके शिष्य **आदिदेव-मुनि** तथा श्रुत-गणके जैनेने उनकी
तथा सुमति तीर्थङ्करकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा कर इस **चैत्याल**को सुचरवाया ।]

[Eo, IV, Hunsur tl., No. 123.]

५८५

विजयनगर—संस्कृत ।

[सङ्क १३०७ = १३८६ ई०]

(जैन मन्दिरके सामने दीपस्तम्भ पर)

यत्पादपंकजराजो रजो हरति मानसं ।

स बिनः श्रेयसे भूयान्द्रूपसे करुणालयः ॥ [१]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ॥ [२]

श्रीमूलसंवेजनि नंदिसंघ [स्त] शिन् बलत्कारगणोतिरम्यः ।

तत्रापि सारस्वतनाम्नि गच्छे स्वच्छाशयोऽमृदिह पद्मनंदो ॥ [३]

आचार्य्यं कुंड [कुंदा] ख्यो बलप्रीक्षो महामतिः ।

पलाचार्यो गृध्रपितृच्छ इति नबाम पंचधा ॥ [४]

केचित्तदन्वये चारुमुनयः रवनयो गिरां [।]

बलघाविव रत्नानि बभूवुर्दिव्यतेजसः ॥ [५]

तत्रासीन्चारुचारित्ररत्नरत्नाकरो गुरुः ।

धर्मभूषणयोगीन्द्रो भट्टारकपदांशितः ॥ [६]

भाति भट्टारको धर्मभूषणो गुणभूषणः ।
 यद्यशःकुसुमामोदे गगनं भ्रमरायते ॥ [७]
 शिष्यस्तस्य मुनेरासीदनगलतरोनिधिः ।
 श्रीमान्मरकीत्यर्थो देशिकाग्रेसरः शमी ॥ [८]
 निबपद्मपुटकवाट घटयित्वानितानिरोष [तो] हृदये ।
 अविचलितबोधदापं तममरकर्त्ति भजे तमोहरणम् ॥ [९]
 केपि स्वोदरपूरणे परिणता विद्याबिहीनांतरा
 योगीशा भुवि संभवंतु बहवः किं तैरनंतैरिह ।
 धीरः स्कूर्जति दुर्जयातानुमदध्वंसी गुणैर्जितै-
 राचार्य्योमरकीर्त्तिशिष्यगणभृच्छ्री सिंहनन्दो व्रती ॥ [१०]
 श्रीधर्मभूषोर्जन तस्य पट्टे श्रीसिंहनंदार्य्यगुरास्सधर्मा ।
 भट्टारकः आंजिनधर्महर्म्यस्तंभायमानः कुमुदेन्दुकीर्त्तिः ॥ [११]
 पट्टे तस्य मुनेरासीद्धर्मान्मुनोरवरः ।
 श्रीसिंहनंदियोगीन्द्रचरणांभोबषट्पदः ॥ [१२]
 शिष्यस्तस्य गुरोरासीद्धर्मभूषणदेशिकः ।
 भट्टारकमुनिः श्रीमान् शल्यत्रयविवर्जितः ॥ [१३]
 भट्टारकमुनेः पादावपूर्व्वकमले स्तुमः ।
 यदग्रे मुकुलीभावं यांति राक्षकराः परं ॥ [१४]
 एवं गुरुपरंपरायामविच्छेदेन वर्त्तमानायां—
 आसीदसीममहिमा वंशे यादवभूभृतां [१]
 अखंडितगुणोदारः आमान् बुक्कमहीपतिः [१५]
 उदयद्भूतस्तस्माद्राजा हृषिकेशवरः ।
 कलाकलापनिलयो विधुः क्षीरोदधेरिव ॥ [१६]
 यस्मिन् भर्त्तरि भूपाले विक्रमाक्रांतविष्टपे ।
 चिराद्राजन्वती हंत भव [त्र्येषा] वसुंधरा ॥ [१७]

तस्मिन् शासति राजेन्द्रे चतुरम्बुधिमेखला ।

धरामधरिताशेषपुरातनमहीपतौ ॥ [१८]

आसीत्तस्य महीजानेः शक्तित्रयसमन्वितः ।

कुलक्रमागतो मंत्री चैव दंडाधिनायकः ॥ [१९]

द्वितीयमंतःकरणं रहस्ये बाहुस्तृतीस्समरांगणेषु ।

भीमान्महा चैव [प] दंडनाथो बागर्त्ति कार्ये हरिभूमिभर्तुः ॥ [२०]

तस्य श्रीचैव दंडाधिनायकस्यो [जि] तश्रियः ।

आसी दिरुगदंडेशो नंदनो लोकनन्दनः ॥ [२१]

न मूर्त्ता नामूर्त्ता निखिलभुवनाभोगिकतया

शरद्राजद्राकाविटनिटिलनेत्रद्युतितया ।

प्रभूता कीर्त्तिस्सा चिरमिरुगदण्डेश कथय-

त्यनेकांतात्कांतास्परमिह न किञ्चिन्मतमिति ॥ [२२]

सद्वंशजोपि गुणवानपि मार्गणाना-

माधारतामुपगतोपि च यस्य चापः ।

नम्रः परान्विनमयश्चिरुगद्वितीश-

स्योच्चैर्जनाय रञ्जु शिञ्जयतीव नीतिम् ॥ [२३]

हरिहरधरणीशप्राज्यसाम्राज्यलक्ष्मी-

कुवलयदिग्धधामा शौर्यगाम्भीर्यसीमा ।

हरुगपधरणीशस्त्रिहसनन्द्यार्थ्यवर्य-

प्रपदन [ल] नभृंगस्त प्रतापैकभूमिः ॥ [२४]

स्वस्ति शुक्वर्षे १३०७ प्रवर्तमाने क्कोधनवत्सरे फाल्गुनमासे कृष्णपक्षे

द्वितीयायां तथौ शुक्वारे ॥

अस्ति विस्तीर्णकर्णाटधरामण्डलमध्यगः ।

विषयः कुन्तको नाम्ना भूकांताकुंतलोपमः ॥ [२५]

विचित्ररत्नराचरं तत्रास्ति विजयाभिधं ।

नगरं सौषन्दोह दशताकाण्डचन्द्रिकं ॥ [२६]

मणिकुट्टिमवीथीषु मुक्तासैकतसेतुभिः ।

दा[न]िन्नि निरुंधाना यत्र क्रीडति बालिकाः [॥ २७]

तस्मिन्निरुगदंदेशः पुरे चारुशिलामयं ।

श्रीकुन्थजिननाथस्य चैत्यालयमचीकरत् ॥ [२८]

भद्रमस्तु जिनशासनाय ॥

सारांश

इस लेखमें २८ संस्कृत-श्लोक हैं और यह प्राचीन जैन मन्दिरके सामने दीपस्तम्भ पर खुदवाया है। इस मन्दिरको आजकल 'गाण्णिकट्टी' मन्दिर, यानी, "तेलिनका मन्दिर" कहते हैं। पहले श्लोकमें जिन, दूसरेमें जिनशासनकी मंगलकामना है। तत्पश्चात् एक जैन संघके प्रधान **सिंहनन्दि** के आध्यात्मिक पूर्वजों तथा शिष्योंके वंशका वर्णन है। वह इस तरह है :—

मूलसंघ

↓

नन्दिसंघ

↓

बलात्कार-गण

↓

सारस्वतगच्छ

↓

पद्मनन्दी

⋮

धम्मभूषण प्रथम, 'भट्टारक'

↓

अमरकीर्ति

↓

सिंहनन्दि, 'गणभृत्'

चर्मभूष, 'भट्टारक'

वर्द्धमान

चर्मभूषण द्वितीय, उर्फ भट्टारकमुनि

लेखमें इन गुरुओंकी पदवियाँ ये लिखी हैं :—आचार्य, आर्य, गुरु, देशिक मुनि और योगीन्द्र । गुरुवंशावलीके बाद ही प्रथम विजयनगर वंशके दो राजाओं, बुक्क और उसके पुत्र हरिहरका संक्षिप्त वर्णन है । बुक्क यादववंशके राजाओंमें उत्पन्न हुआ था । हरिहरका कुलकभागत मंत्री दण्डाधिनायक चैच या चैचप था, जो जिन भक्त था । चैचका पुत्र दण्डेश या क्षितीश (युवराज) इरुग या इरुगप था, जो उपर्युल्लेखित सिंहनन्दि गुरुके सिद्धान्तोंका उपासक था (श्लोक २४) । १३०७ [अतीत] शकमें, क्रोधन संवत्सरमें इरुगने विजयनगरमें एक मन्दिर बनवाया और उसमें श्री कुन्धु-जिननाथकी स्थापना की । यह नगर कर्णाट प्रान्तके कुंतल जिलेमें था (श्लोक २५) ।]

नोट :—इस मंत्री इरुग या इरुगपने 'नानार्थनाममाला' नामक ग्रन्थ बनाया था, ऐसा ई० हल्श, पी० एच० डी० महाशयके लेखसे मालूम पड़ता है ।

[South Indian ins, Vol. I, No. 152.

(p. 155-160)]

—

५८६

मसार,—संस्कृत ।

[सं० १४४३ = १३८६ ई०]

नं० १

[कृष्ण चिह्नवाली आदिनाथकी प्रतिमाके चरण-पाषाणपरका लेख]

१—सं० १४४३ ज्येष्ठ सुदि ५, गुरो महासारस्य ज

२—राजनाथ देव राज्ये काष्ठसंघे आचा-

३—र्य कमलकोसि जयसरङ्गाचार्य

४—* * वपुत्रल * * *

यह लेख सं० १४४३में, सारंग (या उसके पुत्र) द्वारा एक प्रतिमाके समर्पणका उल्लेख करता है । समर्पण महासारके राजनाथ देवके राज्यमें हुआ । गुरु काष्ठसंघके कमलकीर्ति आचार्य थे ।

नं० २

[एक प्रतिमाके, जिसका चिह्न मिट गया है, चरण-पाषाणपरका लेख]

१—सं० १४४३ समये ज्येष्ठ सुदि ५, गुरो

२—राजनाथ देव प्रवर्द्धमाने महासारस्य काष्ठसंघे मथुरान्वये

३—पुष्करगणे प्रतिथ वज्र कमलकोसि देव

४—जैसवल वेसल रगचर्न * * *

५—पुत्र लवम देव सम * * *

६—यन प्रतिष्ठ * *

इस लेख में पहलेके लेखके दिन ही एक प्रतिमाके समर्पणकी बात है । राजनाथ देव और उसके गुरु कमलकीर्ति का नाम स्पष्ट है ।

१. मूलमें 'राज्ये' छूट गया है ।

नं० ३

[शंख चिह्वाली नेमिनाथकी प्रतिमाके पीठ-स्थलपरका लेख]

१—सं० १४४३, ज्येष्ठ सुदि ५, गुरो महासारस्य न (!)

२—काष्ठसंवे अचार्य-कमलकोटि देव

३—जै महन्साचार्य उदे सिदि

उसी राजा और उसी गुरुके तत्त्वावधानमें उसी दिन नेमिनाथकी प्रतिमाका दान ।

[A. Cunningham, Reports, III, p. 68-69
No. 1-3.] t. & a.

५८७

तिरुप्परुत्तिकुण्ड;—संस्कृत ।

प्राभव (प्रभव) वर्ष = शक १३०१ = १३८७ ई० (हुसैन और बीकहर्न)]

श्रीमद्वैद्यदण्डनाथतनयस्संवत्सरे प्राभवे

संस्थावानिरुगप्प-दण्डनृपतेश्श्रीपुण्यसेनाजया ॥

श्री काञ्चीजिनवर्द्धमाननिलयस्याग्रे महामण्डपं

सङ्गीतार्थमचीकरच्च शिलया बद्धं समन्तात् स्थलम् ॥१॥

[पूर्व शिलालेखवाले मन्दिरकी वेदीके सामनेके मण्डपकी छतमें यह ग्रन्थ-लेख उत्कीर्ण है । इसमें शार्दूलविक्रीडित छन्दका एक ही श्लोक है । इसमें उल्लेख है कि प्राभव (प्रभव) वर्षमें गुरु पुण्यसेनकी आज्ञासे सेनापति वैद्यपके पुत्र उसी (पूर्व वर्णित) सेनापति इरुगप्पने उस मण्डपको बनवाया है जिसमें यह लेख उत्कीर्ण है ।]

[E C, VII, No. 15, B.]

५८८

उद्भिः—संस्कृत तथा कन्नड ।

[वर्ष विभव = १३८८ ई० (लू० राइस) ।]

[उसी ताळाबकी मोशेके पासके पावाणपर]

श्री-शान्तिनाथाय नमः ।

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

वर-वृषभ-स्तीर्त्यकर गण- ।

घररेनिसिद वृषभसेन-मुनि-पुङ्गववद्- ।

धुर-वंश-सम्भवाचा- ।

र्यर पेम्प पोगळतरिदपने फणिरमणम् ॥

आ-निषमाप्रणिगळ जिन- ।

सेन-श्री-वीरसेन रनिपाचार्यर् ।

भू-तुल-चरित्ररवरम् ।

जानिसुव विन्ये-जनद पेम्पेयदार्म्मम् ॥

अमर्द तदन्वयदि बन्- ।

द मुनीशर लक्ष्मसेन-भट्टारकरुत्- ।

तम-चरित्ररवर शिष्यरु ।

विमळ-गुणरु चन्द्रसेन-सूरिगळनघर् ॥

आ-मुनि-राबर शिष्यो- ।

हामरु मुनिभद्र-देवरवर चरित्रम् ।

भू-महितमेन्दोडदनिन् ।

ए-मतो बणिगसल्के वल्लवनावम् ॥

वृ ॥ जेमममन्विन विमल-कीर्त्ति दिगन्तमवेय्यद्विन् ।

कामन चाप चापळते सार्ध्वीनमोष्पिदरं पोगळ्दपेम् ।
 श्री-मुनिमद्र-देवरनिळा-विनुतोरु-शुभ-स्वभावरम् ।
 प्रेमदोळ्ठियगत्यमुमनीवरमुग्र-तपः-प्रभावरम् ॥
 मुनिसं मनमय-युद्धदोळ् निरुतमं तत्त्वार्थदोळ् भक्तियम् ।
 बिन-पादाम्बुजदोळ् द्रवाधिकतेयं सच्चित्तदोळ् देसेयम् ।
 विनुताचार-चयङ्गळोळ् वचनमं वक्तृत्वदोळ् रुक्म रञ् ।
 जनेयं देहद कान्तियोळ् निरिसिदवाक्यादि-वर्णाहयर् ॥

कं ॥ हिंसुगल्ल वसदियं मा- ।

डिबि मुळुगुण्डः जिनन्द्र-मन्दिरके सुधा- ।
 प्रसरमनेसगिसि जसमम् ।
 पसरिसि मुनिभद्र-देवरोळ्पं तळेदर ॥
 न्यायोपायद हरिहर- ।
 रायं वर-विजयनगरियोळु नेलसिर्पण्द ।
 आयतिकेय सेन-गण- ।
 ज्यायर मुनिभद्र-देवररनेरकदवर् ॥
 इन्तेसेव तपश्चरणा- ।
 नन्तरमाप्तागम-प्रभावमनेसगुत्- ।
 तं तूळिद् दुरितमं निश्- ।
 चिन्तर मुनिभद्र-देवरिर्पण्नेवरम् ॥
 कालावसान-संस्थितिग् ।
 आलम्बमेनिप्प निर्णयं दोरकलोडम् ।
 शीलाचार-समाज वि- ।
 शालमुनिभद्र-देवररितं जनिसल् ॥
 नीरोळगण-तावरेयेले ।
 नीरं पोरदन्ते बाह्य-वस्तुवनेल्लम् ।

दूरं माहि बल्लिळकम् ।

धीरस मुनिभद्र-देवगणित-महिमर् ॥

वृ ॥ ज्ञमे निश्शाल्यमेनुत्ते सन्यसनदिन्दात्म-प्रबोधादयम् ।

समसन्दोन्दिरे दिव्य-पञ्च-पद-चिन्ता-पंक्ति मुन्नेय्दुयुत्त- ।

तम-ताणक्कदु सञ्चितात्यमेने धर्म-ध्यान-मौनोद्यम- ।

क्रमदिन्दं मुनिभद्र-देवरोडलिं बेम्माडिदब्बोवमम् ॥

लसित-शकाङ्कमुद्ध-नभ-चन्द्र-पुरेन्दुविनिन्दे सोभिसल् ।

पेसवडेदोषि तोर्प विलसद्-विभवाब्बद् चैत्र सुद्ध-ते- ।

रसे-शनिवारदोळ् सकळ-सन्यसन-व्यसनं समाधि सन्- ।

दिसे मुनिभद्र-देवघरे सद्-भाति सौख्यमनेय्दिदर् जिजम् ॥

क ॥ लसित-मुनिभद्र-देवर ।

निशिषियुमनवर शिष्यरेने सोगधिप पारि- ।

सत्तेन-देवघरे मा- ।

डिसि कीर्त्तियनान्तरिन्तु कन्तु-विदर् ॥

भद्रमस्तु जिनशासनम् श्री

[वृषभ-तीर्थंकरके गणघर वृषभसेन-मुनिप और उद्धुर-वंशके आचार्योंकी कीर्त्तिका वर्णन कौन कर सकता है ? इस वंशके आचार्योंके अग्रणी जिनसेन और वीरसेन थे । उस परम्परामें लक्ष्मीसेन-भट्टारक अवतीर्ण हुए थे, जिनके शिष्य चन्द्रसेन-सूरि थे । उनके शिष्य मुनिभद्र-देव थे; उनकी प्रशंसाएँ । उन्होंने हिसुगल बसदिफो बनवाया था, और मुल्लुगुण्ड जिनेन्द्र मन्दिरका विस्तार किया था । जिस समय हरिहर-राय विजयनगरीमें विराजमान थे, सेन-गणके बृद्धजनोंने उस यतिके गुणोंको नमस्कार किया था । तपश्चरणके बाद उन्होंने बहुत समयतक निश्चिन्त जीवन बिताया । अन्तमें, उन्होंने अपना अन्त नवदीक जानकर, विहित विधिा अनुष्ठान करके उच्चावस्थाके लिये अपनेको तैयार किया, तयः

(उक्त मितिको), 'सन्यसन' की विधिपूर्वक, प्राणोत्सर्ग करके शाश्वत सुखका आनन्द लिया । उनका स्मारक उनके शिष्य वा (पा) रिससेन-देवके द्वारा खड़ा किया गया था । बिनशासनका कल्याण हो ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 146]

५८६

हिरे-आवलि;—कवच ।

[कव १३११=१३८६ ई०]

[हिरे-आवळिकें, १६वें पाषाण पर]

श्रीमद्-नाय-राजधानि-हस्तिनापुर-विजयानगरि-मुक्षवाद । समस्त-पट्टणा-धीश्वर । अश्वपति-गजपति-नरपति-अरि-राय-तुरुस्क ष्क)-विभाड । हिन्दूराय-सुर-त्राण । भाषेगे-त्पुव-रायर गण्ड । समस्त-भुवनाश्रय पृथ्वी-वक्षम । महाराजाधिरा-जम् । श्री-वीर-बुद्ध-रायन कुमार हरिहर-राय राज्यं गेयुत्तमिर्ण कालदक्षि महा-प्रधानि मन्त्रि-शिरोमणि मादरस बोडेयर काल । स्वस्ति यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यन-मौनानुष्ठान-जप-तप-समाधि-शील-गुण-सम्पन्नरूप श्री-मुनिभद्र-स्वामिगळ गुडु । आढागभय-शास्त्र-दान-विनोदनुं । रत्नत्रयाराधकनुं । बिन-माया-प्राव-करनुमप्य बिट्ठुलिगेय-नाडिङ्गे मुख्यवाद हिरियावालय पुराधी-श्वरनप्य भामन्नाळु-महा-प्रभु काम-गोण्डन सुत्र कुल-दीपकनप्य । हिरिय-चन्दपन शक-वर्ष १३११ शुक्र-संवत्सरद कात्तिक-बहुळ-रजनो-कुज-वार-चतुर्दश-शुभ-दिनदलु सन्यसन-समाधि-विधियि मुडिहि स्वर्ग-प्राप्तनाद ॥

क ॥ कात्तिक-बहुळ-चतुर्दश ।

कात्तिय मुनिभद्र-यतिय प्रियद गुडुम् ।

मूत्तिय देहव तोरदन- ।

मूर्त्तद देवरने नेनेदु कीत्तिय पडेदम् ॥

वोडने हुट्टिरनेल्लर

कहु-मोइद मात-पितर-बन्धु-जनङ्गळ ।
 यइवरियद महदियरम् ।
 कहु-गलितनदक्षि तोरेदु सन्यसनिन्दम् ॥
 रत्ननि-कुजवार-शुभ-दिन ।
 भनियिसिदं दैव-गुरुव व्रतगळनेत्तम् ।
 सुजनत्वद चन्द्रमनुम् ।
 गज्जभजिसदे मडिहि स्वर्गमं नेरे पडेदम् ॥
 अण्ण चन्द्रमगे गोपय ।
 पुण्यद सम्बळ बनिते **राम-गौण्ड-गौण्डिय** पुत्रम् ।
 बण्णिसुव हरिहरायन ।
 पुण्णिदन कालदक्षि शुक्लोत्तरदोळ् ॥
 गंगळ महा । श्री श्री
 [लेख स्पष्ट है । हरिहर-रायके समयका है ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 116]

५६०

मुल्लूर,—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३१३ = १३११ ई०]

[मुल्लूरमें, बरित-मन्दिरमें चन्द्रनाथ बस्तिके पास]

स्वस्ति श्री शक-वर्ष १३१३ नेय प्रमोदूत-संवत्सरद वैशाख-शुद्ध
 ५००० रवळ्ळु श्री-मूल-संघ देसी-गण पुस्तक-गन्धुद ... कोण्डकुन्दान्वयराय्य-
 शुभेन्दु-कन्द-विजयकीर्ति-देवर प्रि लिख देव ई-स्थानमं
 पडेदुद्धरिसिदर श्री-राजा कोङ्गाळ्ळ सुगुणि-देविय देहारद
 विजय-देवर द्वारा स्व-जननि आ-पोचन्नरसिगे पुण्यार्थ-
 वागि प्रतिष्ठेय माड्सि बिट्ट ऊर अणितवाडिय नेलबिहळ्ळियम् (यहाँ

दान और सीमाओंकी विस्तृत चर्चा आती है; और वे हो अन्तिम वाक्यावयव) ।

[स्वस्ति । (उक्त मितिको), श्री-मूल-संघ देशीगण पुस्तक-गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके, आर्य शुभेन्दुकी सन्तान विजयकीर्ति देवके प्रिय.....क्षि-देव-को यह मन्दिर मिलनेके बाद इसकी पुनः स्थापना की । और राजा कोङ्गाळव सुगुणि-देवीने, अपने शरीररत्नक विजयदेवके द्वारा,—इसलिये कि अपनी मां पोचम्बरसिके लिये पुण्योपार्जन हो सके, —(प्रतिमाकी स्थापना की और इसके लिये जैसे कि लेखमें कहे गये हैं, सीमाओं सहित) दान दिये । शाप ।]

[EC, IX, Coorg tl., No. 39]

५६१

अवणबेल्गोला;—कन्नड ।

[बिना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भाग]

५९२

हिरे-आवलि;—कन्नड ।

[वर्ष आङ्गिरस=११५३ ई० (ल. राइस)।]

[हिरे-आवलिमें, ११वें पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमदु आङ्गिर-सं [व] अ (त्स) रद आश्र (पा) व-सुच त्रयोदशे-
गुदवार दण्डु । मूल-संघद शुभचन्द्र-देवर गुड अवलिय मसण गोडन मग
गोरव-गोडन तम्म काळ-गोड समाधियि मुडिपि स्वर्ग-प्राप्तनाद ॥

[लेख स्पष्ट है । राजाका उल्लेख नहीं है ।]

[Ec, VIII Sorab tl, No 111]

५९३

हले-सोरब—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक सं० १३१७=१३१५ ई०]

[हले-सोरबमें, उसके दक्षिण-पूर्वमें, तालाबके उत्तरीय नष्ट बननेके पासके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं ।

जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

शक-वरुष १३१७ नेय भाव संवत्सरद भाद्रपद-व ७ बु सोरब
मोलेय-तम्म गाडडन मग तम्म-गऊड तनगे क्षय-व्याधियाद-निमित्त घट्ट
केळगण नगिलेयकोप्पके होगि औधिय माडिलिकोळुतिरलागि रोग बिडदे
सिद्धान्ति-देव पञ्च-नमस्कारद ध्यानदिं जिन-चरण-सेवेगैदिदनु ॥

[जिनशासनकी प्रशंसा । (उक्त मितिको), सोरबके तम्म-गौडको क्षय-रोग हो जानेसे घट्टोंके नीचे नगिलेयकोप्पमें दवाई लेनेके लिये गया । लेकिन चूंकि बीमारी (रोग) उसे छोड़नेवाला नहीं था,—सिद्धान्ति-देवकी आज्ञाके अनुसार, पञ्च-नमस्कारके उच्चारणपूर्वक, वह जिनके पाद-मूलमें गया ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 52]

५९४

हिर-भावली;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[वर्ष भाव = १३१५ ई० (ख, राइस)]

[हिर-भावलीमें, तीसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्रीमद्-राय-राजधानि-हस्तिनापुर-विजयानगर-मुख्यवाद-समस्त-पट्टणाधीश्वर
अश्वपति-राजपति-नरपति-अरिराय-विभाड ससस्त-भुवनाश्रय पृथ्वी-वक्त्रम महा-
राजाधिराजं श्री-हरिहर-राय राज्यं गेय्युत्तमिर्पक्षि तत्प्रधानि हरिय-रायन-
कालदक्षि भाव संवत्सर-फाल्गुण मास-बहुल-एकादशी-बुधवारद
कान-रामणन सति कामीगौण्डि सन्यसनि-विधिधि मुडिहि स्वर्गास्थेयादळु ॥

वृ ॥ सुरपात वन्य-पार्श्व-जिन-पाद-सरोजद युक्त-कान्तियुम् ।

घर-नुत-राय-राज-गुरु सिद्धान्ति-यतीशने तत्र राश्वनुम् ।

भर ... न- नाड जिड्डुळिगे आवलि-पुराधिप बेच-गौण्डनुम् ।

उरुतर-माम बोम्म-नुमत्तेयु शोभिप कामि-गौण्डियुम् ॥

कान-रामण [न] सतियेने ।

दानदोळं चर्मदक्षि सन्यसनियम् ।

येनु तडावक्त्र मुडिहदम् ।

मान पतिव्रते नाकर्म नेरे पडेदळ् ॥ मङ्गळ महा श्री श्री श्री ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । जिस समय राजधानी हस्तिनापुर-विजयनगर और
समस्त शहरों (पट्टण) का अधीश्वर, महाराजाधिराज हरिहर-राय राज्य कर रहे
थे :— उसके मंत्री हरिहर-रायके समयमें, (उक्त मितिको), कान-रामणकी स्त्री
काम-गौण्डिने, 'सन्यसन' लेकर, मृत्युको प्राप्त होकर स्वर्ग गयी । आगेके श्लोको
में बताया गया है कि राजगुरु सिद्धान्ति-यतीश उसका पुरोहित था; जिड्डुळिगे-
नाडके आवाल-पुरा अधिप बेच-गौण्ड चाचा था; बोम्मर उसकी सास थी ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No. 103.]

५६५

हिरेश्वावलि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[—शक १३१६ = १३१७ ई०]

[हिरेश्वावलिमें, २१वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिन-शासमम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरम् । अरि-राय-विभाड । श्री-वीर-हरियप्प-बोडेयर
 राज्योदयदन्दु शुक्र-वद्व १३१६ घातु-सं-आषाढ-शु० ११ म हिर्य-बिडुलि-
 गेय-नाडोळ-गण हिर्यावलिथ राम-गौडन सति माध्वचन्द्र-मलघारि-गळ गुड्डि
 रामि-गौडि श्री-बिन-पदवनेय्दिदळ

षडुःदरुशन-सम-शीलम् ।

दृढ-व्रत-दृढ ध्यान-मौन-दृढ-गुण-चरितव ।

बिडदे श्री-बिन-पद-ग्वव ।

नेनऊत्तं रामि-गौडि स्वर्गस्तेयादळ ॥

[लेख स्पष्ट है । हरियप्प-बोडेयर्के समयका है ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 121]

५९६

अवणबेलगोला;—संस्कृत ।

[शक १३२० = १३२१ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५६७ .

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[काक = शक १३२१ = १३११ ई०]

[पार्वनाथ बस्तिके मुल्लमण्डपके तीसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमदु शक वरुष (वर्ष) सा १३२१ नेय बहुधान्यसंवत्सरद मार्गासिर-
मुद्र ४ श्रावण-नक्षत्रद मल्लप्पगळ मग होम्बुक्कद यि ...
पायण्ण सकल-सन्न्यसन-सल्लोखन ... दणियं शरीर-भारभे बिट्ठु स्वर्गस्तरादरु
मङ्गळ श्री श्री

[होम्बुक्कके पायण्णने सन्न्यसन और सल्लोखनाके द्वारा अपनेको अपने
शरीर-भारसे मुक्त किया और स्वर्ग प्राप्त किया । यह उसीका स्मृति-लेख है ।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 51, t. & tr.]

५९८

हिर-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३२१ = १३११ ई०]

[हिर-आवलिमें, पाँच वें पाषाण पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ।

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रय पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराजं अश्वपति गजपति नरपति
पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधीश्वर श्रीमद्-राय-राजधानि-हस्तिनापुर-विजयानगर--
मुख्यवाद समस्त-पट्टणाधीश्वर श्री-हरिहर-राय राज्यं गेय्युत्तमिण्य कालदक्षि ।

शुक्र-वर्ष १३२१ नेव बहुधान्य-संवत्सर आषाढ़ शुद्ध १२ बुधवारदुदय-काल-
दोळु श्रीमन्नाळुव-महाप्रभु बिड्डुल्लिगेय-नाडिङ्गे मुख्यवाद आवलिय चन्द-
गौण्डन सति चन्द-गौण्डि सन्यसन-समाधि-विधियि मुडिहि स्वर्ग-प्राप्तयेदळु ॥

क ॥ वर-पार्श्व-जिनर चरणम् ।

उत्तर-श्री-विजयकीर्ति-चरणाम्बुजम् ।

शरणेन्दु मनदि नेनेवुत ।

वर-वडदळु यिन्द्र-स्वर्गामं सुखदिन्दम् ॥

नडव महा-लक्ष्मि-चौण्डक ।

यडवरिय ... आवलियोळम् ।

कडयिक्कद कीर्तिय ... ।

पडेद सति सतियरोळगे ... राद सतियळ् ॥

भद्रमस्तु ॥ मङ्गळ महा श्री श्री श्री

[यह लेख ऊपर के लेख नं० ५६४ से मिलता है, लेकिन चन्द-गौण्ड की पत्नी चन्द-गौण्डि, जिनके पुरीहित विजयकीर्ति थे, का उल्लेख है ।

[EC, VIII, Sorab tl., No. 105]

५६६

ऊर्द्धि;—संस्कृत तथा कन्नड-भजन

[बिना काळ निर्देशका, पर लगभग १३८० ई०]

[ऊर्द्धिमें ही, एक दूसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्यादादामोघलाञ्छनम् ।

वीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-भू-वळय-मण्यदोळ् इर्पुंदु मेरु-पर्वतम् ।

प्रशयदि दक्षिणाभयदोळिर्पुंदु कुन्तळ-देश देशदोळ् ।

स्व-स्थिरवाद **बनवसेगवाभयमुं** पदिनेष्टु-**कम्पणम्** ।
 विस्तरदिन्व **जिह्वुलिनेगोप्पुव** दर्पण**बुद्धरा-पुरम्** ।
 उद्धरेयोळ् **बनिसिद्धम्** ।
 ... हात्तं **बयिचपात्मकं सिरियणम्** ।
 सद्दम्मिगळ् **सुर-द्रुम्** ।
 सिष्टरं **पालिसुत्तं** ॥
 आतन सति **चोढान्बिके** ।
 भूतळदोळ् **पुरुष-भक्ति बन्धुगळित्सा-** ।
 मात्रदि **पुर-बनवहुदेने** ।
 गोत्रं पेच्चुत्ते **नडदळत्याश्चर्यम्** ॥

व ॥ अन्ता-सिरियणं ... स्व-पत्नी-सहित-बन्धु-बान्धव ... परिजन-पुर-बनमं
 पालिसुत्त सुख-संकया-विनोददिन्दमिरुत्त यिरुत्त ॥ वोन्दानोन्दु-दिनं अरुहत्-परमे-
 श्वरं **मुनिभद्र ... सिरियण ...** चिन्तानेयं माळप् ...

मुनिभद्र-देवराग्नेयोळ् ।
 अनुवर्त्तिसिह **गुडुनातनेम् ...** ।
 तङ्ग ।
 अनुमत-पदबीवेनेन्दु नेनेववसरदोळ् ॥
 अनु ... तदिं कुसुम-वृष्टिगळं **सुरियल्के बेगदिम्** ।
 घन-रव-भेरि-दुन्दुभि महा-मुरजं बहु-वाद्य-घोषदिम् ।
 तन तनगाडि पाडुत्तिरे ।
 जिन-पद-पद्ममं बिडद ... **सिरियणनेम्** कृतार्थनो ॥

(बाकीका पढ़ा जाने योग्य नहीं है) ।

[इस लेखमें बयिचप्पके पुत्र सिरियणने किस तरह जिन-चरणोंका आभय लिया, इसका वर्णन है । नं० ५७६ लेखकी ही तरह यहाँ भी उद्धरेका वर्णन है । इसमें बयिचप्पके पुत्र जिन-भक्त सिरियणने जन्म लिया था । उसकी स्त्रीका

नाम वरदाम्बिके (?) था । एक दिन अर्हत परमेश्वरने (?) मुनिभद्रको यह बत-
लाया कि वे पूर्ण गृहस्थ-शिष्य सिरियणको एक सुखी अवस्थामें पहुँचावेंगे ।
उस अनुकूल समयमें, जब कि पुष्प-वृष्टि हो रही थी और मेरी, दुन्दुभि तथा
महा-मृदङ्गके बाजे बज रहे थे, साधु सिरियण हमेशाके लिये जिन-चरणोंमें
लिपट गया । कितना भाग्यशाली वह था ?]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 153]

५८०

मलेयूर—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[प्रमाथि वर्ष = १४०० ई० ? (लू. राइस) ।]

[उसी पहाड़ीपर, बड़े गोक पाषाणके पश्चिमकी ओर]

प्रमाथि-वत्सरे ज्येष्ठ-मासस्थ श्वेत-पक्षके ।

पञ्चम्यां च तिथौ शुक्रवारे चन्द्रप्रभस्य तु ॥

प्रतिष्ठां कुरुते चन्द्रकीर्त्ति-योगी स्वयं मुदा ।

स्व-निषिध्यर्थं उद्दाम-जिन-धम्म-प्रकाशकः ॥

श्री-मूलसंघ देशीगण पुस्तकगन्ध इङ्गलेश्वरद बळि कोण्डकुन्दान्वयद सम्बन्धिगळुं
भुत-मुनिगळ पद-पद्म-भृङ्गं शुभचन्द्र-देवर प्रियाग्र-शिष्यं श्रीमतु सकल-
कला-प्रवीणरुमप्प भी-कोपणद चन्द्रकीर्त्ति-देवर माडिसिदर श्री-चन्द्रप्रभ-
स्वामि-गळन्तु ।

[सकलकलाप्रवीण, शुभचन्द्रदेवके प्रियाग्रशिष्य, मूलसंघ, देशीगण, पुस्तक-
गन्ध, इङ्गलेश्वर-बळि तथा कोण्डकुन्दान्वयके भुतमुनिके पद-पद्म-भृङ्ग, कोयणके
चन्द्रकीर्त्ति-देवने चन्द्रप्रभकी एक प्रतिमा बनवायी और उसकी, अपनी निषिधिके
लिये, प्रतिष्ठा करायी ।]

[EC, IV, Chamrajnagar tl., No. 151]

६०१

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३२५ = १४०३ ई०]

[हिरे-आवलिमें, १७ वें पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभारस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमत्तु हरिहर-राय राज्यं गेयुत्तविष्णु कालदलु ॥ श्रीमन्नाळुव-महा-
प्रभु अवलिय बेचि-गोण्डन महा-सति सक-वर्ष १३२५ दनेय स्वभानु-
संवत्सर-भाद्रपद-बहुल-सप्तमी-शुक्रवार-रोहिणी-नक्षत्र-बेळप्प - नावदलु
बोम्मि-गोण्डि सन्यसन-समाधि-विधधि शरीर-भारभे चिट्टु स्वर्ग-प्राप्तियादलु ॥

॥ तन्नय दय्यं बिन-पति ।

तन्न गुरुं मारचन्द्र-मलघारि-देवर् ।

तन्न पति बेचि-गोण्डनु ।

तन्न सुतं चन्द-गोण्ड अवलिपुरेशान् ॥

यी-तेरद वन्धु-बळगद ।

ख्यातिय प्रभु-मनेगळेत्त तन्नवरेत्तम् ।

... ताय गुणके पासटि ।

भूतळदोळु बम्मकङ्गे सरि दोरे उण्टे ॥

बिनर नेनेवुत्त वचनदीळ् ।

मनसिनोळ् पुत्र-पौत्ररं तोरेवुत्तम् ।

येनगीग पञ्च-पदगळे ।

घनवेनुतले मुडिहि स्वर्गमं नेरे पडेदळ् ॥

मङ्गल महा श्री ओ ॥

[लेख स्पष्ट है । हरिहर-रायका राज्य था ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 117.]

६०२

अवणबेलगोला;—कन्नड ।

[वर्ष तारण = शक १३२६ = १४०४ ई० (बीलहोर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६०३

हले-सोरव;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३२७ = १४०५ ई०]

[हले-सोरवमें, इसके पूर्वमें आक्षनेय मन्दिरके पासके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्-परमश्रीभार्याद्वाढामोघलाञ्छनम् ।

वीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शामनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्री शक-वर्ष १३२७ नेय पाथिष-संवत्सरद् प्रथम-आषाढ-
३० सु सोरवद् महा-प्रभु देव-राजन अर्द्धाङ्ग मेचकं जिन-पदवनेऽददत्त
हेन्तेने ॥

कन् ॥ पोडविपर नेलेवीडिदु

भु (ट) उत्तर-पुर चन्द्रगुप्ति अदकाश्रयवी -

एड-नाहु मोदल-कम्पण ।

कडेगं पदिनेण्टु-नाडनार् बणिपरो ॥

घनतर-तेजदेळेंगेगेसदिप्पववेम् पदिनेण्टु-कम्पणक् ।

अनितरोळोप्पु च्छरेय श्री-वनिता-सति बयिच-राजनोळ् ।

जनिसिदळिल्लि बाळ्द लेड-नाड महा-प्रभु देव-राजनह् -

गने एने मेचकं जिन-पादान्जमनेऽददवेम् कृतास्थेयो ॥

कन् ॥ अरुहत्-परमेश्वरनम् ।

स्मरिसि महा-दुरित-दुर्घटङ्गळ कळिदळ् ।

गुरुगळ सम्बोधने उच्चरणेयलेयिदिदळ् सु-समदि जिन-पदम् ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । (उक्त मितिको), सोरब महाप्रभुकी अर्द्धाङ्गिनी मेचक जिन पदोंके पास गयी । उसकी प्रशंसामें श्लोक, जिनमें कहा गया है कि कि **अठारह-कम्पणमें उद्धरेके** बयिचि-राजकी पुत्री थी । १८-कम्पणमें पहिला कम्पण एडेनाड् था, जो कि बलवान् नगर चन्द्रगुप्ति पर आश्रित था ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 51.]

६०४

हिरे-आवलि,—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३२६=१४०७ ई०]

[हिरे-आवलिमें, सात वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-भुवताश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराज भुजबल-प्रताप चक्रेश्वर श्री-वीर-हरिहर-रायन कुमार देव-रायर पृथ्वी-राज्यं गेयुत्तमिर्ष-कालदक्षि शक-वर्ष १३२६ सर्व्वधारि-संवत्सरदत्तु जिङ्गुळिगेय नाडिङ्गे मुख्यवाद हिरे-आवलिग्रामदर्शित श्रीमन्नाळ्व-महाप्रभु राम-गौण्डन सुपुत्र हारुव-गौण्ड स्वर्ग-प्राप्ति आद ॥

वृ ॥ परम-श्री-जिन-राज देव्य मुनिपं वैराग्य-सम्पत्तिन्द ।

... द श्री-मुनिमद्र-देव मुनियोळ् कैकोण्डुमिर्षासेयुम् ।

बरेयुं बल्लमेयेन्दु वीरतनदिन्द्राशिवज-भानुदिनम् ।

वर-मु ... तयाङ्गनेगवकु हारुव-गौण्ड-प्रभु धर्मस्थ-कीर्त्ति ... ॥

अण्ण गोयण्णन तम्मनु ;

पुण्यद कणि धर्म-चित्त सन्नादित्रम् ।

पुण्यदनपवर्भाक्कम् ।
 बणिगसली-हारव-गौण्डगेयार् घरेयोळ् ॥
 नोडिदडे मदन-सज्जिम ।
 रुटियोळतिकोत्ति वेत्त सज्जन-पुरुषम् ।
 पाडरिदं हारव-गौण्डम् ।
 बेडिदवरिगल-होन्नु-वस्त्रवनीवम् ॥
 जिनर नुडि बिनर भावने ।
 जिन-बिम्बकल्ददन्य-देव्यक्केरगम् ।
 बिन-मद-नज्जिन-भ्रमरम् ।
 बिन-घम्मोद्वार हारव-गौण्डनुद्वारम् ॥

मंगल महा श्री आं श्रीं ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । स्वरित । जिस समय, (अपने पदों सहित), वीर-हरिहर-नायक के पुत्र देव-राय पृथ्वीका राज्य कर रहे थे :—(उक्त मितिको) हिरि-आवलिमें, वो कि जिड्डुलिगे-नाड्का मुख्य ग्राम है, शासक महाप्रभु राम-गौण्डका पुत्र स्वर्गाको गया ।

आगेके श्लोक बताते हैं कि उसके पुरोहित मुनिभद्र-देव थे, और उसके ल्येष्ट भाई गोप्यण, तथा उसकी उदारता और बिनभक्तिकी भी प्रशंसा की गयी है ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 107]

६०५

कुप्पुदूरु—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३३० = १४०८ ई०]

[कुप्पुदूरु में, जिन-वस्ति के उत्तर-पश्चिमकी ओर के पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।

बीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्थानमें थे:—जब वह देव-राय राज्य की रक्षा करनेमें प्रसन्न था—प्रधान मन्त्री के पदको सुशोभित करते हुए, जिन-समय रूपी समुद्र के बढ़ाने के लिये पूर्ण चन्द्र ऐसा गोप-चमूप महान् निडुगळ् किले पर शासन कर रहा था ।]

[EC, XI, Hiriya tl., No 28]

६१०

भारङ्गी;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३३७ = १४१२ ई०]

[भारङ्गीमें, कच्छेश्वर-वस्तिके पाषाणपर]

... .. खण्डितानङ्ग-राजस्

स्तुत-हित-जिन-राजः प्राप्त-सत्-पाद-पूजः ।

धृत-सगुण-समाजो वादिनं वादि

... .. राजोऽभूवताशेष-राजः ॥

सरसि च सित-सरसिजमिव

गगने विधुरिव हरिरिव हर-हसनम् ।

इव हलधर-रुचिरिव विलस ...

... .. मुनि-पति-वर-विशद-यशः ॥

तच्छिष्यो जयकोसि-नाम-मुनिपस्तत्पाद-सेवा-रतः ।

सिद्धान्त-व्रतीपो नताखिल-नृपस्सिद्धान्त-पारङ्गतः ।

तच्छिष्योत्तम-बुद्ध-गौड-तनुजः श्री-गोपिनाथोऽभवत्

तच्छिष्यः स्वयमप्यभूत् स्व-जननी श्री-माळि-गावुण्ड्ययी ॥

क्रमदिन्दी येत्तर गुणस्तुति येन्तेन्दोडे ॥

शेषोऽप्यस्तु सहस्र-रम्य-रसनस्तोत्रे समर्थो हि यो

भूयो या धिषणा [... ..] श्री-शारदाप्यस्तु सा ।

सोऽप्यस्त्वव गुरुर्गुरुस्सुर-ततेर्यश्शुद्ध-बुध्या गुरुर्

वक्तुं श्री-जयकीर्त्ति-वृत्तमशक्नु नान्यः कथं मादृशः ॥
 यम-नियम-समेतो ध्यान-दग्धाप्र-ज्ञातो
 जय-शत-विधि-तुष्टोऽभूदनुष्ठाननिष्ठः
 अनुगत-गुण-जालो वद्धितात्मीय-शीलो
 भुवि किल जयकीर्त्तिश्चारु-मूर्त्तिस्तु-कोर्त्तिः ॥
 दोक्षा-स्वीकारकालागत-जन-निवहे जात-तोषात् प्रभूतात्
 कीर्त्तिं कुर्वत्यनूनं जय-जय-वचसा यस्य नुत्राखिलार्त्तिम् ।
 स नामार्यैव नामाभवदिति सुवने ख्यातिरासीदितिदम्
 ज्ञाने वक्तुं तदीयानपगत-गणनान्नैव ज्ञाने गुणौघान् ।
 तच्छिष्यः श्रुत-वार्द्धि-वर्द्धन-विधुस्सिद्धान्त-पारङ्गतः
 सिद्धान्तामिध-शुद्ध-नाम-सहितोऽभूच्छुद्ध-विद्योद्यमः ।
 बौद्धाद्युद्धत-वादि-बद्ध-नमनः सिद्धस्तुतौ तत्परस्
 सिद्धेशश्च विशुद्ध-बुद्धि-सहितो हृद्योऽनवद्यो भुवि ॥
 यद्-वाणीमय-दर्पणे शुचि-गुणे घी-भस्म-सन्दीपन-
 प्रक्षीणावरणादि-कल्मष-गणे सत्यं जगद्दर्पणे ।
 भव्या-वीक्ष्य निज-स्वरूपममलं रत्नत्रयाकल्पकम्
 स्वीकृत्यामृतकामिनीं निज-वशे कुर्वन्ति शोघं किल ॥
 सिद्धान्तदेव-कर-पिच्छमितीव भाति ॥
 किं कर्णाभरणैस्सुवर्ण-रचितैः किं मौक्तिकैर्भिर्मितैः
 किं नानामणि-निर्मितैरपि वरैर्मित्वेति मुक्त्वा पुनः ।
 सिद्धान्त-व्रतिपस्य मानसहितं वाणो सुवर्णोज्ज्वलाम्
 कर्णाकल्प इतीव शाश्वतिमां कुर्वन्ति स-र्वे जनाः ॥
सांख्याः किंकरतामिताः किल पुनर्योगा नियोगं किल
चार्वाकाश्च वराकतां किल गता बौद्धाश्च दुर्बुद्धिताम् ।
मादृो भ्रष्ट-मतिः किलाभवदिदं **प्राभाकरं** वेत्ति कः
 तस्मात् को मदभातनोति पुरतस्सिद्धान्त-वादीशिनः ॥
 २६

स्याद्वाद-वाराकर-शीतभानोः
 सिद्धान्त-देवस्य मनोज्ञ-शिष्यः ।
 अभूदसौ बुळ्ळप-गौड़-नामा
 चारित्र-वाराकर-शीतरोचिः ॥
 बिनेन्द्र-गन्धोदक-पूत-गात्रो
 बिनार्चर्चना-पुष्प-निवास-मूर्ध्ना ।
 बिनार्चर्चना-चन्दन-कान्त-भालो
 बिनेन्द्र-मन्त्रालय-मानसाब्जः ॥
 नित्यं विशुद्ध्या कृत-धर्म-चक्रो
 नित्यं ललाटे कृत-धर्म-चक्रः ।
 नित्यं मुदा पालित-देहि-चक्रो
 नित्यं यशः-पूरित-भूमि-चक्रः ॥
 दिनेदिने सम्भूत-धम-बुद्धिर्
 दिनेदिने वद्धित-दान-वृद्धिः ।
 दिनेदिने वृत्त दयामिवृद्धिर्
 दिनेदिनेवृत्त-हिरण्य-वृद्धिः ॥
 अमी गुणास्सन्त्यखिले जनेऽपि
 सम्यक्त्व-रत्नकरता तु नैव ।
 सा बुळ्ळ-गौडे खलु सत्यमस्ति
 कौ वा ततो वर्णयति प्रभुं तम् ॥
 तत्पुत्रस्तत्त-सद्रुण-स्तुत-बिनस्सिद्धान्त-नाम्नो मुनेस्
 सिद्धान्तोद्भट-वाद्धि-वर्द्धन-विधोः शिष्यः सुपुण्यद्वयः ।
 सत्याब्जाकर-भास्करः प्रियकरश्चारित्र-वाराकरः ।
 श्री-पूणो भुवि गोपण-प्रभुरभूत् सम्यक्त्व-रत्नाकरः ॥
 सिद्धान्तदेव-गुरु-पाद-पयोब-भक्तः ।
 श्री-बुळ्ळ-गौड़-हृदयाम्बुज-भानु-बिम्बः ।

सन्मल्लि-गौडि-कर-पङ्कज-बाल-भृङ्गः ।

श्री-गोपणो निखिल-बन्धु-मणीष्ट-सिन्धुः ॥

कीर्तिदिकामिनीनां शिरसि वितनुते मल्लिका-पुष्प-शोभाम्

तेजस्सीमन्तिनीनां विलसति विमले कान्त-सीमन्त-भूमौ ।

सिन्दूर-भीरिवाशा-परवश-विदुषां प्रीति-कृद् दान-सम्पद्

वाणी पीणूष-साम्या समल-गुण-निधेगोपिनाथ-प्रभो-स्यात् ॥

श्रीमद्-राय-राज-गुरु-मण्डलाचार्य महा-वाद-वादीश्वर-राय वादि-पितामह सकल-
विद्वज्जन चक्रवर्तिगण्य श्रीमद्भयचन्द्र-सिद्धान्त-देवर प्रियाप्र-शिष्यनह
बुद्ध गौडन मग गोप-गोडनाव-पोरकधिपतियेन्दोदे ॥

द्विपङ्कलोळगे जम्बू -।

द्वीप देशाङ्गबोळगे कन्नड-देशम् ।

रूप-विभवदलि सत्या -।

लापदि सोगयिसुतमिर्पवतिमुददिन्दम् ॥

अन्ता-जम्बू-द्विपदोळगण कर्णाटि-विषयदोळगे ॥

फल-भरवाद शालि तळ्देरिद चूत-कुत्रालि तेङ्ग कण् -।

गोळिधुव कौङ्ग पूत लते पू-गिडु पू-मरदोळि पल्लवङ् -।

गळ पोळगेन्दि तां निमिर्व शाक-कुर्ज तिळि-नीगोळङ्गळिम् ॥

सुललितवागि रञ्जिपुदु नागरखण्डमदेत्त नोळ्पडम् ।

आ-नाडिङ्गे शिरो-विभूषणवेनल् भारङ्गि चेलवागि सु -।

ज्ञान-व्यापकरप्प भव्य-जनर्दि विद्वज्जनानीकदिम् ।

नाना-नीति-विदग्धरि धनिकरि तीविदुर्दु लक्ष्मी-महा -।

स्थानं तन्नोळगिर्पुर्देम्ब बगे-दोरत्तिर्पुर्देक्कागळुम् ॥

आ-पुरद मध्य-प्रदेशदोळ् ॥

ओळकोण्डभ्रमनेन्दे चुम्बिपुदय-श्री-शलवा-भानु-मण् -।

इलवो येम्बवोलुन्नतोन्नतदोळा-चैत्यालयं चेन्न पोण् -।
 गळशं रक्षिसे भित्तिगळ् पोळपुन्दोरल्गा-महा-सन्नदोळ् ।
 विलसत्पार्श्व-चिनेशनिर्णनदरोळ् देवाचिदेवेश्वरम् ॥
 अन्ता पुरदधिपति भू -।
 चिन्तामणि गोप-गौड-सुत बुळ्ळप्पङ्गु ।
 इन्दुदयिसि गोपण्णम् ।
 कःतु-समाकृतियोळोप्पुवं वसुमतियोळ् ॥
 चिन-सद्-धर्ममनेल्लमं तिळिपि मत्ता-मूल-सन्मन्त्रमम् ।
 नेनेबुत्तिप्पुदेनुत्तल् च्चप्पिसिदं सिद्धान्त-योगीन्द्रना -।
 तन कारुण्यमनप्पुकेय्दु मुददिं सर्व्वश-पादाब्ज-वन् -।
 दनेयं माडुत धम्मदिन्द नडेवं गोपण्ण-भव्योत्तमम् ॥
 गोपति-वाहन-प्रभेयनेळिसि गोपति-वाहनांशुमम् ।
 रूप-गिडल्के बवेडु गोपति-वाहन-कान्तियं महा -।
 टोपदे ताने निन्दिसि मनोहरदेळ्गेयोळोप्पुत्तं बहु -।
 द्वीपमनेय्दे पर्व्विदुदु गोपण्णनगद-कात्ति पाण्डुरम् ॥*

पुनः ॥

अखण्डतर-पाण्डित्य-मण्डितानन-मण्डलः ।

पण्डिताचार्य्य-वर्य्योऽस्याखण्ड-श्री-कारण किल ॥

यत्-कारुण्य-कटाक्ष-वीक्षित-पुमान् लक्ष्मी-पतिस्स्यात् किल

यत्-पादानति-मानितामल-मनास्सत्यं महेशः किल ।

तच्छ्री-पण्डित-देव संयत-कृपावामः किलासौ प्रभुम्

तस्मादस्य सु-गोपणस्य सुकृतं तत् केन वा कथ्यते ॥

एको निवर्त्तयति दुर्भाति-मार्गतो यम्

अन्वो हि दर्शयति निर्द्वि-वर्त्म यस्य ।

यौ पण्डित भूत मुनि मुनिपौ तयोस्तत्

तद्-गोपणस्य मुनि पुण्यं अगप्यमत्र ॥

मत्ते ॥ जिन-पद-सरोज-भृङ्गम् ।

जिन-वाणी-वारि-चौत-कलिल-मलौघम् ।

जिन-मुनि-जन-पद-भक्तम् ।

विनयाढ्यं गोप-गौडनखिल-गुणाढ्यम् ॥

इन्द्र कीर्त्तिगावासवागिर्दुर्दु ॥ पुनः ॥

अन्यदा गुण-माणिक्य भूषणो गोपण-प्रभुः ।

मर्त्य-लोकोद्भवं सौख्यं साधितं भुक्तमुत्तमम् ॥

तस्मादनेन भुक्तेन सुखेनालमतः परम् ।

स्वर्ग-लोकोद्भवं सौख्यं भोक्तव्यमधिकं मया ॥

इत्थं स्वान्ते विचिन्त्येव गोपणो वासरे शुभे ।

पुरन्दर-पुरं शीघ्रं हन्त गन्तु-मना अभूत् ॥

शुभ-वासरवदाबुद्धेन्दोडे ॥

सप्त त्रिंशत्-समेत-त्रि-शत-दश-शतेन्दे शके मन्मथाब्दे

मासे चाषाढ-संज्ञे वर-गुरु-दवसे सत्-त्रयोदश्युपेते ।

कृष्णे पक्षे मनोज्ञे निखिल-गुण-गणो गोपणो भूषणात्तो

भोक्तुं वा स्वर्ग-सौख्यं सुर-पुरमगमद् दिव्यमव्याहत-श्रीः ॥

आतन समाधि-विधानमेन्दोडे ॥

परम-जनेन्द्र-मूर्त्तियने जानिसुतं हृदयाम्बुजातदोळ् ।

परम-जनेन्द्र-मन्त्रमने बिह्वोळ्चरिसुत्त निष्ठेयिम् ।

बेरळ्गळोलोय्यनोय्यनेणिसुत्त जपावधियागे देहमम् ।

स्वरितदि बिन्दु मुक्ति-वहेदं कलि-गोपणनेम् कृतार्थनो ॥

भद्रमस्तु ॥

पूर्वस्मिन् शक-वत्सरे शुभतरे पक्षे च कृष्णेऽधिके

मासे भाद्रपदेऽष्टमी-तिथि-युते श्री-भौमवारे वरे ।

आ-तारापति-भानु-भूषण-धरा ताराम्बरं तिष्ठ (६) तु
 श्री-गोपीश-परोक्ष-शासनमिदं सत्कर्मणा स्थापितम् ॥

[वादिराज मुनिकी प्रशंसा । उनके शिष्य जयकीर्ति-मुनिप थे; उनके शिष्य सिद्धान्त-व्रतिप थे । उनके शिष्य बुल्ल-गौड, उनके पुत्र गोपीनाथ, और उसकी माँ मल्लि-गाबुण्डि । इन सबकी क्रमसे प्रशंसा । उनके शिष्य (प्रशंसा सहित) सिद्धान्त-देव-मुनिप थे, जिनका मस्तक बौद्धोंको चुप करनेके लिये हमेशा सज्ज रहता था । सांख्य, योग, चाव्वाक, बौद्ध, भाट्ट तथा प्राभाकर सभीको उन्होंने शास्त्रार्थमें जीता था । बुल्लप-गौड, तथा उनके पुत्र गोपण-प्रभु जो अपनी माँ मल्लि-गौडिके हाथमें मक्खीकी तरह था, की प्रशंसा ।

राय-राजगुरु-मण्डलाचार्य, महा-वाद-वादीश्वर, रायवादि-पित-मह अभय-चन्द्र-सिद्धान्त-देवका पुराना (ज्येष्ठ) शिष्य बुल्ल-गौड था, जिसका पुत्र गोप-गौड नागरखण्डका शासक था । नागरखण्ड कर्णाटक देशमें था । नागरखण्डका खास भूषण भारङ्ग था, जिसमें जैन लोग, विद्वान्, न्यायी एवं श्रीमन्त लोग मरे हुए थे । इसमें एक उत्तम चैत्यालय था, जिसमें पार्श्व जिनेश विराजमान थे, उस नगर (भारङ्ग) का शासक गोप-गौडके पुत्र बुल्लपका पुत्र गोपण था, जिसके दो गुरु थे, पण्डिताचार्य और श्रुत-मुनिप; इनमेंसे एक उनको अनीतिके मार्गसे हटाता था तो दूसरा अच्छे मार्गपर लगाता था । इस संसारकी अच्छी-अच्छी वस्तुओंका उपभोग कर, परलोकके फलोंकी इच्छासे, (उक्त मितिको), गोपणने समाधिकी रस्मसे शरीर-त्याग किया, और 'मुक्ति' प्राप्त की । भद्रमस्तु । यह समय उसी शक कालका था, जिसमें यह पापण लगाया गया था ।

[EC, VII, Sorab tl., No. 329.]

६११

हिरे-आवलि,—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३३६ = १४१७ ई०]

[हिरे-आवलिमें, १६ वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

व ॥ श्रीमद्-नाय-राजधानि-विजयानगर-मुख्यवाद-समस्त-पट्टणाधीश्वर श्री-वीर-हरिहर-रायन कुमार प्रताप देव-रायनु राज्यं गेयुत्तमिर्ष कालदक्षि **शक-वर्ष १३३९ नेथ विलम्बि-संवत्सरद चैत्र-बहुळ १० गुरुवारबुलु** श्रीमत्-सेन गणाग्रगण्यर **मुनि-भद्र-स्वामिगळ** प्रिय-गुडु हिरे-अवलिय राम-गौण्डन सत्-पुत्र गोप-गौण्डनु समाधि-विधिधिं मुडिपि स्वर्ग-प्राप्ति आद ॥

वृ ॥ वीर-जिनेन्द्र-पाद-पङ्कज-भृङ्गनुदार-चित्तनुद्- ।

धारकनन्त-बोर्ण-खिन-वासव निर्मित-दान-पारगम् ।

गोरद-दासि-वेसि पर-नारि-सहोदर मार- सन्निभम् ।

अपारद-गोप-गौण्ड-प्रभुवं पुर बणिमुतिकर्तुमागळुम् ॥

क ॥ असदि-कलु-वेसननेसगिये ।

वसुधेयोळुं पुण्य-कीर्त्तियं अवलियोळुम् ।

दस-दिक्किनलि गोपणम् ।

पसरिसिदं राम-गौण्डनदेम् पवित्रनु ॥

वृ ॥ परमारार्थ्यं जिनेन्द्रं गुरु ऋषि-नितहं राम-गौण्डात्मजातम् ।

निरुतं रामाश्रिका जननि अनुबनुं हा राम-गवुण्डं गुणज्ञम् ।

विरि-अण्णं चन्द्रमाङ्कं सरसिज-मुखि गोवर्कं पत्तियेम्बळ ।

पिरिदुं स्वर्गापवर्ग-प्रकरदोळेसेवं **गोप-गौण्डं** कृतार्थम् ॥

क ॥ पोडवि-पति देव-रायनु ।
 तडेयदे राज्यवनु आळव-कालदोळन्दुम् ।
 त्रिडे बिन-चरण-सेवेय ।
 कडु-गुणि गोपण पडेदनुत्तम-गतिथम् ॥
 गुत्तिथ-राज्यद बोळगम् ।
 उत्तमवेनिसिद्धुदु हिरिय-चिड्डुळिगेयोळम् ।
 अत्युत्तम-हिरि-अवलिय ।
 पेत्तनु प्रभु-राम-गौण्ड-मुत्त गोपणम् ॥
 गुरुगळु श्री-मुनिभद्ररु ।
 घरिसिदमवरिन्द गोपणाङ्कनु व्रतमम् ।
 नररोळगे पुण्यवन्तनु ।
 पिरिहुं स्वर्गापवर्गमं नेरे पडदम् ॥
 अळवह-चैत्र-बहुळदि ।
 बेळगप्पा-बावदलि गुरुवारदोळम् ।
 विलसित-विलम्बि-वत्सरद- ।
 ओळगादुदु दुहूरण-योग गोपि-देवर्गम् ॥
 दासी-वेसिय-रूपम् ।
 व...षोहं पिरिदेन्दु तो... अनि व्रतदिम् ।
 मासिद-कीर्त्तिगळन्दम् ।
 लेसेनिसिये गोप-गौण्ड स्वर्गव पोक्कम् ॥

भंगल महा श्री

[इस लेखमें वंशावलि वर्णित है । देव-रायका राज्य-काल था ।

[EC, VIII, Sorab tl., No. 119]

६१२

हादिकल्लु;—संस्कृत तथा कन्नड-भग्न ।

[वर्ष हेमलम्बी = १४१० ई० (लू. राइस) ।]

[हादिकल्लुमें, रते हकल्लुके पासके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ॥

.... श्रीमत् हेव(म)ळम्बि-संवत्सरद आषाढ-सु १ बुद्ध-
स्पतिवारदन्तु श्री-गुणसेन-सैद्धान्ति-देवर गुडु ... हादिगल्लुगुडि-
ययप्प-गौडन हेडति काळि-गावुण्डि समाधि-विधिधि मुडिधि सुर-लोक-
प्राप्तेयादळु मङ्गल महा

[बिन-शासनकी प्रशंसा । (उक्त वर्षमें), गुणसेन-सैद्धान्ति-देवके एइस्य
शिष्य ... अयप्प-गौडकी पत्नी काळि-गौण्डि समाधि-विधिके द्वारा मृत्युको प्राप्त
हुई और स्वर्गको गयी ।]

[EC, VIII, Tirthahalli tl., No. 121.]

६१३

हिरि-आवलि;—कन्नड-भग्न ।

[शक १३४३ = १४२१ ई०]

[हिरिआवलिमें, २०वें पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमद्-राजधानि-विजयानगर-मुख्यवाद समस्त ... श्री-वीर-प्रताप-
देव-नाय-बोडेयर राज्यं गेयुत्तमिर्ष कालदर्शित शक-चरुष १३४३ प्लव-समाशिवज
ब-६ सु हिरियावलिय गोप-गौडन मगनु भैरव-गौडनु पञ्च-नमस्कारदि
स्वर्मास्तनादम् ॥

परम-बिन-पार्श्वनाथन
 चरण ।
 चरण-कमल-पट्टम् ।
 भट्टि(भै)रव भव्य ॥
 बिन-रत्न ।
 बिनदासन उदित-वीर-व्रतदिम् ।
 छत्तेन्दा- ।
 विनयाम्बुधि भयि(भै)रवं पोषम् ॥
 पित गोपीनाथनेनिपनु ।
 मत मातेयु कञ्चि-गौडि-मातेयु तनगम् ।
 माते सुत ।
 भैरव मुडिपि स्वर्गाव पोषम् ॥
 गुरु-पञ्च-पदव नेनेऊत ।
 सु-रुचिर-सञ्चित्तिन्दनात्मन ।
 पिरिदप्प गतिय पडदम् ।
 सणि भैरव ॥

[इस लेखमें भी समाधिके स्मारकका उल्लेख है । देव-रायके राज्यकाल है ।]

[EC, VIII Sorab tl, No 120]

६१४

हिरे-आवलि;—कच्छ-भग्न ।

[शक १३४३ = १४२१ ई०]

[हिरे-आवलिमें, १८ वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाङ्कनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ॥

श्रीमत्तु रावधानी-विजयनगर-मुख्यवाद-समस्त-गृष्णाधीश्वर श्री-वीर-प्रताप-देव-
राय राज्यं गेयिऊत्तमिर्ष कालदलि सकवरुष १३४३ नेय सार्वरि-सं [३] त्तर-
फाल्गुण-सु. ४ सो श्रीमत्-सेन-गणाग्रगण्यर मुनिभद्र-स्वामिगळ्गे प्रिय-गुरु
हिरिय-आवलिष बोच-गोडन सुपुत्र मदुक गोडनु समाधि-विधिषि मुडिपि
स्वर्गातियादम् मङ्गळ महाश्री श्री यी-[क] ल माडिदातमी-ऊर पूर्विक मन्त्रोजन
मग बनदोजनु ॥

[लेखमें स्मारकका उल्लेख है । देव-रायका राज्यकाल है ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 118]

६१५

पहला लेख

मलेयूर (६);—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३४४=१४२२ ई०]

[मलेयूर (उत्तमबल्लि प्रदेश) में ग्राम-प्रवेशके एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमर्गभोरस्थाद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं चिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री शक-वरुष १३४४ नेय शुभकृत-संवत्सरद भावण-शुद्ध १५ लुल्लु
श्रीमद्राजाधिराज-राज-वरमेश्वर श्री-वीरदेव-राय-महारायर कुमार श्री-चोर-हरिहर-
रायर सोम-ग्रहणदल्लु कनकगिरिय श्री-विजय-देवर श्री-कार्यकके सल्लुव अङ्ग-
रङ्ग-भोग मोदलाद देवता-विनियोगकके मलेयूर चतुस्सीमेथोलगाद तोट तुडिके
गद्दे बेदल्लु सुवर्णादाय होन्नु होम्बार सुक्क तळवडिके ग्राम्मद मणय वोसगे मदुवे
हौर डलपे सरदि निधि निक्षेय जल पाषाण अक्षीणि आगामि मुन्तागि ऐनु-ळ्ळ्या
स्वाम्य सर्वादाय-सहित आ-मालेयूर-ग्रामवन्नु धारा पूर्वकवाद शासन-दत्तवागि
वासुदेवर-केरें-गद्दे स्थान-म्मान्यगळु होरीतागि ब्रिट्ट दत्ति (हमेशाकी तरह
अन्तिम श्लोक)

[राजाधिराज राजपरमेश्वर वीर-देवराय-महारायके पुत्र वीर हरिहरराय ने कनकगिरिके देव विजयकी उपासनाके लिये मलेयूर ग्रामकी सारी भूमिका दान किया ।]

दूसरा लेख

श्रीमत्परमर्गभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

बीयात् त्रैलोक्यनाथस्य वर्द्धतां जैन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वर्ष १३४४ सन्द वर्तमान-
शुभकृत-संवत्सरद श्रावण-शु १५ आ लु कनकगिरिय श्री-विजय-देवरिगे श्रीमन्महा-
राजाधिराज राजपरमेश्वर श्री वीरप्रताप देवराय-महारायर् कुमार हरिहररायर्
भोदेयरु आ-कनकगिरिय श्री-विजयनाथ-देवर अमृत-पडि अङ्ग-रङ्ग-भोग-वैभ-
वके कोट्ट धर्म-शासन तमगे कोट्टिह तेरकणाम्बेय राज्यके सलुव कोल-
गणद भागेय मलेयूर ग्राम १ र चतुस्सीमेयोळगुल्ल गद्दे बेदलु तोट तुडिके
आरु-वन्नु मेलु-ओन्नु अड-देरे कुम्भार-देरे कल्ल-मने कोडगे देव-दान विनुगु
बेस-वक्कलु होन्नु होम्बळि होङ्गे हारा सुङ्ग टण्णायकर स्वाम्य मुत्तागि प्राकु-मर्थ्यादे
ऐनुळ्ळ सर्व-स्वाम्यवनु अनुभविंसिकोम्ब मलेयूर ग्राम १ र कालुवळि हुणु-
सूरपुरद ग्राम १ उभयं ग्राम २ ककं हिरिय मनेय पट्टे प्रमाण ग २३०
(आगेकी १३ पंक्तियोंमें दानका विस्तृत विवरण है) अत्तरदलु न्निपत्त-ऐळु
होन्नन मलेयूर ग्राम १ न् सोम-ग्रहण-पुण्य-काल शुभकृत-संवत्सरद कात्तिक-शु १
आरभ्यवागि त्रियम्बक देवर सन्निधियल्लि स-हिरण्योदक-दान- (दान) -चारा-
पूर्वकवागि धारेयेनेरेदु आ ग्रामद चतुस्सीमेयल्लि मुक्कोडंय कल्लनु नेट्टित्ति कोट्टे
(IIb) वागि आ-ग्रामद चतुस्सीमेयोळगुल्ल अत्तिणी-आगामिनिधि-निक्षेप-बल-
पाषाण-सिद्ध-साध्य अष्टभोग-तेजस्-स्वाम्य सर्व-पृथ्वी समस्तबलिसहित देवर अमृत-
पडिगाङ्ग-रङ्ग-भोग-वैभवके धारयन्नु एरदु कोट्टेवागि आ-चन्द्रार्क-स्थायियागि
चित्तायसुबुदेन्दु कोट्ट धर्मशासन-विट्ट दत्ति (पूर्वकी तरह अन्तिम श्लोक)
कोल्लगणद वासुदेवारणे मले (IIIa) यूरलि कोट्टिह वूरु-मुण्डाग केरेय केळगे

चतुर्सीमेयस्ति प्राक्-मर्यादि नीरु वरिद् बेळव इण्डु गद्दे होरते स्थान-मान्य पूर्व-
मर्यादि बर् ... ओष्प श्री विरूपाक्ष (कनङ्ग अक्षरोमें)

[इस लेखका विषय शिलालेख नं० १४४ (ए० क०, जिल्द ४ थी, चाम-
राजनगर तालुका) से भिन्न नहीं है । अतः १४४ और १५६ नं० के लेखोंका
विषय एक ही है । इस लेखमें भी हरिराय ओडेयरने कनकगिरिके विजयनाथ-
देवकी पूजा, सबावट और रथयात्राके लिये हुणसूरपुर ग्राम सहित मलेयूर ग्रामका
दान किया । यह दान त्रियम्बक-देवके समक्ष किया गया था । मालेयूर गांव तेर-
कणाम्बे राज्यके कोलगणका था ।]

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No., 144 & 159.]

६१६

भवणबेलगोला—संस्कृत ।

[वर्ष शुभकृत्=शक १३४४ (कोलहौर्न)=१४२२ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६१७

देवगढ़;—संस्कृत ।

[सं० १४८१ तथा शक १३४६=१४२४ ई०]

[ललितपुर से लाये गये एक शिलालेख की नकल]

१—**वृषभ** जयत संश्रीभद्रर्द्धमानमहोदये विपुलं विलसत्कान्तौ कान्तारन्येऽमृत-
सागरे । सुगत सुमतिमनैणाङ्गाकलङ्क सकौमुद वितनुते सतां शान्त्यै शान्ति
भियं सुमतिं अयं ॥१॥ + + + सुर्वः श्रोते नश्वरानुदयाय ते । तच्चिदुद्यज्ज-
लज्ज्योतिराहंतं श्रेयसे भये ॥२॥ पायादपायात् सदा नः सदा शिवो
यद्विशदो हितासौ चञ्चच्चिदा—१

२—नन्दविशुद्धचन्द्रद्युतौ चकोरं त्यपि (?) शुद्धहंसाः ॥३॥ **भीशंकरं** श्रीरमणा-
भिरामं + + + सल्लक्ष्मणमहर्णार्हं । जिनेन्द्रनन्दं घनटं सुमित्रमजातशत्रुं विभजे
चकोरं ॥४॥ स्ववाममायामप्यमायं वामं लसल्लक्ष्मणमहर्णार्हं । सीतेश-
सुग्रीवमहर्णार्हं वन्दे—२

३—सहर्षं सहसैकशीर्षं ॥५॥ सशल्यदुःशासननाशहेतुमजातशत्रुं सहदेववर्यं ।
वन्दे विशालार्जुनं सद्य + + नन्दत्सतां कर्णकुलं मृगाङ्गं ॥६॥ वामयेष्वा-
ष्टकं (?) स्वेन कर्म्मावाप्तीद् यरक्षरं (?) । साधोर्द्धादु दुरेखं तम्हंलीये
विलयश्रिये ॥७॥ विगर्ज्जन्नागरजाङ्ग—३

४—मञ्जितं लक्ष्मकं रुमः । दुर्घटं सुघटद्वन्द्वमानजैनमहोत्सवं ॥८॥ वदनपरगिरीशो
...वित्रिदशन... वेन्नवत्याकलेर्यत् । प्रभवतु स मृगाङ्कोप्यस्तदोर्षोऽकलङ्कः ।
कुवलयसुखहेतुर्नः श्रिये **शान्तिसोमः** ॥९॥ योदीदहच्च तिलकेक्षणं वह्निनेह
कामं—४

५—अमीमरदरं जनकं तदीयं । शतशान्वितस्त्रिनयनोऽप्यवामवामः शान्तीश्वर-
जिज्जगतां स शिवाय...पदपद्मयुग्मं ... ह्य उपास्महे तदहं मुदा यदमर्त्य-
मर्त्यभुजङ्गमनम्रभौलिकुलास्मत् । विदलत्तमालसमुल्लसत्सुनखेन्दुमण्डपमण्ड-
लीविगलांशुभिर्भवश्री—५

६—गुप्तः **शशिनोऽहं**तो भवसंभवे ॥११॥ क्षीरकूर्पूनीहार-हारहीरहरावरां कुन्देन्दु-
कुम्भं...क्षीरसमुद्रसान्द्र विलसत्कल्लोलमालोज्ज्वलां **श्रीसुवर्णेश** सुधांशुमण्डल-
मिलत्स्वर्लोककल्लोलिनीं । विद्रावन् निजभक्तचेतसि समुन्मीलत्तमोपद्रवां वन्दे—

७—बाड्यभिदे मुदे च भगवद्वाणीञ्च सत्सम्पदे ॥१॥ श्रीमूल-लक्ष्म्या नृपनन्दि-
ग / संधे गच्छेत्पतुच्छे **भवसारदाख्ये** । ज्ञेये बलात्कारगणे गरिष्ठे **भीक्षुं**...
जिनेन्द्रचन्द्रागमदुर्गामार्गो यस्योद्भुपं त्वय सतां हि वाचः । अद्याप्युदञ्चदयश-
सामबलसन्धाश्च स **धर्मचन्द्रः** ॥२॥ यस्याशागजकर्णकैरववना—७

८—नन्दैकसत्कौमुदीकीर्तिनिगनरामरेन्द्रभुवने जेगीयतेऽहर्निशं । **धर्मैन्दुः**

सकलः कलङ्कविकलः स स्याच्छुषांशुभ्रिये श्रीमूल... विलसत्त...
दये ॥३ धम्मचन्द्रमुनीन्द्रस्य पट्टोत्कृष्टोदयाचले । यस्योदयोऽभवत्तस्य
तमस्तोमापनोदिनः ॥४ रत्नकीर्त्तिसन्मूर्त्तिस्तिग्मांशोः क-८

६—मलोदये । सतामप्यपङ्कानां तपसां स्युर्यशोऽशवः ॥५ अद्याप्युच्चैर्बज्रभ्रमे
चरणचयचित्तसम्पदम्माद् यदीया ज्योत्स्नेवानुष्णरश्मेः क्षरदमृतमयी...
सस्या ... समिनां पुण्यपुण्योपदेशा सृष्टा सप्तप्रतिष्ठासु च
बिनशशिनो रत्नकीर्त्तिः प्रशस्यै ॥२ रत्नकीर्त्तिपदाम्भोजकमलालङ्कृतासने ।
ये नोद्यद्वाग्वि-६

१०—लासेन भारती भूषणायितं ॥१ गज्जन्दुर्वादिवृन्दाञ्चुददलनविधौ योऽभवत्ती-
व्रातस्त्वेकान्तध्वान्तमानुः कुवलयसुखकृद् यस्त्वनैकान्त ... द्रान्ताङ्को-
कलङ्कः ... सकलकलः शङ्करो + वृत्तः स्याद्दृढयै मूलसङ्घामल-
कमलानिधौ श्रीप्रभाचन्द्रदेवः ॥२ पदे ततो नमदशेषमहोशमाललग्ना-
नि यत्कमरजस्तिलकान्यभूवन् -१०

११—कल्याणकारिकमलाकुचकेलिदानि पापापहानि समभूदिह पद्मनन्दी ॥१
कः सरीसृत्ति साम्प्रत्वे सन्निधावन्नन्दिनः । न ... न सम्ममे यस्य स
... ॥ २ के के पुराणसारीण्यं शिष्यानाकर्ण्य कर्णयोः । श्रीपद्मनन्दिनः
प्रापुः सस्मितां धर्मदेशनां ॥ ३ प्रेम्ना कज्जलितं विशच्छलमितं चेतोभुवा
वर्त्ति—११

१२—तं रागाद्यैः स्मयदूषितैः परमतैर्भ्रस्यत्तमस्तोमितं । मावैः प्रस्फुटितं नयैर्वि-
रचितं धर्म्मैः समुद्योतितं सत्पात्राम्बुजनन्दिदीपतपसि प्राग्जैनधर्म्मालये ॥४
सै ... क+चलति सद्दसत्यनुष्णा द्युतिः क्षीराम्भोध्यतिचन्द्रमत्यहरहः
स्पर्द्धान्तं हन्तो अति । श्रीमान्भुवनन्दिनस्त्रिभुवने जेगीयमाना न यै-१२

१३—वर्द्यत्सद्यशसा न केन सुनटी कीर्त्तिर्नरीनर्यहो ॥५ ज्ञानार्णवः समयसार-
गभीरशब्दसङ्गच्छणः प्रणवलीनलयः प्रमाणः । सि ... भुवनोपकृत्यै ..

...॥ ६ इन्द्रोपेन्द्रफणीन्द्रगीण्यतिमति यः कोऽपि धत्ते पुमान् मन्ये पङ्कज-
नन्दिनो गणगुणान् वक्तुं न सोपीशते । संसारणवतीर्ण-१३

१४—यामलघिया सन्नौकया सन्मुनेर्निष्कल्लोलचिदम्बुधावचलया पद्मायितं
लीलया ॥३ श्रीपद्मनन्दिमुगुरोःपदपद्मप धर्मोपलक्षितदिशा
... .. मारमनोभिरभ्यः प्रोद्धेय कौमुदमरं शुभचन्द्रदेवः ॥ १ अथ
संवत्सरेस्मिन् नृपविक्रमादित्यगताब्द १४८१ शा-१४

१५—के श्रीशालिवाहानाम् १३४६ वैशाखमासशुक्लपक्षीय पूर्णमास्यां गुरु-
वासरे । स्वातिनः(न)क्षत्रे । सिंहलग्नोदये ॥ अतिविक्र + + र्येन्द्रे चन्द्रा-
द्रथब्धीन्दु वैशाखे पूर्णराकायां मृगशोदये ॥ ... साकृष्ट-
कृपाणपाणित्रिलसत्तीव्रप्रतापानलज्वालाबालसमाकुलोक्तगवाधीशा-१५

१६—चरीशैणपे । श्रीमान् मालवपालकेशकनृपे गोरीकुलोद्योतके निःक्रान्ते
विजयाय मण्डपपुरास्त्रीसाहि आलम्भके ॥ १ सुमण्डलमण्ड-
मानाखण्डलबालकुलमण्डपपी + + न्ये । संनिर्ममे शिवशिरोमणिकमनोज्ञं
सद्बोधिनः सुविधिना सुविधिः सुबोधः ॥ १ सोऽभूत्स्मिन् त्रिभुवनपालो
भुवने १९

१७—लसद्यशः कलशः । योऽलं त्रिभुवनलक्ष्म्या लेभे गणगुणं गणा + रणं ॥ २
निर्दम्भः सम्भगर्जद् गजसकलकला + + लाङ्काकलङ्कं
विपुलयशसो यस्य चित्रं पवित्रं । तस्य श्रीपुण्यलक्ष्म्याखिलगुणनिलयो
धीरधीरो गभीरः पुत्रो गोत्राभप + पममहिमनिषिर्धोरधीः साधुसाधुः
॥ ३ + + लबालकीत्तिलतावि- १७

१८—तानधारावरः सुसमयोप्यतमस्ककल्पः । सन्तापहारि कापसार्यभव
... .. वनिवि + देवः ॥ विद्युल्लतेव विमला पति-
व्रताङ्गा सौभाग्यभूषरसुता नररत्नगर्भा तस्याम्बिका च वनिता वनिताम्बि-
केव ॥ ५ अभूदसमसौम्योपि तयोपि तयोर्बागर्थयोरिव होलीसुनन्दनः
श्रीमान् १८

१६—रसोत्साहाभिनन्दनः ॥ ६ वर्द्धमानार्थिनामर्थे वर्द्धमानान् मनोरथान् सार्थ-
यन्नर्थतः श्रीमान् होली कल्पाङ्घ्रिपायते ॥७ सम्मूलः सदलोल्लसत्
प्रशावोच्छ्लिखः श्लाघ्य स्वच्छ कुलैः फलैरविकलः सुच्छायकायश्रियः ।
सन्तापेऽपि क्षपाकरः कुवलये श्रीहोलिकल्पाङ्घ्रिपो जीयात्तज्जितदुर्जनोऽ
र्जुनय- १६

२०—शोभासोऽर्कचन्द्रार्थिभिः (१) । ८ अविकल्पलल्पलतया सुकान्तया कान्तया
कान्तः । असकृत् सुकृतसमृन्नतधाराधरनिर्भरासारैः ॥ ९ यः कान्ता + +
लत कमलाख्ययाधनाख्यं धनदं सुधनज्जयं साधुः ॥१०
वधूधनश्रीफलमालयालं गल्देशवंशानुबनन्दनैश्च सुवर्णवक्त्रमाहिरमा- २०

२१—शरैभिः सरत्तभृगजरठकुरागैः ॥११ गाम्भीर्यजलदासये विचलतां दैवाचलौ
मार्दवं नृत्यत्कात्तिककेकिकाय विगलत्त + + तं + दयः
सदाभिततया सव्यं सहावं धरा यस्मादेव मिता ददुः स जयतात् श्रीहोलि-
सङ्घाधिपः ॥१२ विस्मयन्ते धरित्राणि..... होलिसाधुना । य- २१

२२—यशोऽकृत्तदुग्धान्धौ वृषः कौमुदमेघते ॥१३ यद्यशो विष्णुनाप्युच्चैः
कलावप्यकलङ्किना । + + स भेशशेषत्वं विश्वविश्वसुपाददे ॥१४ + दैव
+ ति सुजनवाञ्छ णां । अनुभवति वचांसि गुरुर्विश्वं विस्मयति
होलिकृतौ ॥१५ गुणवानपि धर्मात्मा वक्रः सद्रर्म्मजोपि यः । यद +
सोमदो हो- २२

२३—ली ऋजुगन्थाप्यलोभभाक् ॥१६ रोदसांवरसच्छुक्तासंपुराद् यद्यशो-
लसत् मुक्ता मुक्त्वज्जना मुक्ताहारं होल्या रसोर्हतात् ॥१७ सत्केतभीकु
..... कारासंकास यशसात्ममयीकृताशः । सोल्लाससारसनि-
वासिमया महान्तो होलीश्वरोऽस्तु सधनञ्जयसार्थवाहः ॥१८ नाको- २३

२४—सि त्वमहं वृषस्तनुतनुः किं पुत्रपित्रोः शुचा सानन्दं वद सध किं मृगयसे
भूयोवतारस्तयोः । त + + क्व कलौ वदाद्य नृकवे किं वर्द्धमानेऽक्षये...
... मद्रूपो..... होलि सं + + रे ॥१९

भीहोलीकमलाकरे कुवलयं सत्कीर्त्तिकम्बायते शेषेनालसि सद्दलीयति गजै-
र्दिल्लु प्रकाशीयति । मेरौ चित्रम- २४

२५—जात्र चित्रमपि तन्मित्रास्तचिन्तापभृद् यन्नालीयति सम्मरालति कलङ्की यत्र
दोषाकरः ॥२० चन्द्रो निर्हासता + तिप्रविकशद्... ..जम्बालति ।
सिद्धीपत्यखिलाचलाचलविभुभं + + नन्तमितसुद्यदोलियशोम्बुषौ सम
... ..धम्मकनौकेत्यहो ॥

२६—२१ तत्रप्यत्रैको हेतुस्तद् यथा तथा हि ॥ विविक्तः शक्तिमान् द्योली
विविद्यश्चोक्तिमानहं । इत्यावयोर्महान् स्नेहः सततं ववृधे बुधाः ॥२२
येनाकारि मनोहारि...पुन्दर... ..शोलजिनालयं ॥ २३ सतां सन्तोष-
पोषाय श्रेयसे चात्मनः श्रिये । सुखाय विमुखाक्षाणां चेह स्नेहाय परयतां
॥२४ खण्डे भू + त + शो...२६

२७—संसोभूत् साधुदेहाख्यः । वेदश्रिया स लेभे सुसुतं श्रीवल्लदेवाख्यं ॥
स वल्लणश्रीरमणोपि सूनुं विचक्षणं लक्षणलक्षिताङ्गं । लेभे नृपं लक्षण-
पालदेवं देवा... ..श्रिया श्रीमत्क्षेमराजाम्बिवाङ्गजं । धर्मार्थ-
कामसंसिद्धिसाधकं भाग्यतोऽलभत् ॥३ द्वितीयमद्वितीयोद्यत्प्रतापातापि—२७

२८—तद्विषं । + + भागधुराधूर्यैवर्यं माधुर्यसागरं ॥४ नाम्ना देवगति सटो-
दयमतं सम्मर्त्यलक्ष्मीपतिं धर्मध्यानगतिं निरस्तकुमति यो नित्यमेवाददे ।
यश्चक्रे जिन + चर्चनेऽचलरतिं ससाधुबनेवि...॥५ श्रेष्ठः पद्म-
श्रिया श्रेष्ठं स्ववंशाम्भोजभास्करं सूनुं नयनसिंघाख्य लेभे सत्यामरावरं ?
॥६ नृरत्नं रत्ननामानम- २८

२९—यत्नाभ्यस्तपादवं ? सुतमाप्य समस्तास्तकुमति स दिवं यथौ ॥७ अलभन्मलह-
णदेगनयारम्भाभयाङ्गजं चाथ । बालकलेशमिवालं कलया कलया ...
...पतिसङ्गनाथो... दिलहणदेव्याभिनिन्दितनन्दनः । अथ पद्मसिहनन्दन-
मुख्यैरपि नन्दतादनिशं ॥६॥ प्रतिष्ठयाति गारिष्ठ्यं यन्नामादेव देहिनां ।
तस्याब्जनन्दि- २९

- ३०—नो मूर्त्तः कः प्रतिष्ठापयामदेत् ॥१ शुभसोमाज्या सोसौ तथापि गुण-
कीर्त्तिना । वर्द्धमानाभिधैः श्रीमद्वरपत्यादिभिर्बुधैः ॥२ श्रीपद्मनन्दि ...
दमवसन्तमहात्मने मूर्त्योर्विधाय विधिनाभिमतं प्रतिष्ठामेतां हि नन्दन-
सुनन्दन नन्दनायैः ॥३ सङ्क्षेश्वरः कुवलयेऽमलहोलिचन्द्रः सङ्क्षेश ३०
३१—देवपतिवावर्पतिनेन्द्रमुद्रः । सम्मङ्गलैः सकलबन्धुजनो + वृन्दैर्वर्षत् सहर्षमुप-
कारमुवाश्रुधारां ॥४ परोपकर्त्ता यो यद् यशा ... श्रीमान् सतत-
धर्म्मात्मवृष्टिं यो दानवारिणा । घत्ते स सत्यधर्म्मेशो बीयाद्धोलो नरो-
त्तमः ॥२ मोदत् कुवलयं यस्य यशस्तिलकमुत्तमं । दि- ३१
३२—दीपे उपमं सोमः स बीयाद्धोलिशङ्करः ॥३ प्रातः कालीपरागदलदखिलत-
मोरेगुरेपादपद्मद्वत्पद्माञ्जलिलक्ष्म्यास्तरुण ... चञ्चच्चान्द्रीयश्वा-
कलङ्क सकलकुवलये साधुतां होलिसाधोः ॥४ अप्रोतकान्वये गर्गगोत्रे
हाटबुधाङ्गजाः बभू- ३२
३३—बुः साधवः क्षीमाहरगङ्गामराभिधाः ॥५ तेषामाद्यात्मजस्तत्र वील्हो-
भूपलिहकाङ्गज हररत्नधियोः सूनुस्ततो भूत्तल्हणः सुदक् ॥२ ...
... गनया ततः ॥३ समजनि वसन्तकीर्त्यार्य्यो वील्हणवर्द्धमानजन्मा
मृगयन् माताजयितश्रीक्षाल्हीचार्य्याकरो हिमासबुधः ॥३३
३४—प्रशस्तिमुद्यद्वृषभार्हचन्द्रसान्द्रार्थतीर्थो + + वा चकोरः । सतां मुदे सत्कवि-
वर्द्धमनो जितं समाराध्य विवर्द्धमानं ॥५ श्रीवर्द्धमानं ववुधाननपद्मचञ्चत्
पीयू ... धारां पीत्वा द्रुतां श्रुतियुगाङ्गलिमिलवमीमां नन्दस्तु संसुमनसः
शुचिचञ्चरीकाः ॥६॥ शुभमस्तु सतां सदा ॥ ... सुतश्चिरं बीयात् । रिपुनृप-
सिन्धुसवा ... विभू ... पस्माहि आलम्भः ॥१ श्रीसाह्यालम्भाधि-
पतनुजे रिभूपमौलिमाणिके । गर्जति गर्जनस्थाने ग + + गोरीकुलं
कुवलयेस्मिन् ...

सार

इस शिलालेखको मिस्टर एफ़० सी० ब्लैक (Mr. F. C. Black)

ने ललितपुर जिलेमें पाया था। यह देवगढ़के पुराने किलेके भग्नावशेषोंके ऊपर उगे हुए जड़लमें मिला था। मि० ब्लैकका अनुमान है कि यह शिलालेख किसी ध्वस्त जैन मन्दिरका है।

इस शिलालेखका माप ६ फीट २ इञ्च X २ फीट ६ इञ्च है तथा मोटाई ३ इञ्च है।

लेख की भाषा अत्यन्त शब्दाडम्बर सहित है।

लेखके करीबन मध्यमें (पंक्ति १५) में दिया हुआ काल अक्षरों और अङ्कों दोनोंमें खूब संभालके साथ दिया हुआ है। वह यह है --- “गुरुवार, विक्रम सं० १४८१ के वैशाख मासकी पूर्णमासी तथा शालिवाहन (शक) सं० १३४६ के स्वाति नक्षत्र और सिंह लग्नके उदयमें।” राजाका नाम घोरी (गोरी) वंशका **शाह आलम्भक** दिया हुआ है, यह मालव या मालवाका राजा (शासक) था। श्री राजेन्द्रलाल मित्र, एल एल० डी, सी० आई० ई (**Rajendralala Mitra, LL. D., C. I. E.**) अपने नोट (पृ० ६७) में कहते हैं कि उन्हें इस नामके किसी राजाका पता नहीं है; लेकिन सुल्तान दिलावर गोरी (**Ghori**) के द्वारा स्थापित मालवाके गोरी वंशमें द्वितीय सरदार **सुल्तान हुशंग गोरो** उर्फ **अलप् खाँ** था, जिसने माण्डुका शहर बसाया, राज्यकी राजधानी धारसे वहाँ हटायी, और १४०५ ई० से १४३२ ई० तक राज्य किया, और इसमें कोई संशयकी बात नहीं है कि इसी सरदारको संस्कृतमें ‘**आलम्भक**’ लिखा है। उसकी नयी राजधानीका नाम शिलालेखमें **मण्डपपुर** दिया हुआ है।

लेखका विषय **होली** नामके जैन पुरोहित द्वारा **पद्मनन्दि** और **दम-वसन्त** की दो मूर्तियोंका समर्पण है। यह समर्पण **शुभचन्द्र** की आज्ञासे किया गया था। उनके नाममें कोई शाही विशेषण नहीं लगा हुआ है।

लेखका प्रारम्भ वर्द्धमान नगरमें कान्तमें स्थापित होनेवाले वृषभ (वृषभदेव, प्रथम तीर्थंकर) की स्तुतिसे होता है। और इसका अन्तमें लेखकके अपने विषय

के संक्षिप्त वर्णनसे होता है। बीचमें कुछ नामोंकी वंशावली आती है; वह इस तरह है :—१. सायदेह, २. उसका पुत्र वल्लदेव, ३. उसका पुत्र लक्ष्मीपालदेव, ४. उसका पुत्र क्षेमराज, ५. १, ६. पद्मश्री, ७. रत्न, ८. रम्भामय, ९०. पद्मसिंह।

[J ASB, LII, p. 67-80] t. & tr.

६१८

सरगूर;—संस्कृत और कन्नड़-भग्न।

[शक १३४६ = १४२४ ई०]

[सरगूर (सरगूर प्रदेश) में, गाँवके दक्षिणकी ओर पञ्च-वस्तिमें एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादादामोचलाञ्छनम् ।

वीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं विन-शासनम् ॥

स्वस्ति शक-वरुष १३४६ नेय शोभकृतु-संवत्सरद वैशाख शु १३ गु ।
प्रचण्ड-टोर्-दण्ड-मण्डली-मण्डन-मण्डलाप्र-खण्डिताराति-प्रकाण्ड महा-मण्डलेश्वर
समुद्र-दायाधीश्वर श्री-मनु विजय-शुक्र-राय-राज्याभ्युदये श्रीमद्भगवदहर्षपरमेश्वर
श्रीपाद-पद्माराधकरूप श्रीमन्महाप्रधान बयिचय-दण्डनाथर पादपद्मोपजीवी
होयसल-राज्याधिपति नागण-वोडेयर ... इम्मिर् ... ताप-हार हण्डले-
गणाग्रगण्यर् अण्य श्रीमत्पण्डितदेव इवर शिष्यर बयि-नाड महापशु मस-
णोयहल्लिय कम्पण-गबुडरु तमगे स्वर्गापवर्ग-निमित्वागि बेळगुळद श्री-
गुम्मतनाथ-स्वामिगळ अङ्ग-रङ्ग-भोग-संरक्षणार्थवागि तम्म वय-नाडोळगण तोट-
हल्लिय ग्राम १ आ चतुस्सीमेयोळगण केरें-गद्दे-बेदुलु-तोय-तुडिके-कुळ-होम्बाळ
आय-होन्नु ... होन्नु हन्दलु-मिक्क-होति मादार्-तेटे-शुक्क-निधि-निक्षे-खल
पाषाण-मुन्ताद सकल स्वाम्यद कुळवनु रायर दणायकर ... यलि नागण-

ओडेयर कयिन्दवु विडिसि धी-गुम्मतनाथ-स्वामिगळिगे आ-चन्द्रार्क सलु-
वन्तागि गुम्मतपुरवेन्दु कोट्ट दान-शासन ॥

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुधरां ।

पष्टि-वर्ष-सहस्राणि विघ्नायां जायते कृमिः ॥

अक्षयमुखमी-वर्ममनीक्षिप्ति रक्षिषुव पुण्य-पुरुपर्माकुम् ।

भक्षिपिपातन सन्तानक्षयमायुःक्षयं कुलक्षयमन्कुम् ॥

(हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक)

[जिन शासनकी प्रशंसा ।

इस लेखमें विजयी बुकरायने, स्वर्गप्राप्तिके लिये, बेळगुळ (श्रवण-
बेलगोल) के गुम्मतनाथ-स्वामीकी पूजा एवं सजावट के लिये तोटहल्लि गाँव
भेंटमें दिया है । बुकराय भगवदहर्त्तरमेश्वर का आराधक था । बयिनाड्, मसन-
हल्लि कम्पनगवुडका अधिपति था । तोटहल्लि गाँवके साथ-साथ उसकी चारों तरफ-
की सीमाओंके अन्दरके तालाव, धान्य (चावल)-भूमि, सूखे खेत, बगाँचा,
भण्डार, आसामी, 'हाम्मलि', आयका रुपया, ... , छुपरखाने, ... -- निम्न
श्रेणीकी चीजोंपर कर, चुङ्गी, भूमि-भण्डार, निधि, रहन (निक्षेप), जल, पाषाण
तथा पूरे स्वामित्व (मालिक) के जितने अधिकार हैं, वे सब दिये । इन
चीजों को नागण्ण-ओडेयरके हाथ से दिलवाया तथा इन सबमें राजा तथा
दण्णायककी भी आज्ञा ले ली, जिससे कि यह सब दान तबतक जारी रहे जबतक
चन्द्र और सूर्य गुम्मत स्वामीकी रक्षा करते हैं । आर गाँवका नाम गुम्मतपुर
रख दिया । इस सबका उसने दान-पत्र (शासन) लिख दिया ।]

[EC, IV, Heggadadevankote tl., No. 1]

६१६

वराहना—संस्कृत तथा कन्नड़

काल-शक सं० ११४६ (A. D. 1424)

(साउथ कैनरा के Sub-Court में)

कन्नड़ लिपिमें संस्कृत और कन्नड़ भाषामें तीन ताम्र-पत्रोंपर जो एक अंगूठीके द्वारा जुड़े हुए हैं । इस अंगूठीपर एक मुहर लगी है जिसपर एक जैनमूर्ति है । दानदाता विजयनगरके राजा देवराय है । दान का काल शक सं० ११४६ (१४२४ ई०), क्रोधी संवत्सर है । इस दानपत्रके द्वारा वराहनाका गाँव वराहनेमिनाथके मन्दिरको दान किया गया था । राजा की वंशावली इस प्रकार दी हुई है :—

बुक्क महीपति

|

हरिहर

|

देवराय

|

विजय भूपति,

नारायणीदेवीसे विवाह किया

|

देवराय

शामनकाल उस राजाके गण्यकालसे मिलता है जिमे बर्नेल Burnell ने (South Ind. Paleography, p. 55) देवराज, वीरदेव या वीरभूपति बताया है । लेकिन उसके वंशजका नाम उक्त लेखक के द्वारा दिये गये नामसे

भिन्न पड़ता है । (८२, ८७ अङ्कोसे तुलना करो, जिनमें दी गई दंशावली इस दानपत्रगत दंशावलीसे मिलती-जुलती है ।) लेखकी भूमिकामें कुन्तल देशकी राजधानी **विजयनगर** बतलाया गया है ।

[R. Sewell, Archaeological Survey of Southern India (ASSI, II), p. 14. No 89, a.]

६२०

विजयनगर—संस्कृत ।

[शक १३४८ = १४२९ ई०]

A. मन्दिर के महाद्वारके समीप बायीं ओर ।

शुभमस्तु ॥ श्रीमत्परमगंभीरस्यादादामोचलाञ्छनम् ।

जीयात्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥१॥

श्रीमद्यादवान्वयाणवर्णपूर्णचन्द्रस्य श्री**वुक्कट्**श्रीभुज [:] पुण्य [परिग]- क परिणतमूर्तेर्**हर्षिहर**महाराजस्य पर्यायावताराढीरा**देवराज**नरेश्वरादेवराजादिव **विजयश्रीवोरविजय**नृपतिसंभातस्तस्माद्रोहणाद्रेरिव महामाणिक्यकांडो नीतिप्रता-पस्थिरीकृतसाम्राज्यसिंहासनः । राज्ञागिराजराजपरमेश्वरादिविद्विख्यातो गुण-निधिर**भिनवदेवराज**महाराजो निजाज्ञापरिपालित**कर्णाट**देशमध्यवर्त्तिनः स्वाज्ञा-सम्भूत**विजयनगर**स्य कमुकपर्णापणवोथ्यामाचंद्रतारमात्मकीर्तिधर्मप्रवृत्तये । सकल-ज्ञानसाम्राज्यविराजमानस्य स्याद्वादविद्याप्रकटनपटीसः **पार्वनाथ**स्यार्हतः शिला-मयं चैत्यालयमचीकरत् [। ।]

देशः **कर्णाट**नामाभूदावासः सर्वसंपदां ।

विडंबयति यः स्वर्गं पुरोडाशाशनाभयं ॥ [२]

विजयनगरतीति तस्मिन् [ग] री नगरीति रम्यहर्म्यस्ते ।

नगरि (री) शु नगरी यस्या न गरीयस्येव गुरुभिरैश्वर्यैः ॥ [३]

कनकोज्वलसालरश्मिबालैः परिखांबुप्रतिविंबितैः लं या
वसुधैव विभाति बाडवाच्चिर्वृतरत्नाकरमेखला परीता ॥
श्रीमानुदामधामा यदकुलतिलकस्मारसौंदर्यमीमा-
धीमान् रामाभिगमाकृतिरवनितले भाति भाग्यात्तभूम [१]
विकांत्याक्रांतदिक्को विमतघरणिभूतदं कजश्रेणिचिक्कः (१)
क्षोण्यां जागर्ति बुक्कक्षितिपतिरिभूभृच्छिरच्छृष्टृपत्कः ॥ [४]

तत्प्राप्तात्मावतारः स्फुरति हरिहरचमापतिज्ञानमारो
दारिद्र्यकारवाराकरतरणवि [धौ] विश्फुरत्कर्णधारः ।
भूदानस्वर्णशानानुकृतपरशुधृ (या 'भृ') त्वग्निनीत्रंभुमुनुः
स्फाराकूपारतीरावळिनिहितजयस्तंभविन्यस्तकीर्तिः ॥ [५]

तेनाज्जरिराजतल्लबशिरस्तोमस्फुर -
च्छेखरप्रत्युत्तोपलदीपिकापरिणमत्पादवजनीराजनः ।
विद्वत्कैरवमंडलीहिमकरो [वि] ख्यात वीर्याकर [:]
श्रेयान्वीर्यमास्वयंवृतचरः श्रीदेवराजेरजरः ॥ [६]
तजन्माहिमन्वदान्यो ज [ग] ति विजयते पुष्पनाशिप्रमान्यो
दानध्वस्ताथिदैव्यो विजयनरपतिः खंडितारा [ति] सैन्यः ।
प्रत्युद्यज्जैत्रयात्रासमसमयसमुद्भूतकेतुप्रसून -
[स्फा] य [दा] त्योपहृत्वा प्रातइतत्रिमतौवप्रतापप्रपीपः ॥ [७]

B. महाद्वारके दक्षिण (दायीं) ओर ।

तस्मादस्मिञ्जितात्माजनि जगति यथा जंभजेतुर्जयंतो
राजा श्रीदेवराजो विजयनृपतिवाराशिशाकाशशंकः ।
कोपायोपप्रवृत्तप्रबलरणमिलद्विप्रतीपक्षमाप -
प्राणश्रेणीनभस्विनिहकवलनव्यग्रखड्गोरगेन्द्रः ॥ [८]
वीरश्री देवराजो विजयनृपतरस्तारसंघातमूर्ति -
धर्मर्त्ता भूमेविवर्भाति प्रणतरिपुततेरास्तिजातस्य हत्ता ।

क्रूरकोधेद्युद्धोद्धुरकरटिघटाकर्णशर्पप्रसर्पद् -

वातव्रातोपघातप्रतिहतविमतादभ्रधृत्यभ्रसंघः ॥ [६]

यद्वाटीघोरघोटीखुरदलितधरारेणुभिर्व्वार्य्यवह्ने -

द्धूम [स्तो] मायमानैः प्रतिनृपतिगणस्त्रीदृशः साश्रुधाराः ।

द्रोद्यद्दर्पप्रभूतप्रतिभटसुभटास्फोटनाटोपजाग्रद् -

रोद्रोत्कर्षावकाशद्युमणिरुदयते देवराजेश्वरोऽयं ॥ [१०]

विश्वस्मिन्विजयक्षितीशजनुपः श्रीदेवराजेशितु-

र्हार्चनी कीर्त्तिमितांहुजं कलयते शौर्य्यस्वयंयुद्धयात् ।

आशा यत्र पलाशतामुपगताः स्वर्णार्चलः कर्णिका

भृंगा दिक्षु मतंगबा जलधयो मारुदविदूतकाः ॥ [११]

विख्याते विजयात्मजे वितरति श्रीदेवराजेश्वरे

कर्णस्याजनि वर्णना विगलिता वाच्या दधीच्यादयः ।

मेघानामपि मोघता परिणता चिंता न चिताम [जे] :

स्वल्पाः कल्पमहीरुहाः प्रथयते स्वर्णैचिकीनीश्वतां ॥ [१२]

सोयं कीर्त्तिसरस्वतीवसुमतीवाणीवभूमिस्समं

भव्यो दाव्यति देवराजनृपतिर्भूदेवदिव्यद्रुमः ।

यश्शौरिर्बलियाच्रनाविरहितश्चंद्रः कळंकौजिभूतः

शक्रस्त्यमगोत्रभिद्दिनकरश्चास्तरथोल्लंघनः ॥ [१३]

मदनमनोहरमूर्त्तिः महिष्ठाजनमानमारसंहरणः ।

राजाधिराजराजादिमपदपरमेश्वरादिनिजचिरुदः ॥ [१४]

शक्तौ बुद्धमहीपालो दाने हरिहरेश्वरः ।

शौर्य्ये श्रीदेवराजेशो ज्ञाने विजयभूपतिः ॥ [१५]

सोयं श्रीदेवराजेशो विद्याविनयविश्रुतः ।

प्रागुक्तपुरवीर्य्यतः पर्णपूगीफलापणे ॥ [१६]

शाकेन्द्रे प्रमिते याते वसुसिं धुगुणेंदुभिः ।

पराभवान्द्रे कार्तिक्यां धर्मकीर्त्तिप्रवृत्तये ॥ [१७]

स्वाद्वादमतसमर्थ [न] खर्वितदुर्वीदिगर्व्ववाञ्चिततेः ।

अष्टादशदोषमहामदगजनिकुर्व्वमहितमृगराजः ॥ [१८]

भव्यांभोरुहमानोरिन्द्रादिमुर्द्ध्वद्वंद्वस्य ।

मुक्तिवधूप्रियभर्तुः श्रीपार्श्वजि[ने]श्वरस्य करुणाब्धेः ॥ [१९]

भव्यपरिपोषहेतुं शिलामयं सेतुमखिलधर्मस्य ।

चैत्यागारमचीकरदाघरणिग्रामणिहिमकरस्थैर्य्यम् ॥ [२०]

सारांश

विजयनगर प्राचीन समयमें जैनियोंकी राजधानी थी । शक १२७६ (सं० ११८२) से यादववंशी दि० जैन राजाओंका राज्य था । इस वंशकी वंशावलि निम्न भाँति है :—

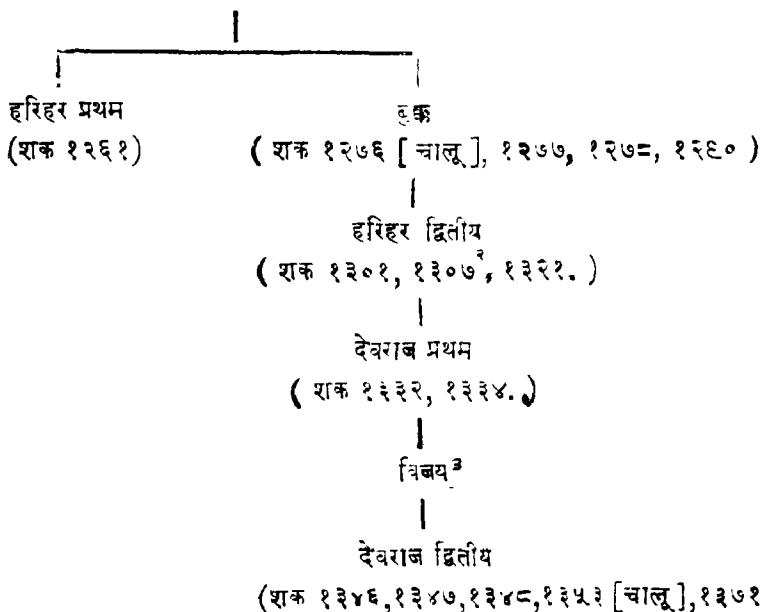
१. यदुकुलके बुक्क ।
२. उसके पुत्र, हरिहर (द्वितीय), 'महाराज'
३. उसके पुत्र, देवराज (प्रथम)
४. उसके पुत्र, विजय या वीर-विजय (पं० २) ।
५. उसके पुत्र देवराज (द्वितीय), अभिनव-देवराज ।

अन्तिम महाराजा देवराजने अपने पराक्रमके कृत्य और अपना नाम अजरामर करनेके लिये अपने राजमहलके पास 'पान-सुगरी-बाजार' (पर्ण-पूगीफलापण, श्लो० १६) नामक बगीचेमें एक चैत्यालय (चैत्यागार) बनवाया और मन्दिरमें श्रीपार्श्वनाथस्वामीकी प्रतिमा विराजमान की ।

नोट :—इस वर्णित विजयनगरके प्रथम या यादव वंशावलिके क्रममें बुक्कके पिता और बड़े भाईके नाम तथा वे शक मितियाँ, जिनका लेखमें कोई संकेत

नहीं हैं और न यहाँ ही नीचे टिप्पणीमें दो गयी हैं, "मि० पलीटके उसी दंशके कालक्रम-चक्रसे^१ उद्धृत की जाती हैं। वे इस प्रकार हैं :—

संगम



[South-Indian ins., Vol I, No I53 (p 160-167).]

1 Jour. Bo. Br. B. A. S. Vol XII. q. 339.

२ यह मिति शि० ले० नं० ५८१ की है।

३ मि० सेवेल (Sewell), Lists, Vol. I, p. 207, इस राजा के एक शिलालेख का उल्लेख करते हैं, जिसका मिति शक १३४० (व्यतीथ) कही जाती है।

६२१

बेगूरः—संस्कृत तथा कन्नड-भग्न ।

[शक १३४६ = १४२७ ई०]

[बेगूरमें (बेगूर परगना), ध्वस्त जिन-वस्ति

अवशाप्पनदिग्नेमें प षाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्य-नाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति शक-वर्ष १३४६ नेय पराभव-संवत्सरदत्तु श्री-मूल-संवद देशीय-गणद
कोण्डकुन्दान्वयद पुस्तक गच्छद ... श्रीमतु प्र ... सिद्धान्ति-
देवर शिष्यरप्प श्रीम च्छुभचन्द्रसिद्धान्तिदेवर गुडु चक्रिमय्यन नागिय
करियप्प -दण्डनायक, रप्प दण्ड ... मोरसु-नाडाळ्वन्दे
कादि ... कलियूरग्रहार कोट्टु सर्व-बाध-परिहारवाणि चोक्किमय्य
जिनालयं चन्द्रादित्यरुद्रनक सत्वन्तागि ... धर्मम नडमुवन्तागि ...
... (वे ही शापात्मक वाक्य) श्रीम ... ण्डनायक चोक्कि-
मय्य ... गडु निलिसिदनु कलु ... मडिसिकोट्टु ...

[जिनशासनकी प्रशंसा ।

(उक्त मितिको), श्री-मूलसंघ, देशीय-गण, कोण्डकुन्दान्वय तथा पुस्तक-
गच्छके प्र ... सिद्धान्ति-देवके शिष्य शुभचन्द्र-सिद्धान्ति-देवके गृहस्थ-शिष्य
चक्रिमय्यके (पुत्र) नागिय करियप्प-दण्डनायकने ... जन्म वे
मोरसु-नाडू पर शासन कर रहे थे, कलियूर अग्रहारके लिये दान (जो कि मिट
गया है) किया, ताकि चोक्किमय्य जिनालय तबतक जारी रहे जबतक सूर्य और
चन्द्रमा हैं । शाय]

[EC, IX, Bangalore tl., No. 82]

६२२

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १४८२ = १४२८ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. Bombay (ASI, XVI),
p. 354-355, No 12, t. & tr.]

६२३

आनेवाळ—संस्कृत और कन्नड ।

[साधारण वर्ष १४३० ई० (लू० राइस)]

[आनेवाळ (बेट्टपुर प्रदेश) में, बस्तिके रङ्ग-मण्डपमें भीतरके
दाहिनी ओरकी दीवाल पर]

श्रीमत् साधारण-संवत्सरद् माग-सुष १० यलु आनेवाळ-चिकण-
गौडर मक्कु होन्नण-गौडर तम्म मग हुट्टिद बोम्मण-गौडरिगे पुण्यवाग-
बेकेन्दु कट्टिसिद ब्रह्म-देवर पद्मावतिय बस्तिय धम्म-शासन श्री श्री ।

[आनेवाळके चिकण-गौडके पुत्र होन्नण-गौडने अपनी चिरञ्जीव बोम्मण-
गौडकी पुण्यकी प्राप्तिके लिये ब्रह्मदेव और पद्मावतीकी बस्तिको बनवाया ।]

[EC, -IV, Hunsur tl., No. 62]

६२४

कारकलः—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक सं० १३२३ = १४३२ ई०]

[गोम्मटेश्वर-मूर्तिस्तम्भके ठीक बाँयीं तरफ]

१. स्मृतनु भैरवै-
२. द्रकुमार श्री पाण्ड्य
३. रायनिदतिमु-
४. ददि । कारित गुंमट-
५. बिनपति चारु श्री मू-
६. ति कुडुगे निमगभिम्-
७. तमं ॥ श्री पाण्ड्यराय जय [॥]

[EI, VII, No. 14. D.]

[गोम्मटेश्वर-मूर्ति-स्तम्भके ठीक दाहिनी तरफ]

- पंक्ति १. श्रीमद्देशीगणे
२. ते पनसोगे वलीश्वरः । ख्या -
 ३. योऽभूल्ललितकी-
 ४. त्त्याख्यस्तम्भोद्गोपदे-
 ५. शतः ॥ स्वस्ति श्रीशकभूपते-
 ६. स्त्रिशरवह्नी (न) दो विरोध्या-
 ७. दिक्कद्वर्षे फाल्गुनसौ-
 ८. म्यवारववलश्रीद्वा-
 ९. दशीसत् तिथौ । श्री सोमा-
 १०. न्वय भैरवेन्द्रतनु-

११. जश्री वीरपाण्ड्येशिना नि—

[१२. माण्य प्रतिमाऽत्र वा-

१३. बुधलिनो जीयात् प्र-

१४. तिष्ठापिता ॥ शकवर्ष

१५. १३५३ श्री पाण्ड्यराय ॥

[शक राजाके विरोध्यादिकृत वर्ष, अर्थात् १३५३वें वर्षके फाल्गुन शुक्ल १२, बुधवारके दिन सोम वंशके मैरवेन्द्रके पुत्र श्री वीर पाण्ड्येशी या श्री पाण्ड्यरायने यहाँ (कारकलमें) बाहुबलकी प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित कराई । वह प्रतिमा जयवन्त रहे । यह कार्य उन्होंने देशीगणके पनसोगे शाखाकी परम्परामें होनेवाले ललित कीर्त्ति मुनोन्द्रके उपदेश से किया ।]

[EI, VII, No. 14, C. IA, II, q. 353-354]

६२५

अवणवेलगोला;—संस्कृत ।

[शक १३५५ = १४३२ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६२६

आनेवाळु;—कन्नड ।

[काळ—वर्ष प्रमादीच = १४३३ A. D.]

[आनेवाळुमें ध्वस्त वस्तिकी छोटी सी जैन-प्रतिमाके पृष्ठपर]

प्रमादीच—संवत्सरद फाल्गुन-सु १०मी भानुवार अनन्तन प्रतिमे
[अनन्तकी प्रतिमा]

[EC, IV, Hunsur tl., No. 60, t & tr.]

६२७

काकल—कवच ।

[शक सं० १३२८=१४३९ ई०]

[गोम्मटेश्वर सूर्यि स्तम्भके सामनेके ब्रह्मदेव स्तम्भ पर]

१. ॐ शकनृपन १३५८ राक्षससंवत्सर[द फ]ाल्गुन शु
२. १२ तु ॥ जिनदत्तान्वय भैरवतनय श्री [वी]रपां-
३. ह्यनृपतिगे वरमं । मनमोल्दीय [तु] नेल [सि] द
४. जिनभक्त ब्रह्मनीगे निमगमि [मत] मं ॥

अनुवाद—शक नृपके राक्षस नामके १३५८ वें वर्षमें फाल्गुन शुक्ला १२ के दिन, जिनदत्तके वंशमें होनेवाले भैरवके पुत्र श्री वीरपाण्ड्य नृपतिकी प्रत्येक इच्छाको पूर्ण करने के लिये यहाँपर प्रतिष्ठापित, जिनभक्त ब्रह्म [को प्रतिमा] तुम्हारी [प्रत्येक] मनोकामनाको पूरा करे ।

[EL, VII, No., 14 E.]

६२८

देवगढ़;—संस्कृत ।

[सं० १४३३ तथा शक १३५८=१४३९ ई०]

(पंक्ति ५)—संवत् १४६३ शाके १३५८ वर्षे वैशाख (ख) -वि (व) दि ५ गुरै (रौ) दिने मूल-नक्षत्रे ॥

बृहस्पतिवार, ५ अप्रैल १४३६ ई०

शक १३५८—देवगढ़ जैन शिलालेख ।

[INI, Nos. 287 & 375.]

६२६

पर्वत जावू—संस्कृत ।

[सं० १४१४ = १४१० ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदाय का लेख ।

[Asiat. Res., XVI, p. 313, No. XXV, a.]

६३०

नागदा—संस्कृत ।

[सं० १६१४ = १४३८ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Bhavnagar inscriptions, p. 112-113, t. & tr.]

६३१

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १४१६ = १४३१ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI),
p. 355, No. 13, a, t. & tr.]

६३२

राजपुर (जोधपुर जिला) संस्कृत ।

[सं० १४१९ = १४४० ई०]

[Bhavnagar inscriptions, p. 113-117, t. & tr.]

६३३

मालिकार;—आरुप ।

[सं० १४१७ = १४४० ई०]

श्री आदिनाथाय नमः ॥ संवत् १४६७ वर्षे वैशाख ... ७ शुक्ले पुन-
र्वसु नक्षत्र श्रीगोपालचलदुर्गे महाराजाधिराजराजा श्रीहुंग [र सिंहराज्य]
संवर्त्तमानो श्रीकाञ्चोसंवे मायू[शु]रान्वयो पुष्करगणभट्टारक श्रीग (गु)णकोर्त्ति-
देव तत्पदे यत्यः (राः) कोर्त्तिदेवा प्रतिष्ठाचार्य श्रीपण्डितरघू (इधू) तेषं ।
आभाये (म्नाये) अग्रोतवंशे मोदगलगोत्रा सा ॥ धुरात्मा तस्य पुत्र साधुभोपा
तस्य भार्या नान्ही । पुत्र प्रथम साधु क्षेमसी द्वितीय साधुमहापराजा तृतीय
असराज चतुर्थ धनपाल पञ्चम साधु पालका । साधुक्षेमसी भार्या नोरादेवी
पुत्र—ज्येष्ठपुत्र भधायि पति-कौल ॥ भ—भार्या च ज्येष्ठस्त्री सरसुती पुत्र
मल्लिदास द्वितीय भार्या साधुवीररा पुत्र चन्द्रपाल । क्षेमसीपुत्र द्वितीय साधु
श्रीभोजराजा भायो देवस्य पुत्र पूर्णपाल ॥ एतेषां मध्ये श्री ॥ त्यादिबिन-
संवाधिपति काला सदा प्रणमति ॥

अनुवाद—आदिनाथको नमस्कार । सं० १४६७ बे वैशाख सुदी ७, जब
पुनर्वसु नक्षत्र उदित हो रहा था, और जिस समय महाराजाधिराज हुंगरेन्द्रदेव
गोपाचल (आधुनिक मालिकार) के किलेमें राज्य कर रहे थे । तब काञ्चोसंघके
मयूर अन्वयके, पुष्कर गणके भट्टारक गुणकीर्त्तिदेवके बाद उनके पट्टावीरश
कीर्त्तिदेव हुए । इसके बाद लेखमें पट्टावीरशके पदपर आसीन होनेवालोंमें
प्रतिष्ठाचार्य पण्डित (पुरोहित) श्रीरघू, तत्पश्चात् पण्डित श्रीमायाके नाम
आये हैं । श्री भायाके पुत्र 'साधु' भोपा, उसकी पत्नी नन्ही थी । इसके बाद
उनके पुत्र और पुत्रों की पत्नियों तथा उनके पुत्रोंके नाम आये हैं । अन्तमें

भायदेवके पुत्रका नाम पूर्णपाल बतलाया है। इनमेंसे आदिजिनसंघाधिपति 'काका' सदा प्रणाम करते हैं।

[JASB, XXXI, p. 404, a. ; p. 422-423, t. & tr.]

६३४

पर्वत बाबू;—संस्कृत।

[सं० १४६७ = १४४० ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Asiat. Res. XVI, p. 313, No XXVII, a.]

६३५

भवणबेलगोला;—संस्कृत।

[वर्ष क्षय = शक १३६८ = १४४६ ई० (कीकहौन)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६३६

म्यूनिच;—संस्कृत।

[सं० १५०३ = १४४६ ई०]

[J. Klatt, IA, XXIII, p. 183, t. & tr.]

१—उपर्युक्त अनुवादकी शुद्धता बाबू राजेन्द्रकाक मिश्रकी दृष्टिमें सखे-
हास्पद है। 'काका' नाम उन्हें अशुद्ध मालूम पड़ता है। यह अनुवाद साकी
काम थाकाक है।

६३७

माण्ड निडुगस्तु;—कन्नड ।

[बिना काक-निर्देशका, पर लगभग १४५० ई० ? (ख. राष्ट्र) ।]

[निडुगस्तु-वेष्टपर मल्ले-मल्लिकार्जुन मन्दिरके पासके बागानपर]

श्री-मूल-संवद वृषभसेन-भट्टारक-देवर गुडू वैश्यर

रामि-सेट्टियर मग बिमी-सेट्टिय हेण्डति चन्द्रवेय निषिधि ॥

[मूलसंघके वृषभसेन-भट्टारकके गृहस्थ-शिष्य, वैश्य रामि-सेट्टिके पुत्र बिमो-सेट्टिकी पत्नी चन्द्रवेका स्मारक यह है ।]

[E C, XII, Pavugada tl., No 56]

६३८

पवंत आवू;—संस्कृत ।

[सं० १५०१=१४५२ ई०] श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res., XVI, p. 311, No XXI, a.]

६३९

टोंक;—संस्कृत (देवनागरी लिपि)

[काक—सं० १५१०=१४५३ ई०]

टोंक (राजपूताना) के नवाबके महलके पास जनवरी सन् १८०३ ई० में खुदाई होनेसे अचानक ११ जैन प्रतिमाएँ निकलीं । ये प्रतिमाएँ भिन्न-भिन्न ११ तीर्थङ्करों की हैं, जो पद्मासन-स्थित हैं, गोदके ऊपर बिनके बाएँ हाथके ऊपर दाहिना हाथ है और दाहिने हाथकी हथेलीका मुख ऊपरकी तरफ है । ये सब प्रतिमाएँ समानाकृति हैं, सिर्फ पार्श्वनाथ और सुपार्श्वनाथकी प्रतिमाके ऊपर सर्पका फण है तथा और प्रतिमाओपर उनके भिन्न-भिन्न लाञ्छन (चिह्न)

हैं। वे सफेद संगमरमर के पत्थर की बनी हुई हैं और अच्छी तरह सुरक्षित दशामें हैं। उनकी बनावट कुछ भद्दी है। तीर्थङ्करों के नाम तो नहीं प्रकट किये गये हैं, पर चिह्नोसे उन्हें मालूम किया जा सकता है। वे निम्नलिखित भाँति हैं :—

१. **पार्श्वनाथ** (२८ इञ्च \times २३ इञ्च) सप्तफणी सर्प सिर के ऊपर है, और सर्प चिह्न के तौरपर है।
२. **सुपार्श्वनाथ** (करीब २२×१८ इञ्च). पञ्च-फणी सर्प सिर के ऊपर। स्वस्तिक चिह्न।
३. **महावीरनाथ** (करीब २२×१८ इञ्च), सिंह का चिह्न है।
४. **नेमिनाथ** (करीब १६×१५ इञ्च) शंख का चिह्न है।
५. **अजितनाथ** (करीब २१×१७ इञ्च), हाथी का चिह्न है।
६. **मल्लिनाथ** (करीब २१×१७ इञ्च) कलश का चिह्न।
७. **श्रेयान्सप्रभु** (करीब २१×१७ इञ्च) गेड़े का चिह्न है।
८. **सुविधिनाथ** (करीब २१×१७ इञ्च), मछली का चिह्न।
९. **सुमतिनाथ** (करीब १८×१७ इञ्च) चक्रवेष्म का चिह्न।
१०. पद्मप्रभ (करीब १६×१३ इञ्च), कमल का चिह्न।
११. शान्तिनाथ (करीब १६×१३ इञ्च), कच्छप (कछुआ) का चिह्न।

इन प्रतिमाओं के नीचे के पाषाणपर लेख है जो कि प्रायः मिलते-जुलते हैं और देवनागरी लिपि में भद्दे रूप से अशुद्ध संस्कृतमें लिखे हुए हैं। सबका काल संवत् १५१०, माघ शुक्ल दशमी, तदनुसार रविवार १६ करवरो, १४५३ ई० है।

ये सब प्रतिमाएँ जैनोके दिगम्बर सम्प्रदाय की हैं। यह इस बात से प्रमाणित होता है कि सब के ऊपर 'मूलसंघ' लिखा हुआ है और सब नग्न हैं। लेखों के अनुसार, इन सबकी प्रतिष्ठा **ज्ञापू** नाम के एक धनिक, तथा उसके पुत्र **साल्हार** और **पाल्हार** और उनकी क्रमशः **लक्ष्मिणी**, **सुहागिनी** (**सुगमभी** भी कहते

ये) और गौरी नामक स्त्रियों के द्वारा हुई थी । ये लोग अपने को क्षत्रियचन्द्र का भक्त कहते थे और दिगम्बराम्नाथी लण्डेसवाल जाति तथा बाकलीवाल गोत्र के थे ।

पार्श्वनाथ की प्रतिमा का लेख बताता है कि ये पाषाण-लेख लूङ्गरदेव के राज्यकाल में उत्कीर्ण किए गए थे । ये लूङ्गरदेव उस समय के स्थानीय शासक रहे होंगे लेकिन इतिहास में उनका कोई पता नहीं चलता । उन प्रतिमाओं को संभवतः किसी मूर्तिभञ्जक द्वारा आपत्काल प्राप्त होनेपर किसीने छिपाया होगा ।

श्रीमान् नवाब महोदय ने इन ११ प्रतिमाओं को, अबमेर के गवर्नमेंट म्यूजियम के बन जाने पर उसे उन्हें टोंक स्टेट के उपहार के रूपमें भेंट देने का संकल्प प्रकट किया था ।

[Hiranand Shastri, A S P & U P annual Report
1903-1904 p. 61-62, a.]

६४०

ग्वालियर,—प्राकृत ।

[सं० १२१०=१४२४ ई०]

- (१) सिद्धि संवत् १५१० वर्षे माघसुदि ८ (अ)ष्टमै (म्यां) श्री गोपगिरौ महाराबाधिराजरा-
- (२) बा श्री डं(डुं)गरेन्द्रदेवराज्यप्र [वर्त्तमाने] श्रीकाञ्चीसंधे मायू (थु)-रान्धये मट्टारक श्री
- (३) होमकीर्त्तिदेवस्तत्पदे श्री हेमकीर्त्तिदेवास्तत्पदे श्री विमलकीर्त्ति-देवाः
- (४) डिता सदात्मनाये अमोतवशे गर्गगोत्रे सा... ..त
- (५) योः पुत्रा ये दशाय श्रीबंद भार्या मालाही तस्य प्रवसावेधार रा... ..जीसा... ..दु

- (६) तीयसा० हरिवंदमार्या बसोचर हितये णसीसा०
सचासा० वृत्ती
- (७) यहेमा चतुर्यसा० रतीपुत्रसा० सह सापं ... मु सा० घंसा० सल्हापुत्र
असेवं ए
- (८) तेषां मध्ये साधु श्रीचंद्रपुत्र शेषा तथा हरिचंद्रदेवकी भार्या
- (९) दीप्रमुखा नित्यं श्रीमहावीरप्रतिमा प्रतिष्ठाप्य भूरिभक्त्या प्रणमंति ॥
- (१०) अङ्गुष्ठमात्रां प्रतिमां जिनस्य भक्त्या प्रतिष्ठापयतो महत्या । फलं
बलं राज्य
- (११) मनन्तसौख्यं भवस्य विच्छित्तिरथो विमुक्तिः ॥ शुभं भवतु सर्वेषां ॥

अनुवाद—संवत् १५१० की माघ सुदि ८मी को महाराजाधिराज राजा श्री
हर्गरेन्द्रदेवके शासनकालमें काञ्चीसंघके मायूर अन्वयके भट्टारक श्री क्षेम-
कीर्त्तिदेव हुए । उनके बाद हेमकीर्त्तिदेव तत्पश्चात् अ (वि)मलकीर्त्तिदेव
हुए । (शेष अपठनीय है ।)

[JASB, XXXI, p. 404, a.; p. 423-424, t. & tr.

६४१

भारङ्गी;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[वर्ष धातु = १४५६ ई० (८० शहस्र)]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ।

निरुपम-धातु-वत्सरद माघव-मासद शुद्ध-सप्तमी -।

रवरकरवारदोळ् दिनकरोदयवागद मन्ने सन्द सच् -।

चरिते जिनेन्द्र-रुन्द्र-पद-पद्मननोपिरे चित्त-वृत्तियोळ् ।

... दयिसि नाडे भागिराथ ताळिद्दढायत-स्वर्ग-सौख्यम् ॥

अभवं श्री-वीतरागं तनगे निबदोळं दैवमा-योगि ...।
 विभु सिद्धान्ताख्यराराध्यक बिन-प्रत-बाराशि-संपूर्ण-चन्द्र ।
 प्रभु बुळ्ळप्प पितं भासुर-गुणवति मल्लब्बे तायेन्दोडी-सद्-
 विभं नोन्तर् ... अरियिरे घरणी-चक्रदो ॥
 सुखमय भागीर् [अ] यि निरुपम-सौख्य यिप्प ... प्रीतियं
 भद्रमस्तु

[भागीरथीका, जैन विधि-पूर्वक, मृत्युका स्मारक यह है । उसके पिताका नाम प्रभु बुळ्ळप्प, और माँका मल्लब्बे था]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 331]

६४२

चिचौड़,—संस्कृत ।

[सं० १५१४=१४२० ई०]

[एक चिकनी चट्टानपर जिसके बीचमें चरण-चिह्न हैं और जिसके अन्तमें गणेश और भैरवकी मूर्तियाँ हैं ।]

- (१) ॥ संवत् ५१४ (१५१४) वर्षे मार्ग (र्ग)-शुदि ३ श्री-भर्तृपुरीय-गच्छे श्री-चूड़ामणि-भर्तृपुर-महा-दुर्गे श्री-गुहिलपुत्रवि-
- (२) हार-श्री-ब्रह्मादेव-आदिजिन-वामाङ्गे दक्षिणामिमुखद्वारगुफा (स्फा) यामेकविंशति-देवीनाम् चतुर्णाम् ... पा-
- (३) लानाम् चतुर्णाम् विनायकानां च पादुका-वटित-सहकार-सहिता च श्री-देवी-चिचौड़ि-मूर्ति (तिः) स्था ... (पिता ?)
- (४) श्री-भर्तृगच्छीय-महा-प्रभावक-श्री-आम्रदेव-सूरिमिः ॥ अस्यां मूर्त्तौ सा० सोमा-सु०-सा०-हरपालेन मातृ-लोक-
- (५) श्रेयसे = पुण्योपार्जना व्यधीयत ॥

[लेख स्पष्ट है । इसके अन्दर आये हुए 'भट्टपुर' से भरतपुरका संकेत होता है, क्योंकि यह भी एक 'महादुर्ग' कहा जाता है । चट्टानके मध्यमें चरणचिह्नोंके नीचे "श्री-बाशि (खि) णि" अक्षर खुदे हुए हैं ।]

[ASWI, Progress Report 1903-1904, p. 59, t.]

६४३

बवागख (माजवा);—संस्कृत ।

[सं० १५१६=१४२६ ई०]

मन्दिरके दरवाजे पर ।

स्वस्ति श्रीसंवत् १५१६ वर्ष मार्गशीर्षे वदि ६ रवौ सूरसेन-मेहमुन्द-
राज्यश्रीकाष्ठासङ्घे माथुरगछे (च्छे) पुष्करमणें भट्टारकः श्रीश्रीक्षेमकीर्त्ति-
देवः व्रतनियमस्वाध्यायानुष्ठान-तपोपशमैकनियमभट्टारक श्रीहेमकीर्त्तिदेवसच्छिष्य
महावादवादीश्वर रायवादीपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्त्तिनलः श्रीकमल-
कीर्त्तिदेवस सच्छिष्यजिनसिद्धान्तपाठपयोबिनायकान्तरोपासीन मण्डलाचार्य श्री-
रत्नकीर्त्तिना जीर्णोद्धारः कृतः बृहच्चैत्यालयपार्श्वे दशबिन्वशतिकाद्वा कारोपीता
भट्टेश्वर द्वितीयसं डालुभार्याखेतु द्वि (•) ना (•) पद्मिनी खेतुपुत्रसं०
वाढासं० पारस एतैः इन्द्रजितः प्रतिमां प्रतिष्ठाप्य नित्यमर्चयन्तो पूजयन्तो वा
द्युर्भं तावच्छ्रीसङ्घस्य ।

मन्दिरके उत्तरकी ओर ।

संवत् १५१६ वर्षे शिल्पनागसुतरसालाशिलपडाला सूत्रशाला
जीर्णो यतः ।

मन्दिरके पश्चिमकी ओर ।

आचार्यश्रीरत्नकीर्त्तिपंडितपाहु ।

मन्दिरके दरवाजेके स्तम्भ पर ।

बोगीर्त्तमयाउसजोतराउल ।

प्रतिमाके चरणपरसे ।

कण्ठरनाथसाधु

चतुर विहतिहिलि

साकसाला इइ प्रणति

लेख स्पष्ट है ।

[JASB XVIII, p. 951-953, No 3, t. & tr.]

६४४

पर्वत आवू—संस्कृत ।

[सं० १२१८ = १८६१ ई०]

रवेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res., XVI, p. 298-299, Nos

XIII & XIV, a.]

६४५

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १५२२ = १८६५ ई०]

[नेमिनाथ मन्दिरके दक्षिणको तरफके प्रवेशद्वारके प्राङ्गणमें दूटे

हुए खम्भेकी परिधमी दीवालपर]

संवत् १५२२ श्री मूलसंघे श्री हर्षकीर्त्ति श्री पद्मकीर्त्ति भुवन-
कीर्त्ति

अनुवादः—सं० १५२२, श्री मूलसंघके श्री हर्षकीर्त्ति, पद्मकीर्त्ति,
भुवनकीर्त्ति,

[ASI, XVI P. 355, No 13, b.]

६४६

भारङ्गी,—संस्कृत तथा कन्नड ।

[वर्ष पार्थिव = १४६६ ई० (लू. गहस)]

[भारङ्गीमें, कछेरवर-वस्तिके दूसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाङ्कुनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमति मूल-संघ-तिलके श्री-नन्दि-संघोद्भव
स्वच्चे (च्छे) पुस्तक-गच्छ-शालिनि शुभे देशी-गणे यस्तुखी ।

स्याद्वादारि-नगाशनिर्गुण-मणि-श्रेणी-महीयः-स्वनिः

श्रोमानेष जयत्यलं श्रुति-मुनिः कैवल्य-जन्मावनिः ॥

शिष्यस्तस्य मुनेस्तिरस्कृत-तमस्स्तोमः समुद्यंश्चिरात्

स्याद्वादचलतश्चिदम्बरतले देदीप्यमानस्सदा ।

दीनं विश्वमिदं कृपामृतभरैरुज्जीवयन् पावनः

चिह्नातीत-कलानिधिर्विजयते श्री-देवचन्द्रोर्मुनिः ॥

तच्छिष्योऽमयचन्द्र-चन्द्र-करुणा-सौघोक्तसन्निभरी-

सम्पूर्णमल-मानसः कलि-युगे श्रेयांश्च गोपीपतेः ।

सूनुस्सूनुत-धर्म-कर्मणि रतः श्री-जैन-चूडामणर्

दूरं बुल्लप इत्ययं प्रभुरय ख्यात्यात्मना शोभते ।

यिन्नु नेगळ्तेवेत्ता-विभुविर्प ग्रामवाबुदेन्दडे ॥

सारं गुप्तिगे सन्दु बर्प पदिनेण्टु-कम्पणं भूमियोळ् ।

सारं नागरखण्डमन्तदोरोळिर्पा-ग्राम-सन्दोहदोळ् ।

भारङ्गो-पुरमन्ब-षण्ड-लसितं चैत्यालयानीक-वि- ।

स्तारोद्यत्-कलशांशु-शोभित.....सारं जयत्-संस्तुतम् ॥

आ-पुरमं भू-कान्ता- ।

नूपुरमं नूलन-रत्नमय-गोपुरमम् ।

भूपति-सभाभिरामम् ।

गोप-प्रभु-सनु-बुद्धपार्थं पोरेवम् ॥

कलियं माङ्गरिसित्तं तत्र चरितं कल्यावनीबातदोळ् ।

चलमं माङ्गिदुदत्युदारते महा-धैर्यं सुरोर्बोभ्रदोळ् ।

मलेतत्तेन्दोडे बुद्धप-प्रभुगे भव्याचारदिं चागदिम् ।

विलसद्-धैर्यदिनी-धरातळदोळन्यर् प्पोललेनाप्परे ॥

कं ॥ चागदे घन-रासियनुरु- ।

भोगदे तन्नायुरासियं समेधिसिदम् ।

त्यागं श्रैयांसनोळुरु- ।

भोगं सुकुमारनल्लि समनेम्बिनेगम् ॥

वृ ॥ यिनिनुं चोद्यमे राय-राज-गुरु-लोकाचाय्यरास्थान-रज्- ।

जन-विद्विजन-चक्रिवर्तिगळनिं दुर्वीदि-मातङ्ग-मे- ।

दन-पञ्चाननरोल्दु बोधिसिदवर् स्सिद्धान्त-योगीन्द्ररेन्द ।

एने बुद्धप-नोळुद्ध-कीर्त्तियुमनूनाचारभुं धम्मंभुम् ॥

चिरमल्लितनुवाप्प-पूजेयोदवं सत्-सेवेधं भक्तियम् ।

गुरुगळिगम्मिगे माळ्परप्परो पेरर् मेणागरो माळ्पेनाम् ।

चिरमं धम्मंमतेन्दु कोट्टदळे भू-दानङ्गळं दीर्घको- ।

त्करमं कट्टिसि बुद्धप-प्रभुवदेम् धम्मकडप्पादिनो ॥

कं ॥ बिन-पद-युगदोळ् बिन-मुनि- ।

जन-सेवेयोळुचित्त-दानदोळ् सलियिसिदम् ।

मनमं तनुवं धनमम् ।

विनय-परं बुद्धपार्थनचलित-धैर्यम् ॥

इन्दु सुखदिनिर्णनेगं समाधि-कालमत्यासन्नमागे ॥

४ ॥ जिन-गतिथं जिनेश्वरन नाममना-जिन-नाम-सङ्ख्येयम् ।

मनदोळमास्य-पङ्कजदोळं कर-श/खेयोळं समाधि सज्- ।

बनियिप कालदोळ् निलिसि सर्व-निवृत्तिगे सन्दु मुक्ति-सा-

घन-मननैदिदं त्रिदश-धाममनी-क्रमदिन्दे बुळ्ळपम् ॥

व ॥ अन्दु पञ्च-परमेष्ठिगळ ध्यानदिं तां पडेद समाधि-कालद जय-क्रम मेन्तेन्द्रोडे ॥

अदु मूवत्तैदरिन्दं क्रमदोळे पदिनारागि मत्तारोळ् सन्- ।

दुदु बन्दत्तैदरोळ् नाल्करोळेराडरोळिहोन्दरोळ् विन्दु नाका-

स्पदमं सैतित्तुदास-सत्त्व-जय-विलसद्-वर्ण-सन्दोहमीयन्- ।

ददिना-जिह्वाग्रदोळ् सन्मतिथिनेनलदेम् धन्यनो बुळ्ळपार्यम् ॥

सरिगाणेम् धरेयस्ति चागिगलोळेन्नोळ् पोल्के-वप्पन्नरम् ।

सुर-भूजं समनण्णोड्धुददनां नोळपेम् समन्तेम्बवोल् ।

धरेयोळ् पोम्-मले सोई पाङ्गिनोळे चागं गेय्दु सोपानमागू ।

इरे धम्मं त्रिदिवक्के बुळ्ळपनमर्त्यावासमं पोहिदम् ॥

मान्यो राज-सभासु बुळ्ळप-विमुत्थः पार्थिवे वत्सरे

मासे भाद्रपदे त्रयोदशि-तिथौ पक्षेऽर्कवारे सिते ।

भीमत्पञ्च-नमस्क्रियामय-सुधां स्वैरं पिबन् भी-गुरुन्

ध्यांस् ... समाधि-विधिना स प्राप दिव्यं श्रियम् ॥

आ-कल्पं भुवि बुळ्ळ [प]-प्रसु-यशस् स्थाव्यस्तु सं ...

... इत्यचीकरदिमामस्मै निषद्यां कलाम् ॥

तत्प्रेमात्म ... नाथ-परमाराध्य ...

... चन्द्र-सूरिरनिशं जीयादिदं शासनम् ॥

वर्ष-सहस्रदोळ् ... दश-स ...

वर्षमे पार्थिवं पुदिये भाद्रपदं वर-मासदोन्दु ...

... .. सित-प प्रभा- ।

कर-वर-वारमारी विभु-बुद्धपनैदिद ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । मूल-संघ, नन्दि-संघ, पुस्तक-गच्छ, और देशि-गणके श्रुत-मुनिकी प्रशंसा । उनके शिष्य देवचन्द्र मुनि थे । उनके शिष्य गोपिपतिके पुत्र बुद्धप थे, जिन्हें अभयचन्द्रकी कृपासे यह अवसर प्राप्त हुआ था । जिस गाँवका वह अधीश था, वह नागरखण्ड था, जो १८ कम्पण देशके गुप्तिका गाँव था । इस नागरखण्डके गाँवोंमें एक गाँव भारङ्गि था, जिसमें उत्तमोत्तम चैत्यालय थे । बुद्धप की प्रशंसा, जिसने भूमिदान किया था और ताळाब (दीर्घिक) बनवाये थे । अपना अन्त नजदीक जानकर, उसने सभी नियत विधियोंको किया, और समर्पण-की विधिसे (उक्त मितिको), स्वर्गको गया ।]

[EC, VIII Sorab tl, No 330]

६४७

पर्वत आवूः—संस्कृत ।

[सं० १४२४ = १४९८ ई०] श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res. XVI, p. 301, No. XVII, a.]

६४८

पर्वत आवूः—संस्कृत ।

[सं० १५२१ = १४७२ ई०] श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res. XVI, p. 299, No. XV, a.]

६४९

यिदुवणि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[सङ्क १३१५ = १४७३ ई०]

[यिदुवणिमें, पारधनाथ बस्तिके पाषाणपर]

श्री-पार्श्व-तीर्थेश्वराय नमः निर्विघ्नमस्तु ॥

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं विनशासनम् ॥

श्री-पञ्च-परमेष्ठिन्यो नमः ।

नमस्तुङ्ग-इत्यादि ॥

स्वस्ति समधिगत-भु[व]नाश्रय श्री-पृथ्वी-मनो-वल्लभ महानावाधिराज राज-पर-
 मेश्वरनीश्वर-कुल-तिलक श्रीमन्महा-विक्रपाल-महारायक राज्यवनु सुख-संकथा-
 विनोददि प्रतिपालिसुत्तमिदं श्रीमन्महा-प्रभु मलेय-दुलि-मार्त्ताण्ड निडिगयेण्डु-
 दण्डिगेय मनेयर गण्ड श्रीमन्महा-प्रभु अयिसूर मुन्दुवण-नायकर वर-कुमार
 भैरण-नायकर होरुगुप्पे-हेव्वयल-नाडनु प्रतिपालिसुत्तमिदं दुदुवणिय
 बलिय-गौडर मग नगिर-ठाविण आनेवळिगे अग्रगण्यरूप कोडे-हडप दीप-
 मालेय कम्म अङ्क-टेङ्के-मुन्ताद-तैज-मान्य-वनुळ्ळ हैवण-नायकर बुक्कण-
 नायकर अळिय माळक-नायकितियर मग आहाराभय-भैषज्य-शास्त्र-दत्तावघा[त]
 रुमप्य पारिस-गौडर तम्म बोडय भयिरण-नायकरिगू तमगू पुण्य-वृद्धि-यशो-
 वृद्धयर्थ-निमित्तवागि तम्म दानमूलद-सीमेय यिदुवणेयोळगे श्री-परिश्व-तीर्थेश्वर-
 चैत्यालयवनु माडिसिदनु तन्मुहूर्त्तके शुभमस्तु ॥ स्वस्ति श्री जयाभ्युदय शालि-
 वाहन-शक-वर्ष १३१५ नेय नन्दन-संवरसरद वैशाख-शुद्ध १३ यन्तु
 सूर्य-प्रतिष्ठेयाद घ २ ङ्गियेयल्लि चतुस्संघ-समन्वितदि पञ्च-कल्याण-महोत्साहदि सु-
 मुहूर्त्तदि श्री-पार्श्व-तीर्थेश्वर प्रतिष्ठेयं भैरण-नायकर कारुण्य-वर-प्रसाददि पारिउ-
 गौ[ड]र तम्मोडेय भैरण-बोडेयरिगू तनगू अभ्युदय-निश्रेयस-सुख-प्राप्ति-निमित्त-
 वागि माड्लिदुदके भद्रं शुभं मङ्गलम् ॥

स्वस्थनवरत-विनमदमरेन्द्र-मौलि-माणिक्य-मयूख-बालातप-विलसित-पादारविन्द श्री-
मदनदि-ससिद्ध-प्रसिद्धरुमप यिदुवाणय श्री-पार्श्व-तीर्थेश्वररिगे मलेय-हुलिय
मार्त्तण्डनिडिग येण्टु-दण्डिगेय मन्येय गण्ड उभय-नाना-देशिगळगे तवर्मनेयाद
ऐश्वर्यपुर-वराधीश्वर श्रीमन्महाप्रभु भैरण-नायकर तम्म अम्म सिद्ध-मादेविय-
वरिगू तमगू तम्म कारुण्य-वर-प्रसाददि सेवेयं माडुत्तं यिद् पारिस-गौडरिगू पुण्य-
बुद्धि-यशो-बुद्धयर्थ-निमित्तवाणि कोट्ट धर्म-शासनद भाषा-क्रमवेन्तेन्दरे । नाऊ
आळुत्तं यिद् होर-गुप्पे हेब्बयल-नाडोळगण अप्पु-गौडन बक्कणन पाल कुळ ग
२ २ अत्तरदल्लु यिप्पत्तु-यरडु-हणविन कुळवन्नु श्री पार्श्व-तांतीर्थेश्वर नित्य-पूजा-
महोत्साहके अमृतपडि यरडु-होत्तिन हिरिय-देवर हाल-धारे मृत्युञ्जय-चक्र-पूजे
पञ्चामृतद अभिषेक सिद्ध-चक्र-पूजे सिद्धर हाल-धारे अडके यत्ते गन्ध धूप एण्णे
वाद्य-मुन्ताद समस्त-पूजा-वेच्च के नाउ सोम-सूर्य-ग्रहणदक्षि घारा-पूर्वकदि बिट्टु
कोट्ट योग २ २ हणविन कुळ-स्थळद वृत्ति-भूमिगळ विवर (यहाँ दानकी
विस्तृत चर्चा है) यिन्ती-वृत्ति भूमिगळ चतुस्तीमेगळिन्दोळगाद मोदल सिद्धायि
ई-मोदल सिद्धाय अदके बन्द अडके-यत्ते-मुन्ताद होरगुप्पे हेब्बयल-नाडोपादियक्षि
बन्द नाना-उपोत्र मुन्दे येनु बन्द हदिके-होदके-मुन्तागि एल्लववन्नु नाऊ नम्म स्त्री-
पुत्र-ज्ञाति-सामन्त-दायादानुमतदि नम्म स्व-रुचियि चन्द्र-सूर्य-अग्नि-वायु-साक्षि-
यागि... .. ण-नायकर वर-कुमार भैरण-नायकर वरसिकोट्ट शाला-शासनके
मङ्गळ महा श्री श्री (यहाँ हमेशाका अन्तिम श्लोक तथा दानका विस्तृत चर्चा
आती है) ।

स्वस्ति श्री विजयाभ्युदय-शालिवाहन-शुक्र-वर्ष १३९६ नेय विजय-
संवत्सरद कार्तिक शुद्ध ५ बुद (घ) वारदल्लु स्वस्ति श्रीनन्द-बादोन्द्र-
विशालकीर्त्ति-भट्टारक-स्वामिगळ वुप्रदेशदिन्द स्वस्ति श्रीमन्महा-प्रभु-मुण्डु-
वण्ण-नायकर कुमार भैरण-नायकर तमगे अभ्युदय-निश्रेयस-सुख-प्राप्ति-निमित्त-
वाणि मळेयखेडद नेमिनाथ-स्वामिगळ नित्य-पूजा-महोत्सवके बिट्ट धर्म-
शासनद क्रमवेन्तेन्दरे (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा आती है) नम्म स्त्री-पुत्र-
ज्ञाति-सामन्त-दायादानुमतदिन्दल्लु नाऊ नम्म स्व-रुचियिन्द चन्द्र-सूर्य-वायु-अग्नि-

साध्वियाणि भैरव-नायक कुमार धम्मडि-भैरवेन्द्रनू बरद शिला-शास[न]के मङ्गल
महा श्री ॥ (हमेशाके अन्तिम श्लोक) ।

इन्द्रः पृच्छति चाण्डाली किमिदं पच्यते त्वया ।

श्वान-मांसं सुरा-सिक्तं कपालेन चिताग्निना ॥

देव-ब्राह्मण-वित्तानां बलादपहरन्ति ये ।

तेषां पाद-रत्नो-भीत्या चर्मणा पिहितं मया ॥

(हमेशाका अन्तिम श्लोक) ।

[पार्श्व-तीर्थेश्वरको नमस्कार । यह निर्विघ्न होवे । जिन-शासनकी प्रशंसा ।
पद्म-परमेश्वरियोंको नमस्कार । शम्भुको नमस्कार इत्यादि ।

जिस समय महाराजाधिराज, राज-परमेश्वर, ईश्वर-कुल-तिलक, महाविरूपाक्ष
महाराय शान्ति एवं बुद्धिमत्तासे राज्य कर रहे थे:—और महाप्रभु, अयिसूर
मुन्दुवर्ण-नायकका पुत्र भैरव-नायक होरुगुप्ते हेव्वयल-नाडकी रत्ना कर रहे थे;—
इदुवर्ण बलिय-गौडका पुत्र, जो नगिर-ठावुमें आनेवाळिगेमें अग्रणी था, हैवर्ण-
नायक, तथा रुक्कण-नायकका दामाद, मालक-नारिकतिके पुत्र पारिस-गौडने
ताकि 'पुण्य और ख्याति स्वयं अपनी तथा अपने शासक भयिरव-नायककी बढ़
सके,—अपने दानमूल सीमें इदुवर्णमें पार्श्वनाथ-तीर्थङ्करका चैत्यालय बनवाया
था । और (उक्त मितिको) (पूर्व विगतोंको दुहराते हुए) भगवान्की स्थापना
की गयी थी ।

(नाना उपाधियोंवाले) इदुगणिके पार्श्व तीर्थेश्वरके लिये, ऐश्वर्यपुर-
वराधीश्वर, महाप्रभु भैरव-नायकने, जिससे कि पुण्य और ख्याति अपनी माता
सिद्ध-मादेवी तथा अपनेतक, और उसकी सम्पत्तिके दास पार्श्व-गौडतक बढ़
सके,—निम्नलिखित शासन (लेख) प्रदान किया;—यहाँपर दैनिक पूजा,
महोत्सव, भेंटें, तथा अभिषेक आदिके लिये तथा और भी खर्चोंके लिये,—हमने

सूर्यग्रहणके समय (उक्त) भूमियाँ, सूर्य और चन्द्रको साक्षी बनाकर दी हैं । हमेशाका अन्तिम श्लोक ।

पांरिस (पार्श्व)-गौड तथा दूसरे गौडोंने (जिनके नाम दिये हैं) (उक्त) भूमियाँ प्रदान कीं ।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 60]

६५०

गोडि;—संस्कृत-गुप्त ।

[सं० १२३१ = १४०६ ई०] श्वेताम्बर लेख ।

[D. P. Khakhar, Report on remains in Kachh (ASWI, Selections, No. CLII), p. 88, No. 40, t.]

६५१

भिलरी;—संस्कृत और गुजराती ।

[सं० १२३८ = १४०९ ई०] (श्वेताम्बर)

[J. Kirste, EI, II, No. V, No. 1, (p. 25), t. & tr.]

६५२

हरवे;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक सं० १४०४ = १४८२ ई०]

[हरवे (उज्जयिन्मण्डल परगना) में, शिवलिंगव्याके खेतके दक्षिणकी तरफ एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभारस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री शक-वर्ष १४०४ सन्द वर्त्तमान-शुभकृत्-संवत्सरद् चैत्र - शु ५ तु
हरवेय देवप्पगळ मग चन्द्पपु तम्म कुल-स्वामी हरवेय बस्ति य आदि-परमेश्वरन

अमृत-पडि चातुर्वर्णद दान तदर्थवाणि तगदूर प्रभुगळु एनेगे दानार्थवाणि कोट्टे चेत्रद स्थान-निर्देशद विवर । अरिन्द नैऋत्य-दिक्किनक्षि विभूतिय लिङ्गप्पयगळ गद्दे होल ग ३० तेङ्गळु विभूति-नखप्पन होल तोटदि पडुवलु येरे-होलके होह वोणियि बडगळु शिवनैय्यन अडुवि मूडण चतुस्सीमेयोळगाद स्थळ होल गद्दे अडके-तेङ्ग-एलेय-तोड ओळगाद चेत्रद सर्व्य मान्यवन् स्त्री-पुत्र-ज्ञाति-सापत्न-दायादाद्यनुमति पुरस्सरवाणि आदीश्वरगे एनेगे धम्मार्थवाणि त्रिवाचा कोट्टेनु । (हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक)

[हरवे के देवप्पके पुत्र चन्दप्पने, हरवे बस्तिके अपने कुल-देवता आदि-परमेश्वरकी पूजा का प्रबन्ध करने, तथा चतुर्वर्णको दान देनेके लिये, तगदूरके सरदारोंके द्वारा दी गयी भूमिका, सूखे खेतों, घान्यके खेतों, सुपारी, नारियल और पानके उद्यानों सहित—जो कि इस भूमिमें लगे हुए थे, दान किया । यह दान उसने अपनी स्त्री-पुत्र-ज्ञाति-सौतेली स्त्रियोंके पुत्रों और दायादों (उत्तराधिकारियों) की अनुमतिसे किया था ।

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No., 189]

६५३

चित्तौड़—संस्कृत ।

[सं० ११४३ तथा शक १४०८ = १४८६ ई०]

[गोमुखके पासके जैन-मन्दिरका लेख जो कि एक चट्टानपर है, जिसमें ३ प्रतिमायें उत्कीर्ण हैं ।]

(१) ॥ (चिह्न) ॥ संवत् १५४३ वर्षे शाके १४०८ प्र० मार्य (गं) शीर्षं वदि १३ तिथौ गुरु-दिने । श्री-चित्रकूट-महा-दुर्गे । श्री-रायमल्ल-राजेन्द्र-विजे (ज) य-राज्ये । सकल-श्री-सङ्घंन । स-तीर्थ । श्री-स (सु) कोशलेय-प्रतिमा कारिता । प्रतिष्ठा-

(२) ता । श्री-खरतरगच्छे । श्री-जिनसमुद्र-सूरिभि (मः) ॥

['रायमल्ल' स्पष्टतः वही राजमल्ल है जो कुम्भकर्णका पुत्र है, और उसके लिये विक्रम सं० १५४३, इस लेख द्वारा निर्दिष्ट, सबसे पूर्ववर्ती मिति है। लेखमें खरतरगच्छके जिनसमुद्र-सूरि द्वारा सुकोशलेश या ऋषभदेव तथा अन्य तीनों (जो कि दो से अधिक नहीं हो सकते हैं, क्योंकि पाषाणपर उत्कीर्ण केवल ३ मूर्तियोंका ही उल्लेख है।) की प्रतिमाओंकी स्थापनाका वर्णन है।]

नोट :—जिनसमुद्रसूरिके विषयमें जाननेके लिये Ind. Ant. Vol XI. p. 249, No. 58 देखना चाहिये।

[ASWI, Progress Report 1903-1904, p. 59. t.]

६५४

होगेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १४०६=१४८७ ई०]

[होगेकेरीमें, पार्वनाथ बस्तिके एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जियात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्रीमद्भू-भुवन-प्रसिद्धतर-जम्बूद्वीप-मध्यस्थ-तुङ्ग- ।
गामर्त्याचल-दक्षिणात्य-भरतार्या-खण्ड-नैऋत्य-दिक्- ।
सीमोपान्धि-तटोपकण्ठ-विलसद्-वर्णाश्रमाकीर्ण-भू- ।
धामं तौळव देशमिर्पुर्दिळेयोळ् ससाङ्ग-सम्पत्तियिम् ॥
अदरोळ् माङ्गल्यगेहं बहु-विध-विभव-प्रोल्लसच्चैत्यगेहम् ।
सुदती-सन्तान-जन्मालयमखिल-सुखि-त्यागि-भोगि-प्रवाहम् ।
मदवद्-हस्त्यश्व-यूथ-प्रबल-पटु-भटाकीर्णमुत्तुङ्ग-सौधो-
दय-राज-राज-संगीतपुरमदेशेयल् प्रौढ-सङ्गीयमानम् ॥
कवि-गमक-वादि-वाष्मि- ।
प्रवेक-सङ्गीत-विषय-साहित्य-सो- ।

द्रव-चतुर-संस्तुत- ।

विविध-कला-भङ्गि-संगि सङ्गीतपुरम् ॥

अद्रनाळ्वं साळवेन्द्र-क्षितिपति रिपु-मत्तेभ-कण्ठीरवं शा- ।

रद-चञ्चच्चन्द्रिका-निर्ममल-ललित-यशः-पूरिताशान्तराळम् ।

मदन-प्रध्वंसि-चन्द्रप्रभ-जिन-चरण-द्वन्द्व-संसक्त-चित्तम् ।

सुदती-नेत्रान्तरङ्गोत्सव-कर-निज-सौभाग्य-कन्दर्प-देवम् ॥

अन्तातनखण्डित-प्रचण्ड-प्रताप-खर्व-गर्व-निज्जित-भीष्म-ग्रीष्म-मार्त्तण्ड-मण्डलनुम-
प्रतिहत-देदीप्यमान-निज-तेजः-पुञ्जनुं दन्दह्यमान-रिपु-वधू-हृदयनुं विशाल-भाल-तल
चोचुम्ब्यमान-जिन-चरण-नख-मयूखनुं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपाळन-क्रिया परिष्ठनुं
चतुर-चतुष्पष्टि-कला-कलापनुं रत्न-त्रय-मणि-करण्डायमानान्तःकरणनुं श्रीमन्महा-
मण्डलेश्वरं श्री- साळवेन्द्र-महाराजं निःकण्टकनागि सुखदि राज्यं गेयुत्तम् ॥

विनुत-प्रासाद-चैत्यालय-तल-विलसन्-मण्डपौवङ्गळि कञ्-

चिन-मान-स्तम्भदिन्दा-पुरद वनद विन्यासदि लोह-पाषा-

ण-निबद्धातेक-बिम्बङ्गळिनुपकरण-व्रातदि नित्य-दाना-

च्वर्चनेयिन्दम् शास्त्र-दानं नेगळे नडसिदं धर्ममं शाळवेन्द्रम् ॥

अनित्तु राज-धर्ममं धर्ममं पालिसुत्तम् ।

बरे साळवेन्द्रन चित्तम् ।

परिलोषमनेयिदुवन्ते सेवा-तत्- ।

परनागि भक्ति-भरदिन्द ।

इरे विगत-च्छन्न सुगुण-सद्मं पशम् ॥

हितनीतं प्रिय-सत्य-वाद-निपुणं धर्मार्थ-सम्पादकम् ।

चतुरं सन्चरित्रं दयार्द्र-हृदयं शास्त्रतानेम्भवा- ।

गतनी-पद्मण-मन्त्रियेन्दडे कुळिर्-क्कोडल्के साळवेन्द्र-भू-

पतिया-चन्द्र-भराकर्कमित्तनुरे मान्य-ग्राम-सम्पत्तियम् ॥

श्रीमद्-विश्रित-शालिवाहन-शकाब्दं नन्द-खाब्धीन्दु-सं-

ख्या-मानं नडेव प्लवंग-गत-पुण्य-स्याम-सत्-पञ्चमी- ।

स्तोमं गीष्पतिवारमोन्दिरे मनो-वाक्-काय-शुद्धं चतुस्-
सीमान्तोर्व्वियनष्ट-भोग-सहितं हेमाम्बु-धारा-युतम् ॥

प्रभुगळ् पुर-जन-परिजन- ।

सभासदमर्मेचवे सालुवेन्द्र-नृपाळम् ।

विभवदि पद्मण-मन्त्रिगो ।

शुभमस्तुवेन्द्रोगेयकेरेयनवनोल्दिदत्तम् ॥

अन्तु स-हिरण्योदक-दान-धारा-पूर्व्वकमागि कोट्ट बोगेयकेरेय-ग्राम-बोन्दर चतुस्सी-
मेयोळगण गद्दे-बेद्लु-तोड-तुडिके-कळ-मने-कोठार-होन्नु-होम्बळि-वरिन्-वङ्कु-काणिके-
कङ्गाय-बेडिगे विनरु-बेसवोक्कलु-अङ्क-सुङ्क-टङ्कसाले-तळवारिके निधि-निक्षेप-जल-
पाषाण-अक्षिणि-आगामि-सिद्ध-साध्यमेम्बष्ट-भोग-सर्व्व-स्वाम्य-सर्व्वदाय-प्राप्ति-सहित-
मागिया-चन्द्रार्क-स्थायियागि पद्मणामात्यननुभविसुबुदेन्दु कोट्ट सर्व्वमान्य-ग्राम-
दान-शासन-वचनम् ॥

[जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्र, उसमें तौलव-देशका वर्णन । उसमें संगीतपुर नगर
तथा उसके राजा सालुवेन्द्रका वर्णन ।

जिस समय महा-मण्डलेश्वर सालुवेन्द्र-महाराज सुखसे राज्य कर रहे थे :—
सुन्दर, ऊँचे-ऊँचे चैत्यालयों, मण्डपसमूहों, घण्टी सहित मानस्तम्भों और उद्यानोंसे
सालुवेन्द्र धर्मको बढ़ा रहे थे । उनकी सेवामें तत्पर पद्म नामका व्यक्ति था ।
यह पद्मण (पद्म) हमारे खानदानमें से हुआ है अतः राजाने मन्त्री-पद्मणको
ओगेयकेरे नामका गाँव दिया । उस गाँवमें बहुतसे शस्य (चावल) के खेत
थे । ये सब उसने उसको दिये तथा इन सबका शासन (लेख) भी लिख-
कर दिया ।]

[EC, VIII, Sagar tl., No 163, Ist part]

६४५

होगेकेरी,—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १४१२ = १४६० ई०]

[होगेकेरीमें, पार्वनाथ बस्तिके एक पाषाणपर]

नमस्तुङ्ग-इत्यादि ॥

स्वस्ति श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरं सङ्गी-राय-बोडेयरवर कुमार यिन्दगरस-बोडेयर संगीतपुर-वर-राजधानियलु यिद्धु डाडवाल्लिय राज्य-मुन्ताद समस्त-राज्यङ्गळनु सद्धर्म-कथाप्रसङ्गदि प्रतिपालिसुत्तं यिर्दिन्दिन शालिवाहन-शक-वरुष १४१२ नेय सौम्य-संवत्सरद कार्तिक-व ७ शुक्रवारदलु श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरं यिन्दगरस-बोडेयर निरूपदिन्द बोम्मण-सेट्टियर मग पदुमण-सेट्टियर बरसिद धर्मशासनद भाषा क्रमवेन्तेन्दरे यिन्दगरस-बोडेयर कैयलु पदुमण-सेट्टि मूलवनु कोण्डु आळुत्तं यिद्ध बोणेयकोरेय-बोळगे चयि (चै) त्यालयवनु कट्टिसि पारिश्चतीर्थेश्वर प्रातण्ठेयनु माडि आ-पारिश्च-तीर्थेश्वररिङ्गे प्रतिदिन त्रि-काल-अभिषेक-पूजे मूर कार्तिक-पूजे मूर नन्दीश्वरद अष्टाहिक शिवरात्रे अक्षय-तदिगे श्रुत-पञ्चमी कैयकिय होयिर्वालि जीवदयाष्टमी कैयकिय सूसवलि गन्धर्वतरण बल्ला (जन्मा) भिषेक दीक्षा-कल्याण केवल-ज्ञान-कल्याण निर्वाण-कल्याणङ्गळेम्त्र पारिश्च-तीर्थेश्वर पञ्च-कल्याण-मुन्ताद नैमित्तिकङ्गळलि माडुव अभिषेक-पूजे-धर्मङ्गळिङ्गे अङ्गरङ्ग-नैवेद्यङ्गळिङ्गे वोन्दु-तण्डु-तपस्विगळ आहार-दानके पूजक-आन्दारिगळु मालेयवर मुन्तादवरिगे विङ्गडिसि माडिद धर्म-स्थळङ्गळ विवर (शेषमें दानकी विस्तृत चर्चा आदि है) ।

[शम्भुको नमस्कार इत्यादि ।

जिस समय महा-मण्डलेश्वर सङ्गी-राय-बोडेयर् का पुत्र इन्दगरस-बोडेयर् राजधानी सङ्गीतपुरमें था :—(उक्त मितिको) महा-मण्डलेश्वर इन्दगरस-

बोडेयरके हुकमसे, -बोम्मण-सेट्टिके पुत्र पदुमण-सेट्टिने एक बर्म्म-शासन-पत्र लिख-
वाया, जिसकी भाषा इस प्रकार थी :—इन्दगरस-बोडेयरके हाथसे, पदुमण सेट्टिने
अपने द्वारा शासित बोगेयकेरेके मौलिक अधिकारको प्राप्त करके उसने वहाँ एक
चैत्यालय बनवाकर पार्श्वतीर्थेश्वरको विराजमान किया । तथा पूजा और अभि-
षेक का प्रबन्ध करनेके लिये (जिसकी कि विस्तृत सूची दी हुई है) उसने (उक्त)
भूमियोंका दान दिया । और इन सब लिखे हुए धर्म्मोंको चैत्यालयके उत्तरमें
बनवाये गये मकानमें सुरक्षित रक्खा । मेरे एक हजार वर्ष बाद मेरे पुत्र, मेरी
पीछेकी पीढ़ी और सन्तान मकानपर अधिकार कर सकते हैं, लगानकी देखभाल
करते हुए (उक्त) धर्म्मोंको सञ्चालित कर सकते हैं । प्रत्येक चीजका खर्च
नियमित रूपसे व्यवस्थित कर दिया गया है । (अन्तका लेख पढ़ा नहीं
जा सकता ।)]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 163, III part.]

६५६

बिदरुरु,—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १४१३ = १४२१ ई०]

[बिदरुरुमें, जनार्दन मन्दिरके ताम्बेके पत्रपर]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्रीमत्-तौळव-देश-मिश्रित-महा सङ्कोत-सत्-पत्तने

बाभातीन्द्र-महीन्द्र-चन्द्र-तनयः श्री-सङ्गि-राजात्मजः ।

मास्वत्-कारयप-गोत्र-सोम-कुलजः श्री-सङ्कराम्बोदर

क्षीराम्बोधि-सुधाकरो नुत-जिनः श्री-साळुवेन्द्राधिपः ॥

साक्षीकृत्य निब-प्रताप-दहनं गन्धर्व-पादाहति-

प्रोद्भूतोद्भूत-धूर्ति-काण्ड-वृत्तं संयोष्य नीराजनम् ।

खड्गखड्गि-ब-विस्फुलिग-निवहैर् द्विर्-कष्ट-भेदारवैः
 बाधानोम्मडि-साळवेन्द्र-नृपति वीर-अभयं लब्धवान् ॥
 असत् सूर्यो यमुनां पुरेति
 कथा पृथिव्यां प्रक्षिता तथापि ।
 श्री-साळवेन्द्रासि-दिनेश-पुत्री
 प्रताप-सूर्य सुषुवे विचित्रम् ॥
 प्रताप-तयनोत्फुल्ल-कीर्ति-कञ्जेषु-दिग्-दळे ।
 तारोद-विन्दुके यस्य लेभे हंस-अभयं शशी ॥
 विख्यातेम्मडि-साळवेन्द्र-नृपतेः श्यामासि-सोमोद्भवा
 मध्योन्मग्न-विराजमान-कमला प्रासूत * पत्यामहो ।
 एकां शत्रु-करीन्द्र-मस्तक-मालद्-रक्षौघ-शोषा-नदीम्
 अन्यां श्री-विबुधेश-सेवित-तटीं सत् कीर्त्ति-भागीरथीम् ॥
 पातालोत्पललोचना-कटि-तटे चञ्चद्दुकूल-द्यातम्
 दिक्-कान्ताकुच-कुम्भयोः कलयते मुक्ता-कलाप-अभियम् ।
 देव-स्त्री-कुटिलालकेषु नितरां मन्दार-माला-छाविम्
 कीर्त्तिः कार्त्तिक-कौमुदी-प्रविमला श्री-साळवेन्द्राधिप (:) ॥
 व्यानम्रामर-पद्मराग-मकुट-ज्योतिश्छटा-रञ्जितौ
 पादौ यस्य सरोजयोः कलयतो बालातप-भी-युजोः ।
 शोभां वेणुपुराधिपः स भगवान् श्री-वर्द्धमानो जिनः
 पायादिम्मडि-साळवेन्द्र-नृपति भूपाळ-चूडामणिम् ॥

इत्याद्यनेक-विरुदावली-विराजमानसङ्गि-राय-बोडेयरवर कुमार शुद्ध-सम्यक्त्व-
 रत्नाकरनेनिसिद्ध श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर यिन्दगरस-बोडेयर संगीतपुरद राज-
 धानियल्लिदु विदिरुनाडु-मुन्ताद समस्त-राज्यवनु प्रतिपालिसुच यिदन्दिन
 जयभ्युदय-शालिवाहन-राक-वरुष १४१८ नेय वर्त्तमानके सलुव विरोधे-

* ऐसा ही मूल में है : शायद 'पुष्पाकहो' की जगह ऐसा हो गया है ।

कृतु-संवत्सरद वैशाख-सुद्ध ५ आदिवार बलु श्रीमन्-महा-मण्डलेश्वर
इन्दगरस-बोडेयर तमगे पुण्यार्थवागि बरसिद धर्म-शासनद क्रमवेन्तेन्दरे बिबि-
रूर बस्तिय वर्द्धमान-स्वामिगळ अङ्ग-रङ्ग-नैवेद्य-नित्य-नैमित्तिक-जिन-पूषाङ्ग-
विनियोग-मुन्ताद-श्री-कार्यकके पूर्वदलि बिडु-देवसवागि हिरण्योदक-धारा-पूर्वक-
वागि-आ-चन्द्रार्क-स्थायियागि सर्वमान्यवागि बिट्ट भूमिगळ विवर (यहाँ दानकी
विगत आती है) ई-बिट्ट-कुळ-स्थलङ्गळ नीरञ्चु नेलनरकलु नट्ट-कल्लु तेगदगळु
गडियिन्दोळगाद चतुस्सीमेगे बन्द मक्कि हकलु कांतु काडारम्भ नीरु दारि निधि-
निक्षेप-अक्षीणि-आगामि-सिद्ध-साध्य-मुन्ताद तेज-मान्यगळतुळ ई-कुळ-स्थळंगळ
मेले काणिके कड्ढाय बीडुगळु विराड-मुन्तागि आवौपुत्र-इल्लदे सर्वमान्यवागि आ-
वर्द्धमान-तीर्थ-करिगे हिरण्योदक-धारा-पूर्वकवागि आ-चन्द्रार्क स्थायियागि बिडु-
देवस्व वागि शासनाङ्कितवागि नातु बिट्टु-कोट्ट धर्म-शासनद पट्टे यिन्तपुदके
साक्षिगळु ।

आदित्य-चन्द्रावनिलो-इत्यादि ॥

ई-धर्मके आ रोब्बर तप्पिदवरु ऊर्जन्त-गिरियल्लि सहस्रगो-ब्राह्मणर इतिय
माडिद पापके होहर यरद्वारे-द्वीपदोळगुळ चैत्य चैत्यालयदोळगुळ जिन-मुनिगळ
वधसिद पापके होहर (हमेशाके शापाल्मक वाक्यावयव और श्लोक) यिन्द-
गरस बरह ।

[जिनशासनकी प्रशंसा ।

तौलव देशमें, प्रसिद्ध सङ्गीतपट्टनमें काश्यपगोत्र और सोम कुलके
महाराज इन्द्रके पुत्र सङ्गि-राजके पुत्र राजा साळुवेन्द्र शोभायमान था । वह
जिनभक्त था और उसकी माता सङ्कराम्बा थी । इम्मडि-साळुवेन्द्रके पराक्रमकी
प्रशंसा । उसके यशकी प्रसिद्धिका कीर्तन ।

जिस समय इन और अन्य उपाधियों सहित, सङ्गी-राय-बोडेयरका पुत्र,
महामण्डलेश्वर इन्दगरस-बोडेयर शाही नगर सङ्गीतपुरमें थे :—(उक्त मितिको),

पुण्यकी प्राप्ति के लिये, उसने निम्नलिखित दान दिया;—जो दान बिदिरूर बस्तिके वर्धमान-स्वामीकी (उक्त) उपासना और पूजाके लिये पहले दिया गया था और फिर छोड़ दिया गया था निम्नलिखित थे;—(यहाँ पूरी-पूरी विगत दी हुई है) । ये भूमियाँ, (उक्त) सर्व अधिकारों सहित, वर्धमान-तीर्थकरके लिये दे दी गयीं थीं ।]

[EC, VIII, Sagar tl. No 164]

६५७

मलेयूर;—कन्नड़-भग्ग ।

[शक १४१४ = १४६२ ई०]

[उसी पहाड़ीपर, सम्पिगे-बागलुके पश्चिमकी ओर]

शुभमस्तु शक-वर्ष १४१४ नेय वर्त्तमान-परिधावि-संवत्सरद चैत्र-शु
१ लु कनक-गिरिस्थ श्री-विजयनाथ यके मलेयू
दिमण्ण-सेट्टिय द्वियरु कनकगिरिय समस्त
१ के हत्तु होन्निगे यरडु हण बड्डियलु कोट्टु अत्तरदलु इप्पत्तु होन्निगे वोप्पत्तु
..... १ के लल्ल खं ३ कोळगद दीप
आरति-सेवे

[मलेयूरके दिमण्ण-सेट्टिके [पुत्र] सेट्टिने कनक-गिरिपर स्थित विजयनाथदेवकी दीप-आरतिकी सेवाके लिये, प्रत्येक १० होन्नुपर २ हणके व्यावके दियावसे, २० होन्नुका दान किया था ।]

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No. 160]

६५८

होगेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[अंक १४२० = १४१८ ई०]

[होगेकेरीमें, पार्वनाथ बस्तिके पाषाणपर]

श्रीमत्पार्श्वं जिनेन्द्र-भक्तनमल-श्री-पण्डिताचार्य-सत् ।
 प्रेमोद्यत्-प्रिय-शिष्यनप्रतिम-नागाम्नात्मर्जं सद्-गुण- ।
 स्तोम-ब्रह्म-तनून्ननुत्तम-सु-पद्मा-वल्लभं मल्लिका- ।
 कामं पद्मण-मन्त्रि-मुख्यनेसेदं साल्वेन्द्र-चित्तोत्सवम् ॥
 जिन-पादानति मस्तकके जिन-विम्वाळोकनं दृष्टिगा- ।
 जिन-शास्त्र-श्रवणं स्व-कर्ण-विवरके श्री जिन-स्तोत्रमा- ।
 नन पद्मके चिदात्म-भावने मनकं पात्र-दानं-कर- ।
 कके निजालङ्कृतियागे पद्मण-महा-मन्त्रीशनेम् धन्यनो ॥
 येनेगी-भूप-कृपावलोकनदिनेत्री-पोष्य-वर्माकके तकक् ।
 अनितुण्टी-धन-धान्य-सम्पदमदी साल्वेन्द्र नोल्देन्तु को- ।
 टुनितुं ग्राममनेन्तु धर्ममेनगा-चन्द्राकर्कमप्पन्तु माळप्- ।
 इनिदोन्दे-कडे गण्ड-कजमेनितुं निश्चयिसदं चित्तदोळ् ॥
 जिन-चैत्यावासमं माडिसि समुचित-सालादियि कूडे पार्श्व-
 सन विम्ब-स्थापनं गेय्दनुदिनमेसेयल् नित्य-पूजाभिधानम् ।
 मुनि-दानं तप्पदोळ्ब्यन्दोगेयकेरेयोळ्पन्ते तां कोट्ट शा- ।
 सनमं तच्छासन-प्रान्तदोळे बर्रासदं पद्मणांक-प्रधानम् ॥
शकाब्दे कालयुक्ते नरभट्ट-गणिते १४२० चैत्र-शुक्लाष्टमी-सत्-
 पुष्यर्क्षे बीववारे गब्रिपु-करणे शूल-योगे मनोज्ञे ।
 निर्दोषे मीन-लग्ने सु-रुचिरमकरोत् पार्वनाथ-प्रतिष्ठााम् ।
 श्री-पद्मोद्भासि-पद्माकर-पुर-वसतौ पद्मनाभ-प्रधानः ॥

पल-कालं नित्य-पूजा-विधिगे मेषव तोष्टङ्गलं द्याणमं तान् ।
 ओलविं नन्दादि-दीप्ति-प्रमुख-सकल-दीपवके नैमित्तिकवक्कम् ।
 स्थलमीयाष्टाह्णिकादि-प्रमुख-तिथिगमीयापणं पात्र-दानम् ।
 नेलेयप्पन्तावर्गं बेप्पण्डिसि बरसिदं वृत्ति यं पद्धानाभम् ॥

कं ॥ अपरिमितमुचितमेम्भीय्- ।
 उपकरणङ्कलने कोट्टु वैदिक-लौकिक- ।
 निपुणनं ई अद्यन-सचिवं ।
 सुपरीक्षितमागि बरसिदं शासनम् ॥
 पद्मं विनमित-बिन-पद- ।
 पद्मं सज्जनरोळेसेव विगत-च्छदम् ।
 पद्मा-प्रिय-कर-गुण-गण- ।
 सद्मं नित्य-प्रसन्न-निज-मुख-पद्मम् ॥

[पार्श्व जिनेन्द्रका पूजक, पण्डिताचार्यका शिष्य, नागाम्बर और ब्रह्मका पुत्र, पद्माका पति तथा मल्लिकाका प्रिय,—साल्वेन्द्रका कृपापद्म, मुख्य मन्त्री पद्म था । उसकी जैन भक्तिका वर्णन । उसने एक जिन चैत्यालय बनवाया था, उसमें पार्श्वनाथ भगवान्की स्थापना कर दैनिक पूजा और मुनियोंके आहार दानके लिये प्रबन्ध किया था । (उक्त मितिको), मन्त्री पद्मनाभने पद्माकरपुरमें पार्श्व-नाथकी स्थापना की, और इसमेंसे (उक्त) विभिन्न कार्योंके लिये अलग-अलग हिस्से निकाल दिये, और एक शासन लिख दिया । पद्मकी प्रशंसा ।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 163. part II.]

६५६

शत्रुञ्जय;—प्राकृत ।

सं० १५०० (..... ई०)

यह लेख रवेताम्बर सम्प्रदाय का है ।

[G. Buhler, EI, II, No. VI, No. 117 (p. 86), a.]

६६०

पर्वत आबू;—संस्कृत ।

[सं० १२६९ = १५०२ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res., XVI, p. 298, No. XII, a.]

६६१

भवणबेल्लोला;—कन्नड ।

[शक १४३२ = १५१० ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६६२

बहादुरपुर (जिळा जलवर);—संस्कृत

[सं० १५७३ = १५१६ ई०]

(श्वेताम्बर लेख ।)

[A. Cunningham, Reports, XX, p. 119-120]

६६३

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक सं० १४४० = १५१८ ई०]

पहला लेख

[उसी पहाड़ीपर, दोनोंके उत्तर और बलि-कवलुके दक्षिण एक चट्टानपर]

श्री ॥ शककेऽब्दे व्योम-पाथोनिधि-गति-शशि-संख्येश्वरे भावणे सत्-

कृष्णे पक्षेऽत्र तद्द्वादश-तिथि-युत-सत्-काव्य-चारे गुरोर्मे ।

आद्यकृष्णो कन्यकायां यत्तिपति-मुनिचन्द्रार्य्य-वर्य्यप्रशिष्यो

लेभे चेतः-कृतार्हत्पदयुग-मुनिचन्द्रार्य्य-वर्य्यस्माधिम ॥

तच्छिष्य-वृषभदास-वर्णिना लिखितं पद्यमिदं विद्यानन्दोपाध्यायेन कृतम् । श्री ।

[यतिपति-मुनिचन्द्रार्थके मुख्य शिष्यने मुनिचन्द्रार्थके लिये समाधि बनाई ।^१ यह श्लोक उनके शिष्य वृषभदासने लिखा और इसको बनानेवाले थे विद्यानन्दोपाध्याय ।]

दूसरा लेख

[उसी पहाड़ीपर, सेनगण निषधिकी उत्तर-पूर्वकी चट्टानपर]
कालोग्र-गणद मुनिचन्द्र-देवर पाद अवर शिष्य आदिदास बरसिद

[कोष्ठागणके मुनिचन्द्र-देवके चरणचिह्न उनके शिष्य आदिदासके द्वारा स्थापित किये गये थे ।]

तीसरा लेख

[उसी पहाड़ीपर, मुनिचन्द्र-निषधिके एक पाषाणपर]

ईश्वर-संवत्सरद भ्रावण-बहुल श्री-मूलसंघ-कोलाग्र-गणद मुनिचन्द्र-देवरिगे निषिधि ... अवर पादवन्नु अवर शिष्य आदिदास ... आवियण्णगळु माडिसिदरु श्री श्री श्री

श्रीमूलसंघ और कोलाग्र-गणके मुनिचन्द्र देवका स्मारक । उनके चरण-चिह्नोंकी स्थापना उनके शिष्य आदिदासने की थी । (यह कार्य) आवियण्णके द्वारा संपन्न किया गया था ।]

[EC, IV, Chamrajnagar tl., no 147, 148 and 161]

१ इस श्लोक का उपर्युक्त अर्थ गलत मालूम होता है । श्लोकार्थ से तो समाधि लेनेवाले स्वयं मुनि चन्द्रार्थके प्रधान शिष्य थे, न कि प्रधान शिष्य ने मुनि चन्द्रार्थ के लिये समाधि बनायी । 'समाधि लेने'का अर्थ होता है 'समाधिको प्राप्त हुआ' न कि 'समाधि बनाई' । इसका कर्त्ता भी 'अग्रशिष्यो' है ।

५१६

कल्लवस्ति:—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १४२२=१५२३ ई०]

[कल्लवस्ति (बसुज्जी परगना) में, कल्ल-वस्ति के सामने के एक गावागपर]

श्री गणाधिपतये नमः ।

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं चिनशासनम् ॥

श्रीमानादि-नराहोऽयं भिर्यं दिशतु भूयसीम् ।

गाढमालिङ्गिता येन मेदिनी मोदते सदा ॥

नमस्तुङ्ग इत्यादि ॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १४५२ सन्द् वर्त्तमान ।
 विक्रतु-संवत्सरद् । चैत्र-शुद्ध १० बुधवारदलु श्रोमतु अरि-राय-गण्डर
 दावणि बोम्मल-देवियर कुमार श्री-बीर भैरवस बोडेयर । कारकळद सिंहा-
 सनदक्षि सुख-संकथा-विनोददि राज्यं प्रतिपालिसुत्तिह कालदलि । अवर तङ्गि
 काळल-देवियर । बगुळिय सीमेयनु स्व-धर्मदलु प्रतिपालिसुत्तिह कालदलु तम्म
 कुल-स्वामि कल्ल-वस्ति पार्श्व-तीर्थकरिगे नित्य-धर्मक्के बिट्ट भूमिय क्रमक्के-
 न्दरे । ताबु तम्म कुमारति रामा-देवि-यर । कालव माडिदलि । अवर हेसरलि ।
 माडिद धर्म (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा आती है) मंगल महा श्री-बोम्मरस
 बिट्ट हळि ... यो-भूमियनु नाबु नम्म बगुळिय सीमेय पूर्व-प्रधानिगळु महाबन-
 ङ्गळु हलर नाडु कोलबिळियर मुन्तादवर् समस्तर साक्षियलि स-हिरण्योदक-दान-
 धारा-पूर्वकवागि धारेय-नेरुदु कोट्टेबु आ-चन्द्रार्क-स्तिरवागि कोट्टेबु । हरगोल
 बोणिय गदेय कल्ल-वस्ति य देवर अमृतपडिगे पूर्वदल्लि बिट्ट दा नम्म क ...
 कालव दल्लि बिट्ट भूमि रव ६ उभय बीचवरि रव ११ भूमियनु देवरिगे
 बिट्टेबु इदके राबिक बरसिद कल्ल-शासन (हमेशाके अन्तिम श्लोक)

अनुगच्छन्ति ये तुक् कौटुकान्वितम् ।

पदे पदे कटु-फलं लभते नात्र संशयः ॥

[जिस समय बोम्मल-देवीके पुत्र वीर-भैरवस-बोडेयर कारकलकी गद्दीपर थे : और उनकी छोटी बहिन काळल-देवी बगुल्लि-खोमेकी रक्षा कर रही थी;— उसने अपने कुल-देवता कल्ल-बस्तिके पारिश्व (पार्श्व)-तीर्थङ्करकी दैनिक पूजाके लिये दान दिया । और जब उसकी पुत्री रामा देवी मर गई तब उसने अग्र-लिखित पुण्य-दान किया :—प्रतिदिन चावलकी २ अञ्जलि देना, पहिले मिले हुए ४० खमें भट्टके १५ ख और मिलाकर कुल ५५ ख; २ हमेशा जलनेके लिये दिये, और वार्षिक २४ ग घातुमें;—साथियोंके सामने (उक्त) भूमिका दान दिया । पाषाणका शासन उसीने उत्कीर्ण करवाया ।]

[Ec, VII, Koppa tl. No .47.]

६६५-६६६

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[संवत् १२८७ और शक सं० १४५३ = १५३० ई०]

ये दोनों लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायके हैं ।

[G. Buhler, EI. II, No. VI, No. I (P. 42-47), t.]

६६७

हुम्मय—कन्नड़ ।

[बिना काळ-निर्देशका, पर लगभग १५३० ई० का (ख० शहस) ।]

[पद्यावली मन्दिरके प्राङ्गणमें एक पाषाण पर]

विद्यानन्ध-स्वामिय ।

इद्योपन्यास-वाणि धरेयोळ्गेन्दुम

मायद्वादि-गणेन्द्र ।

भेद्योद्धर-सिंह-विरतियन्तेवोलेसेगुम् ॥

स्थितियोळ् विद्यानन्द- ।

व्रतिपति-मुख्य-बात-वाणि विबुधर मनदोळ् ।

स्ततं रञ्जिसुतिकुम् ।

व्रति-विरहित-कान्त-रचित-भाष्यद तेरदिम् ॥

विद्यानन्द-स्वाम्यन- ।

वद्योपन्यास-मुद्रे कविगळ मनदोळ् ।

सद्यं सुखकर बाणन ।

गद्यात्मक-काव्यदन्ते रञ्जिसि तोक्कुम् ॥

भी-नञ्जरायपट्टण् ।

आ-न(पति-नञ्ज-देव-भूपन समेयोळ् ।

आ-नन्दन-मस्ति-भट्टो- ।

दानमनुषे किडिसि मेषद विद्यानन्द ॥

ओरङ्ग-नगरकार्यन ।

पेरङ्गिय मतमनळिदु विद्वत्-समेयोळ् ।

शारदेयं वस-माडिये ।

घारिणिगमिवन्धनादे विद्यानन्दा ॥

श्री-सान्तवेन्द्र-राजन ।

केसरि-विक्रमन बङ्गुरास्थानदोळिन्त् ।

ई-साहित्यमनुर्वरे ।

गोसिसुवन्तुसुर्दे वादि-विद्यानन्दा ॥

श्री-साख-मस्ति रायन ।

पूसरगेणेयेनिसि तोर्प बाणन समेयोळ् ।

सासनदोळधिकरादर ।

बासेयनु मनिसिदे वादि-विद्यानन्दा ॥
 अण्णव-वेष्टित-वसुधा- ।
 कण्णोपम-शुरु-नृपालनास्थानदोळेम् ।
 कण्णोट-दत्त-कृतिथम् ।
 वर्णिणसि जस बददे वादि-विद्यानन्दा ॥
 वासव-समान-भाग्य- ।
 श्री-साळुव-देव-रायनास्थानिकेयोळ् ।
 पुसियेन्दाखळ-वायुरु- ।
 शासनमं गेरुदु मेन्चिदे विद्यानन्दा ॥
 नागरी-राज्यद राजर ।
 ... लेनिसुव सभेगळ्छि विबुध-व्रातक् ।
 अगणित-वाक्यामृतमं ।
 सोगसिन्दीण्टिसिदे वादि-विद्यानन्दा ॥
 कळशोङ्गव-सम-शौर्यन ।
 बिळिगेय नरसिंह-भूपनास्थानिकेयोळ् ।
 बेळगिदे जिन-दर्शनमम् ।
 नाळिनाम्बक-सुनु-वैरि विद्यानन्दा ॥
 कारकळ-नगरदाप्पन ।
 भैरव-भूपाल-मोळियास्थानदोळेम् ।
 सारतर-जैन धर्मन् ।
 ओरन्तिरे बेळगि मेषदे विद्यानन्दा ॥
 बिदिरेय भव्य-जनङ्गळ ।
 विदमल-चारित्र-भूष्य-हृदयर सभेयोळ् ।
 पेडे सिद्धान्तित-मतमम् ।
 मुडदि प्रकटिसिदे वादि-विद्यानन्दा ॥
 नरपति-मणि-मुक्ताञ्चित- ।

नरसिंह-कुमार-कृष्ण-रायन समेयोळ् ।
 पर-मत-वादि-वृन्दम् ।
 ओरसिदे वाग्बलदे वादि-विद्यानन्दा ॥
 कोपण-मोदलाद-तीर्थदोळ् ।
 अपरिमित-द्रव्यदि देहाज्ञा-विधियम् ।
 स्वपवर्गाद फलकारिणे ।
 विपुलोदय माडि मेषदे विद्यानन्दा ॥
 बेळगुळद गुम्मतेशन ।
 चळन-द्वयदल्लि जैन-संघके महा- ।
 कळ मुददे वसन-भूषण- ।
 कळघौतद मळेय कषदे विद्यानन्दा ॥
 आ-गेरसोप्येथोळगण ।
 योगागम-वाद-सक्त-मुनिगळ गणमम् ।
 राजदे पालिप कज्जकि- ।
 दी-गुरु-कणियन्ते मेषदे विद्यानन्दा ॥

४ ॥ वीर-आ-वर-देव-राज-कृत-सत्-कल्याण-पूजोत्सवो

विद्यानन्द-महोदयैक-निलयः श्री-सङ्गि-राजाञ्चितः ।
 पद्मा-नन्दन-कृष्ण-देव-विनुतः श्री-वर्द्धमानो बिनः
 पायात् साढुव-कृष्ण-देव-नृपतिं श्रीशोऽर्द्धनारीश्वरः ॥
 श्रीमत्परमर्गभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
 जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिन-शासनम् ॥
 वर्द्धमानो जिनो जीयात् गौतमादि-मुनि-स्तुतः ।
 सुप्रामाञ्चित-यादान्त्रः परमार्हन्त्य-वैभवः ॥
 स चतुर्दश-पूर्वेषो भद्रबाहुर्जयत्यरम् ।
 दश-पूर्व-धराधीश-विशाख-प्रमुखाञ्चितः ॥

तत्स्वार्थसूत्र-कर्तारमुमास्वाति-सुनोरवरम् ।

भुतकेवलि-देशीयं वन्देऽहं गुण-मन्दिरम् ॥

श्री-कुन्दकुन्दान्वय-नन्दि-संवे

योगीश-राज्येन मतां ... ।

जाता महान्तो जित-वादि-पक्षाः

चारित्र-वेषा गुण-रत्न-भूषाः ॥

सिद्धान्तकीर्तिर्जिनदत्तराय-

प्रणूत-पादो जयतीह-योगः ।

सिद्धान्त-वादी जिन-वादि-वन्यः

पद्मावती-मन्त्र ... ती-कृतेज्यः ॥

बीयात् समन्तभद्रस्य देवागमन-संज्ञिनः

स्तोत्रस्य भाष्यं कृतवानकलङ्को महर्षिकः ॥

अलञ्चकार यस्त्वर्वाप्तमीमांसितं मतम् ।

स्वामि-विद्यादिनन्दाय नमस्तस्मै महात्मने ॥

यः प्रमाता पवित्राणां ... ।

विद्यानन्द-स्वामिनञ्च विद्यानन्द-महोदयम् ॥

विद्यानन्द-स्वामी

विरचितवान् श्लोकवाचिकालङ्कारम् ।

जयति कवि-विबुध-तार्क्षिक-

चूडामणिरमल-गुण-निलयः ॥

माणिक्यजम्बीर-जिनराज-वाणी-

प्राणाधिनाथः पर-वादि-महर्षी ।

चित्रं प्रभाषन् इह क्षमांयम्

मार्त्ताण्ड-भृङ्गो नितरां व्यदीपित् ॥

सुखी ... न्यायकुमुद-चन्द्रोदय-कृते नमः ।

शाकटायन-कृतसूत्र-न्यास-कर्त्रे व्रतीन्दवे ॥

न्यासं विनेन्द्र-संज्ञं सकल-मुच-भुक्तं पाणिनीयस्य भूषी-

न्यासं शब्दाक्तारं मनुष-तति-हितं वैद्य-शास्त्रं च कृत्वा ।

यस्तत्त्वार्थस्य टीकां व्यरचयदिह तां भाष्यसौ पूज्यपाद- ।

स्वामी भूपाल-वन्द्यः स्वयं-हित-वचः-पूर्ण-दृग्-बोध-वृत्तः ॥

वर्द्धमान-मुनीन्द्रस्य विद्या-मन्त्र-प्रभावतः ।

शाद्दूलं स्व-वशीकृत्य होयसल्लोऽपालयद्धराम् ॥

होयसल्लान्वय-भूपानां वृत्त-विद्या-प्रदायिनः ।

श्री-वर्द्धमान-योगीन्द्र-मुखास्ते गुरवोऽभवन् ॥

वासुपूज्य-व्रती भाति भव्य-सेव्यो वृषाक्षितः ।

सिद्धान्त-वाङ्मि-शीतांशुः ... रिन्नाधार-विग्रहः ॥

रिपु-वर्द्धन-बल्लाल-राय-वन्द्य-क्रमाम्बुजः ।

अनेकान्त-नयोद्भासी श्रीपालो राजते सुखी ॥

भूभृत्पादानुवर्त्ती सन् राज-सेवा-पराङ्मुखः ।

संयतोऽपि च मोक्षार्थी ... पात्रकेसरो ॥

त्रिलोकसार-प्रमुख ...

... भुवि नेमिचन्द्रः ।

विभाति सैद्धान्तिक-सार्वभौमः

वासुण्ड-रायान्वित-पाद पद्मः ॥

रेजे माधवचन्द्रोऽसौ निराकृत-मधूत्सवः ।

चैत्याश्रयो शुचि-नतिसिदा श्रावण-तत्परः ॥

जीयाद्भयचन्द्रोऽसौ मुनिसिद्धान्त-वेदिनम् ।

चरमः केशवाच्येण ... सत्य-पाणाभयः ॥

... स-राज-सूर्यो

दया-परः श्री-जयकीर्ति-देवः ।

विराजते शास्त्र-विदां वरेण्यः

सः...रमानिङ्कित-रम्य-गायः ॥

... शासन-भीमन् ... सेन इवावनौ ।
 राजते जिनचन्द्रार्थ्य ... यः ॥
 आचार्य्य-वर्य्य ... विभाति विचिते ... ।
 इन्द्रनन्दो जिनेन्द्रोक्तसंहिता-शास्त्र विद्-वरः ॥
 वसन्तकोत्तिर्वन-देश-वासी
 विशालकोत्तिश्शुभकोत्ति-देवः ।
 श्री-पद्मानन्दी मुनि-माधनन्दी ॥
 जया-प्रसिद्धामल-सिंहनन्दी ॥
 व्यतिभाते गुणाधीशो धीमान् चन्द्रप्रभो मुनिः ।
 वसुनन्दो माधचन्द्रो धीरनन्दो धनञ्जयः ।
 वादिराजो धराधीश-वन्दितांघ्रि-सरोरुहः ॥
 षट्-त्कर्क-वादि-जनताभय-दान-दत्तः
 साहित्य-नन्दन-वनालि-विकासि-चैत्रः ।
 श्री-धर्मभूषण-गुरुर्मुनिराज-सेव्यो
 भट्टारको जयति सत्कविता-कलेन्दुः ॥
 राजाधिराज-परमेश्वर-देव-राय-
 भूपाल-मौलि-लसदङ्घ्रि-सरोज-युग्मः ।
 श्री-वर्द्धमान-मुनि-वक्त्र-मौरव-मुख्यः
 श्री-धर्मभूषण-सुखी जयति क्षमाढ्यः ॥
 विद्यानन्द-स्वामिनस्सुनु-वर्य्यस्
 सञ्जातस्ते सिंहकोत्ति-व्रतीन्द्रः ।
 ख्यातश्श्रीमान् पूर्ण-चारित्र-गात्रो
 दान-स्वर्भू-धेनु-मन्दार-देश्यः ॥
 श्वेत-वर्णाकुलो भूमौ सर्व्वदा मरुदाहृतः ।
 सुदर्शनो मेरुनन्दी राजहंस-परिष्कृतः ॥
 वर्द्धमानः प्रभाचन्द्रोऽमरकोत्तिशुभाकरः ।

विशालकीर्तिश्री-नेमिचन्द्रस्तिष्ठ-गुण इव ।
 बाभात्यश्चपतेर्हिने तत-नयो वक्ताळ्य-देशावृत-
 भीमद्-दिल्लि-पुरेड्-महम्मद-सुरिप्राणस्य माराकृतेः ।
 निर्जित्याशु सभावनौ बिन-गुरुर्बोद्धादि-वादि-वचम्
 ओ-भट्टारक-सिंहकीर्त्ति-मुनि-रा ... चैक-विद्या-गुरुः ॥
विशालकीर्त्तिर्वादीन्द्रः परमागम-कोविदः ।
 भट्टारको बल्लात्कार-गणावीशो महा-तपः ॥
सिकन्दर-सुरिप्राण-प्राप्त-सत्कारवैभवः ।
 महा-वाद-जयोद्भूत-यशो-भूषित-विष्टपः ॥
श्री-विरूपाक्ष-रायस्य श्री-विद्यानगरेशिनः ।
 सभायां वादि-सन्दोहं निर्जित्य जय-वत्रकम् ॥
 स्वीकृत्य च महा-प्रज्ञा-बलेन बुध-भू भुजैः ।
 मतं सरस्वती-मूल-शासनं वा सदोज्ज्वलम् ॥
देवप्प दण्डनाथस्य नगरे श्रीमदारो ।
 प्रकाशित-महा-जैन-धर्म्मोऽभूद् भूसुरार्चितः ॥
विशालकीर्त्तिश्री-विद्यानन्द-स्वामीति शान्दितः ।
 अभवत् तनयस् साळ्य-मल्लिराय-नृपार्चितः ॥
 आगम-त्रय-सर्वज्ञः कवित्व-गुण-भूषितः ।
 नानोपन्यास-कुशलो वादि-मेघ-महा-मरुत् ॥
 स्वामि-विद्यादिनन्दस्य भारती भाललोचनः ।
 सन्तुर्देवेन्द्रकीर्त्त्यर्ख्यो चातो भट्टारकाग्रणीः ॥
 श्रीमद्देवेन्द्रकीर्त्ति-व्रति-पद-नख-रुग्-मञ्जरी मंगलं मे
 भूयात् तत्पादपार्श्वे मम नुति-विनमन्मस्तके मल्लिकाभा ।
 नेत्रे कर्पूर-पा ... वदन-सरसिजे स्फार-यीयूष-धारा
 कण्ठे मुक्ता-कलापस्त्वयव-निकरे चन्द्र-युक्-चन्दन-भीः ॥
 आनन्दबाभु-सलिलैरपि भावयित्वा

भाल-स्थली-विरचिताञ्जलि कुटुम्बेन ।

देवेन्द्रकीर्ति-चरणे मुखमर्पयामि

कामातुरः कुच-भरे स यथा तदर्थ्याः ॥

यत्पादाब्ज-नखेन्दु-कान्ति-लहरी-स्थानं जगत्पावनम्

यत्पादान्ब्रजो-विलेपनमहो संसार-सन्ताप-हृत् ।

यत् कारुण्य-कटाक्ष-वीक्षणमपि क्षीरोद-पट्टाम्बरम्

यत् प्रेम् ... सुधाशनं भव-भवे सोऽस्तु प्रियो मे गुरुः ॥

श्रीमान् **देवेन्द्रकीर्ति**र्यति-पति-मुकुरो मन्त्र-वादीभ-सिंहः

साहित्याम्भोधि-सूर्यो विमलतरतपः-श्री-समालिङ्गिताङ्गः ।

विद्यानन्दार्य-सत्तुः कवि-विबुध-महा-पारिषातो विभाति

प्रायो भूताचलेन्द्रः पर-हित-चरितः शारदा-कर्णपूरः ॥

श्री-कृष्ण-राय-सहजाच्युत-राय-मौलि-

विन्यस्त-पाद-कमलः कमनीय-मूर्तिः ।

देवेन्द्रकीर्ति-सुखिराड् बधति प्रसिद्धः

स्याद्वाद-शास्त्र-मकराकर-शीतरोचिः ॥

श्रीमद्देवेन्द्रकीर्ति-व्रतिषु जिन-मताम्भोषिनी-भासि-भानो

सद्बिद्या-नाथ-पाथोनिधि-विशद-शरत् ... र-पीयूषभानो ।

एनो-बन्धासिधेनो मयि कुरु करुणां वाक्-सुधा-कामधेनो

विद्यानन्दार्य-सूनो गुण-मणि-बिलसद्-रोहणादीन्द्र-सानो ॥

वादावसान-विनमद्-वर-वादि-वक्त्र-

कञ्जात-जात-मुदिताश्रुज-किन्दु-वृन्दैः ।

मुक्ताफलैरिव मुहुः परिपूज्यमानम्

देवेन्द्रकीर्ति-चरणं शरणं ब्रजामि ॥

सन्मार्गासक्त-चित्तं कुवलय-चरित्तामोद-सद्-वृद्धि-हेतुम्

सद्-वृत्तं चारु-वीथोर्व्वल-विबुध-नुतं सत्-कळानामभीष्टम् ।

क्षोणीभूत्-तुङ्ग-मौलि-प्रणिहित-बिलसत्-पद्ममुन्मैरवसत्

विद्यानन्द-वृत्तीन्द्रामृतकरमेवतु श्री-पतिर्विमानः ॥
वादि-प्रोदाम-वाचा-पतिमिर-समुदय-प्रोक्षलद्-बाल-मायुस्
त्रैलोक्याखर्व-नार्व-स्मर-विपिन-महा-दीप-तेजः-कृशामुः ॥
शास्त्राम्भोराशि-तारारमण-संहश-देवेन्द्रकीर्त्यै-मामुर्
विद्यानन्दाय-वय्यो बगति विजयते धर्म-भूमीप्र-सानुः ॥

साकारो वा भाति सौबन्य-राशिस्-
सर्वज्ञो वा मर्त्य-वेषस्समिन्धे ।

सञ्चारी वा सर्व-शास्त्र-प्रपञ्चः

विद्यानन्द-स्वामि-वय्यो विभाति ॥

का सर्वं विशदीकरोति विनतापत्यं भवेत् किं हरेः

भुंक्ते पूत-हविश्च कः खग-मृगादीनां च को वाश्रयः ।

क्वास्ते देव-ततिः प्रथा क्व तु कुतस्सन्तो भजन्ते मुदम्

विद्यानन्द-मुनावनङ्ग-विजयिन्युद्धीक्ष्यमाणे सति ॥

वित्यानं दमुनाः वनं गवि बयिनि ॥

देवेन्द्रकीर्तिर्जिन-पूजनेषु

विशालकीर्तिर्विबुधाधिपेषु ।

विश्रवावनी-वृक्षम-पूज्य-पादो

विद्यादिनन्दो जयताद् धरित्र्याम् ॥

विद्यानन्द-स्वामि-शास्त्रोपमायै

शेषशम्भुं सेवते हार-भावात् ।

प्रायो लक्ष्म्यालिङ्गितासं पुमान्सम्

पर्यङ्कत्वं प्राप्य साक्षादुपास्ते ॥

भ्याचिख्यासति वैदुषी-भर-लसद्-व्याख्यान-कोलाहले

विद्यानन्द-मुनौ सभासु विदुषां कान्यस्य सुरेः कथा ।

खाद्योति किमुदेति कान्तिरहिते राफान्बुवाधामनि

प्रौढे भास्वति भासि भाति ... इषी कथं दीधितिः ॥

वीर-भी-वर-देव-राय-नृपतेस्सद्-भागिनेयेन वै
 पद्माम्बा ... गर्भ-वार्द्धि-विधुना राजेन्द्र-वन्द्याङ्घ्रिणा ।
 श्रीमत्-सालुव-कृष्ण-देव-चरणीकान्तेन भक्त्यार्चितो
 विद्यानन्द-मुनीश्वरो विषयते स्याद्वाद-विद्या-फलः ॥
 श्रीमद्विद्यानन्द-स्वामिनममराचलं मन्ये ।
 द्विज-विबुध-कवि-गुरूणां सन्दोहस्सेवतेऽन्यथा कथं भुवने ॥
 किं वाणी चतुराननः किमथवा वाचस्पतिः किन्वलौ
 विद्यानां विभवस् सहस्रवदनः साक्षादनन्तः किमु ।
 इत्थं संसदि साधवस्समुदितास्संशेरते सादरम्
 विद्यानन्द-मुनौ बुधेशभवन-व्याख्यानमातन्वति ॥
 यो विद्यानगरी-धुरीण-विजय-श्री-कृष्ण राय-प्रभार्
 आस्थाने विदुषां गणं समञ्जयत् पञ्चाननो वा गजम् ।
 सद्-वाग्भिर्नखरैरुदात्त-विमल-ज्ञानाय तस्मै नमो
 विद्यानन्द-मुनीश्वराय जगति प्रख्यात-सत्-कोत्तये ॥ .
 विद्यानन्द-स्वामिनोऽभूत् सधर्मा
 विख्यातोऽयं नेमिचन्द्रो मुनोन्द्रः ।
 भूत-व्राताम्भोज-वैकासकारो
 [...] शास्त्राम्भोराशि-संबुद्धिकारी ॥
 पोम्बुर्च्य-पार्श्वनाथस्य वसतिं श्री-त्रि-भूमिकाम् ।
 कृत्वा प्रतिष्ठां महतीं सन्तनोति स्म भक्तितः ॥
 विद्यानन्द-स्वामिनः पुण्य-मूर्त्तेः
 जीयात् सूरश्री-विशालादिकीर्त्तिः ।
 विद्वद्वन्द्यः सर्व-शास्त्रावतारो
 माद्यद्-वादीमेन्द्र-संघात-सिंहः ॥
 वादि-विशालकोत्ति-सुखि-राड् विबुध-स्तुत-सद्-गुणोदयः
 क्षमाधिप-संसदप्रतिम-वाक्य-निराकृत-सुरि-सन्ततिः ।

स्यात्पद-लाञ्छनान्वित-जिनागम-भावन-पूत-मानसो
 भाति नृपाल-पूजित-पदः स-दयो जित-पुष्पसायकः ॥
 जीयाद्दमरकीर्त्याख्य-भट्टारक-शिरोमणिः ।
 विशालकीर्त्ति योगीन्द्र-सधर्मा शास्त्र-कोविदः ॥
 विशालकीर्त्तियोगीन्द्र-भट्टोदय-महीभूतः ।
 देवेन्द्रकीर्त्ति-मुखि-राड् बालार्क हव भासते ॥
 श्री-भैरवेन्द्र-वंशाब्धि-राज-पाण्ड्य-नृपाक्षितः ।
 जीयाद् देवेन्द्रकीर्त्याख्यो विद्यानन्द-महोदयः ॥
 देवेन्द्रकीर्त्तिस्त्रिद्वार्थस्त् तद्वाणी प्रियकारिणी ।
 घीमांस्तदुदितो वर्णी वद्धमानो न किं भवेत् ॥
 निर्भग्नात्म-निबन्धनस्स-करुणो निर्वाण-वाञ्छान्वितो
 बाह्यार्थावगमामिलाष-रहितो दूरीकृतोत्कल्पनः ।
 स्व-च्छन्द-स्व ... ना भद्राङ्ग-लक्ष्म्या परम्
 क्षित्या मत्त-महा-करीव जयति श्री-वर्द्धमानो मुनिः ॥
 ख्यात-श्री-वर्द्धमानोऽभूद् वीत-संसार-विभ्रमः ।
 ज्ञातानुयोग-शास्त्रार्थो जातरूपा... स्वः ॥
 यति ... दन ।
 नूत-सद्-गुण-सन्तान-पूत-चिद्-भावना-मतिः ॥
 जयति भुजबल-श्रीरार्थ्य ... सञ्चयस्य
 जिन-पति-मत-बुद्धिः स्वर्ग-मोक्षैक-सिद्धिः ।
 जन-हित-मित-वाणी-लुप्त-कन्दपे-बाणी
 नव-तपन ... ॥
 ... दिन्द्रकीर्त्ति-योगीन्द्र विद्यानन्द-महोदय ।
 वर्द्धमान-बुधाराध्य भूयो भूयो नमोऽस्तुते ॥
 सत्पुत्रो-जननीं निदाघ-तृषितः शैत्यं बलं कामिनी
 कान्तं वारवधूः घनं यतिपतिः ... यितं चातकः ।

मेघं भूरमणो जयं युधि यथा ध्याकयकसं तथा
विद्यानन्द-सुखीश्वरस्य चरणाम्भोजं मदीयं मनः ॥
वन्दे पद्मावतीं देवीं वारिणीन्द्र-स्रनः-प्रियाम् ।

श्री-सिन्धु ॥

देवेन्द्रकोत्ति-मुनिराज-तनूभवेन

श्री-वर्द्धमान-सुखिना गदितानि भान्ति ।

पद्यानि सद्-गुण-युतानि महोज्ज्वलानि

विद्वत्-कवीन्द्र-गल-कर्ण-विभूषणानि ॥

... .. दया धर्मस्तावत् सद्-धर्म-शासन ।

श्रीरस्तु जगतां राजा धरां न्यायेन रक्षतु ॥

भान्तु षड्-दर्शनान्यु ॥

(वही अन्तिम श्लोक) ।

वर्द्धमान-मुनीन्द्रेण विद्य बन्धुना ।

देवेन्द्रकोत्ति-महिता लिखिता ॥

[विद्यानन्द-स्वामीकी वाणीके तर्कसे वादि-राजेन्द्र भयभीत रहते हैं । विद्या-नन्दि-व्रतिपार्तके मुखसे निकली हुई वाणीको विद्वान् लोग भाष्य समझते हैं । उनके तर्ककी प्रशंसा । नञ्जराय पट्टणके राजा नञ्ज-देवकी सभामें उन्होंने नन्दन-मल्लि-भट्टका मुँह बन्द करके अपनेको 'विद्यानन्द' प्रसिद्ध किया । श्रीरङ्गनगरके कार्य्य (प्रवर्द्धक) यूरोपियनके मतको ध्वस्त करके एक विद्वत्परिषद्में उनने शारदा (सरस्वती) को बुलाया था । उन्होंने सातवेन्द्र (या सान्तवेन्द्र) राजके अनु-पद्रव दरबारमें दुनियाँ में प्रसार पा जानेवाली एक कविता पढ़ी थी । साल्व-मल्लि-रायकी एक विद्वत्परिषद्में अन्धे वादियोंको परास्त किया । गुरु-नृपालके दरबारमें एक कर्णाटक ग्रन्थका निर्माण करके उन्होंने प्रसिद्धि प्राप्त की । साल्व-देव-राय के दरबारमें सब वादियोंके सिद्धान्तोंको मिथ्या सिद्ध करनेमें उन्होंने महती सफलता प्राप्त की थी । नगरी राज्यके राजाओंकी सभाओंमें उन्होंने विद्वानोंको

वृ ॥ समराम्भोराशियोळ् सुत्तुव सुळिगाळिवेम्बन्ते नीनेरिदश्वो- ।
 त्तमदिन्दं वेडेयङ्गळ् पसरिसे रिपु-राजेन्दुरेर्दि मत्ते- ।
 भ-महा-बाबि-ब्रजङ्गळ् पडगुगळबोलर्दळे नुङ्गुत्तमिक्कुम् ।
 क्रमदि त्वत्पादयुग्मं मकर-युगदबोल् **साल्व-मल्ल-द्वितीश ॥**
 श्रीमद्-**भैरव-भूप-भैरवमनिशं** ... सर्व-देवालयम्
 सद्-गो-मण्डलमाभ्रमत्यपि यं अस्पृष्ट्वा द्विजेशं करैः ।
 तन्मन्ये तवक-प्रताप-सवितुः साम्यश्च साद्राम्बरो
 नाहं नायमिति प्रकम्पित-तनुः सत्यापयत्यंशुमान् ॥

अन्ततिप्रसिद्धराद युवराजरेनिसिद् इर्वरळियन्दिर् भक्ति-युक्तराद उळिद राज-
 कुमाररि दण्डोपनत्ताद अन्य-मण्डलिकरिन्दोलगिसिकोळ्पट्ट देव-राथं **तुळु-कोक्कण-
 हैवै-मुन्ताद भूमण्डलमं भूमण्डलाखण्डल-नेनिसि आळुत्तमिरेम् ।**

आ-पोळलोळ् श्री **देव-म-** ।

हीपाल-सुपालितोरु-तेजोमान्य- ।

व्यापित-राज-भ्रेष्ठि र- ।

मा-परिवृढनिर्ण**नम्बवण-भ्रेष्ठि-वरम् ॥**

आतन कान्ते शील-गुणवन्ते कला-गुणवन्ते जैन-मार्ग-

आतत चित्ते धर्म-पर-वित्ते जन-स्तुत-वृत्ते सत्कुल-

ख्यात-सुरूपे सन्मति-कलापे विनिर्गत-कोपे एन्दुधा-

त्री-तळमोप्पे **देवरसियं** पोगुल्लुं गुण-रत्न राशियम् ॥

अवरिर्वरन्वयमन्तेन्दोडे ॥ श्रीमद्-राजाधिराजं **वनवसि-पुर-वराधीश्वरं**
कोक्कण-हैव राज्याधीशनप्प चन्दाऊरद **कदम्ब-कुल-तिलक कामि-देव-**
महाराजन दण्डाधिनाय कामेय-दणायकन सु-पुत्र **रामण-हेगाडे**गं रामकगं पुट्टिद
 अष्ट-पुत्रोळ्गे अतिप्रसिद्धनाद **योजन-भ्रेष्ठिगे तङ्गणनुं रामकनुमेम्ब** इर्वर कुल-
 वधुगळादरवरोळु तङ्गणङ्गे **रामण-भ्रेष्ठियुं** रामकङ्गे **कल्प-सेट्टियुमेम्ब** तनुजरादर-
 वरोळ् कूडि ॥

कं ॥ प्रियतमेय दय्यदिन्दं । नयन-द्वयदिन्दे वक्त्रमोष्ण-तेरदिम् ।

व्यदङ्कदाने दन्त- । द्वयदिन्देसेवन्तेयोष्पिदं योचौणम् ॥

व ॥ अन्तेनिसिद योज्जण-भेष्टी श्रीमद्वनन्तनाथन चैत्यालयमं क्षेमपुरदोळ्
कट्टिसि अन्तमिहदिदं कीर्त्ति-पुण्यकके नेलेयागिदुं अन्त्य-कालदोळ् तन्न राक्ष-भेष्टि
पदवियं तन्न पुत्ररिगोष्पिसि सुर-लोक-प्राप्तनादनित्तु ॥

कं ॥ रामण-सेट्टिय तनुजम् ।

कामनिभं तम्मण-ङ्कनातन तनयम् ।

श्री-महित-नागपङ्कम् ।

भूमीश्वर-मान्यनादनैदे वदान्यम् ॥

व ॥ आ-नाग-सेट्टिय कुल-स्त्रियरान्दोडे सातमनुं नागमनुमेन्दु किर्बरादर
नगरी-राक्षदोळ् प्रसिद्धमाद कुदुर-पुरदोळ् पुट्टिद सर्व-तेबो मान्यदिन्देसेब तोळइळ-
बळिय आ-सातम्मगं हट्टिगन-बळिय आ-नागप-भेष्टिगं तोट्टियण-सेट्टियेम्ब
सुपुत्रनादम् ॥ मत्तं नागमनन्वयमेन्तेन्दोडे ॥

कं ॥ विदु सिरिगे तवर्मनेयेनि- ।

सिद नगरी-सीमेयाद मागोडोळ् पु- ।

ट्टिद दण्डुवळिय सोबगिन ।

मोदलेनिसिदनल्ले नरस-नायकनेम्बम् ॥

अन्तेनिसिद नरसण-नायककं तन्न बन्म-स्थानमाद मागोडोळ् चैत्यालयमं कट्टिसि
श्री-पार्श्व तीर्थेश्वररनल्लि प्रतिष्ठेयम् माडिसि चतुर्विध-दानकके यथायोग्यमागि
क्षेत्रादिकमम् कोट्टु पुण्यके भाजननादम् ॥ मत्तमातन मोम्मगळ् मारककं हैषे-
राज्यकके मुख्यवाद हरियट्टेय-सीमेगे बन्द अन्तरवळियल्लि हुट्टिद हट्टिगन-बळिय
नेमण-सेट्टिगे कोडे अवगं वुट्टिद नागमनमा-नेमण-सेट्टि तन्न सोदरळिय
नागप-सेट्टिगे धारापूर्वकं कोडे ॥

व ॥ पति-चित्तानुगुण-प्रवर्त्तनदिनत्याश्चर्य-सौकर्य-सं- ।

युत-शीलोर्जातयि बिनेन्दु-पद-पूजासक्त-सद्-भक्तियम् ।

सततोत्साह-सुदानदि पर-हित-व्यापार-चातुर्यदिम् ।

क्षितियोळ् नागमनान्तलुत्तम-यशः-सौभाग्यमं भाग्यमम् ॥

कं ॥ आ-नागप्प-श्रेष्ठिगम् ।

आ-नागम्मङ्गे पुट्टिदर-स्सुतरिर्व्वर ।

भू-नुतम्भणेरम्बी- ।

दानोन्नत-मल्लि-सेट्टि येम्बी-पेसरिम् ॥

व ॥ अन्ता-नागप्प-श्रेष्ठि पुत्र-कल्लव-मित्ररोळ् कूडि सुखदिनिर्दम् ॥ (पश्चिम
मुख) मत्तमम्बवण-श्रेष्ठिय कुल-स्त्रीयारेन्दोडे मल्ल मनुं देवरसियुमेम्बिर्व्वरोळ् देव-
रसिय अन्वयमेन्तेन्दोडे ॥ घरेयोल् नेगळ्ते-बडेद पिरि-योजण-श्रेष्ठिय पुत्र
रामण-सेट्टिय सापत्तं रामक्काम्बा-गर्भीन्धि-चन्द्रनेनिसिद कल्लप्प-श्रेष्ठि दान-
बादि-सत्-कृत्यदि घरणियोळ् प्रसिद्धनादम् ॥

कं ॥ कल्लप्प-सेट्टिय तनुजम् ।

पुल्लशराकार-योजण-श्रेष्ठि-वरम् ।

सल्ललित-यशं जिन-पद- ।

पल्लव-कमनीय-भक्ति-लतिकाब्बोगम् ॥

अन्ततिप्रसिद्धिनाद राज-श्रेष्ठियाद योजण-श्रेष्ठिगे तोगरसियोळ् पुट्टिद होलेयबळ्णिं
श्रेष्ठनाद देवी-सावन्तन वडहुट्टिद बङ्कन बळिलोळु चैत्यालयमं कट्टिसि घर्म माडि
प्रसिद्धनाद बिदरु-नाडिगे मुख्यनाद माडु-गौडन तङ्गि वीरक्कनेम्ब कन्निके वधुवागे
आ-योजन-श्रेष्ठि सुखदिनिरुत्तं तन्न पितृ कल्लप्प-श्रेष्ठिय नियोगदिं लेम-पुर-
दोळु चैत्यालयमं द्वि-तलमागि कट्टिसि केळगण नेलेयोळु श्री-नेमीश्वरन प्रतिमेयं
मेगण नेलेयोळु श्री-गुम्मतनाथन प्रतिकृतियं प्रतिष्ठेयं माडिसिद आ-योजन-
श्रेष्ठिय कीर्त्तिय मूर्त्तियन्ते पुण्यद पुब्बदन्तिर्दा-चैत्यालयमेन्तेन्दोडे ।

वृ ॥ हरि-वंशारिष्टनेमि-स्थिर-निवसनदिन्दूज्जयन्ताद्रिधि भा- ।

स्कर-रत्न-स्पर्श-कूपोन्नतियिननुदिनं रोहणाद्रीन्द्रम् भा- ।

सुर-सौवर्मागमर्षि-स्थितिथिनमर-शैलेन्द्रमं सत्पताको -।

त्करदिं नाट्याङ्गमं पोल्तेसबुदु भुवन-स्वामि-नेमीश-वासम् ॥

अन्तेसेव चैत्यालयमं कट्टिसि सुखदिनिरुत्तमा-योजन-श्रेष्ठि तनगं वीरङ्गं पुट्टिद
सुतरोळु ।

कं ॥ संगरसनिन्दे किरियळु ।

मंगल-गुणि कल्लपाङ्गनिन्दं पिरियळु ।

नङ्गन जय-सिरियन्ते म- ।

नङ्गोळिप नतक्कनेम्ब कन्या-रत्नम् ॥

व ॥ आ-कन्निकेयं बट्टकळद सेट्टिकारोलु मुख्यनेनिसिद संघकोच्चं ... होळे-
योळु चैत्यालयमं कट्टिसि दान-पूजादिगळिन्दति-प्रसिद्धेयाद कञ्चधिकारिय पेण्डाति
माळधिकारितिगे पुट्टिद पारिसणधिकारिय तङ्गे गुम्नट-दैविगं पुट्टिद कञ्चण-सेट्टिगे
विवाह-पूर्वकं कोडे ।

कं ॥ आ यिर्वरिगं पुट्टिद- ।

ळायत-जलचात्ति देवरसियेम्बळ् ताम् ।

कायन्न-रायन मोह-स- ।

हायद शक्तियवोलेशेव रूपोन्नतियिम् ॥

आकेयनुजाते मदन-प- ।

ताकेयवोल् जनद मनद कोनेयोल् निमिर्दा- ।

लोके सुते पुट्टिदळ् सी- ।

लोजते मल्लि-देवियेम्बी-पेसरिम् ॥

आ-(अ) नतक्कमिन्तोप्पुव पेण्-मक्कळिर्वरं पडदु अवरिर्वरोळ् पिरिय-मगळु देव-
रसियम् । तनगण्णनागल् वेडिद् नागण्ण-श्रेष्ठिय मग अम्बुवण-श्रेष्ठिगे विवाह-
पूर्वकं कुडे ।

कं ॥ रतियुं रतिपतियुं श्री-

सतियुं श्रीपतियुमिर्प्प-त्तेरदि भोग- ।

स्तितियननुभविसुत्तं विन- ।

मतदोळति-प्रियरागि सुखदिन्दिहर् ॥

व ॥ अन्ता-दम्पतिगळिर्व्वरं सुखदिनिरुतमोन्दानोन्दु-दिवसं वन्दना-मक्तिरिं **नेमि-**
जिन-चैत्यालयक्के बन्दु ।

वृ ॥ जन-नेत्र-भ्रमरावली-कुसुमितोद्यानं मुनीन्द्रौघ-चि- ।

त्त-नवीनाम्बुरुह-प्रभात-समयं विद्वज्जनस्तोत्र-दि- ।

व्य-नदी-पूर-हिमाचलं निज-महा-सौन्दर्य्यमेन्देम्ब सज्- ।

जनता-संस्तुति निजोळेनमर्दुदै श्री-**नेमि-**तीर्थेश्वर ॥

एम्बिबु मोदलाद स्तुतिरिं **नेमि-**स्वामियं स्तुतिरिसि मुनि-वृन्दारकरं बन्दिसि
बळियं अभिनव-**समस्तभद्र-**मुनिरिं धर्ममं केळ्हु मनदे गोण्डु आ-रम्पतिगळिर्व्वरं
तमगे पुण्यार्थवागि तमगे अजनाद **योअण-भ्रेष्टि** कट्टिसिद **नेमोश्वर**न चैत्याल-
यद मुन्दे मानस्तम्भमं माडिदयेवेन्दु गुरुगळिगे विज्जविसि तम्म गृहक्के पोगि तम्म
बडवुट्टिदराद **कोटण-सेट्टि-मल्लि-सेट्टि-**मुन्ताद बान्धवानुमतदि तम्म वोडेयने-
निसिद देव-भूपालङ्गे ई-वम्मगार्य्यवनेचरिसि आ-महाराजननुमतदिं चतुस्संघदनु-
मतदिम् (उत्तर मुख) शुभ-दिन-दोळ् कांस्यमय-मानस्तम्भमं माडिसि दयेवेन्दु
निश्चयिसिर्पण्णेगम् ।

कं ॥ कमलिनियुं कुमुदिनीयुम् ।

क्रमदिं कासार-लक्ष्मिगुदयिपवोल् श्री- ।

सम-देवरसिगे पुट्टिद- ।

रममेने पद्मरसि देवरसियेन्दिर्व्वर् ॥

अन्तिर्व्वर-मुतेयरं पडेदु अदे-शुभ-सकुनमादन्ते कांस्यमय-मानस्तम्भमं माडिसि
आ-चैत्यालयद मुन्दे प्रतिष्ठेयं माडिसिदरु । आ-(मा) मानस्तम्भक्के

कं ॥ पोन्न-कळसमने माडिसि ।

सन्नुत-पद्मरसि-देवरसि इर्व्वर् चाम् ।

उन्नत-मानस्तम्भकैश्च ।

उन्नतियागिष्प-तेरदे पदविन्दित्तर ॥

आ-मानस्तम्भमेन्तेन्दोडे ॥

वृ ॥ भरदि जन्माब्धियं दाण्टसुव वर-महा-धर्ममेन्देम्ब पोतक्

उरुकूप-स्तम्भमम्बाङ्कन विशद-यशः-पट्टिका-स्तम्भमेम्बन्त- ।

इरे मानस्तम्भमा-कूटदोळेसेव चतुष्पन्न-बिम्बाङ्घ्रि-पूजा- ।

परिकीर्णास्फार-पुष्पाञ्जलियोलेशेजुदी-व्योम-तारा-कदम्बम् ॥

श्रीमन्नेमोश्चरोद्यन्-जिन-गृह-पुरतः प्रस्फुरत्-कांस्थ-मान-

स्तम्भं सद्धेमकुम्भं शुभमभिनव-सामन्तभद्रोपदेशात् ।

नागप्प-श्रेष्ठ-पुत्रः स्फुरदुरु-विभवाद्दम्बवण-श्रेष्ठि-वर्त्यः

सद्-धर्म-च्छत्र-दण्डं प्रमुदित-मनसाकारयद् भूरि-शोभम् ॥

अन्तु मान-स्तम्भमं माडिसिदरु ॥

[जिन-शासनकी प्रशंसाके बाद, नेमिनाथ भगवान्को नमस्कार और उनकी प्रशंसा । गुम्फटाधीश्वरसे रक्षा की कामना । अम्बवण-श्रेष्ठीको नेमिचन्द्र जिनेन्द्र की ओरसे मङ्गल-कामना ।

जम्बू-द्वीपमें भारत देश, उसमें तौलव देश; उसमें अम्बुनदीके दक्षिण किनारे पर क्षेमपुर है । उसमें गेरसोप्पे नगरकी शोभाका वर्णन ।

क्षेमपुर का अधीश देव-महीपति था । इस महाराज के वंशावतार का वर्णन:—क्षेमपुर में पूर्व में कई राजा हुए । उनमें एक भैरव-भूपति था । यह जिन धर्म रूपी समुद्रके लिये चन्द्रमा था । उसके छोटे भाई भैरव, अम्ब-क्षितीश तथा साल्व-मल्ल थे । इनमेंसे साल्वमल्ल यद्यपि सबसे छोटा था, तथापि सबसे महान् था । उसको सोम-वंश तथा काश्यप-गोत्र का बताते हुए उसकी प्रशंसा की गयी है । उसके बाद, उसकी बहिनका पुत्र देवराय नगर और राज्य का वैसा ही बराबरीका रक्षक रहा । उसकी बहिनका पुत्र साल्व-मल्ल रहा, जिसका छोटा

भाई भैरवेन्द्र था । राजा सार्व-मल्लकी प्रशंसा । राजा भैरवकी मेरु-पर्वतसे उपमा देते हुए उसकी प्रशंसा ।

जिस समय देवराय, इस तरह अनेकोंकी भक्तिके साथ तुलु, कोकण, हैवे तथा दूसरे देशोंपर राज्य कर रहा था: --

उस नगरमें, राजा देवसे रक्षित, महाप्रसिद्ध, राजश्रेष्ठी अम्ब्वण-श्रेष्ठी रहता था । उसकी पत्नी (प्रशंसा सहित) देवरसि थी । उनकी वंश-परम्पराका वर्णन:-- राजाधिराज, बनवसि-पुरका मुख्य अधीश, कोंकण और हैव राज्यका मुख्य अधीश, चन्दाउर कदम्ब-कुल-तिलक कामिदेव-महाराज थे । उसके दण्डाधिनाथ कामेय-दण्णायकका पुत्र रामण-हेगडे और रामकके ८ पुत्र उत्पन्न हुए थे, जिनमें सबसे प्रसिद्ध **योजन-श्रेष्ठी** था, जिसका दो स्त्रियें तङ्गण और रामक थीं । पहिलीके रामण-श्रेष्ठी तथा दूसरीके कल्प-सेट्टि हुआ । इन अपनी प्रिय दो भार्याओं सहित योजन समृद्ध हुआ । इस योजन-श्रेष्ठों जैनपुरमें अनन्तनाथ चैत्यालय बनवाकर तथा इसके अतिरिक्त और भी अगणित पुण्य प्राप्त करके अपना राज-श्रेष्ठिका पद अपने पुत्रोंको सौंपकर स्वर्गलोकको चला गया । दूसरी तरफ, रामण-सेट्टिका पुत्र तम्भन था, जिसका पुत्र नागप हुआ । उसके दो पत्नियाँ थीं, सातम और नागम । सातमसे हट्टिगमें तोटियण-सेट्टि नामका पुत्र उत्पन्न हुआ । इसके बाद नागमका अवतार (उत्पत्ति) कैसे हुआ, यह बताया है । नागम और नागण-सेट्टिसे दो लड़के उत्पन्न हुए थे, अम्ब्वण-श्रेष्ठिके मल्लम और देवरसि नामकी दो पत्नियाँ थी । इसके बाद देवरसिकी उत्पत्तिका वर्णन है ।

जब ये दोनों अम्ब्वण-श्रेष्ठी और देवरसि पूर्ण शान्ति और सुखसे रह रहे थे, एक दिन वे नेमि-जिन चैत्यालयमें आये, और नेमि-तीर्थेश्वरकी (उद्घृत) स्तुतिको दुहराते हुए मुनिगणका सम्मान किया । इसके बाद, अभिनव-समन्तभद्र-मुनिसे धर्म सुनकर और इसे हृदयमें धारण कर गुरुको सूचित किया कि वे अपने पितामह योजन-श्रेष्ठिके द्वारा बनवाये गये नेमीश्वर-चैत्यालयके सामने मानस्तम्भ बनवायेंगे । इसके बाद घर जाकर, अपने भाई कोरण-सेट्टि और मल्लि-सेट्टि और

अन्य रिश्तेदारोंसे सम्मति लेकर इन्होंने इस पुण्य-कार्यको करनेका इरादा देव-भूपालसे प्रकट किया। और महाराजकी सम्मति, चतुर्विध संघकी सम्मतिपूर्वक, एक शुभ दिन उन्होंने अपना इरादा पूरा किया तथा घण्टेकी घातु (**Bell-metal**) का स्तम्भ बनवा दिया। इसी अन्तरालमें, देवरसिके पद्मरसि और देवरसि नामकी युगल पुत्री उत्पन्न हुईं। उनकी ही ऊँचाई जितनी ऊँचाईका सुवर्ण-कलश चैत्यालयके सामने उस स्तम्भपर चढ़वाया।

इसके बाद मानस्तम्भका वर्णन है।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 55]

६७५

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[सं० १६२० = १५६३ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

६७६

सिरोहो—संस्कृत।

[सं० १६३४ = १५७७ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, P. 316,
No XLIII, a]

६७७

हेगोरे;—कन्नड़।

[शक १५०० = १५७८ ई०]

[हेगोरेमें, बस्ति के एक पाषाणपर]

श्री शुभमस्तु स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुषकृत १५००
मेले प्रमाथि-संवत्सरद माघ-सुद १ लू श्रीमन्महामण्डलेश्वर ओपति-

राजगळ मग राजय्य-देव-महा-अरसुगळ कुमार वल्लभराज-देव-महा-अरसुगळ तावु आळुतिह मगरनाड होयिसळ-राज्यके सलुव बूडिहाळ-सीमे योळगण बस्तिय जिन-देवरिगे कोट्ट भू-दानद हेगोरेय बस्तिय मान्यद बीण्णोद्धारद क्रमवेन्तेन्दरे गुत्तिय हरदर सूरय्यन मग चिन्नवरद गोयिन्द-सेट्टिय हेगोरेय बस्तिय देवर-मान्यव पालिसबेकेन्दु बिन्नह माडिकोळलागि आतन बिन्न-हव पालिसलू तमगू अनेक-धर्माभिवृद्धियागबेकेन्दु हेगोरेय गौडनकेरेय केळगण (दानकी विगत) अन्नरदल्लू हदिनैदु-कोळ्ळा देवदायमान्यद गद्देयनू यी-आरभ्य-वागि प्रतिवर्ष प्रति-फलदल्लू नीर-सरदियलि कोट्टु बहेऊ एन्दु श्रीपति-राजगळ वल्लभराज-देव-महा-अरसुगळ पालिस्त बस्तिय देवदाय भू-दान बीण्णोद्धारवह ... शासन (वे ही अन्तिम वाक्य) श्री हेगोरेय स्थळदलु काडारम्भद होल ख...४

[शुभमस्तु । स्वस्ति । (उक्तमितिको), महामण्डलेश्वर श्रीपति राजके पुत्र राजय्य-देव-महा-अरसुके पुत्र वल्लभराज-देव-यह अरसुने अपने द्वारा शासित मगर-नाडमें होयिसल राज्यके बूडिहाळ-सीमेमें बस्तिके जिन देवके लिये निम्न शासन, हेगोरे बस्तिके 'मान्य' की पुनः स्थापनाके लिये प्रदान किया; गुत्ति हरदरे-सूर्यके पुत्र चिन्नवर-गोविन्द-सेट्टिने इस बातका प्रार्थनापत्र देकर कि हेगोरे बस्तिके देवकी 'मान्य' चालू होनी चाहिये,—इस प्रार्थनापत्रको मान्य करनेके लिये, तथा अपनी समृद्धिके लिये, हम (उक्त) भूमियाँ जो कि कुल मिलाकर धान्यक्षेत्रके १५ कोळग (एक नाप-विशेष) होते हैं, फसलके समय जलका वार्षिक क्रम भी आजसे ही चालू करते हैं । वल्लभराज-देव-महा-अरसूके द्वारा प्रदत्त, बस्तिके देवदायका प्रस्थापक भूमिके दानका शासन ऐसा है । हेगोरे-स्थलमें (उक्त) शुष्क भूमिका दान भी हुआ ।]

[EC, XII, Chik-Nayakan halli tl., No 22.]

६७८

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १६४० = १६८३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

६७९

तारंगा—संस्कृत और गुजराती ।

[सं० १६४२ = १५८५ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[J. Kriste, EI, II, no १, No 29 (P. 33-34), t. et. a.]

६८०

कारकल;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक सं० १५०८ = १६८६ ई०]

श्री वीतरागाय नमः ॥

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

बीयात् प्रैलोक्यनाथस्य शासनं बिनशासनम् ॥१॥

आचन्द्रार्क स्थिरं भूयादायुःश्रीजयसम्पदा ।

भैरवेन्द्रमहीकान्तः श्रीबिनेन्द्रप्रसादतः ॥२॥

अविघ्नमस्तु ॥ भद्रमस्तु ॥

तीर्थोच्चैः सुखमह्यं च कुरुताञ्छ्रीपाश्वनाथो बलं;

कीर्तिं नेमि-जिनः सुवीर-बिनपश्चायुःश्रियं दोर्बलिः ।

कल्याणान्धर-मल्लि-सुव्रत बिना [:] पोस्तुक्च पद्मावतो;

चाचन्द्रार्कमभीष्टदास्तु सुचिरं श्री-भैरव-क्षमातः ॥३॥

श्रीमद्देशोगणे ख्याते पनसोगावल्लोश्वरः ।

योऽभूल्ललितकीर्त्याख्यस्तन्मुनीन्द्रोपदेशतः ॥४॥

श्रीमत्सोमकुलामृताम्बुधिबिधुः श्रीजैनदत्तान्वयः
 श्रीमद्भैरवराज दुङ्गभगिनि श्रीगुम्मताम्बासुतः ।
 श्रीमद्भोगिसुरेन्द्रचक्रिमहिम श्रीभैरवेन्द्रप्रभुः
 श्रीलत्रयभद्रघामबिनपानिर्माय्य संसिद्धिभाक् ॥५॥
 श्रीमच्छालिशकाब्दके च गलिते नागाभ्रबाणेन्दुभि-
 श्राब्दे सद् व्यय नाग्नि चैत्र-सित-षष्ठ्यां सौम्यवारे वृषे ।
 लग्ने सन्मृगशीर्ष-भे चिरतरां श्रीभैरवेन्द्रेण ते
 श्रीरलत्रयभद्रघामबिनपा भान्तु प्रतिष्ठापिताः ॥६॥

जिनाय नमः ॥ स्वास्ति श्री [॥] शालिवाहन शक वर्ष १५०८ नेय
 व्यय संवत्सरद चैत्र शुद्ध षष्ठियु बुधवार मृगशीर्ष-नक्षत्रवु वृषभलग्नदल्लु
 कलियुगाभिनव-भरतेश्वरचक्रवर्ती गुप्ति-हम्मिन्वरगण्ड [प] ति-पोम्बुच्च-पुर-
 वराधीश्वर मरे-होक्करकाव मारान्तवैरि मन्नेय-गाय-मस्तकशूल षड्दर्शन स्थापना
 चार्थ्य सोमवंशशिखामणि कारयपगोत्रपवित्रीकरणदत्त 'पोम्बुच्च-पद्मावतो-
 लब्धवरप्रसाद सम्यक्स्वायतेकगुणगणालंकृत जिन गन्धोदक-पवित्रीकृतोत्तमाङ्ग अरु-
 वत्तारु-मण्डलीकर-गण्ड होम्नमाम्बिका-प्रियकुमार-भैरवस-वोडेयर-अळियरे-
 निप श्रीमज्जिनदत्तराय-वंश-सुवाम्बुधिपूर्णचन्द्र श्रीमद्भोर-नरसिंह-वक्कनरेन्द्र
 श्रीगुम्मताम्बा-कुलदीपक-प्रियसूनु अरिराय-गण्डरडावणि श्रीमदिम्मडि-भैरवस-
 वोडेयर तमगे अभ्युदय-निःश्रेयस-लक्ष्मी-सुख-सम्प्राप्ति-निमित्त्वाणि कारकळद
 पाण्ड्यनगरियल्लि श्री-गुम्मटेश्वरन संनिधानदल्लि कैलामगिरि-सन्निभ-
 चिकवेट्टदल्लु ॥

श्रीकान्ताकुलवेशम किं वरयशः-कान्ताप्रमोदागरं
 भूकान्तारतिसद्य सज्जयवधू-क्रीडास्पदं किं पुनः ।
 स्यात्कारोज्ज्वल-सज्जयद्वयमयी श्रीभास्तीरङ्गभूः
 स्वः श्री-मुक्ति-रमा-स्वयम्बरगृहं श्रीजैनगेहं वृषे ॥७॥

इत्तप सकलजनानन्दमन्दिरवाद सर्वतोभद्र-चतुर्मुख-रत्नत्रयरूप-त्रिभुवन-
 ... **क-जिनचैत्यालयघटु** रोद्द-गोव निकलङ्क-मल्ल बन्तरभाव परनारिसहोदर
 नुडिदु-भाशेगे-तपुव-रायर-गण्ड सुवर्णकलशस्थापनाचार्यरादकारण धर्म-साम्राज्य
 नायकरागि निजपुण्यानुबन्धि-पुण्यद प्रेरणेयिन्द तमगु तज्जिनभवन प्रेत्तकराद सकल-
 शीलगुणसम्पन्नराह चतुस्संधक्कू साक्षात्स्वर्म्मोक्षलक्ष्मीस्वयम्बरशालोपमन् आगि
 निर्म्मपिसि अनन्तसुखद सम्प्राप्तिनिमित्तागि । आ नाल्कु-दिक्किनल्लू **अर-मल्लि**
मुनिसुवत-तीर्थकर-प्रतिमेगळनू स्थापिसि । आ पश्चिम-दिग्भागदल्लि **चतु-**
र्विशति-तीर्थकर-प्रतिमेगळनू हदिनाल्कु वोक्कलु स्थानीकर नडसुव अभिषेक-
 पूजे सुंतादवक्कु (१) मीले नडव अङ्गरङ्गवैभवादिकंगळिगू आ **भैररस-बोडेयरु**
 निज-सन्तोपदि [द] राज्यज्जनाळुवाग आ **त्रिभुवन-तिलक-जिनचैत्यालय-**
दल्लि आ प्रतिष्ठा-समयद पुण्यकालदल्लि तमगे पुण्यार्थवागि मूड **मुकडपिन-**
होळे । तेङ्ग **येम्णेय-होळे** । पडुव **पोळळकळियद-होळे** । वडग **बलिमेय-**
होळे । ई नाल्कु-होळेगळनु मीरयागुळ्ळ । निदि (धि) निक्षेप । अक्षिणि आगा-

२५. म्य । जल पाषाण । सिद्ध साध्यगळेम्ब (१) अष्ट-भोगंगळिगोळगाद
 तेळार-ग्रामवणू । अदरोळगे अक्कि मूडे ७०० नू । **रंजाळ-नल्लूर**
 सिद्धायदल्लु ग २३८-

२६. नू धारापूर्वकवागि आचन्द्राक्कस्थापियप्पन्ते देवर्म्मो मा [ड] -कोट्ट
 धर्म्मक्षेत्रध (द) विवर । आ क्षेत्रद चतुःसीमेयोळगल्ल हरवरि (री)-
 सुम्तादर-

२७. लिल सल्लुव गेणि-सिद्धाय बड्डिय-भट्ट हुराळिय-अक्कि जोळक्के-क्कत्तिद-
 अक्कि होम्न-बड्डियक्कि सह सल्लुव अक्कि हाने ५० र लेक्कद मूडे
 ७०० कर्क नल्लु-

२८. **र-रंजाळदल्लि** वोक्कलु-ताक्क-णेयागि विट्ट सिद्धाय ग २३८ वरहक्कू
 सहवागि नडव धर्म्म । पडुवण-वागिलल्लि वोक्कलु २ क्के मूर-होत्ति-

२६. न देवपूजगे चरु हाने ६ मीलु-चरु हाने ३ अक्षते-अक्कि हाने १ तोये पायस तुप्प कलसुमीलोगर ताळिल मुत्ताद पंच-भक्षकके अक्कि हाने २
३०. कुडुते २ अन्तु अक्कि हाने १५ कुडुते २ र लोकदल्लि वर्ष । इक्के अक्कि मूडे ११० [१] उदयद पञ्चामृतदाभिषेककके ग ७ म २ पञ्चखजायकके ग ७३ सिद्ध-
३१. चक्रद आराधनगे ग १२ प (फ) ल-वस्तुविगे ग १ म २ बैगिन हाल-घारेगे ग ३ म ४ गन्ध-धूपकके ग ३ म ३ येम्ने हाड १२ कके ग ८ म ४ अष्टाहिक ३ कके ग ३
३२. वर्षाभिषेक इक्के ग ६ अन्तु ग ४७ ॥ @ ॥ बडगण-बागिल वोक्कलु २ कके मूरु होत्तिन देवपूजगे दिन इक्के चारुविगे अक्कि हाने (१) ६ मीलु [च] रुविगे
३३. अक्कि हाने ३ अक्षतगे अक्कि हाने १ तोये पायस तुप्प कलसुमी लोगर ताळिल मुत्ताद पञ्चभक्षकके अक्कि हाने २ कुडुते २ अन्तु अक्कि
३४. दिन इक्के हाने १५ कुडुते २ र लेक्कदल्लि वर्ष (१) इक्के मूडे ११० [१] उदयद बैगिन हालघारेगे ग १३ म ३ पञ्चखजायकके ग ७३ प (फ) ल-वस्तु-
३५. विगे ग १ म २ गन्धधूपकके म ८ येम्ने हाड १२ कके ग ८ म ४ अष्टा-हिक ३ कके ग ३ वर्षाभिषेककके ग ६ अन्तु ग २८ म ७ ॥ ई लेक्कदल्लि मूड-बागिल वोक्क-
३६. लु २ कके अक्कि मूडे ११० ग २८ म ७ ॥ आ-तेङ्क-बागिल वोक्कलु २ कके अक्की (विक) मूडे ११० ग [२] ८ म ७ ॥ अन्तु बागिलु ४ कके वोक्कलु ८ कके वर्ष (१) इक्के अक्कि मूडे ४४० ग १३१
३७. म १ ॥ @ ॥ पडुव-बागिल येड-बलद गुण्ड २ कके वोक्कलु इक्के चरु-विगे अक्कि हाने ५ र लेक्कदल्लि मूडे ३६ अक्षतगे अक्कि मूडे ४ उभयं मूडे ४० हाल-

३८. घारे ४ कके ग ३३ म १ फलवस्तुविगे ग १ म २ गन्ध-धूपके म ३ येम्ने
हाड ५ कके ग ३३ अष्टाहिक ३ कके म ५३ वर्षाभिषेकके ग १ अन्तु
ग १० म १३ [१] ई लेककदल्लि
३९. वडग (१) मूड तेङ्कण गुंदङ्गळिगू । आ पडुवण तोर्थकर ब्रह्म पद्मावति
गळिगू सह वोक्कलु ५ कके अक्कि मूडे २०० ग ५० म ७३ = उभय
वोक्कलु
४०. ६ कके अक्कि मूडे २४० ग ६० म ६ [१] ब्रह्म-पद्मावतीय ऐचरविगे
अक्कि मूडे ४ = अन्त वोक्कलु १४ कके अक्कि मूडे ६८४ ग
१६४ ॥ @ ॥ दोळु-नागसर-कोम्बिनवर जन
४१. ६ कके ग ३६ अडिपिन मूलितियर जन २ कके अक्कि मूडे १६ बस्तिय-
ल्लिद तपस्विगळ् तण्ड ४ कके शीतनिवारणय-हळ्ळुड ८ कके कैयकिय
तम्बुय सुपुव ह-
४२. च्छड इक्क सह हळ्ळुड ६ कके ग ५ म २ मण्डेय तोळवे येम्णेय हाड
२ कके ग २ अडुगब्बु सीगेगे सह म ८ अन्तु ग ८ = अन्तु अक्कि मूडे
७०० ग २३८ [१]
४३. हिरिय-अरमनेय नालकु-चउ (वु) कद वोळगण बस्तिय चन्द्रनाथ
स्वामिय अमृतपडिगे आरुरल्लण-बजकळदल्लि बिळियर-
४४. सर गुत्तु बिम्पन्ननिन्द अक्कि मूडे २० बागिलरसर गुत्तु माण्डर्पा [डि]
यिन्द अक्कि मूडे १० उभय मूडे ३० नल्लुर
४५. त्रिकिरुपाण्डिय-बाळिनल्लि ग ७३ बत्तिकोटिय-बाळिनल्लि ग ३ पं(आ)-
ळदल्लि कम्बुवबाळिनल्लि ग ७३ अन्तु ग १८ । गोवर्धनगिरिय-
बस्तिय

१. यह यहाँ और आगे भी जहाँ कहीं जाये, विराम का चिह्न समझना चाहिये ।

४६. पार्वनाथ(य)स्वामिय अमृतपडिगे मल्लिल्लद-कम्बुल्लदल्लि अक्किय मूडे
३० आ मीलण दडि-मरुगळल्लि मूडे ४ [नल्लु] र नं० [बि] बेट्टि-
नारणनल्लि

४७. अ [कि] मूडे ६ अं [तु] मू [डे] ४० [के] लवसेय सेटि-बेट्टिन
हिटिल्लि [फ] लदल्लि [ग] ८ म २३ [॥] [इ] दु पञ्च-संसार-
कालोरग-दष्ट-गाढ़-मूर्च्छित्त-नाना-संसारि-बीव-प्रबोधनक-

४८. र-पञ्च-महा-कल्याण-[बी] जोपम [वाद] जिनमन्त्र-पूतात्मन । श्री
वीतराग । येम्ब पञ्चाक्षरियनु पञ्चविंशति-मल-विदूर-परम-सम्यग्दृष्टिगळाद-
कारण आ भैरव-

४९. स-बोडेयरे स्व-हस्तदिंद वो [प्प कोट्टु] ददक्के इन्द्रवज्रा- [वृत्त] दिन्द
[चतुर्विंशत्य] - क्षर-लिखित-पञ्चाक्षररूप-सर्वतोभद्र-चित्र-प्रबन्धदि [द]
रचिसिद चि [त्] र-

५०. श्लोक ॥ श्री-वीत-वीरागत-वीग-वीतं

श्री-राग-वीतं गतराग रागम् । •

श्रीगं ततं रागतरांगरा [ङ्ग]

श्री वीतरागं तत-वी [र]-गं तम् ॥ @ ॥ ८ ॥

[मंगलाचरणके बाद इस लेखमें (श्लो० २ और ३) तीर्थंकरों, दोर्बाल
(बाहुबलि) और पोम्बुच्चकी पद्मावती देवीके आशीर्वादका दाता भैरव
या भैरवेन्द्र, जिनको भैरवस-बोडेय तथा इम्मडि भैरवस-बोडेय
कर्णाटक गद्यमें कहा गया है, के लिये आह्वान किया गया है । इस
सरदारको हम एकदम भैरव-द्वितीय कह सकते हैं । इन्हींके मामाको इसी
लेखमें (श्लो० ५) भैरव प्रथम कह सकते हैं, जिनका नाम भैरवराज दिया
है । आगे लेखसे पता चलता है कि ललितकीर्ति मुनीन्द्र, जो पनसोगे शाखा
(गच्छ) देशीगणके थे, उनके उपदेशसे भैरव द्वि० ने 'रत्नत्रय' (श्लो० ५
तथा ७ वें श्लोक के बादके कन्नड़गद्यमें) मन्दिर, जिससे स्पष्टतः चतुर्मुख
वस्तु का मतलब है, बनवाया था । श्लोक ६ तथा इसके बादके कन्नड़ गद्यमें

मन्दिरकी नींव रखने और प्रतिष्ठाका दिन दिया है। वह दिन शालि- (या शालिवाहन-) शक वर्ष १५०८, व्यय-संवत्सर, चैत्र शुक्ला षष्ठी, बुधवार था, उस समय **नक्षत्र** मृगशीर्ष या मृगशिरा तथा लग्न वृष या वृषभ था। श्लोक ६ के बाद के तथा ७ के बादके कन्नड़ गद्यमें भैरव द्वि० की विरुदावलि दी हुई है तथा मन्दिरका नाम **त्रिभुवनतिलक-जिन-चैत्यालय** (७ वें श्लोक के बादके गद्यमें) दिया है, जिसको 'सर्वतोभद्र' और 'चतुर्मुख' कहा गया है। यह **कारकल्लमें पाण्ड्यनगरी**में श्रीगुम्मटेश्वरके सन्निधानवर्ती **चिक्कबेट्ट** टीले-पर बनाया गया था। पाण्ड्यनगरी, वर्तमान हिरियङ्गडिकी तरह, एक दूसरी कारकलकी पार्श्ववर्ती उपनगरी थी जिसमें स्वयं चिक्कबेट्ट टीला, जिसपर चतुर्मुख बस्ती बनी हुई है, स्तम्भीय गोम्मटेश्वरकी मूर्ति और इन दोनोंके बीचमें से जाने वाली वह सड़की गली है जिसमें कुछ जैन गृहस्थोंके गृह तथा मठ अवस्थित हैं। ख्यातनामा गुम्मटेश्वरकी मूर्तिकी प्रतिष्ठा करानेवाले पाण्ड्यराय या वीरपाण्ड्यके नामसे यह नगरी प्रसिद्ध थी। आगे बताया गया है कि भैरव द्वि० ने मन्दिरके चारों ओर मुख्य दरवाजोंकी तरफ **अरर**, **मल्लि** और **मुनि-सुव्रत** इन तीन तीर्थङ्करोंकी मूर्तियोंको विराजमान करवाया, तथा इन्हींके साथ बीचमें २४ चौबीसों तीर्थङ्करोंकी मूर्तियोंकी यक्ष-यक्षिणीके साथ स्थापना की।

आगे पंक्ति २२ से ४२ में **तेळार** ग्रामके दानका उल्लेख है, जिससे लगानके रूपमें ७०० 'मूडे' धान्य (चावल) की प्राप्ति थी। इसके अतिरिक्त- **रंजाळ** और **तल्लूर** ग्रामोंके 'सिद्धाय' (अर्थात् चालू लगान) में से २३८ 'गद्याण' (या 'वटह', पं० २८) भी मिलते थे। इस आमदनीसे मन्दिरकी पूजाका प्रबन्ध होता। निरः पूजन करनेवाले १४ स्थानिकों (पुजारियों) के कुटुम्ब इसी कामके लिये नियत थे। प्रत्येक दरवाजेकी वेदी पर कितना खर्च होता था, यह सिलसिलेवार इस शिलालेखमें दिया हुआ है। उससे पता चलता है कि सबसे अधिक खर्च पश्चिम दरवाजेकी वेदी पर होता था, क्योंकि वही मुख्य गिनी जाती थी। दूसरा इस दरवाजेकी प्रधानताका प्रमाण यह है कि उसी दरवाजेकी वेदी पर २४ तीर्थङ्कर विराजमान हैं। इस प्रधानताकी वजह ही

से उस पर ज्यादा खर्च होना भी स्वाभाविक था। माली और गायकोंके (गन्धर्वोंके) लिये भी खर्च इसी आमदनीसे बँधा हुआ था। मन्दिरमें बसने-वाले ब्रह्मचारी इत्यादिको वर्ष भरमें ८ कम्बल शीतनिवारणके लिये मिलते थे और एक कम्बल दैनिक मात-भिक्षाके संग्रहके लिये। उन्हें आवश्यक चीजें, जैसे, तेल, साबुन- ईन्धन भी मन्दिरसे ही मिलता था। पंक्ति ४३-४७में दो और दानोंका उल्लेख है जो कि उसी भैरव द्वि० के ही किये गये मालूम देते हैं। (१) पहला दान 'हिरियअरमने' (अर्थात् बड़ा महल) के प्रांगणमें स्थित 'बस्ति' के **चन्द्रनाथ** के नित्य पूजनके लिये और (२) **गोवर्धनगिरि** के टीले पर स्थित 'बस्ति' के **पार्श्वनाथ** के पूजनके लिये। अन्तिम ८ वें श्लोकमें पञ्चाक्षरी 'श्रीवीतराग' पर चित्रबन्ध शब्दालंकार है। इस लेखके परिचयमें श्री एच. कृष्णशास्त्री, बी. ए. ने अन्तिम चार पंक्तियाँ (८ वें श्लोकके बाद) मिटी हुई बताई हैं।

दाता और भैरव द्वितीय सोमकुल, काश्यपगोत्र तथा **जिनदत्त** या **जिन-दत्ताराय**के वंशका था। वह **गुम्मतम्बा** और वीरनरसिंह-वंगनरेन्द्रका पुत्र था। गुम्मतम्बा **भैरव प्रथम**की बहिन थी। भैरव प्र० **होशमास्त्रिका** का पुत्र था। भैरव द्वितीयके विरुद्ध इसी लेखसे जानने चाहिये।]

[EI, VII, No. 10]

६८१

मद्रास;—कन्नड़।

काल—[शक सं० १५१३ (१५११ ई०)]

[साठथ कैनराके Sub-Court में]

स्वर संवत्सरमें, शक सम्वत् १५१३ (१५११ ई०) में एक जैन-मन्दिरकी पूजाके प्रबन्धके लिए **किन्नग भूपाल** नामके युवराजके द्वारा कन्नड़ प्रान्तमें भूमिदान।

[ASSI, II, p. 14, No. 91, a.]

६८२-६८३

शत्रुञ्जय;—प्राकृत ।

[सं० १६२० = १५१३ ई०]

(श्वेताम्बर लेख ।)

६८४

अनहिलवाड-पाटन;—प्राकृत ।

[सं० १६२१-१६२२ = १५१४-१५१५ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

, G. Buhler, EI, I, No. XXXVII,
(p. 319-324), t. et. a.]

६८५

शत्रुञ्जय;—प्राकृत ।

[सं० १६२२ = १५१५ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

६८६

अनहिलवाड-पाटन;—संस्कृत

[सं० १६२३ = १५१५ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[J. Burgess and H. Consens, Art. of Northern
Gujarat (ASI. XXXII) p. 44-45, tr.]

६८७

सिरोही;—संस्कृत ।

[सं० १६२३ = १२६६ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, p. 316,
No. XLIII, a.]

६८८

कोप्प;— संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १२२१=१५११ ई०]

[कोप्प (कोप्प परगनामें) पश्चिमकी तरफ खाली पड़ो हुई जमीनमें
एक पाषाणपर]

श्री-वीतरागाय नमः ।

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

नमस्तुङ्ग इत्यादि ॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १५२१ सन्द वर्तमान-
विळम्बि-संवत्सरद् चैत्र ब ७ चन्द्रवारदलु श्रीमतु करिदल-बळिय
मयिल-नायकर मदवाळगे तळार-बळिय दुग्गमन मग पांड्य-नायक अवर
तम्म देरेनायकर कोप्पदलि पलित-साधन चैत्यालयवतु कट्टिसि प्रतिष्ठेय
माडिसि अमृतपडिगे बिट्ट स्वास्ति-बिबर (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा है) भयिर-
रस-वोडेयर पारिश्वनाथ-देवरिगे आ-कोप्प-आयदलि धारेनेरद क्षेत्रभूमिय
बिबर (यहाँ विशेष चर्चा आती है) लिंगवन्तनाटव अल्लुदिदरे श्रीपर्वतदलि
लिङ्ग बज्जु पापके होह विभूति-रुद्राक्षिगे होरगु नामचारि

आगि आदव ई-बर्मके अळुपिदरे तिरुपति-श्रीरङ्ग-विष्णु-कञ्चिलि स्वामि-सेवे अळिद पापके होइर इष्टर बळिक अळुपिदरे एळनेनरकक्के इळिवर इहु तप्पदु (शेषमें साक्षियोंके नाम हैं) पाण्ड्यप्प-वोडेरे कोप्पद-बस्तिगे धारेनेरडु मुदुकदानीळु गद्दे भूमि २ क्के गडि ख १० उलिगददेन्दु नरसीपुरद महाजनङ्गळ कय्य कयक्के कोण्ड कागलु-गोडलु कले ख १८ कार १२ उम ख ३० ... ४० भट्ट पारिश्वनाथ-देवर वोळ-भागस्तरादवरिगे ... (हमेशाके अन्तिम श्लोक)

[(उक्त मितिको) करिदलके मयिल-नायककी पत्नी तळार-दुग्गम्मके पुत्र पाण्ड्य-नायक और उसके छोटे भाई देरे-नायकने कोप्पमें साधन-चैत्यालय बनवा-कर और उसमें प्रतिमा विराजमान करके, पूजनके लिये निम्नलिखित सम्पत्ति दानमें दी । (जो जमीन दी उसकी यहाँ विस्तृत चर्चा है) ।

और भयिररस-वोडेयरने पारिश्वनाथ-देवके लिए कोप्पकी लगानमेंसे निम्न-लिखित जमीन दानमें दी । (जहाँ जमीनकी कीमत दी हुई है) ।

लिंगवन्त और नामधारियोंके विरुद्ध भिन्न शाप । साक्षी ।

पाण्ड्यप्प-वोडेरेने मुदकदानिमें कोप्पकी बस्तिके लिये (उक्त) और भी दान दिया तथा नरसीपुरके ब्राह्मणोंसे खरीदकर कुछ और जमीन भी दानमें दी ।]

[EC, VII, koppa tl. No 50]

६८६

वेणूरु:—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक सं० १५२५ = १६०४ ई०]

[गोमटेश-मूर्तिस्तम्भके ठीक दाहिनी तरफ]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शास [नं] जिनशासनम् ॥ [१]

शकवर्षेष्वतीते[षु बि]षयाचिह्नैरुपु ।

व [तमा] ने शोभकृति वत्सरे फाल्गुना [ख्यके ॥] [२॥]

मासेऽथ शुक्लपक्षेद्वदशम्यां गु [रुपु] ष्यके ।

सुलग्ने मिथुने देशी [गणां ३] र दिनेशितुः [॥] [३॥]

बेलगुळाख्यपुरीपट्टची [२] विधिनिशापतेः ।

चारुकीर्त्ति] मु [ने] दिव्यवाक्यादेनूरपत्तने ॥ [४॥]

श्री रायकुवरस्थाय जामाता त [तस्यो] दरी- ।

पाण्ड्यकाख्यमहादेव्याः [सु] पुत्रः पाण्ड्यभूपतेः ॥ [५॥]

अ [नु] ज [स्ति] मरा [जा]ख्यश्रामुंडान्वय[भूष]कः ।

अस्था [प] यत्प्रति [ष्टाप्य] भुजबल्याख्यकं जिनं ॥ ६ ॥

शुभमस्तु ॥

[इस लेखमें बताया गया है कि चासुण्ड (प्रसिद्ध चासुण्डराज जिन्होंने श्रवण-बेलगोळामें गोम्मटेशकी मूर्ति स्थापित की है) के वंशमें होनेवाले तिम-राजने एनूर (वर्त्तमान वेणूर) में भुजबली (बाहुबली) जिनकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करके स्थापना की । यह तिमराज पाण्ड्य नरेशका छोटा भाई, पाण्ड्यक रानीका पुत्र, तथा रायकुवरका जामाता था । उसने इस मूर्तिकी स्थापना बेलगुळ (वर्त्तमान श्रवण-बेलगोला) के भट्टारक, जो देशागणके थे, की आज्ञासे की थी । मूर्तिको स्थापना दिवस शक वर्ष शोभकृत् १५२५ के व्यतीत हो जानेपर फाल्गुन शुक्ला १०, पुष्यनक्षत्र, मिथुन लग्न था ।]

[EC, VII, No 14, F.]

६९०

वेणूर;— कलह ।

[शक सं० १५२६ = १६०४ ई०]

[गोम्मटेश-मूर्तिस्तम्भके ठीक बायीं तरफ]

१. श्री शकव [ष] मं गणि [से स]।सिरदि मि-
२. गुवन्दु लोकमु [ल] शतदिप्पता [२] नेय
३. शोभकृदन्दद फाल्गुनाखयमासाश्रि-
४. [त] शुक्लपक्ष दशमी गुरुपुण्यद यु-
५. [गम] ल [गन] दोळ् देशिगणा [ग्र] गण्यगुरु-
६. पंडितदे [व] न दिव्यवाक्य [दिं] ॥ [१] राय-
७. कुमार [नो] पुत्राळियं मयि पांड्य-
८. कदेवि [य पुत्रनत्र] सोमायतवं-
९. श [धु] र्यनुरुसाहसि पांड्यनृ-
१०. पानुबनुद्धदानराधेयनुदा-
११. २ [पुंजळि] के पट्टवनाळ्व नृपाग्रणि
१२. तिमभूभुजं श्रीयुतनं प्रति [ण्ड]-
१३. [सि] द [न]।दिबिना [म] ज [नं बि] न गुं [म] टेशनं ॥ [२॥]

[पहले शिलालेखकी तरह, इस लेखमें भी बताया गया है कि मूर्तिकी स्थापना तिमम्भने की थी । इस लेखमें पूर्व सम्बन्धोंके साथ-साथ तिमम्भको सोम-वंशका धुरीण तथा पुंजळिकेका शासक बताया गया है । समय इस लेखमें १५२६ (शब्दोंमें) शक वर्ष है, जबकि पूर्व लेख १५२५ अतीत वर्षका है । 'गुम्मटेश' बाहुबलीका ही नामान्तर है ।]

[EI, VII. No 14. F.]

६९१

मेलिगे;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १२३० = १६०८ ई०]

[मेलिगेमें, रङ्ग-मण्डपके दक्षिण-पश्चिमकी ओर आदिनाथ बस्तिमें
एक पाषाणपर]

श्रीमदनन्तनाथाय नमः

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं चिनशासनम् ॥

श्रीमद्-गीर्वाण-चक्रट्-फणिपति-मकुटोद्भासि-माणिक्यमाला-

रोचिः-प्रज्ञाळित-श्री-चरण-सरसिज-द्वन्द्व-बाभास्यमानः ।

मानस्तम्भाम्बुजाताकर-कलित-लसत्-रवातिकाद्युदघ-शोभोऽ

सौ स्वान्तु सन्तोषयन् श्री-समवसृति-पतिर्भा त्यनन्तो जनेशः ॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शाब्जिवाहन-शक-परुष १५३० नेय सौम्य-
संवत्सरद् माघ-शुद्ध १० आदिवारदलु ॥

वृ ॥ निद्राभूत-महीश-वारिज-तलेः कुर्वन् विकास-श्रियम्

सन्मार्गाम्बर-भासमान-विसरत्-तेजो-नविस्सर्वदा ।

वैर-क्षमापति-भूरि-कैरव-कुलं सङ्कोचयन् सन्ततम्

श्रीमद्-वेङ्कट-देव-राय-तरणिस्तीव्र समुज्जृम्भते ॥

इत्याद्यनेक-विरुदावलि-विराजमानराद् श्रीमद्-राजाधिराज राज-परमेश्वर श्री-
वीर-प्रताप श्रीमद्-वेङ्कटपति-देव-महारायक पेनगोण्डे सिंहासनारूढरागि प्रति-
पालिसुचिर्द समस्त-राज्यङ्गलोत्थतिशयमनुल्लवन्त्य-देशदोळु ॥

अन्तेसेववन्त्य-देशदोळु ।

अन्तार्तीत-प्रकार-शोभा-रुचियम् ।

तां तळेदारगमेम्ब पु- ।

रं तोर्पुदु भुवनगिरिय मूढण-देसेयोळ् ॥

आवोळलमाळ्वननेक-चातुरी-धुरन्धरनाद वेङ्कटाद्रि-भाहीपाल नातन गुण-
कथनमेन्तेने ॥

श्री-रामा-रमणं विवेक-शरणं साहित्य-रत्नाकरम् ।

नारी-चित्त-मनोभवं बुध-नुतं सङ्गीत-गङ्गाधरम् ।

वैरि-व्रात-मदेभ-पञ्च-वदनं ।

... श्री-पति-वेङ्कटाद्रि-महिपं तानोपिदं धात्रियोळ् ॥

मत्तमातन कीर्त्ति-प्रतापमेन्तेने ॥

उरगाधीश-महा-मणि-प्रमेयनिन्द्रोत्कुम्भि-कुम्भस्थळो- ।

त्कर-सिन्दूरमनीश-भाळ-नयनाग्नि-ज्वाळेयं तार-भू- ।

घर-गौरेयक-शृङ्गमं सुरनदी-रक्ताम्बुमं गेलुदुदु - ।

व्वरेयोळ् सन्नुत-वेङ्क-न्द्रन यशस्तेजः-प्रभा-मण्डलम् ॥

इन्तनेक-गुण-सम्पत्-समृद्धराद वेङ्कटाद्रि-नायकच्यनवर कुळकाळाश्रियागि
नडसि कोण्डु बह बोम्मण-हेगडे यातनेस्तप्पनेने

कलित-गुण-निधि ।

... शरनुदधि-सम-गाम्भोरम् ।

विळसद्-बोम्मण-हेगडे ।

पिळ्योळ् मुत्तूरनाळ्दनुत्तमनेसेदम् ॥

आतनाळ्व सीमेयोळगण निडुवल-नाडिगे सलुव कोदूरपालोळगे मेळिगे-
येम्ब त्तिर राज-श्रेष्ठियातन गुण-कथनमेन्तेने ॥

शच्या सह सुराधीशो यथा भाति तथानिशम् ।

वर्द्धमान-वर्णिग-मुख्यो नेमाम्बा-प्राण-कान्तया ॥

तत्सुतो बोम्मण-श्रेष्ठो निर्माप्य जिन-मन्दिरम् ।

तत्रानन्त-जिनाधीशं संस्थाप्य ख्यातिमाप्तवान् ॥

मत्तमा-भव्योत्तमन परम-गुरुविन प्रभावमेतेने ॥

श्रीमज्जैन-मताग्निवर्द्धन-सुधासूतिर्महीपालक- ।

व्रत-स्तुत्य-पदाम्बुकात-युगलो भव्यान्न-भानूपमः ।

दुर्वार-स्मर-गर्व-पर्वत-पवित्रांना-का(क)ला-कोविदो ।

विद्यानन्द-मुनीश्वरो विजयते वादीभ-पञ्चाननः ॥

तच्छिष्य-परम्परायात-बलात्कार-गणाग्रगण्य श्रीमद्-राय-राजगुरु वसुधराचार्यवर्य
महा-वाद-वादीश्वर राय-वादि-पित मह सकल-विद्या माद्यनेकान्वर्त्य-
विरुदावलि-विराजमान श्रीमद्-**देवेन्द्रकीर्ति-भट्टारक**-पदागभोज-दिवाकरायमान
श्रीमद्**भिनव-विशालकीर्ति भट्टारक**-देव-पद-पयोज-मत्त-मधुकरायमान प्रवीण-
बोम्मण-श्रेष्ठिय तनूजातनेन्तिर्दपनेने ॥

तस्यात्मजातो विख्यातस्सुकृती धार्मिकाग्रणीः ।

बोम्मणाख्यो वणिग्-मुख्योऽपालयत् तज्जिनालयम् ॥

नेमाम्वा नाम तत्पत्नी व्रत-शील-विभूषिता ।

तथोः पञ्च सुता जातास्मराकारा गुणोष्णव्याः ॥ .

भा-कुमारकरय्वरेन्तिदरेने ।

श्रीमज्जिन-पादाम्भोज-युगल-भ्रमरोपमः ।

भाति श्री **बोम्मण-श्रेष्ठी** सत्य-शौच-गुणान्वितः ॥

यस्यानन्त-बिनेश्वरो निज-कुल-स्वामी त्रिलोकी-पतिर्

विद्यानन्द-मुनीश्वरो निज-गुरुर्व्यादीभ-कण्ठीरवः ।

...त्तं परमं जिनेन्द्र-गदितं येनोरु तत्त्वं महान्

सोऽयं भाति मही-तले **पदुमण-श्रेष्ठो** गुणानां निधिः ॥

श्रीमान् कुवलयाहुलादी कलानामाश्रयो महान् ।

सद्भिः परिवृतो भाति **चन्दन-श्रेष्ठि-चन्द्र** माः ॥

सर्व-श्रेष्ठिषु स्तनत्वाद् दान-पूजादि-सद्-विधौ ।

राजते **माणिक-श्रेष्ठो** नाम्नान्वर्त्येन पुण्य-भाक् ॥

श्री जिनोदित सद्धर्म-कार्याणामादिमत्त्वतः ।

आदण्णाद्यो वणिग् भाति नामान्वर्थं दधत् सुधीः ॥

इन्तेसेव सकल-गुण-समन्वितराद मेलिगेय बोम्मण-सेट्टियर मक्कळु बोम्मण-सेट्टियर (औरोंके नाम दिये हैं) नाऊ तम्मोळेकस्तरागि नम्म अज बोम्मि-सेट्टियर कट्टिसिद बल्लियन्नु सिलामयवागि कट्टिसि ॥

श्री-विश्वावसु-वत्सरे शुभतरे ज्येष्ठे च मासे सिते

पक्षे सद्-दशमी-तिथौ सु-रुचिरे शुक्ले च वारे बरे ।

ऋक्षे चोत्तर-नाभिन् केसरि-महा-लग्ने प्रतिष्ठापितः

पद्म-श्रेष्ठि-वरेण शास्त्र-विधिना नन्ताख्य-तीर्थेश्वरः ॥

आ-श्रीमदनन्तनाथ स्वामिय नित्य-नैमित्तिक-पूजेगे । अमृतपडि । नन्दादीसि ।

अङ्ग-रङ्ग-वैभव-मुन्ताद समस्त-विनियोग-धर्म नडवदक्के बिट्ट भू-दान शासनद क्रम वेन्तेन्दरे (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा तथा वे ही अन्तिम श्लोक आते हैं) ।

मेलिगे बोम्मण-सेट्टर मक्कळु बोम्मण-सेट्टर पदुमण-सेट्टर सि (शि) लामय-वागि कट्टिसिद श्रीमदनन्तनाथ-स्वामि-चैत्यालयदर्लल नडव धर्मद विनियोगक्के कोट्टु सव्वेमान्यद स्वास्तेगे वरद शिला-शासन मुत्तूर हेगडेर वोप्पित बोम्मण-मल्लण वोप्य ।

[अनन्तनाथके लिये नमस्कार । जिन शासनकी प्रशंसा ।

अनन्त जिनेशकी स्तुति ।

(उक्त मितिको), बेङ्कट-देव रायको सूर्यकी उपमा । जिस समय बेङ्कटपति-देव-महाराय पेतुगोण्डेकी राजगद्दीपर बैठे थे, उनके सारे राज्यमें अवन्त्य-देश प्रसिद्ध था । उस देशमें, भुवनगिरिके पूर्वमें, आरग शहर था । उस नगरका शासक बेङ्कटाद्रि-महोपाल था । उसके गुणोंका वर्णन ।

बेङ्कटाद्रि-नायकव्यका आश्रित बोम्मण-हेगडे था । उसकी प्रशंसा । वह मुत्तूरका शासक था । इसके एक स्थान मेलिगेमें, जो निडुवळ-नाड्के कोट्टूर-पाळ्ळमें था, राज-श्रेष्ठी वर्द्धमान था । उसकी प्रशंसा । उसकी पत्नी नेमाम्बा थी । उसके पुत्र बोम्मण-श्रेष्ठीने एक जिनमन्दिर बनवाकर उसमें अनन्त जिनकी प्रतिष्ठा

की । उसके गुरु विशालकीर्ति भट्टारक थे । ये विद्यानन्द-मुनीश्वरके शिष्य, बला-त्कारगणके प्रधान, राय-राजगुरु देवेन्द्रकीर्ति-भट्टारकके शिष्य थे । बोम्मण-श्रेष्ठीके पुत्र बोम्मणने मन्दिरकी रक्षा की थी । उसके पाँच पुत्र थे ।]

[EC, VIII, Tirthahalli tl., No. 166]

६६२-६६६

शत्रुंजय—प्राकृत ।

[सं० १६७५ से सं० १६८३ = १६१६ ई० से १६२६ ई० तकके]

श्वेताम्बर लेख ।

७००

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १६८३ = १६२६ ई०]

श्वेताम्बर लेख १

[ASI, XVI, p. 360, No. 31, t. & tr.]

७०१

शत्रुंजय;—प्राकृत ।

[सं० १ [६]८४ = १६२० ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

७०२

शत्रुंजय;—संस्कृत ।

[संवत् १६८६ तथा शक सं० १५५१]

(बड़े आदीश्वर मन्दिरके उत्तर-पूर्वके छोटे आँगनमें, श्वेताम्बर जैन मन्दिरका यह शिलालेख है ।)

पं० १. संवत् १६८६ वर्षे वैशाख सुदि ५ बुधे शके १५५१ प्रवर्तमाने श्री मूलसङ्के सरस्वतीगच्छे

२. बला [त्का] रगणे श्री कुंडकुंदाचार्यान्वये भट्टारक श्री सकलकोर्ति-
देवास्तपट्टे म० श्री भुवनकोर्तिदेवास्तपट्टे म० श्री तानभूषणदेवा-

३. स्तपट्टे म० श्री विजयकोर्तिदेवास्तपट्टे म० श्री शुभचन्द्रदेवास्तपट्टे
म० श्री सुमतिकोर्तिदेवास्तपट्टे म० श्री गुणकोर्तिदेवास्तपट्टे म०
श्री वादिभूषणदेवास्तपट्टे म० श्री रामकोर्तिदेवास्तपट्टे म० श्री
पद्मनन्दिगुरूपदेशात् पातसाहाश्रीशाहा-

४. ज्याहां विजयराज्ये श्री गुर्जरदेशे श्री अहमदाबादवास्तव्यहुंबड-शातीयबृहछा-
खीयवाग्भरदेशस्थांतरीयनगरनौतनभद्रप्रासादोद्वरणधार बाडा सं० भोजा भा०
सं० लकु सु० संवस्ता भा० सं० लटकण भा० सं० ललतादे तयोः

५. सुत निजकुलकमलविकाशनैकसूर्यावतारः दानगुणेन नृपतिश्रेयांससमः श्री-
जिनबिंबप्रति-

६. ष्ठातीर्थयात्रादिधर्मकर्मकरणोत्सुकचित्तसंघपति श्रीरत्नसी भा० सं० रूपादे
द्वितीय भा० सं० मोहनदे तृतीय भा० सं० नं [य] रंगदे द्वितीयसुत
संघवी श्रीरामजी भा० सं० केशरदे तयोः सुत संघवी

७. डुगरसो भार्या सं० डाडमदे द्वितीयसुत संघवी [रायव] जी भा० सं०
गमतादे [एते सर्वे] महासिद्धयोत्र श्री श [श्रुंजयनाम्नि] गिरौ श्री
जिनप्रासादे श्री शान्तिनाथबिंबं कारयित्वा नित्यं प्रणमति । शुभं भवतु [॥]

[भावार्थ—यह अभिलेख अहमदाबाद निवासी हुंबड (हूभड) जातिके
किन्हीं सद्गृहस्थोंने, जिनके नाम इस अभिलेखमें दिये हुए हैं, खुदवाया है ।
इसमें उनके द्वारा इस शत्रुञ्जय पर्वतपर श्री शान्तिनाथकी प्रतिमाके स्थापनकी
खास बात है । यह बिंब प्रतिष्ठा संवत् १६८६, वैशाख सुदि ५, बुधवार, तथा
शक सं० १५५१ के समय हुई थी । आम्नाय तथा भट्टारकोंकी परम्परा इस तरह
चालू थी :—

मूलसंघ सरस्वतीगच्छ, बलात्कारगण, कुन्दकुन्द अन्वय, इसके बाद भट्टारकों की परम्पराका क्रम सकलकीर्त्ति, भुवनकीर्त्ति, ज्ञानभूषण, विजयकीर्त्ति, शुभचन्द्र, सुमतिकीर्त्ति, गुणकीर्त्ति, वादिभूषण, रामकीर्त्ति, और पद्मनन्दि । इस समय बाद-शाह श्री शाहाज्याहां (शाहजहाँ) का राज्य प्रवर्तमान था ।]

[EI, II, p. 72.]

७०३

शत्रुञ्जय;—प्राकृत-ध्वस्त ।

[सं० १६८६ = १६२१ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

७०४

नखौर (Bihar Miridional);—संस्कृत ।

[सं० १६८६ = १६२१ ई०] .

श्वेताम्बर लेख ।

[H. T. Colebrook, Miscell, Essays, Vol. II (1837), p. 318-319, t et, tr; pl. VII, f.-s.]

७०५

मलेयूर;—कन्नड़-भग्न ।

[बिना काल-निर्देशका; लगभग १६३० ई० (लू० राइस).]

[डली पर्वतपर, पारवर्नाथ-वस्त्रिके प्राङ्गणमें पूर्वकी ओर एक पाषाणपर]

... जीणोंद्वारवनु माडि ... जिन-मुनिगर प्रतिवि ... अप्प तोरण-
स्तम्भदलि राय-करणिक देवरखरु तम्म पितृगळु चन्दप्पगू मायि...निलसि
दीप-स्तम्भ ... तोरण ... यनु माडिसिद

[तोरणके स्तम्भोंको सुषरवाकर और उनपर जिन-मुनियोंके प्रतिबिम्बोंकी स्थापनाकर राव-करणिक देवरसने, अपने पिता चण्डप्प तथा ... के नामपर, एक दीप-स्तम्भ बनवाया ।]

[EC, IV, Chamrajuagar tl., No. 156]

७०६-७०८

सरोत्रा;—संस्कृत और गुजराती ।

[सं० १६८१ = १६१२ ई०]

रवेताम्बर लेख ।

[J. Kriste, EI, II, No. V, Nos. 20-28
(p. 31-33), t. et. a.]

७०९

श्रवणबेदगोला;—कन्नड़ ।

[शक १५५६ = १६३४ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७१०

हलेबीड;—संस्कृत और कन्नड़ ।

[शक १५६० = १६३८ ई०]

[पार्वनाथ बस्तिके अँगनमें पाषाणपत्र]

भीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोषलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

नमस्तुङ्ग इत्यादि ॥

पायादाया[स] खेद-लुभित-फणि-फणा-रत्न-निर्दत्त-निर्दय- ।

छाया-माया-पतङ्ग-द्युति-मुदित-वियद्-वाहिनी-चक्रवाकम् ।

अभ्रान्त-भ्रान्त-चूडा-तुहिनकर-करानीक-नाळीक-नाळ ।

च्छेदामोढानुधाव ... रथ-खगं धूर्जटेस्ताण्डवं वः ॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक वर्ष १५६० नेगे सलुव ईश्वर-
संवत्सरद फाल्गुन शुद्ध ५ यु गुरुवारदल्लु श्रीमद्वेलापुरी चेन्न वेङ्क-
टेश्वर-कम-कमल-युगळ ... स्थिर-राज-हंसराद वैष्णव-मतामृत-वार्धि-प्रवर्द्धमान-
पूर्ण सुधासूति-विम्बायमानराद प्रजा-पालन-मन्त्र-पालन-आत्म-पालन-कुल-पालन
समञ्जसत्वं-सप्तांग-राज्य-सम्पन्नराद कोट्टभाषेगे तेषुव धोरेगळ गण्ड दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-
प्रतिपालकराद सामादि-चतुरपाय-संयुतराद । पञ्चाङ्ग-सम्मन्त्र-गुण-समेतराद । रिपु-
राय-शरभ-गण्ड-भेरुण्डराद वीर-क्षत्र-चूडामणि । शरणागत-वज्र-पञ्चराराद । सिन्धु-
गोविन्द धवळांक-भीम मणिनागपुर-वराचीश्वर । बलिदु सप्तांग-हरण । **तुरक-**
दळ-विमोड इत्याद्यनेक-बिरुदावळी-विराजमानराद **कृष्णप-नायक-अय्य-**
नवर कलि-कालाष्टम-चक्रवर्ति वेङ्कटाद्रिनायक-अध्ययनवर बेळूर-राज्यवन्तु
धर्मदि प्रतिपालिसुतं यिरलु हळेयबोड विजय-पार्श्वनाथ-स्वामिय
बसदिय कम्भगळिगे हुळ्ळण-देवद लिंग-मुद्रेय हाकलागि आ-लिङ्ग-
मुद्रेयनु **विजयप्यनु** तोड्येयलागि । सज्जन-शुद्ध-शिवाचार-सम्पन्नराद । **देव-पृथ्वी-**
महामहत्तिनोळगाद अतिथिगळु । सूर्येन तेज चन्द्रन शान्त समुद्रद गम्भीर ।
नन्दिकेश्वरन प्रतिज्ञे कल्पवृक्षद फल बलिय वीरते रामन सयिरणे लक्ष्मणन हित-
कार हारिश्चन्द्रन सत्य कोट्ट-भाषेगे तप्पुवर मीसेय कोयिववरं । नरनन्ते तीर्थ-सिंह
... मठ-मने-देवालय-बीणोद्धारकरं क्षमे-दयेवन्तं विष्णुविनुपाय, ब्रह्मन चातुर्य्य
हनुमन्तन शक्ति जाम्बवन युक्ति प्रह्लादन भक्ति नित्य-जप-शिव-पूजा-पञ्चाक्षरी-
मन्त्रालंकृतराद देव-पृथ्वी-महा-महत्तु यी-स्थळद **हळेयबोड बसवप्य-देवद पुष्प-**
गिरिय पट्टद-देव-मुन्ताद देशा-भाण्ड महा-महत्तुंगळिगे **बेळूर-राज्यद जैन-**
सेट्टि-गळु भावदहंस्परमेश्वर णाद-पद्माशककराद स्याद्वाद-मत्त-गगन-सूर्य्यराद आहा-

राभय-मैषव्य-शास्त्र-दान-विनोदकं । खण्ड-स्फुटित-बीर्ण-जिन-चैत्यालयोद्धारकं
 बिन-गन्धोदक-पवित्रीकृतोत्तमाङ्गराद सम्यक्त्वाद्यनेक-गुण-गणालंकृतराद हासनद
 देवप्य-सेद्विय सु-कुमार-पद्मपण्य-सेद्वि-मुन्ताद-समस्तक विजहं माडिकोळलागि
 आ-महा-महत्तु एकस्थरागि वा सिकोण्डु कट्टुमाडिसिद विवर । विभूति-वीळ्य-
 वन्नु माडिसिकोण्डु यी-विजय-पार्ष्वनाथ-स्वामिगे पूजे-पुनस्कार-अङ्ग-रङ्ग-वैभव-
 दीपाराघने-अग्रयोदक-प्रभावना-मुख्यवाद जैनागमकके सलुब धर्मव पूर्व-मय्यादे-
 यल्लि आ-चन्द्रार्क-स्थायियागि माडिकोळिळ येन्दु बेळूर वेङ्कटाद्रि-नायक-अय्यन-
 वरिगे सकल-साम्राज्याभ्युदयार्थ-निमित्त्वायि आ-दोरेय दक्षिण-दोर्-दण्डराद प्रधान-
 वंशोद्धारकराद पद-वाक्य-प्रमाण-पारावार-पारङ्कतराद पर-पुरुषार्थ-परम-पण्डितराद ।
 काळप्पय्य-मंत्रि-प्रियाग्र-कुमार मंत्रि-कुलाग्र-गण्यराद कृष्णप्पय्यनवर यी-धर्म-कार्य-
 वनु कथि-विडिदु पुरो-वृद्धिगे सलिसलागि आ-महा-महत्तु बरसि कोट्ट शील-शासन
 यी-जैन-धर्मकके आवनानोर्वन्नु विघ्नव माडिदरे आतनु तम्म महा-महत्त पडव
 कूडिदवनल्ल शिवद्रोहि जङ्गम-द्रोहि विभूति-द्वद्राक्षिगे तप्पिदवनु कासि-रामेश्वरादि
 तीर्थजल लिङ्गकके तप्पिदवर यी-महा-महत्तिन वर्पित ॥ वर्द्धताम् जिनशासनम् ।

[यह लेख शक सं० १५६० के समयमें जैन और शैवोंके ऐक्यका तथा परधर्मसहिष्णुताका एक खासा नमूना है । इसमें मंगलाचरणमें पहले जैनदर्शन की प्रशंसा है, फिर शम्भू (महादेव) को नमस्कार किया है । इसमें बताया गया है कि (उक्त मिलिको) जब कृष्णप्प-नामक-अय्यका पुत्र, कलिकालका अष्टम-चक्रवर्ती, वेङ्कटाद्रि-नामक-अय्य बेलूर-राज्यकी न्यायसे रक्षा कर रहा था, तब हुन्नप्प-देवने हलेयबीडुके विजय-पार्ष्वनाथ-बसदिके खम्भोंपर लिङ्ग-मुद्रा लगायी और विजयप्पने उसको तोड़ दिया,—तब हलेयबीडुके देवपृथ्वी-महामहत्तु, पुष्प-गिरिके पट्टदेव, तथा देशभगके अन्य महा-महत्तुओंने मिलकर यह आज्ञा निकाली कि जैन लोग चन्द्र, सूर्यके स्थायी होनेतक अपनी सब धार्मिक विधि कर सकते हैं ।]

७११

शत्रुञ्जय;—प्राकृत ।

[सं० १६३६=१६३६ ई०]

रवेताम्बर लेख ।

७१२

अवणबेलगोला;—संस्कृत ।

[शक १५६५=१६७३ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७१३

अवणबेलगोला;—मराठी ।

[शक १२७०=१६७८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७१४-७१५

शत्रुञ्जय;—प्राकृत ।

[सं० १७१०=१६५३ ई०]

रवेताम्बर लेख ।

७१६

सिरोही;—संस्कृत ।

[सं० १७१८=१६६१ ई०]

रवेताम्बर लेख । -

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI,
p. 316, No. XLIII, a.]

७१७

सिरोही,—संस्कृत ।

[सं० १७२१ = १६६४ ई०]

रवेताम्बर लेख ।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI,
p. 316, No. XLIII, a.]

७१८

अवणबेलगोला;—कच्छ ।

[वर्ष सौम्य = १६६१ ? (ल. राइस)]

[जै० शि० सी०, प्र० भा०]

७१९

मदने;—कच्छ ।

[शक १५१६ = १६७४ ई०]

[मदने ग्राममें, ग्राम-प्रवेशके पासके एक पाषाणपर]

श्री शक-वर्ष १५१५ नेय परिधावि-संवत्सरद् पुष्य शुद्ध १० यक्षि
श्रीमनु-मैसूर देव-राज-ओडेयर बेळुगोळः चारुकीर्त्ति-पण्डिताचार्य्यर
दान-शालेय जैन-संन्यासिगळिगे नित्य-अन्न-दानके सर्व्वमान्य-वागि धारादत्त-
वागि कोट्ट मदणि-ग्रामवु मंगल महा श्री श्री श्री ॥

[(उक्त मितिको) मैसूरके देवराज-ओडेयरने बेळुगोळके चारुकीर्त्ति-पण्डिता-
चार्य्यकी दानशालाके जैन-संन्यासियोंको आहार-दान देनेके लिये मदणि गाँव
दानमें दिया । महान् सौभाग्य ।]

[EC, V, Channarayapatna tl., No. 273.]

७२०

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[अंक सं० १२६६ = १६७४ ई०]

[उसी पहाड़ीपर, बलि-कल्लुके उत्तर-पूर्वकी चट्टानपर]

शाके द्रव्य-पदार्थ-भूत-घरणी-संख्या-मिते वत्सरे
चानन्दे वर-पुष्य-मास-सित-पक्षे-पञ्चमो सत्तिथौ ॥

लक्ष्मीसेन-मुनीश्वरेण पर-दुर्वादीभ-सिंहेन वै
हेमाद्रौ वर-पार्श्वनाथ-बिनपे दीक्षा श्रिता सत्फला ॥

विजयपैय्य पाद बरसिदनु ।

[लक्ष्मीसेन-मुनीश्वरने हेमाद्रिमें पार्श्वनाथ बिनालयके अन्दर दीक्षा ली ।
चरणचिह्न विजयपैय्यने स्थापित किये थे ।]

[EC, IV, Chamrajnagar tl., No. 149.]

७२१

सिरोही;—संस्कृत ।

[सं० १७३६ = १६७६ ई०]

रवेताम्बर खोल ।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI,
p. 316, No. XLIII, a.]

७२२

अवधबेलगोला;—कन्नड ।

[अंक १६०२ = १६८० ई०]

[जे० झि० सं०, प्र० भा०]

७२३

बेळ्ळूर—संस्कृत और कन्नड़ ।

[बिना कालनिर्देशका, पर सम्भवतः लगभग १६८० ई० का]

[बेळ्ळूर (नेह्रीकरी परगना) में विमल-तीर्थकरकी बस्तिमें बरणाकी
दीवालपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीसमन्तभद्रमुनये नमः ॥ श्रीमतु-डिल्ली-कोल्लापुर-जिनकञ्चि-पेमुगुण्डे-
सिंहासनाधीशराद लक्ष्मीसेन-भट्टारक प्रतिबोधदिन्द श्री-मैसूर देवराज-
बोडेयरु धारा-दत्तवागि कोट्ट क्षेत्रदल्लि स्वशिष्यरह हुलिकल्ल पदुमण-सेट्टर सुतराद
दोड्डादण्ण-सेट्टर पुत्रराद सक्करे-सेट्टर अम्युदय-निश्श्रेयस-निमित्त्वागि आ-चन्द्रार्क-
वागि निर्मापिसिद विमल-नाथन चैत्यालयवु श्री

[जिनशासनकी प्रशंसा । समन्तभद्र-मुनिको नमस्कार । डि (दि) ल्ली,
कोल्लापुर, जिनकञ्चि, और पेनुगुण्डेके सिंहासनाधीश लक्ष्मीसेन-भट्टारकके प्रति-
बोधन (सम्पत्ति) से मैसूरके देवराज-बोडेयर्की दी हुई जमीनपर हुलिकल
पदुमण-सेट्टिके पुत्र दोड्डादण्ण-सेट्टिके पुत्र सक्करे सेट्टि—जो कि लक्ष्मीसेन भट्टारक-
के शिष्य थे—ने अपने अभ्युदयकी वृद्धिके निमित्त विमलनाथ चैत्यालय बनवाया
था और यह कामना की थी कि यह चैत्यालय जबतक सूर्य-चन्द्र हैं तबतक इस
पृथ्वीपर रहेगा ।]

[EC, IV, Nagamangala, tl. No. 43]

३. भट्टारक श्री जगत्कीर्त्तिस्तत्पट्टे भट्टारक श्री ललितकी-
४. तिजी तदाम्नाये अग्रोतकान्वये गोयलगोत्रे प्रयागन-
५. गरवास्तव्यसाधु श्री रायजीमल्लस्तदनुजफेरुम-
६. ल्लस्तपुत्रसाधु श्री मेहरचन्दस्तद्भ्राता सुमेरचन्द-
७. स्तदनुजसाधु श्री माणिक्यचन्द स्तपुत्रसाधु श्री ही-
८. रालालेन कौशांबीनगरबाह्य प्रभासपर्वतोपरि श्री-
९. पद्मप्रमजिनदीक्षाह्वान कल्याणकक्षेत्रे श्री जिन-
१०. बिं प्रतिष्ठा कारिता अंग्रेजब्रह्मादुरराज्ये सु [शु] मं [॥]

अनुवाद—शुक्रवार, मार्गशीर्ष शुक्ला पष्ठी, सं० १८८१ के दिन, काष्ठासंघ, माधुरगच्छ, पुष्कराण, लोहाचर्यके अन्वय (परम्परा) में भट्टारक श्री जगत्कीर्त्ति उनके पट्टपर भट्टारक श्री ललितकीर्त्तिजी इनकी आम्नायमें अग्रोतक अन्वय (बाति) तथा गोयल गोत्रके प्रयाग नगरके रहनेवाले साधु (साहु = सेठ) श्री रायजीमल्ल, उनके अनुज फेरुमल्ल, उनके पुत्र साधु श्री मेहरचंद, उनके भ्राता सुमेरचंद, उनके अनुज साधु श्री माणिकचंद, उनके पुत्र साधु श्री हीरालालने कौशांबी नगरके बाहर प्रभास पर्वतके ऊपर श्री पद्मप्रम (तीर्थङ्कर) के दीक्षा कल्याणक क्षेत्रमें श्री जिन (पार्श्वनाथ) बिं प्र प्रतिष्ठा कराई । यह काल अंग्रेज लोगोंके शासन का था [१८२४ ई०] ।

[EI, II, NoXIX, No3 (P. 244)]

७५७

अवणबेलगोला—कच्छ ।

[शक १७४८ = १८२७ ई०]

[जै० हि० सं०, प्र० भा०]

७५८

केलसूर—संस्कृत ।

[काक छुस, (१८२८ ई० ! ल० राइस)]

[केलसूर (केलसूर परगना) में, बस्तिके अन्दरकी दीवालपर]

श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय नमः ।

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोवलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री-शकवत्सरे त्रि.....षष्टि-त्रय-संख्ये स्थिते
वर्षे सम्प्रति सर्वधारिणि सिते मासे तपस्ये तिथौ ।

सप्तम्यां गुरुवासरे मृगशिरा-मे योग आयु

... .. कर्णाटकनामदेशविलसन्मध्यास्थिते ... शुभे ॥

श्रीमान् यो महिसूरनामनगरे सद्रत्नसिंहासना—

सीनः पार्थिव-चामराज-तत्तुभूरात्रेय-गोत्रोदितः ।

कुर्वन् सन्निह दुष्ट-निग्रहमतश्शिष्टानुरक्षां च सु-
प्रेक्षावान् पृथुपुण्यराशिरपि सत्पुण्योद्यमादि-क्षमः ॥

नानादेशनृपालमौलिविलसद्रत्नप्रभाच्यक्रमां-

भोजो राज्यविचारणैकचतुरो भास्वान् वदान्याग्रणीः ।

तेजस्वी बिबुधौघरक्षणचणस्सुज्ञानलीलानिधि-

नीनाशास्त्रविचारणो विजयते श्री कृष्णराजो नृपः ॥

तत्पादाश्रित-शान्त-पण्डित-सुतश्श्रीवत्सगोत्रोद्भवो

राजद्राजयस ... बः प्रविलसद्विज्ञापनाकर्णनात् ।

दिव्ये हृद्यवधार्य पुण्यपुरुषसद्दर्भर्मकृत्यं महान्

सोऽसौ ... केलसूर-नामनि पुरे चैत्याढ्यादि-स्थिताम् ॥

श्री-चन्द्रप्रभ-तीर्थकृद्विजयदेवज्जालनीदेविका-

बिम्बानां ... पुनर्नवलसच्चित्रान्वितां शोभनाम् ।

प्राप्ताश्चर्यरसामकारयदपि श्रेष्ठां प्रतिष्ठां पुनः

... शुभ ... नाट-गुरुणा वक्तुं यथैवन्मनः ॥

श्री मङ्गलं भवतु । वर्द्धतां जिन-शासनम् ।

[चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्रको नमस्कार । जिन-शासनकी प्रशंसा ।

कर्नाटक देशके **महिसूर** नामक नगरमें राजा चामराजका पुत्र **राजा कृष्णराज** स्तनजटित सिंहासनपर बैठा । वह दुष्टोंका निग्रह और शिष्टोंका पालन करता था । (उसकी प्रशंसा) उसने शान्त-पण्डितके पुत्र श्रीवत्स-गोत्रीय.....जके प्रार्थना-पत्रसे **केलसूर**के चैत्यालयमें फिरसे तीर्थंकर चन्द्रप्रभ, विजय-देव तथा ज्वालनी-देविकाके बिम्बों (प्रतिमाओं) को स्थापित करवाया । चैत्यालयको भी सुधरवाकर उसको फिरसे चित्रित किया था ।]

[EC, IV, Gundlupet tl., No. 18]

७५९-७६३

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १८८५ से १८८६ तक= १८२८ से १८२९ तक]

श्वेताम्बर लेख ।

७६४

नरसीपुर;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १७२१=१८२९ ई०]

[नरसीपुर (नेम्मनहल्लि परगना) में, शान्तव्यके खेतमें एक पाषाणपर]

श्री दे

शुभमस्तु ।

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्री विजयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १७५१ विरोधि सं० कार्तिक-शु ५ भातु ॥ श्रीमद्राजाधिराज महाराज श्री-कृष्ण-राज-वाडेयरय्य-नवर मैसूर-नगरदल्लि रत्न-सिंहासनारुढरागि पृथ्वी-साम्राज्यं गेयन्तु । दळ-वायिकेरेगे बन्दु इदु तपिशिकोण्डु अडविगे होद आनेयन्तु अप्पणे-मीरेगे गुण्डनिन्द होडिशि हजूरिगे वपिस्त बगे हेग्गडदेवन कोटे अमलुदार शान्तय्यन मग देवचन्द्रैयगे गिनामागि अप्पणे कोडिसिदु ताळोकु-पैकि सागरद होबळि वळित नरसिंहपुरद ग्रामदल्लि बेदलु कं गु १२-० वरहद भूमिगे चतुर्दिक्किगू शोला-प्रतिष्ठे माडिसि कोट्टदु यी-शिलेगे पश्चिम होल-छारिगे तुण्डु सहा १ विदके शेरिद अडु सह कुळ मोगचु कं गु १०-६ यी शिलेगे पूर्व दत्ति-होल १ वके कुळ मोगचु कं गु १-४ उमयं हन्नेरडु-वरहाद बेदलु-भूमिगे यी-कार्तिक-व १३ सोमवारदल्लु शिला-प्रतिष्ठे माडि यीत यीतन पुत्र-पौत्र-पारम्पर्यवागि निरुपाधिक-सर्वमान्यवागि अप्पणे कोडिसिद शासना ।

[जिन शासन की प्रशंसा ।

जिस समय मैसूरकी रत्नजटित गद्दीपर बैठकर राजाधिराज महाराज कृष्णराज वोडेयरय्य इस पृथ्वीपर राज्य कर रहे थे:—एक हाथी दळवायिकेरीमें आया और जङ्गलमें भाग गया । हाथीको मारकर राजाके पास लानेका हुक्म हुआ । हेग्गडदेवनकोटेके अमलदार शान्तय्यके पुत्र देवचन्द्रने यह काम सम्पन्न किया, तो उसे इनाम मिलनेका हुक्म हुआ; और इनाम में उसे उपर्युक्त तालुकेके सागर होबलि (प्रदेश) के नरसिंहपुर गाँवमें १२ वराह-बितने मूल्यकी सूखी जमीन दी गयी । इस भूमिको चारों ओर पत्थरोंकी निशानीसे अङ्कित कर दिया गया था । यह भूमि उसके पुत्रों, पौत्रों और सन्तान-दरसन्तानके उपभोगके लिये बिना किसी बाधाके, सब करोसे मुक्त रूपमें दी गयी थी ।]

[EC, IV, Heggadadevan-Kote tl., No. 51]

७६५

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १८८० = १८३० ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

७६६

श्रवणबेलगोला;—संस्कृत ।

[सं० १८८८ और शक १७१२ = १८३० ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७६७-७७७

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १८८८ से सं० १८९३ तक = ई० १८३१ से १८३६]

श्वेताम्बर लेख ।

७७८

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक सं० १७६० = १८३८ ई०]

[ठसी पहाड़ीपर, चन्द्रप्रभ प्रतिमाके पश्चिमकी ओरकी चट्टानपर]

श्री श १७६० । स्वस्ति श्री वर्द्धमानाब्दः २५०१ विळम्बि-सं० वैशाख-
शु ३ गु । सा । देवचन्द्रनु पितृ-सन्तानमं बरसिद्धं मङ्गलमहा श्री श्री श्री

[वर्द्धमान सं २५०१, शक १७६०, विळम्बि वर्षमें देवचन्द्रने अपने पूर्व-
पुरुषोंकी परम्परा लिखवायी ।

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No. 154.]

७७६-७६२

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १८१७, शक १७६३ से सं० १११६, शक १७८१ तक =
ई० १८४० से ई० १८५६ तक] श्वेताम्बर लेख ।

७९३

कोथरा—संस्कृत ।

[सं० १११८, शक १७८३ = १८६१ ई०] श्वेताम्बर लेख ।
[D. P. Khakhar, Report on remains in Kachh
(ASWI, selectoins, No. CLII), p. 75-76, t.;
p. 91 a (ins. No. 1).]

७६४-७६८

शत्रुञ्जय;—प्राकृत- ।

[सं० ११२१ से ११३० तक = ई० १८६४ से १८७३ तक] श्वेताम्बर लेख ।

७६६

शालिग्राम;—संस्कृत और कन्नड ।

[शक १८०० = १८७८ ई०]

[शालिग्राममें, अनन्तनाथ-बस्तिके सामनेके स्तम्भपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री विजयाभ्युदय-शालिवाहन-शकाब्दः १८०० नेय ईश्वर-
संवत्सरद् माघ-शु ५ तु स्वस्ति श्री पेनगोण्डे-शेनगण-संस्थानद श्रीलक्ष्मी-
सेन भट्टारक-स्वामियवर शिष्यनाद यिदगूरु पट्टण-शेवु वीरप्पनवर कुमार
अण्णैयनवर कुमार हजूर-मोतीखाने-वीरप्प तम्म तिमप्प सह शालिग्राम-

दल्लि यी-नूतनवाद चैत्यालय कट्टिसि श्री अनन्त-स्वामियन्तु स्वास्त्यक्षेत्र-सहित
प्रतिष्ठे माडि यिरुवदके भद्रं शुभं मङ्गलं श्री ॥

[जिन शासन की प्रशंसा । सेनगणकी संस्थान पेनगोण्डेके लक्ष्मीसेन
भट्टारक-स्वामी के शिष्य बिदगूरके पट्टण-शेट्टिके पुत्र अण्णैय्यके पुत्र **वीरप्प** और
तिम्मप्प थे । तिम्मप्प छोटा भाई था । वीरप्प मोतीखानेके महलमें काम करता
था । वीरप्पने शालिग्राममें इस नवीन चैत्यालय का निर्माण कराकर इसे
अनन्तस्वामीको सौंप दिया ।]

[EC, IV, Yedatore tl., No. 36]

८००-८०३

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० ११३१ से ११४३ तक=ई० १८८२ से १८८६ तक]

रवेताम्बर लेख ।

८०४-८३०

अवणबेलगोला;—कन्नड ।

[अनिश्रित कालके]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

८३१

तिरुमलै;—तामिळ ।

[काल अनिश्रित]

१ स्वास्ति श्री [॥] कडैकोट्-

२ दूर् तिरुमलैप्परवादिम-

३ ल्लार् माणाकर अरिष्टने-

४ मि माचार्य्यर् शेय्-

५ वित यच्चित्तिरु-

६ मेनि ॥

अनुवाद—स्वस्ति ! श्री ! कडैकोट्टुर्के अरिष्टनेमि-आचार्यने, जो तिरु-
मल्लैके परवादिरुल्लके शिष्य थे, एक यक्षी की प्रतिमा बनवाई ।

[South Indian ins., I, No. 73 (p. 104-105) t. & tr.]

८३२

कलु गुमलै;—तामिल ।

[अनिश्चित काल]

१ श्री [॥] [आ] णनूर् सिंगणं-

२ दिक्कुरवडिगळ् मा-

३ णाक्क् नागणन्दि-क्कुरव-

४ [डि] गळ् शे [य्] वित्त ति [रु] मेणि [॥]

अनुवाद—(यह) प्रतिमा आणनूर्के पूज्य गुरु सिंहनन्दि के शिष्य
पूज्य गुरु नागनन्दि ने बनवायी थी ।

[EI, IV, p. 136, No. 6.]

८३३

बस्तीपुर;—कन्नड़-भग्न ।

[काल निश्चित नहीं]

[बस्तीपुरके उत्तरमें एक षाषाणपर]

क ॥ अकलङ्क ।

वाक्-चन्द्रकीर्त्तियं धवळिसे दिगम्बर ।

... .. भव्य-प्रकार-चकोरं नलेय ।

... .. य कुटिल-वाहकन्य पदाम्भोजम् ॥

[अकलङ्ककी प्रशंसामें]

[EC, III, Seringapatam tl., No. 145.]

८३४

चिदरबल्लि;—कषय ।

[बिना काल-उल्लेखका]

[चिदरबल्लि (सोसले परगना) में, गाँवके पश्चिम बल्लगे राबळके
खेतकी एक चट्टानपर]

अय-महित-कोण्डकुन्दा- । न्वय-सम्भव-देशिकाख्य-गणदोल् गुणिगळु ।
प्रिय-धर्मर् न्नेगळ्दरुपा- । त्त-यशर् ... नन्दि-देवरी-वसुमत्तियोळ् ॥
आ-गुणिगळ शिष्यन्तियर् । आगमदिष्टदोळे नेगळदु तपदोळ् सलेका-
लागमनरिदात्तति सन्द्- । ओगडिसदे नागि यब्बे-कान्तिथरागळु ॥
तोरि ... तप परि-ग्रहमं नेरे नोन्ताराधनातीत ... मनदोळ् पडङ्गल-नरिदोप्पु-
तमय्दमसमान ग ... भक्तियिन्दमपत्य-श्रीकारियमनात्माभिकगे प्रत्यक्ष-परोक्ष-
विनयमं मान्य-चरित ...

[देशिक-गण और कोण्डकुन्दान्वयके ... नन्दि-देवकी शिष्या नागियब्बे-
कान्ति अपनी श्रद्धा और पवित्रताके लिये विख्यात थी । गृहीत व्रतोंकी परिपूर्णता-
पूर्वक स्वर्गवास हो जानेसे, मातृक प्रेमके कारण, ... माँकी स्मृतिमें...]

[EC, III, Tirum Kudlunarasipur, tl., No. 133]

८३५

वेरम्बाडि;—संस्कृत-भग्न ।

[बिना काल निर्देशका]

[वेरम्बाडिमें (कुतलूर परगना) सारी मन्दिरके पास एक पाषाणपर]

ओं नमोऽर्हते भगवते चण्डोग्र-पारिर्ध्व (पार्श्व) नाथाय धरणेन्द्र-
पद्मावती-सहिताय सर्वव्याधिहरं अळलुमोगे ... नाना ... श्री-पञ्च-
परमेश्वी ...

[४५ । भगवान् अर्हत् चण्डोग्र-पार्श्वनाथको नमस्कार हो । वे षरणेन्द्र-पद्मावती सहित हैं । वे सब व्याधियोंको दूर करनेवाले हैं पाँच परमेष्ठी]

[EC, IV, Gundlupet tl., No. 96]

८२६

जगवल्लु;—कन्नड़-भग्न ।

[अनिश्रित काष्ठका]

[जगवल्लु (जगवल्लु परगने) में, जैन-वस्तिके पासके पाषाणपर]

स्वस्ति श्री कोण्डकुन्दान्वय देशो गणदमरचर-भट्टारर शिष्यन्तिय अष्टो-पवासदर क्रियागुणचन्द्र-भट्टारर सधर्मगळु तोम्भत्तेळ वरिसा त ... वय्दुन वि ... निशिधिय कल्लनिरिसिद

[कोण्डकुन्दान्वय तथा देसी-गणके अमरचर-भट्टारकी शिष्या, जो (महीनेमें) आठ दिनका उपवास करती थी और मुणचन्द्र-भट्टारकी साधिन थी, ६७ वर्षतक जीयी । उसके बहनोई या सालेने यह स्मारक खड़ा किया ।]

[EC, V, Arsikere tl., No. 3.]

८३७

कोलूरु;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[वर्षं विरोधिकृत]

[कोलूरुमें, कुमरि-हल्लुमें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमतु आदिनाथ-देव-पादाराधक सम्यक्त्व-रत्नाकर जिन-गन्धोदक-पवित्रीकृतोत्तमाङ्गेय्य राजियम्बे-हेगडिति ४५ नेय विरोधिकृत-

संवत्सरद् माघ-सुध(ख)-पञ्चमी-बृहवारदन्दु कोळरोळ् सुर-लोक प्राप्ते-
यादळ् ॥ सरस्वतिगण-पुत्र-सुमति-पण्डित-शिष्य रूवारि सोमोजन पुत्र दुग्गयन बेस
[इस लेखमें किसी भी सुरलोक प्राप्तिका दिन दिया है और कोई विशेषता
नहीं है ।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 106]

८३८

हले-सोरब;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[काल निश्चित नहीं]

[हले-सोरबमें, उसी स्थानपर एक दूसरे समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोचलाच्छुनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥ [१]

श्री हेमचन्द्र-देवर गुडुनु दम गोडन निपिधि श्री-वीरगाय श्रीमनु यी-
कल माडिदनु सोरबद बयिरोजनु ॥
लेख स्पष्ट है ।

[EC, VIII, Sorab tl., No. 53.]

८३९

गिरनार;—संस्कृत-भग्न ।

रवेताम्बर लेख ।

[ASI, XVI, P. 356, No. 15, t. & tr.]

८४०

गिरनार;—संस्कृत-भग्न ।

रवेताम्बर लेख ।

[ASI, XVI, p. 356, No. 17, t. & tr.]

८४१

गिरनार;—संस्कृत ।

[दक्षिणी प्रवेश-द्वारके पासके गिरिनारी मन्दिरके मण्डपमें भूमि-मल्लिकके एक पाषाण-तलपर]

श्री सुभकीर्तिदेव साहुजाजामुत साहु तेजकीर्ति देव ।

अनुवाद:—श्री सुभकीर्तिदेव और साहु जाजाके पुत्र साहु तेजकीर्तिदेव ।

[ASI, XVI, p. 356-357, No. 18.]

८४२

भोलरी;—संस्कृत और गुजराती ।

[काल अनिश्चित] श्वेताम्बर लेख ।

[J. Kirste, EI, II, No. V, No. 3 (p. 25-26) t. & tr.]

८४३

रामनगर (अहिच्छत्र);—संस्कृत ।

[काल अनिश्चित]

रामनगरके पुराने किलेसे उत्तरकी ओर कुछ १०० गज दूरीपर और नसरतगञ्जके पूर्वमें 'कतारि खेरा' नामकी एक बहुत छोटी पहाड़ी है । यह 'कतारि-खेरा' 'कोत्तरि खेरा'का अपभ्रंश (बिगड़ा हुआ रूप) मालूम पड़ता है । 'कोत्तरि खेरा'का अर्थ होता है 'मन्दिरका ढेर' । यहाँ जनरल कनिंघमने खम्भेका कङ्कडका चौखूँटा पाया और एक छोटे मन्दिरकी करीब-करीब तुल्य प्रायः दीवालें खोब निकाली थीं । उसने पहिले इसे कोई बौद्ध-मन्दिर समझा, परन्तु पीछेसे वहाँ सिवा एक बुद्ध-मूर्तिके और कुछ न होनेसे, यह खयाल छोड़ दिया । लेकिन वहाँपर कुछ नग्न मूर्तियाँ निकलीं जोकि दिसम्बर जैन सम्प्रदायकी थीं । इससे उसने जैन मन्दिर समझा । पत्थरके एक परिवेषक (Railing) स्तम्भपर, जिसमें ऐसी मूर्तियोंकी ६ कतारें थीं, निम्नलिखित समर्थक लेख मिला:—

महाचार्य इन्द्रनन्दि शिष्य महादरि पार्श्वपतिस्य कोत्तरि ।

“इन्द्रनन्दिके शिष्य महादरि, पार्श्वपतिके मन्दिरको ॥”

यहाँ ‘पार्श्वपति’ से मतलब २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ से ही है । एक दूसरी नग्न प्रतिमा के पाषाण पर ‘नवग्रह’ ये शब्द खुदे हुए थे, एक विशाल स्तम्भ के खण्ड पर उसके चारों ओर शेर के आकार बने हुए थे, जो कि महावीर स्वामी का चिह्न है । जैनो में ‘अहिंसे’ अब भी एक पवित्र स्थान माना जाता है । इन लेखों के अक्षरों से बनरल कनिंघम अनुमान करते हैं कि यह मन्दिर गुप्तकाल की अवधि से पहले बना था ।

[Art, Ins. N-W-P-O (ASI, II), p. 28, t. & tr.]

८४४

खजुराहो;—संस्कृत ।

[काल अनिश्चित]

[२१ नं० के जिन-मन्दिर के द्वार के स्तम्भ पर]

आचार्य स्त्री (श्री)-देवचन्द्रः (ऋ) सिस्य (शिष्य) कुमुदचन्द्र (नृः) ॥

[देवचन्द्र के शिष्य कुमुदचन्द्र का उल्लेख ।]

[ASWI, Progress Reports 1903-1904, 48, t.]

८४५-८४६

जैसलमेर;—संस्कृत ।

[सं० १४०३=१४१६ ई०] श्वेताम्बर लेख ।

शि० ले० ८४७—संवत् १४६३ = १४३६ ई०

” ” ८४८—” १४६७ = १४४० ई०

” ” ८४९—” १५०५ = १४४८ ई०

” ” ८५०—” १५३६ = १४७९ ई०

समाप्त

अनुक्रमणिका (१)

जैन-शिला लेख संग्रह भाग १-२ में संग्रहीत शिला लेखों के स्थानों की अकारादि क्रम से नाम सूची। नाम के पश्चात् लेख नम्बर समझना चाहिये।

अङ्गदी १६६, १७८, १८५, १९४, २००, २०१, २४२, ३६७, ३७८	आसीं केरी ४६५ इस्सर २२१ उदयगिरि (उड़ीसा) २४५ उदयगिरि (सांची) ६१ उद्वि २६१, ४३१, ४६१, ५७६, ५८८, ५९६
अजमेर ३०६, ३६१, ४१३, ४१७ ४१८, ४२१	एचिगनहल्लि ५९७ एलेवाल ३८६
अज्जनगिरि ७६३	एलोरा ४८१
अज्जनेरी (नासिक) ३१७	ऐहोले १०८, २४७, ४४४
अनवेरी ४५८	कडकोल ४४२, ४६०, ५०८, ५२५
अनहिलवाड पाटन ११६, ६८४, ६८६	कडव १२४
अनेबल्लु ६२३, ६२७	कडूर १५०
अब्लूर ४३५, ४३६	कण्ठकोट ५१०, ५३१
अमरापुर ५२१	कदवन्ती १६३
अर्थूणा २३६	कणवे २३०, २३२, ५६१
अलहल्लि २५३	कवली ३५१
अलेसन्द्र ४११	कम्बदहल्लि २६६, २६४, ३७२
अरुत्तम (कोरुहापुर) १०६	करडाल्लु ३८३, ३८४
आदूर १०७	
आबल्लवाडी २६७	

करगुण्ड ३४७

कलस ५२२

कलसगोरी ३१८

कलहोली ४४६

कलुचुम्बक १४४

कलुगुमलै ८३२

कलमावी १८२

कल्य ५६६

कल्लबलि ६६४

कल्लूरगुड्डा २७७

कहायूँ (गोरखपुर) ६३

कांगड़ा १२६

कारकल ६२४, ६२७, ६८०

कुपटूर २०६, ५५५, ५६३, ६०५

कुम्हारहल्लि १६६

कुम्भी १४६

कूलगोरी १३६

केलसुख ७५८

कैदाल ३३३

कोणूर (बेठगाँव) २२७, २७६

कोयरा ७६३

कोन्नूर १२७, ३३५

कोप्प ६८८

कोलूर ८३७

कोल्हापुर ३०२, ३२०

क्यातनहल्लि १३८, ३८७

खजुराहो १४७, १७६, २२५, ३२६

३३१, ३४०, ३४३, ३४४,

३५६, ३६२, -४४

खमूमात ५३६

गिरनार ११, १४१, ३४५, ३४६,

३६८, ३६९, ४४५, ४६४

४७६, ४७७, ४७९, ४९३

५१८, ५२३, ५२६, ५३०

५३७, ५४६, ५५३, ५७३

६२२, ६३१, ६४५, ७००

८३६, ८४१

गुडिगोरी २१०

गुण्डलूपेट ४२५

गुब्बी २४४

गेदी ६५०, ७३७

गोगा ४५१, ४५५, ४५६

गोवर्धनगिरि ६७४

ग्वालियर ६३३, ६४०

चन्द्रहल्लि ३००

चल्य २८७

चामराजनगर २६४

चिकमागलूर ४१२, ५२६

चिकमागडी ४०८, ४२२, ४२३,

४२४, ४२७, ५०२,

५१३,

चिक-इनसो १७५, १६५, १६६,

२२३, २३६, २४१,

चिचौड़ ३३२, ५१६, ६४२, ६५३,

चिदरवल्लि ८३४

चैतनाथ (भालियर) ६०८

जवगल्लु ८३६

जैसलमेर ८४५, ८५०

टोक (रामपूताना) ६३६

तगदुरा २६५

तट्टेकेरे २१६

तवनन्दी ५३४, ५४०, ५६८, ५६९,

५७७, ५७८

तलगुण्ड ४१६

तारङ्गा ६७६

तिप्पूर २६२

तिरुमलै १७१, १७४, ४३४, ५५७,

८३१

तिरुप्परुत्तिकुण्ण ५८१, ५८७

तेवर तेप्पा ३७७

तेरबल २८०, ४०२, ४१४

दान साले २४८, ४६८

दावनगिरी (मेरी) २४६

दिळमाल ४८३

दिल्ली (टोपरा) १

दीडगूड ३५३

दूबकुण्ड २२८, २३५

देवगढ़ १२८, ६१७, ६२८

देवगिरि ६७, ६८, १०५

देवरहल्लि १२१

देवळापुर १२०

दोद-कणगाळु १८०

दोहद ३८२

धरमपुर ६०६

नडोले ३५७, ३५८

नन्दी (माँण्ट गोपीनाथ) ११८

नरसीपुर ७६४

नल्लूर १८३, १८४

नाखौर (विहार) ७०४

नागदा ६३०

नाडलाई ६७२

नित्तूर ४३६-४४१, ४६६

निदिगि २६७

नेसर्गी (बेळगाँव) २४६

नोणमङ्गळ ६०, ६४

नौसारी १२५

पटना ७४२

पण्डितरहल्लि ३५२

पञ्चपाण्डव मलै ११५, १६७

पालनपुर ३५०

पुरले २६६, ४५०, ४६६

पेगूर १५४

बनकलगरे ४५२

बंकापुर १८७, २७२

बड़नगर १२६

बन्दालिके १४०, २०७, ४३३, ४३८	बेलूर ३०५
४४८, ४५६	बेल्लुख ७२३
बन्दूर ३७३	बोगादि ३१६
बयाना (राजडूताना) १७६	भारङ्गी ६१०, ६४१, ६४६
बवागञ्ज (माळवा) ३७०, ३७१, ६४३	भिलरी (भीलरी) ६५१, ८४२
बलगाम्बे १८१, २०४, २०८, २१७	मलावार २६२, २७३, ३२१
४२०, ४५३	मथुरा ४, ५, ८-१०, १२-५२, ५४-८६, ८८, ८९, ९२, १६१, १७३, २११
बसवनपुर ४१०	मदनूर (नेल्लोर) १४३
बस्ती ३२८	मदने ७१६
बस्तीपुर ५८२, ८३३	मदलापुर २२४
बहादुरपुर (अलवर) ६६२	मदागिरि ६६८
बादामी ३१२	मद्रास ६८१
बामणी ३३४	मन्ने १२२, १२३
बाळ होन्नूर २३१	मर्करा ६५
बिजौली ३७४, ३८६	मकुर्ली ३७६
बिदरे १५८	मलेयूर ४०१, ५६०, ५८०, ६००, ६१५, ६५७, ६६३, ७०५, ७२०, ७५३, ७७८
बिदरूख ६५६	मसार ५८६, ७५५
बिलियूर १३१	महोबा २५२, ३२५, ३३७, ३४१, ३४२, ३६०, ३६१, ३६५
बेगूर ६२१	माँण्ट आबू ४१५, ४१६, ४७१-४७४, ४८०, ४८२, ४८६, ५३६, ५५०, ५५४, ६२६, ६२४,
बेतूर ५११	
बेरम्बाडि ८३५	
बेलगाँव ४५४	
बेळवत्ते ११६	
बेळ होङ्गळक ३६६	
बेळुख १७२	

६३८, ६४४, ६४७, ६४८,
 ६६०
 मॉण्ट निडुगल्लु ४७८, ६३७
 मॉण्ट शिवगंगा ३१५
 मॉण्ट सुन्व (राजपूताना) ५०७
 माण्डवी ७४१, ७४४
 मुगलूर २६५, ३१७, ३२७, ३८०
 मुत्तत्ति २७५
 मुत्तन्द्र १७०
 मुल्लूर १७७, १८८, १९१, २०२,
 २०६, ५९०
 मूडहल्लि ३७५
 मूलगुण्ड १३७
 मेलिगे ६९१
 म्यूनिच ६३६
 यल्लादहल्लि ३२४
 यिडुवणि ६४९
 यीदगुरु ४३२
 वराङ्गना ६१९
 वरुण १५९
 वल्लीमल्लै १३३-१३६
 विजयनगर ५८५, ६२०
 वुद्रि ३१३
 वेणूर ६८९, ६९०
 वैकुण्ठ (उदयगिरि) ६

राजगिरि ८७, ७३९, ७४३
 राणपुर ६३२
 रामनगर ५३, ८४३
 रायबाग ३१४, ४४६
 रावनदूर ५८४
 रोहो ४४७, ४८७
 लक्ष्मेश्वर १०९, १११, ११३, ११४,
 १४९
 लन्दन ३३६
 शत्रुञ्जय ६५९, ६६५, ६६६, ६७५,
 ६७८, ६८२, ६८३, ६८५,
 ६९२-६९९, ७०१-७०३,
 ७११, ७१४, ७१५, ७२७-
 ७३१, ७३४-७३६, ७३८
 ७४०, ७४५, ७४९, ७५४,
 ७५९-७६३, ७६५, ७६७-
 ७७७, ७९४-७९८, ८००-
 ८०३
 श्रवणबेलगोला ११०, ११२, ११७,
 १५१, १५२, १५५, १५६,
 १५७, १६२, १६३, १६५,
 १६८, १९९, २२९, २३३,
 २५४-२६१, २६८, २७०,
 २७१, २७८, २७९, २८१-
 २८३, २८५, २८९, २९०,
 २९६, २९८, ३०३, ३०४,

३०६, ३१०, ३११, ३२३,
 ३३५, ३४८, ३५४, ३५५,
 ३६२, ३६३, ३८८, ३८२,
 ३९५-४००, ४०३-४०७,
 ४२८-४३०, ४६१, ४६३,
 ४७५, ४८२, ४८८, ५०१,
 ५०५, ५१२, ५१५-५१७,
 ५२०, ५२७, ५२८, ५३३,
 ५४३, ५५२, ५६५, ५७२,
 ५७३, ५७५, ५८१, ५८६,
 ६०२, ६०७, ६१६, ६२५,
 ६३५, ६६१, ६६८-६७१,
 ७०६, ७१२, ७१३, ७१८,
 ७२२, ७२६, ७३२, ७५०,
 ७५२, ७५७, ७६६, ८०४-
 ८३०

सण्ड २४३

सरोत्रा ७०६, ७०८

सरगूर ६१८

साबनूर २८८

सालिग्राम ७६६

सिक्रा ७२५

सिम्हाम्बे ४४३

सिन्दीगेरी ३०७, ३०८

सियालबेट ४६२, ४८८, ५०६,
 ५३२,

सिरोही ६७६, ६८७, ७१६ ७१७,
 ७२१, ७३३,

सुकदरे २७४

सूदी (धारवाड़) १४३

सोमवार १६२, २३४, २३६

सोराब ४५७

सोहनिया १४८, १५३

सौदन्ति १३०, १६०, २०५, २३७
 ४७०,

हट्टण २१८

हट्टण ३६४

हन्तुर २६३

हरखे ६५२ *

हर केरी २२२

हलेबीड २६६, ३०१, ४२६, ४६६
 ५१४, ५२४, ५४६, ७१०

हलेसोराब ५६३, ६०३, ८३८

हल्सी (बेलगांव) ६६, ६६-१०४

हागल हल्लि ७२४

हाथी गुम्फा (उदयगिरि) २

हादिकल्लु ६१२

हिरे-आबलि (हिरियावली) २८६,

३२२, ५३५, ५३८, ५४१, ५४४

५४७, ५५६, ५५८, ५५६,

५६२, ५६४, ५७०, ५७४,	डूनशी कट्टि (बेळगाँव) २६२
५८३, ५८६, ५९२, ५९४,	हेमोरी ३५६, ३६४, ५४५, ६७७
५९५, ५९८, ६०१, ६०४,	हेन्नाडे २५१
६०६, ६११, ६१३, ६१४	हेमवती १६४
हीरे हल्लि ४९६, ५०४	हेरगू ३३९, ३८५, ३९०
हुम्मच १३२, १४५, १९७, १९८,	हेरे केरी ३४९, ४८४, ४८९
२०३, २१२, २१६, २२६,	होगेकेरी ६५४, ६५५, ६५८
२३८, ३२६, ४६७, ४९४,	होन्नूर २५०
४९७, ५००, ५०३, ५०९,	होन्नेन हल्लि ५५१
५४२, ५९७, ६६७	होन्वाड १८६
हुल्लुहल्लि ५७१	होलल केरी ३३८, ४६०
हुल्ली गेरी ३७६	होत होळल २८४

अनुक्रमणिका २

[विशेष नाम सूची]

इस अनुक्रमणिका में जैन मुनि, आर्यिका, कवि, संघ, गण, गच्छ, ग्रन्थ तथा राजा, रानी, गृहस्थों और सब प्रकार के नाम समाविष्ट किये गये हैं। नाम के पश्चात् अंक, लेख नम्बर समझने चाहिये।

अ	अक्षित सेन (भट्टारक, पण्डितदेव)
अकलङ्क ३०५, ३१३, ३१६, ३२४, ३२६, ३४७, ४१०, ५०३, ६६७, ७५३	३०५, ३१६, ३२६, ३२७, ३४७, ३५१, ३७३, ३७५, ४१०
अम्बादेवी ३४६	अञ्जनगिरि ६७३
अम्रोतक (अन्वय) ७५५, ७५६	अञ्जनेरी ३१७
अङ्ग ३०५, ३१३	अडलवंश ३१५
अङ्गाडि ३६७	अतिगैमान् ४३४
अङ्गणि ३७८	अत्तिमन्वे ३२६
अङ्गरन ३०५	अदल कुल ३१५
अच्युत वीरेन्द्र शिष्य ४०१	अदल जिनालय ३१५
अच्युत राजेन्द्र ४०१	अदल वंश ३३३
अच्युत राय ६६७	अदलराम ३३३
अजमेर ३०६, ३६१, ४१३, ४१७, ४१८, ४२१	अदल समुद्र ३३३
अजयपाळ ३६१	अदलेश्वर-देवगृह ३१५
अक्षितपाळनाथ ३१६	अदिग ३५१
	अद्रि ४३१

अनन्तकीर्ति ४२७
 अनन्तवीर्य ३२६
 अनवेरी ४५८
 अनहिल वाड पाटन ६८४, ६८६
 अप्पण ३१३
 अब्बुर ४३५, ४३६
 अभयचन्द्र (सिद्धान्त चक्रवर्ती—) ४३७,
 ४३६, ५१४, ५२४, ५८४,
 ६१०, ६४६, ६६७
 अभिनन्द देव ३३४
 अभिनव चारुकीर्ति ६७३
 अभिनव देवराज (देवराज II) ६२०
 अभिनव विशालकीर्ति (भट्टारक) ६६१
 अभिनव समन्तभद्र ६७४
 अम्बरापुर ५२१
 अमितय्य ४५२
 अमृत दण्डाधीश ४५२
 अम्बर (नाम) ३०५ क
 अम्बिकादेवी ३४६
 अम्मण ३४६
 अटकळ ३१८
 अय्यण ४०८
 अवन्ति ३०५क, ३१३
 अरसियकेरे (आर्लीकेरे) ४६५
 अरिष्टनेमि (आचार्य) ८३१
 अरिहर राज (बुक्क राज) ५८१

अरुञ्जळ (अन्वय) ३२६, ३४७, ३५१,
 ३७३, ३७५, ३७६, ३८०,
 ४१०, ४२५,

अरुहन हलिळ ३१८,
 अर्थूणा ३०५ क
 अर्हानन्दि मुनि ३२४
 अर्हानन्दि सिद्धान्तदेव ३३४
 अर्हसुगिरि (पर्वत) ४३४
 अळियादेवी ३४६
 अलेसन्द्र ४११
 अश्वपति ६६७
 असवर मारय्य ४५०
 अहोबळ पण्डित ३५१

आ

आचारसार (ग्रन्थ) ३३५
 आजिरगे खोल्ल ३२०
 आदण्णगौड ३३८
 आदिदास ६६३
 आदिदेव मुनि ५८४
 आदिनाथ पण्डितदेव ७२४
 आदि गजुण्डि ४६६
 आबू ४१५, ४१६, ४७१—४७४
 ४८०, ४८६, ५३६, ५५०, ५५४
 ६२६, ६३४, ६३८, ६४४, ६४७
 ६४८, ६६०,

आनेवाळ ६२३, ६२६

आन्ध्र ३१३

आलन्दे ४३५

आल्लू ३३६

आळोक ३०५ क

आल्वखेद ३०८

आल्लू ३३६

आल्लूण ३२६

आल्लूनाड ३०८

आस्त ४२१

आहवमल्ल ३१७, ४०८, ४५२

इ

इङ्गुलेश्वर बाळ ४११, ४६५, ५१४,

५२१, ५२४, ५७१, ५८४,

६००, ६०३

इम्माडि दण्डनायक विट्टियण ३०५

इन्दगरस वोडेयर ६५५, ६५६

इन्द्र (महाराज) ६५६

इन्द्रनन्दि ४१०, ६३७, ८४३

इरुग (दण्डेश) ५८५

इरुगण्ण ५८१ ५८७

इरुङ्गोळ ४७८

ई

ईचण ४५१

ईश्वर चमूपति ३५२

उ

उच्चङ्गि ३०५, ३१८, ३५१

उच्चूणक (नगर) ३०५ क

उज्जयन्त ३४६

उदयण ३०५

उदयचन्द्र ३४३

उदयादित्य ३०५, ३०८, ३२४, ३४७

३७३, ३७६, ४११, ४४८

उदरे ४३१

उद्वि ४६१, ५७६, ५८८, ५६६,

उमयक्के ३१६

उमयव्वे ३१६

उमास्वाति ६६७

उर्वीडि ३१८

उर्वीतिलक ३२६

ए

एकान्तद रामय्य ४३५

एकक गौड ४०८

एककळ ४३१

एककोटि जिनालय ३१८

एचव दण्डनायकिति ४११

एचळदेवि ३०८, ३४७, ३७६,

३६४, ४११, ४४८,

४७०, ४६६,

खरतरगन्ध ६५३

खरपुर ३४६

ग

गङ्गा ३१३, ३१८, ३२८, ३३३,

गङ्गाकुल ३०५, ३१३

गङ्गादेव ३२०, ३३४

गङ्गनाडि ३२८

गङ्गापुत्र ३३३

गङ्गाप्पय ३०७

गङ्गावंश ३१३

गङ्गावाडि ३०५, ३०७, ३०८, ३१८

३१६, ३२४, ३२७, ३३३

३३६

गंगराज (दण्डाधीश) ४११

गङ्गाराज्य ३२६

गङ्गा ३०५

गङ्गास्त्रिके ३८६

गङ्गेयन मारेय ४७८

गङ्गेश्वरदेव ३३३

गङ्गेश्वरावास ३३३

गङ्गिमेन्दु देव ३१५

गङ्गुद गङ्गा ३३३

गण्डम ४५२

गण्ड विमुक्त तृतीया ३०७, ३३३

गण्डणदीय देव ३३०, ३२४

गण्डादि ३०८

गदानन्दी ३०६

गद्याण ३१२, ३३८, ६७३

गन्धविमुक्त ४११, ४२४

गन्धि सेट्टि ३६४

गागिदेव ३२७

गामुण्ड ३२१

गावणिगा ३८६

गिरनार ३४५, ३४६, ३६८, ३६६

४४५, ४६४, ४७६, ४७७

४७६, ४६३, ५१८, ५२३

५२६, ५३०, ५३७, ५४६

५५३, ५७६, ६२२, ६३१

६४५, ७००, ८३६, ८४०

८४१

गुडुदगङ्गा ३३३

गुणकीर्ति देव ६३३, ७०२

गुणचन्द्र ३०६

गुणचन्द्र सिद्धान्तदेव ३५६, ३६४

गुणभद्र ५११

गुणसेन ५४०, ६१२

गुणसेन सिद्धनाथ ५०३

गुणहल्लुपेट ४२५

गुत्त ३३३

गुप्तकुल ४४८

गुम्मतपुर ६१८

चन्द्रिकम्बे ३५२

चन्द्र ४७०

चन्द्रकीर्ति ५४५, ५७१, ६००

चन्द्रदेव (भट) ४५३

चन्द्रप्रभ (मुनि) ३१७, ३५१, ४१०

४५६, ५५५, ६६७

चन्द्रादित्य ३२०, ३३४

चन्द्रसेन सूरि ५८८

चन्द्रिका (महादेवी) ४४६, ४४६

चन्न पारिश्यदेव ३३३

चळवरिष ३३३

चळवरिविश्वर देव ३३३

चलिग सेनबोब ४६८

चल्लय्य हेमाडे ३७६

चाकि गौडि ४०८

चाणक्य ३३६

चाणिक्य ३०८

चान्द्रायण देव ३८४

चामवे दण्डनायक ३०८, ४११

चामराज ७५८

चामुण्डराज ३०५ क, ६६७, ६७६

चावळदेवी ३०८

चाविकम्बे गणुडि ३७७

चाविमय्य ३३६

चावुण्ड ३४७

चारुकीर्ति पण्डिताचार्य ४३८, ५२४,

५६१, ६७३

७१६

चालुक्य ३१२, ३१३, ३१४, ३१६

३२२, ३२६, ३३२

चालुक्यचक्री ३१३

चालुक्याभरण ३०८

चिकमगलूर ३२०, ४१२, ५२६

चिक्कतायी ४०१

चिक्क मार्गाड ४०८, ४२२-४२४,

४२७, ५०२, ५१३

चिण्णराज दण्डाधीश ३०५

चित्तौड़ ३३२, ५१६, ६४२, ६५३

चित्रकूट गिरि ३३२

चिदरवल्लि ८३४

चिनकुरली ३२८

चिन्तामणि ४१०

चूडामणि ४१०

चेङ्गिरि ३०५

चेन्न पार्श्वनाथ ३३६

चेन्नवे नायक ३३३

चेर ३०५

चैच (दण्डाधिनायक) ५८५

चोघारेकाम गावुण्ड ३३४

चोळ ३०५, ३०८, ३१३, ३१८,

३१६, ३२४

चौण्ड राय ३४७

नरसिंह ३२४, ३३३, ३३६, ३५२
३६७, ४५२

नरसिंह सेट्टि ३१४

नरसिंह वर्मा ३०५, ३०८, ३२४

नरसीपुर ७६४

नरेन्द्रकीर्ति-त्रैविद्यदेव ३२४

नाकण ३०८

नाकि-सेट्टि ३२७, ३५२, ३६७

नाग ३१८

नागगौड ४५५

नागखण ओडेयर ६१८

नागदा ६३०

नागनन्दि ८३२

नागवल्लिकुल ३६६

नागवे ३५२

नागर खण्ड ३७७, ३८६, ४०८, ४४६

नागर वंश ३०५ क

नागियक्क ३२७

नाडवल सेट्टि ३०५

नाडाळव ३३३

नायक बसव ३३३

नारण वेमाडे ३२१, ३६४

नारसिंह देव ३३३, ३३६, ३४७

३५२, ३६७, ४५२

नारसिंह होयसळ गावुण्ड ३५१

नारसिंह ३२७, ३७६, ३६४, ४११

४४८, ४६६, ४६६

नारायण गृह ३३३

निगुलर ३२४

नित्तूर ३४७, ४३६, ४४०, ४४१

४६६

निम्ब देव ४०२

निम्ब देव सामन्त ५२४ —

निम्मडि दण्डनायक ३०५

निवर्तन ३२०

निरुण्ड नाड ३४७

नुन्न वंश ४०८, ४४८

नूर्माडि तैळ ४०८

नेक्कळ ३१३

नेगलु ३२७

नेमदण्डेश ३७२

नेमिचन्द्र (भट्टारक) ४५०, ६६७ —

नेमिचन्द्र सैद्धान्तिक ४४६ —

नेमि देव ४६६ —

नेमिनाथ ३३६, ३३७, ३४६ —

नेमि पण्डित ४७८

नेळ मङ्गळ ३१५

नेल्लुदरे ३५१

नोणम्बवाडि ३०५, ३३६, ३२८

नोळम्ब वाडि ३०५, ३०७, ३०८

३१८, ३२४, ३३३

न्याय कुमुदचन्द्र ६६७

माणिक्य देव ४१८	मारिसेट्टि ३१६, ३२७
माणिक्यदोळलु ३२८	मारुगोण्डी बसदि ३०५
माणिक्यनन्दि ३२०, ३५६, ३६४	माळ (चमूनाथ) ४३१
६६७, ६६८	माळन्वेय ४४०, ४४१
माणिक्यसेन ३२२	माळियक्क ४०८
मौण्ट निडुगल्लु ४७८, ६३७	माळवे सेट्टिकन्वे ४६६
मार्तण्ड देव ३१३	माळिसेट्टि ४२०
माथुरगन्ध ६४३, ७५६	माळियक्के ४३६
मादरसवोडेयर ५८६	माळोज ३४७
मादिराज ३७३	मादुल ३३६
मादिराज (प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ)	मीमांसक ३१६
४७०	मुगुळी ३२७
मादेवि ३३३, ४३१, ४७०	मुगुळिय ३१६
मादेय ३२३	मुगुलूर ३१६, ३२७, ३८०
माधव ३१६, ३४७	मुदुगेरे ३३३
माधवचन्द्र ५३४, ५६८, ६६७	मुनिचन्द्र ३१३, ३२४, ३७७, ३८६,
माधवदण्डनायक ३६४ ५४०	४०८, ४३१, ४४८, ४६७
मान्यखेट ३३३	४७०, ५७१, ६६३
माबळय ३२१	मुनिभद्र देव ५८८, ५८६, ६११
मारगावुण्ड ५०८	मुम्मुरि दण्ड ४०८
मारचन्द्र मलघारि ६०३	मुद्दगावुण्ड ३२२
मारम ३२७	मुद्दरसि ३७२
मारसिग ३१३, ३२०, ३३४, ४३१	मुद्दन्वे ४२३
मारखे ३१८	मुद्दय्य ४०८
माराय ३०८	मुद्दगौड ४१२
मास्समुद्र ३३३	मुरारि देव ४१८

लक्ष्मी ३०५ क
 लक्ष्मीदेव प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ ४७०
 लक्ष्मीधर ३२६
 लक्ष्मीसेन भट्टारक ५८८, ७२३, ७६६
 लक्ष्मीसेन मुनीश्वर ७२०
 लक्ष्मल देवी ४०८
 लक्ष्मन् ४२७
 लन्दन ३३६
 ललितकीर्ति ४४८, ४५६, ५६०,
 ६३४, ६८०

लल्लाक ३०५ क
 लल्लुक ३०५
 लाखन ३२५, ३४१, ३३७
 लापू ६३६
 लाहड (साधु) ४१७
 लाहड ३१७
 लूङ्गर देव ६३६
 लोक गाबुण्ड ३५१, ३७७
 लोकनन्द (मुनि) ३७१
 लोकायत ३०५
 लोहाचार्य (अन्वय) ७५६

व

वक्कलगोरे ४५२
 वक्रगच्छ ४२६
 वक्रग्रीव ५८५

वक्रग्रीवार्थ ३१६
 वक्रग्रीवाचार्य ३०५, ३४७, ५८५
 वङ्ग ३१३
 वज्रनन्दी ३०५, ३७३, ३८०, ५०४
 वहिग ३१७
 वम्मळदेव ३४७
 वयळनाड ३०८
 वराङ्गना (ग्राम) ६१६
 वराट ३१३
 वर्धमान (मुनि) ५८५, ६६७
 वर्धमान देव ३४७
 वर्धमान (साधु) ४१३
 वळवाड (स्थान) ३२०, ३३४
 वल्लभराज ६७७
 वशिष्ट (गृहपति) ४७०
 वसन्तकीर्ति ६६७
 वसुनन्दि ६६७
 वस्तुपाळ ३६१
 वाचरस ३०७
 वाणद बलिय ४७८
 वादिभूषण ७०२
 वादिराज ३१६, ३२६, ३२७, ३४७,
 ३७३, ५०३, ६१०, ६६७
 वादिराजेन्द्र ३०५
 वादीभ सिंह ३०५, ३२६
 वामन ३४७

श्रीपालत्रैविद्यदेव ३०५, ३१६, ३१६,
३२६, ३२७, ३४७,
३५१, ३७३, ३७६

श्रीमुख ३३८

श्रीवल्लभदेव ३२९

श्रीविजय ३२६

श्रीरङ्गनगर ६६७

श्रीराज ३१७

श्रीसमुदाय ५१४

श्रीसंघ (मूलसंघ) ५२४

श्रुतकीर्ति ५८४

श्रुतमुनि ५६३, ६००, ६१०

श्रोयांसदेव ३२६

श्रोयांस भट्टारक ५२६

श्लोकवार्तिकालंकार ६६७

ष

षडानन १०८

स

सकलकीर्ति ७०२

सकलचन्द्रदेव ४२४, ४३१, ५८२

सत्याभय ३१३, ४०८

सत्यभामा ३०५

सत्याश्रयकुल ३०८, ३१६, ३२२, ३२६

सपादलक्ष ३३२

सप्तार्द्धलक्षभूमि ३५६

सबरसिङ्गि सेट्टि ४४३

समय दिवाकर ४१०

समन्त भद्र स्वामी ३०५, ३१३, ३१६,

३२४, ३२६, ३३७,

४१०, ६६७

समिद्धेश्वर ३३२

सवगोन ३०७

सवपते ३३६

सरगुरु ६१८

सरस्वती गच्छ ७०२

सरोत्रा ७०६—७०८

सल ३७६

सह्याचल ३०५

संकयनायक ४२३

संकर सेट्टि ३७३

सङ्कशवुण्ड ३८६, ४३६

सङ्गिराय वोडेयर ६५४, ६५५, ६५६

संगीतपुर ६५४—६५६

संघवी ७०२

सागरनन्दि सिद्धान्तदेव ३२४, ४६५

साधा ३६१

साधु हालण ४१३

साधुसाल्हे ३४३

सान्तलिगे ३२६

सान्तबेन्द्र ६६७

सान्तियक्क ४२३

सीगेनाड ३१६
 सीली ३०५ क
 सुक्कद हेगाडे ३६०
 सुगन्धवर्ति बारह ४७०
 सुगुणि देवी (कोङ्काल्व) ५६०
 सुम्मागौण्ड ३१८
 सुम्मायन्त्रसि ३१३
 सुन्ध (पर्वत) ५०७
 सुदत्त मुनिप ४५७
 सुमतिकीर्ति ७०२
 सुमति भट्टारक ३७३
 सुल्तान हुशंगगोरी ६१७
 सूमाक ३०५ क
 सूदनहर्लल ३२४
 सूरस्थ गण ३१८, ४६०
 सूर्यचमूर्पाति ४४८
 सेउण्णचन्द्र (द्वितीय, तृतीय) ३१७
 सेउण्णदेव ३१७
 सेट्टरनागप्प ३३८
 सेन (राजा) ४४६, ४५३
 सेन (रट्ट) ४४६
 सेन (कालसेन) ४५४
 सेनगण ३२२, ५११, ५३८, ६११
 ७६६
 सेन बोवमारय्यने ३३३

सेनुवपुर ३४६
 सोम ३१३, ३६४, ४०८, ४४८
 ४५७, ५२६
 सोमण्णगौड ३३८
 सोमदण्णायक ४६०
 सोमदेव ४१८
 सोमनाथ ३२४
 सोमवे ४३३
 सोमल देवी ४३३, ४५१, ४५५, ४५६
 सोमय ४६४
 सोमय्य ३२८
 सोमय्य (हेगाडे) ४६०
 सोमेश ४६६
 सोमेश्वर ४०८
 सोमेश्वर तृतीय (चाळुक्य) ३१४
 सोमेश्वर चतुर्थ ४६५
 सोवरस ३०७
 सोविदेव ३७७, ३८६, ४०८
 सोविसेट्टि ३६४
 सोरब ३२२, ४५७
 सोसेबूर ३०८, ३६७
 सौगत ३१६
 सौम्यनाथ ३०५
 सौंदत्ति ४७०
 स्थिरमति ३०५ क

ह

हगरटगो ४४६

हट्ण ३६४

हडपवल ३२०

हनसोगे (बलि) ३७२, ५२६, ५५१
५६०

हनसोगे (शाखा) ४४६

हनेयन्वे ३४७

हरवे ६५२

हरि ३४७

हरियप्प वोडेयर ५५८, ५५९, ५६५

हरिहरदेवी ३५६, ३८४

हरिहर राय ५५५, ५७७-५७९,
५८८, ५८९, ५९४,
५९८, ६०१, ६०४,
६०५, ६११, ६१५,
६२०

हरिहर द्वितीय (बुक्क द्वितीय) ५८१

हरिहरेश्वर ५८५

हर्यले (महासती) ३८३

हलदारे ६७३

हलसिगे ३०७, ३२४, ३३६, ३३३

हलेबीड ४२६, ४६६, ५१४, ५२४
५४८, ५४९, ७१०

हलेसोरब ५६३, ८३८

हल्लिय ३०७

हस्तिनापुर ५६४

हस्सन ३१६

हर्षकीर्ति ६४५

हागल हल्लि ७२४

हादिकल्लु ६१२

हानुज्जल गोण्ड ३१८, ३२८

हानुज्जल ३०७, ३३३, ३३६, ३५१

हाविन हेरिलगे ३२०

हालू ३६१

हिन्दण तोट ३३८

हिमशीतळ ३१६

हिरिय कैरे ३३३, ३३८

हिरिय केरेयकेलगण ३०५

हिरिय दण्डनायक ४६६

हिरिय महलिगे ४३८

हिरे आवलि ३२२, ५३५, ५३८,

५४१, ५४४, ५४७,

५५६, ५५६, ५५८,

५५९, ५६२, ५६४,

५७०, ५७४, ५८३,

५८६, ५८२, ५९४,

५९५, ५९८, ६०१,

६०४, ६०६, ६११,

६१३, ६१४

हीरे हल्लि ४६६, ५०४

हुच्चप्प ७१०

हुम्मन्न ३२६, ४६७, ४६४, ४६७,

५००, ५०३, ५०६, ६६७

हुम्बड जाति ७०२

हुळियेर पुर ३५६

हुळिगेरे ४३५

हुलुहल्लि ५७१

हुल्लीगेरी ३७६

हूबिन बाग ३१४

हेगडि जक्कय्य ३५३

हेग्गड ३१६

हेग्गेरी ३५६

हेग्गेरेय ३२१

हेग्गेरे ३६४, ५४५, ६७७

हेग्गो जक्कण ३५६

हेग्गणेरे ३५६

हेन्विडि ३१८

हेमकीर्ति ६४०, ६४३

हेमचन्द्र ८३८

हेमचन्द्र भट्टारक ५६०

हेसगू ३३६, ३८५, ३८६

हेररिके ३३३

हेरेकेरी ३४६, ४८४, ४८६

हेग्गडे ३२८

हेता ३०५ क

होगेकेरी ६५४, ६५५, ६५८

होन ३२४

होन्न ३५६, ६७३

होन्न गोडण्ड ४६६

होन्नमाम्बिका ६८०

होयसल ३१८, ३२७, ३३६, ३४७,

४६५, ६६७

होयसळ गावुण्ड ३५१

होयसळदेव ३०७, ३१६, ३२४, ३२७

होयसल विष्णु ३१८

होम्बुच्च ५६७

होली ६१७

होलेयम्बे गेरेय ३०५

होल्ळकेरे ३३८, ४६०

होसकेरी ३१६

होसतूर ३७८

